उत्तर-प्रदेश में बेरोजगारी की समस्या

अर्थशास्त्र में पी-एच० डी० उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध-प्रबन्ध

निर्देशक :

डॉ० एस० एन० पाण्डेय

एम० ए०, पी-एच० डी०

प्रवक्ता, अर्थशास्त्र विभाग

काशी विद्यापीठ, वाराणसी

शोधकर्ता :

प्रेम कुमार

एम० ए०

अर्थशास्त्र विभाग

समाज विज्ञान संकाय

काशी विद्यापीठ, वाराणसी

१९८५

प्रमाणित किया जाता है कि श्री प्रेम कुमार, एम०ए० अर्थशास्त्र ने "उत्तर प्रदेश में बेरोजगारी की समस्या" विषय पर प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध, अर्थशास्त्र विभाग, काशी विद्यापीठ की पी-एच०डी० उपाधि हेतु मेरे निर्देशन में विश्वविद्यालय के नियमानुसार पूर्ण किया है। यह मौलिक कार्य उनके द्वारा एकत्रित किये गये तथ्यों पर आधारित है।

निर्देशक:

डा०एस०एन०पाण्डेय,
एम०ए०, पी-एच०डी०
प्राध्यापक, अर्थशास्त्र विभाग
काशी विद्यापीठ,
वाराणसी।

अग्रसारित-

(प्रो०पुरुषोत्तम पाण्डेय)
अध्यक्ष,
अर्थशास्त्र विभाग
काशी विद्यापीठ, वाराणसी।

अर्थशास्त्र विभाग
काशी विद्यापीठ, वाराणसी-2

प्राक्कथन

उत्तर प्रदेश सम्पूर्ण भारत का प्रश्न प्रदेश है, लगभग ।। करोड़ आबादी, दरिद्रता, बेरोजगारी, पिछड़ापन, औद्योगिक विहीनता, कृषि की दुर्बलता, गन्दगी, बीमारी, रूढ़िवादिता आदि से यह भू-खण्ड पीड़ित है । यद्यपि इसके कई प्राकृतिक भू-खण्ड हैं लेकिन उत्तरी पर्वतीय भाग सबसे अधिक गरीब है । इसके अतिरिक्त दक्षिणी पठारी हिस्सा भी दरिद्रता से पीड़ित है । उत्तर प्रदेश के 5 आर्थिक क्षेत्रों में पूर्वी उत्तर प्रदेश अच्छी भूमि और प्राकृतिक सम्पन्नता होते हुए भी सभी प्रकार की विपन्नताओं से पीड़ित है, अधिक जनसंख्या होने के कारण प्रदेश के पूर्वी आर्थिक क्षेत्रों में बेरोजगारी की समस्या अति अधिक जटिल रूप में विद्यमान है । स्वतंत्रता के पश्चात उत्तर प्रदेश का विभिन्न क्षेत्र निर्धनता एवं बेरोजगारी के दुष्चक्र से निकलकर विकास पथ पर नियमित रूप से बढ़ पाने में असमर्थ रहा है । पटेल आयोग, दन्तवाला आयोग तथा भगवती कमेटी इत्यादि आयोग एवं कमेटियां नियुक्त की गयी, किन्तु प्रदेश में बेरोजगारी की समस्या ज्यों की त्यों बनी हुई है ।

अंग्रेजी शासन काल में सबसे अधिक मजदूर इसी प्रदेश से मारीशस या अन्य विदेशी कालोनीज में भेजे गये जिनमें से कुछ वहां स्थायी निवास बनाकर उनकी नागरिकता स्वीकार कर लिये । आसाम की चाय बागानों में इसी प्रदेश के मजदूर लगे हुए हैं और यदि आज भी आंकलन किया जाय तो अकोला के कपास मैदानों में, अहमदाबाद एवं बम्बई की कपड़ा मिलों में,

पूना, सतारा, कन्याकुमारी, बंगलौर, रानीगंज, झरिया, जमशेदपुर, दिल्ली, हरियाणा और पंजाब सभी स्थानों में अधिकांश मजदूर गरीबी और गन्दगी का दुख झेलते हुए इसी उत्तर प्रदेश के, आपको प्राप्त होगें। प्रदेश का शायद ही कोई गांव बचा हो जहां के लोग देश भर में फैल कर मजदूरी का कार्य न करते हों, इससे स्पष्ट है कि यहां रोजगार के सुअवसरों का सर्वथा अभाव है।

पंचवर्षीय योजनाओं द्वारा विकास का युग प्रारंभ हुआ। प्रदेश की पंचवर्षीय योजनाओं में बेरोजगारी की समस्या को समाप्त करने के लिए भरपूर प्रयत्न किये गये। इसके लिए नहरें, पम्पिंग सेट आदि लगाये गये, कुछ टेक्नीकल शिक्षण संस्थाएं प्रारंभ की गयी, कुछ उद्योगों को प्रारंभ किया गया, सड़कों और यातायात साधनों का विकास किया गया परन्तु ये सब कार्य आबादी और इस प्रदेश की बेरोजगारी की समस्या एवं विपन्नता को देखते हुए बहुत कम है। उसका कारण या तो इस प्रदेश की केन्द्रीय सरकार द्वारा उपेक्षा है कि उतने साधन नहीं दिये जाते जो विकास एवं रोजगार सृजन के लिए आवश्यक है या यह प्रदेश विकास के पूर्ण संसाधनों को एकत्रित करने में तथा रोजगार के सुअवसरों के सृजन करने में असमर्थ है या यहां के लोगों में अपने को और प्रदेश के विकसित करने की प्रेरणा का अभाव है या यहां के लोगों में औद्योगिक कैपिटल या साहस की भावना का अभाव है। इसके पीछे क्या कारण है कि इतनी योजनाओं के उपरान्त भी यह प्रदेश पूर्ण विकसित न हो सका, और बेरोजगारी से निबटने के लिए गांधीयन टेक्नालाजी और एप्रोप्रिएट इण्टरमीडिएट टेक्नालाजी का प्रयोग होना चाहिए, क्योंकि जनसंख्या और भूमि को देखते हुए मिश्रित टेक्नालाजी का प्रयोग हो तभी इसका पूर्ण विकास हो सकता है। यहां के लोगों को साधनों के लिए आर्थिक सहायता

प्राप्त होनी चाहिए तथा कुटीर एवं लघु उद्योगों में उत्पादित सामग्रियों की विक्रय व्यवस्था सुविधाजनक होनी चाहिए । लघु या सीमान्त कृषक को कुटीर एवं लघु उद्योगों की व्यवस्था हो, जो सभी को कार्य करने का अवसर प्रदान करे । इसके अतिरिक्त छोटे-छोटे खेतों को बड़ी जोत बनाकर कृषि को साधन सम्पन्न किया जाय ताकि उसकी उत्पादकता में बृद्धि हो, कृषि पूरक रोजगारों को बढ़ावा मिले । दूसरा विचार है कि प्रत्येक विकास खण्ड में एक-एक बड़े उद्योगों को लगाया जाय ताकि उसके पास के लोग पर्याप्त रोजगार प्राप्त कर सकें और उन्हें देश के कोने-कोने में न तो भटकना पड़े और न तो छोटे-छोटे खेतों पर बिना आवश्यकता के भार बन सकें । यहां के लोगों में स्वतंत्र रूप से उपक्रम करने का साहस पैदा किया जाय, लोगों की पराश्रयी (पैरासाइड) बन कर रहने की प्रवृत्ति को समाप्त किया जाय, सभी के हाथों में रोजगार हो और आगे बढ़ने की भावना हो ।

उत्तर प्रदेश में बेरोजगारी को दूर करने तथा रोजगार के सुअवसरों के सृजन करने हेतु प्रदेश की अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों को विकसित करना आवश्यक है । किसी एक क्षेत्र को ही विकसित करने से प्रदेश का आर्थिक विकास एवं पूर्ण बेरोजगारी का उन्मूलन सम्भव नहीं है । योजनाकाल में उत्तर प्रदेश की अर्थव्यवस्था में अनेक मूल परिवर्तन हुए हैं। इसके विभिन्न पहलुओं पर आयोजन का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा है । प्रदेश के आर्थिक विकास में बृद्धि हुई है, औद्योगिक विकास की गति मन्द रही लेकिन श्रम समस्याओं में महत्वपूर्ण सुधार हुए हैं । गरीबी उन्मूलन, बेरोजगारी उन्मूलन, आत्मनिर्भरता आदि के विषय में किये गये प्रयासों से भविष्य में रोजगार के सुअवसरों के लिए आशाओं का वातावरण उत्पन्न हुआ है।

शोध -प्रबन्ध को 7 खण्डों में विभक्त किया गया है । प्रत्येक

खण्ड में इससे सम्बन्धित विभिन्न विषयों का व्यापक एवं सम्बद्ध रूप में विवेचन किया गया है जिससे उत्तर प्रदेश की बेरोजगारी की समस्या के सम्बन्ध में आवश्यक व सही जानकारी प्राप्त की जा सके । शोध-प्रबन्ध की विषय सूची स्वयं ही एक ऐसा दर्पण है जिसमें शोध की विषय सामग्री आकार और विस्तार की दशाओं का स्पष्ट बोध हो जाता है ।प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध में उत्तर प्रदेश की अर्थव्यवस्था पर प्रकाशित विभिन्न पुस्तकों पत्र-पत्रिकाओं तथा राजकीय प्रकाशनों की समुचित सहायता ली गई है । जिन विद्वानों की कृतियों से प्रेरणा प्राप्त कर प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध की रचना की गयी, मैं उन सभी महानुभावों के प्रति हृदय से आभारी हूं ।

सर्वप्रथम मैं अपने निर्देशक, निष्णात् श्रद्धेय डा0एस0एन0पाण्डेय जी के प्रति चिर ऋणी हूं जिनके अविरल स्नेह व निर्देशन में यह शोध-प्रबन्ध पूर्ण हो सका । शब्द के अभाव में मैं उन्हें आभार प्रकट करने में अपने को असमर्थ पा रहा हूं । मैं परम आदरणीय, सुप्रसिद्ध, वयोवृद्ध, गांधीवादी विचारक गुरूवर डा0डी0एन0चतुर्वेदी जी, कुलपति काशी विद्यापीठ, वाराणसी एवं डा0पुरूषोत्तम पाण्डेय, प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, काशी विद्यापीठ, वाराणसी के प्रति मैं हृदय से आभार प्रकट करता हूं जिन्होंने यह शोध-प्रबन्ध समय से पूर्ण करने के लिए निरन्तर प्रेरित करते रहे हैं । साथ ही साथ विभाग के समस्त प्राध्यापकों का आभारी हूं जिनसे पृथक-पृथक महत्वपूर्ण सहयोग प्राप्त होता रहा है ।

मैं श्रीमती विमला देवी ﴾परिचारिका स्वास्थ्य विभाग, उत्तर प्रदेश﴿ के प्रति हृदय से आभारी हूं जिन्होंने मुझे शोध-प्रबन्ध को पूरा करने हेतु उचित परिवेश प्रदान किया तथा अपनी श्रद्धा एवं लगन से मुझे परिवार से दूर रहने का रंचमात्र भी एहसास नहीं होने दिया ।

ये करूणामयी माँ के तुल्य हैं, जिन्हें मैं अपना पवित्र स्नेह प्रेषित करता हूँ।
परमपूज्य पिताजी, ममतामयी माताजी एवं समस्त परिवार के प्रत्येक सदस्यों तथा स्वजनों के प्रति चिरऋणी हूँ जिनका मुझे इस शोध-प्रबन्ध को पूरा करने हेतु अमूल्य प्रोत्साहन, स्नेह एवं नैतिक सहयोग प्राप्त होता रहा है। साथ ही साथ मैं अपनी अर्द्धांगनी के प्रति भी एहसानमन्द हूँ जिसकी असीम लगन एवं प्रोत्साहन इस शोध प्रबन्ध को पूरा करने में मुझे प्रेरित करता रहा है।

डा0सी0डी0सिंह (प्रवक्ता, भूगोल विभाग, सेन्ट एण्ड्रूज कालेज, गोरखपुर), मोती लाल गुप्त (कार्यालय सहायक, अपर निदेशालय, स्वास्थ्य विभाग, उत्तर प्रदेश), शकुन लाल वर्मा (कैशियर, यू0पी0कोआपरेटिव बैंक लि0, उत्तर प्रदेश), बांके बहादुर जोशी (पुलिस, उत्तर प्रदेश सरकार), प्रदीप कुमार निराला, महामहिम धर्माध्यक्ष, डा0 पैट्रिक डिसोजा (वाराणसी धर्मप्रान्त), फा0 रोबर्ट (सचिव, धर्माध्यक्ष-वाराणसी), फा0 जेफ्रिन मोनिस (जो इस समय विदेश में उच्च शिक्षा ग्रहण करने गये हैं), फा0 डोमानिक (शिक्षा निर्देशक, वाराणसी धर्मप्रान्त), फा0 आइबन जोसेफ (निर्देशक, पूर्वांचल ग्रामीण चेतना संघ), फा0 मैथ्यू (सहायक निर्देशक, पूर्वांचल ग्रामीण चेतना संघ) फा0 रैमण्ड प्रकाश तथा फा0 डा0 फेड्रिक पीन्टो (व्यवस्थापक सन्त पुष्पा आश्रम, जमुआँव) एवं फा0 विजय साइमन (सहायक व्यवस्थापक सन्त पुष्पा आश्रम जमुआँव) के प्रति मैं आभार प्रकट करना अपना परम कर्त्तव्य समझता हूँ जिनकी प्रेरणा सहयोग एवं सुझाव मुझे इस शोध-प्रबन्ध को पूरा करने में समय-समय पर मिलते रहे हैं। अन्त में मैं टाइपिस्ट कु0 मरियम डेनिस के प्रति विशेष आभारी हूँ जिन्होंने अपना बहुमूल्य समय देकर कठिन परिश्रम से इस शोध-प्रबन्ध को टंकित करके समय से शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत करने में सहयोग दिया।

प्रेम कुमार

- प्रेम कुमार

अनुक्रमणिका

अध्याय : एक

उत्तर प्रदेश का सामान्य परिचय

उत्तर-प्रदेश का सामान्य परिचय

उत्तर-प्रदेश भारत के उत्तर-पूर्व दिशा में ३१° ४२' तथा २३° ५२' उत्तरी अक्षांस एवं ७७° ०४' तथा ८४° ३८' पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। और इसका उत्तरी भाग चीन तथा नेपाल का अन्तर्राष्ट्रीय सीमा बनता है।[१] भौगोलिक स्थिति के अनुसार उ०प्र० का क्षेत्रफल २९४ हजार वर्ग कि०मी० एवं वर्ष १९८१ के जनगणना के अनुसार इस प्रदेश की जनसंख्या ११०, ८५८,०१९ आंकी गयी है।[२] उ०प्र० का क्षेत्रफल सम्पूर्ण भारत के क्षेत्रफल का लगभग ९ प्रतिशत है। क्षेत्रफल की दृष्टि से उत्तर-प्रदेश का स्थान भारत के अन्य राज्यों की तुलना में चौथा है जिन प्रदेशों का इससे अधिक क्षेत्रफल है, वे हैं, मध्य-प्रदेश, राजस्थान और महाराष्ट्र।[३] उ०प्र० का क्षेत्रफल तमिलनाडु, पंजाब, हरियाणातथा केरल राज्यों के क्षेत्रफल के योग से अधिक है।[४] विश्व के बहुत से देशों का क्षेत्रफल इस राज्य के क्षेत्रफल से कम है। आबादी की दृष्टि से उत्तर-प्रदेश का स्थान अन्य प्रदेशों की तुलना में पहला है। भारत की कुल आबादी का लगभग छठां हिस्सा उ०प्र० में रहता है। उ०प्र० की जनसंख्या चीन, रूस, अमेरिका, जापान तथा इण्डोनेशिया के अतिरिक्त अन्य सभी देशों से अधिक है।

उत्तर-प्रदेश भारत के सीमान्त प्रदेशों में से एक है। इसकी उत्तरी सीमा हिमालय पर्वत श्रेणीसे लगी हुई तिब्बत और नेपाल की सीमाओं को छूती है। पश्चिमी और दक्षिणी-पश्चिमी सीमा पर हिमांचल-प्रदेश, हरियाणा, दिल्ली और राजस्थान हैं, तथा दक्षिण में मध्य-प्रदेश और पूर्वी सीमा बिहार से लगी हुई है।

वर्ष १९८१ की जनगणना के अनुसार उ०प्र० की कुल जनसंख्या ११०, ८५८, ०१९ हो गयी है जबकि १९७१ की जनगणना में कुल जनसंख्या ८८, ३४१, १४४ थी। इस प्रकार वर्ष १९७१-८१ के बीच २५.४९ प्रतिशत की वृद्धि रही।[५] उ०प्र० में लगभग ८५ प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में रहती है वर्ष १९७१ में जनसंख्या का घनत्व ३०० प्रतिवर्ग कि०मी० था वह वर्ष १९८१ की जनगणना केअनुसार ३७७ प्रतिवर्ग कि०मी० हो गया। प्रदेश में इस समय लगभग २७.३८ प्रतिशत व्यक्ति साक्षार हैं जबकि वर्ष १९७१ में यह प्रतिशत २१.७० था। इस प्रकार साक्षारता में २६.१८ प्रतिशत की वृद्धि हुई। प्रदेश में स्त्रियों की तुलनामें पुरूष अधिक साक्षार हैं। पूरे देश में साक्षारता दर ३६.१७ प्रतिशत है जिसमें ४६.७४ प्रतिशत पुरूष तथा २४.८८ प्रतिशत स्त्रियां साक्षार हैं।[६] इस प्रकार शिक्षा के क्षेत्र में पूरे

१- स्मारिका : वर्ष १९७५, प्रकाशक -उ०प्र० विभाग तकनीकी कर्मचारी संघ, फैजाबाद रोड, लखनऊ, पृ० १, २।

२- नार्दन इंडिया पत्रिका, मार्च १९, १९८१।

३- उत्तर-प्रदेश, १९७७, सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उत्तर-प्रदेश, लखनऊ, पृ० १०।

४- उत्तर-प्रदेश की आर्थिक समीक्षा, १९७५-७६- राज्य नियोजन संस्थान, अर्थ एवं संख्या प्रभाग, उ०प्र० लखनऊ, पृ०-१।

५- भारत की जनगणना, १९८१, श्रृंखला-१,भारत, जनसंख्या के अनन्तिम आकड़े, पृ० ३।

६- वही, पृ० १एवं४५।

देश की तुलना में उत्तर-प्रदेश एक पिछड़ा राज्य है। राज्य में वर्ष १९८१ की जनगणना के अनुसार उत्तर-प्रदेश में कुल ३२५ नगर है जिनमें २२ ऐसे नगर है जिनकी जनसंख्या एक लाख या इससे अधिक है।

प्रदेश की अर्थ व्यवस्था में सबसे अधिक योगदान कृषि एवं तत्संबन्धी व्यवसायों से है। वर्ष १९७८-७९ में प्राथमिक क्षेत्र ।।प्राइमरी सेक्टर।।से लगभग ५७.३ प्रतिशत आय प्राप्त हुई है जबकि द्वितीयक क्षेत्र ।।सेकेण्डरी सेक्टर ।।से १६.४ प्रतिशत आय प्राप्त हुई। प्रदेश में लगभग ७६ प्रतिशत श्रमिक केवल कृषि या संबन्धित व्यवसाय में लगे हुए हैं।[१]

प्रदेश में आय वितरण में भी बड़ी विषमता है। वर्ष १९७९-८० में ४७.८५ प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्र के तथा ४३.५३ प्रतिशत नगरीय क्षेत्र के लोग निर्धनता रेखा के नीचे जीवन व्यतित कर रहे थे।[२] प्रदेश में गरीबी, कम बचत, पूंजी निवेश आदि में कमी के साथ जनसंख्या अधिक है तथा बेरोजगारी की भी स्थिति स्थिति बड़ी दयनीय है। यधपि नियोजन काल में विकास हुआ लेकिन विकास की दर मन्द रही है। जिससे देश की तुलना में उ०प्र० का विकास नहीं हो पा सका है। उ०प्र० में विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में किये गये व्यय तथा विकास दर के सम्बन्ध में कुछ मुख्य आकड़े इस प्रकार है :-[३]

तालिका न० १

योजना काल	व्यय करोड़ रू० में	केन्द्रीय सहायता का अनुपात प्रतिशत में	उ०प्र० में प्रति व्यक्ति खर्च रू० में	उ०प्र० की अर्थ-व्यवस्था की विकास दर	भारत का विकास दर
प्रथम पंचवर्षीय योजना	१५३.३७	५६.८६	२५	१.९	३.४
द्वितीय पंचवर्षीय योजना	२३३.३४	५१.८६	३२	१.८	४.०
तृतीय पंचवर्षीय योजना	५६०.६३	६३.५४	७२	१.६	२.३
चतुर्थ पंचवर्षीय योजना	११६५.३९	५४.५१	१३२	२.४	३.३
पांचवी पंचवर्षीय योजना	२९२४.४६	४४.०२	२८७	४.९	४.४

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि प्रत्येक पंचवर्षीय योजना में उत्तर-प्रदेश की विकास दर पूरे देश की तुलना में कम रही है। इस प्रकार सम्पूर्ण क्षेत्र से उत्तर-प्रदेश एक पिछड़ा राज्य रहा है जिसे अभी तेजी से विकास करना है।

१-ड्राफ्ट सिक्स्थ फाइव ईयर प्लान, १९८०-८५ ।। रिव्यू ।। वाल्युम-१, गवर्नमेंट आफ उ०प्र० प्लानिंग डिपार्टमेंट, पेज २-४।

२-वही, पेज ५।

३-स्रोत-उत्तर-प्रदेश, १९७४,सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, उ०प्र०, लखनऊ, पेज -१।

प्राकृतिक रूप रेखा [१]:-----

उ०प्र० भारत के सीमान्त प्रदेशों में से एक है इसकी उत्तरी सीमा हिमालय पर्वत श्रेणी से लगी हुई तिब्बत और नेपाल की सीमाओं को छूती है। पश्चिमी और दक्षिण-पश्चिमी सीमा पर हिमाचल-प्रदेश, हरियांणा और राजस्थान है तथा दक्षिण मध्य प्रदेश। पूर्वी सीमा बिहार से लगी हुई है।

राजनीतिक सीमायें न्यूनाधिक प्राकृतिक सीमाओं का ही अनुसरण करती हैं उत्तर में हिमालय, दक्षिण एवं दक्षिण-पश्चिम में यमुना नदी तथा विंध्यांचल और पूर्वी में गंडक नदी है।

राज्य के तीन स्पष्ट प्राकृतिक भाग है :-----

१-उत्तर में हिमालय का क्षेत्र

२-बीच में गंगा का मैदान

३-दक्षिण में पहाड़ी तथा पठारी भू-भाग।

हिमालय क्षेत्र में अनेक पर्वत श्रेणी हैं जो अत्यन्त वलित एवं भ्रंशित समुद्री अवसाद द्वारा निर्मित है। इन पर्वत श्रेणियों में से कुछ जो ७००० मी० से ऊंची हैं इस प्रकार नन्दा देवी ।।७८१७ मी० ।। कामेत ।।७७५६ मी० ।।, बदरीनाथ ।।७१३८ मी० ।।, त्रिशूल ।।७१२० मी० ।। और दूनागिरि ।।७०६६ मी० ।। ।

इस क्षेत्र में १५०० मी० की ऊंचाई तक प्रचुर वर्षा होती है जैसे-जैसे ऊंचाई बढ़ती जाती है, सामान्य तापक्रम गिरता जाता है। डेढ़ हजार मीटर से ३००० मी० की ऊंचाई तक के स्थानों पर जाड़े में वर्फ गिरती रहती है और ऊंचे जाने पर ठंढ काफी बढ़ जाती है तथा पर्वतों की चोटियों और उनके आस पास के इलाकों में तो ध्रुव जैसी ठंड पड़ती है यह समग्र भूभाग पूरे वर्ष हिमाच्छादित रहता है। गंगा, यमुना और रामगंगा जैसी सर्वदा जल पूरित नदियों के उदगम स्थल रही है।

पहाड़ों के निचले भागों में अत्यधिक नमी होने के कारण जंगल ही जंगल हैं चारागाह तो लगभग हिम रेखा तक फैले है। जहां कहीं सम्भव है वहां गर्मियों में चावल और जाड़ों में गेहूं की पैदावार होती है।

हिमालय संभाग के अन्तर्गत चकराता, देहरादून तहसील का कुछ भाग, नैनीताल जिले की नैनीताल तहसील तथा अल्मोड़ा, गढ़वाल, टिहरी गढ़वाल, पिथौरागढ़, चमोली और उत्तर-काशी जिले आते हैं।

२- गंगा का मैदान :------ प्रदेश का बड़ा भूभाग इस क्षेत्र के अंतर्गत आता है। इसमें कोई भी स्थान ।।सहारनपुर जिले के उत्तरी भाग को छोड़ कर, जहां से शिवालिक पर्वत श्रेणियां शुरू होती है।। समुद्र की सतह से ३०० मीटर से अधिक ऊंचाई पर नहीं है।

१-स्रोत-उत्तर-प्रदेश, १९७४, सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ०प्र०, लखनऊ, पृ० १।

भाभर और तराई क्षेत्र :------ पश्चिम में सहारनपुर से लेकर पूर्व में देवरिया तक एक पतली सी पट्टी भाभर और तराई कहलाती है। सहारनपुर, बिजनौर, गढ़वाल, नैनीताल, और पीलीभीत जिलों में भाभर क्षेत्र शिवालिक पहाड़ियों के इर्द-गिर्द ही सिमटा हुआ है। पहाड़ों से उतरने वाली नदियों अथवा अन्य वेगवती धाराओं की गति यहां आकर कुछ मन्द हो जाती है। अत: ऊपर से अपने साथ बहाकर लाये हुए घिसे - घिसाये प्रस्तर खण्डों को छोड़ती जाती है। पश्चिम में यह क्षेत्र ३४ कि०मी० चौड़ा है किन्तु जैसे-जैसे पूरब जाते हैं, संकरा होता जाता है। छोटे-छोटे नदी-नालों का, जब तक कि उनमें बाढ़ की स्थिति न हो, प्रस्तर खण्डों की मोटी परत के बीच अस्तित्व समाप्त सा ही लगता है। किन्तु कुछ दूरी के बाद वे फिर दिखलाई पड़ते है और मंदगति से बहते हुए मिट्टी आदि की बारीक परत बिछाते रहते है। दलदली तराई क्षेत्र का निर्माण इसी प्रकार हुआ है।

जंगलों और ऊंची घनी घासों से ढका हुआ तराई क्षेत्र कभी ८० से ९० कि०मी० तक चौड़ा था इसके अन्तर्गत सहारनपुर, बिजनौर, नैनीताल, रामपुर, बरेली, पीलीभीत, खीरी, बहराइच, गोंडा, बस्ती गोरखपुर और देवरिया जिलों के भाग आते है। इधर कुछ वर्षों में राज्य सरकार की भूमि उपार्जन परियोजनाओं के अन्तर्गत हुए कार्यों के फलस्वरूप इसकी चौड़ाई काफी कम हो गयी है। यहां की मुख्य फसलें गेहूं, चावल और गन्ना है। जूट की भी खेती की जाती है।

मैदानी क्षेत्र :----- भाभर और तराई के बाहर, पूरा का पूरा मैदानी क्षेत्र नदियों की लाई मिट्टी से बना हुआ है और बहुत ही उपजाऊ है। यमुना पार आगरा और मथुरा जिलों के उन भागों को छोड़कर जहां अरावली पहाड़ियों के पूर्वी छोर पर अनेक खार और लाल पत्थरों वाली पहाड़ियां मिलती हैं, यह समग्र भूभाग समतल है।

भू-गर्भ विज्ञान की दृष्टि से इस क्षेत्र का निर्माण अभिनूतन एवं अतिनूतन में नदियों की घाटियों की सहायता से हुआ है।

मैदान का पश्चिमांचल उत्तर से दक्षिण की ओर ढलुआं है और पूर्वांचल की ढाल पश्चिमोत्तर से दक्षिण - पूर्व की तरफ है। यह गंगा, यमुना एवं उनकी सहायक नदियों द्वारा अभिसिंचित है। इस मैदानी क्षेत्र में वर्ष में दो फसलें काटी जाती हैं :---

।।क।। - रबी की ।। बसंत के अवसर पर ।।
।।ख।। - खरीफ की ।। शरद काल में ।।

३- दक्षिण के पहाड़ और पठार :------ प्रदेश के दक्षिण में पठारी भू-भाग की उत्तरी सीमा यमुना और गंगा नदी के द्वारा निर्धारित है। इसके अन्तर्गत झांसी जालौन, हमीरपुर, और बांदा जिले, इलाहाबाद जिले की मेजा और करछना तहसीलें, गंगा के दक्षिण में पड़ने वाली मिर्जापुर जिले

का हिस्सा तथा वाराणसी जिले की चकिया तहसील आती है। यह क्षेत्र दक्न के पठार का ही प्रसरण है। भू-भाग की दृष्टि से इसका निर्माण अत्यन्त प्राचीन युग, सम्भवत: कैम्ब्रियन पूर्व काल में, अति शुष्क क्षेत्र पर प्रवहमान समुद्री निक्षेप द्वारा हुआ। पठार की ऊँचाई समान्यत: ३०० मी० से अधिक नहीं है। बहुत कम स्थलों पर यह ४५० मी० से अधिक ऊँचा है। मिर्जापुर जिले में कुछ स्थानों पर कैमूर और सोनपुर की पहाड़ियां लगभग ६०० मीटर तक ऊँची है। वे पहाड़ियां सोन नदी के उत्तर में मिर्जापुर जिले से होकर गुजरी हैं। बांदा जिले की करवी तहसील में भी विन्ध्य पर्वत श्रेणियां है।

इस क्षेत्र की ढाल समान्यत: उत्तर-पूर्व की ओर है। बेतवा और केन नदियां, जो बुन्देलखण्ड से होकर बहती हैं, यमुना में दक्षिण-पश्चिम से आकर मिलती है। मिर्जापुर जिले का सुदुर दक्षिण भाग बघेलखण्ड हिस्सा है। इस भाग में यत्र-तत्र नीची पहाड़ियां है। पूरे प्रक्षेत्र में वर्षा कम होती है और पानी के अभाव में तथा भीषण गर्मी के कारण वृक्षादि छोटे होते हैं एवं उनका विकास पूरी तरह से नहीं हो पाता है। चिड़ियों आदि का तो लगभग अभाव है। इधर कुछ वर्षों में जलाशयों का निर्माण कर सिंचाई तथा पीने के पानी की व्यवस्था की गयी है। यहां की मुख्य फसलें ज्वार, चना, और गेहूं है।

जलवायु और वर्षा[1]:---- प्रदेश की जलवायु भिन्न-भिन्न स्थानों पर भिन्न-भिन्न है। यद्यपि प्रदेश मुख्य रूप से उष्ण प्रधान शीतोष्ण कटिबन्ध के अन्तर्गत है। किन्तु समुद्र तल से विभिन्न स्थानों की अलग - अलग ऊँचाई के कारण जलवायु में बहुत अधिक अन्तर आ जाता है। हिमालय का पूरा क्षेत्र घाटियों को छोड़कर, ठण्डा रहता है। यहां दिसम्बर और मार्च के बीच अच्छा-खासा हिमपात होता है।

सहारनपुर से देवरिया तक के उप पर्वतीय क्षेत्र में जलवायु नम और अस्वास्थ्कर है। नीचे गंगा के मैदान में जनवरी में तापमान सामान्यत: १२.५ डिग्री सेण्टी ग्रेड से लेकर १७.५ डिग्री सेण्टी ग्रेड तक तथा मई-जून में ४५ डिग्री से० ग्रेड से भी अधिक हो जाता है। अप्रैल और मई तथा जून गर्मी के महिने हैं, जब पश्चिम से लू चला करती है। उत्तरी-पश्चिमी जिलों में जाड़े के महीनों में कड़ा के की सर्दी पड़ती है। फरवरी और मार्च में उपलवृष्टि कोई असमान्य बात नहीं है।

दक्षिण की पहाड़ियां और पठार बंजर और पथरीली जमीन होने के कारण गर्मियों में बहुत अधिक गर्म हो जाते है। रातें अवश्य सुखकर होती है। जाड़ा अधिक पड़ता है।

सामान्यत: वर्ष में तीन प्रमुख मौसम होते है, अक्टूबर से फरवरी तक जाड़ा, मार्च से जून तक गर्मी और इसके बाद सितम्बर तक वर्षा का मौसम होता है। गर्मी आगरा और झांसी में सबसे

१- स्रोत: उत्तर-प्रदेश वार्षिकी, १९७७ -सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, उत्तर-प्रदेश, लखनऊ, पृ० ३।

ज्यादा और बरेली तथा रुड़की में सबसे कम पड़ती है। मध्य जून से मध्य सितम्बर तक प्रदेश में बंगाल की खाड़ी से आने वाला मानसून के फलस्वरूप प्रमुख रूप से वर्षा होती है। जाड़ो में उत्तर पश्चिम से उठने वाले तूफानों के कारण कुछ वर्षा प्रमुखतः उत्तरी-पश्चिमी जिलों में हो जाती है।

हिमालय संभाग में जून और सितम्बर के बीच समान्यतः भारी वर्षा होती है जिसका औसत १०० से २०० सें०मी० तक होता है। उप-पर्वतीय पट्टी में भी वर्षा का औसत १०० सें०मी० से अधिक रहता है। गंगा के मैदान के पश्चिमी प्रभाग में वर्षा का औसत समान्यतः ६० और १००सें०मी० के बीच रहता है। जबकि पूर्वी प्रभाग में यह औसत १०० से १२० सें०मी० तक रहता है, यद्यपि जौनपुर जिले के पश्चिमी हिस्से में वर्षा कुछ कम होती है।

दक्षिण पहाड़ियों और पठार पर झांसी, बांदा और इलाहाबाद जिले के दक्षिण में तथा पूरे मिर्जापुर जिले और वाराणसी के चकिया तहसील में वार्षिक वर्षा का औसत १०० सें०मी० है। झांसी और बांदा जिलों के बाकी हिस्सों में तथा जालौन और हमीरपुर जिलों में वर्षा कम होती है। जालौन जिले के अधिकतर भाग में ८० सें०मी० से भी कम वर्षा होती है। प्रदेश में लगभग ८३ प्रतिशत वर्षा जून और सितम्बर के मध्य तथा लगभग ७ प्रतिशत जाड़े में होती है।

उत्तरी पर्वतीय क्षेत्रों को छोड़कर राज्य के प्रमुख भागों में वर्षा का वार्षिक औसत ९४ सें०मी० रहता है। वर्षा में औसत ४४.७ दिन वर्षा होती है। नैनीताल में वर्षा में लगभग २६ ९ सें०मी० तथा मंसूरी में २५३.७ सें०मी० तक वर्षा होती है। मैदानी क्षेत्र में गोरखपुर क्षेत्र में सर्वाधिक वर्षा होती है। जिसका औसत १८४.७ सें०मी० है और मथुरा में सबसे कम जिसका औसत ५४.४ सें०मी० है। उत्तर में स्थित ऊंचे-ऊंचे पर्वत शृंगों से मानसून के टकराने से ही प्रदेश में वर्षा होती है। जैसे-जैसे पूर्व से पश्चिम होते हैं या उत्तर से दक्षिण, वर्षा कम होती जाती है। चूंकि मानसून मैदानी क्षेत्रों में पूर्व से प्रवेश करता है और फिर उसी मार्ग से वापस हो जाता है, इसलिए पूर्वी प्रभाग में वर्षा का प्रारम्भ पहले होता है और वर्षा ऋतु अपेक्षाकृत लम्बी होती है। गोरखपुर जिले में लगभग ५७ दिन वर्षा की सम्भावना रहती है, जबकि मथुरा में औसतन लगभग ३२ दिन ही वर्षा होती है।

जल-प्रवाह :------ गंगा और यमुना राज्य प्रमुख नदियां है इनका बहाव उत्तर में हिमालय तथा दक्षिण में विन्ध्याचल द्वारा निर्धारित है। गंगा, भागीरथी के नाम से गंगोत्री ग्लेशियर ।। ५६११ मी० ।। से निकली है और हरिद्वार तक आते-आते, जहां यह शिवालिक पहाड़ियों के बीच से मैदान में आती है, धौली, पिण्डार, अलकनन्दा और मन्दाकिनी जैसी अनेक छोटी-बड़ी नदियों का जल एकत्र कर लेती है। मैदान में आने के बाद यह धीरे-धीरे दक्षिण से पूर्व की तरफ बढ़ने लगती है। और इसके दोनों किनारों पर औरभी सहायक नदियां आकर मिलती है। बायें किनारे पर मिलने वाली सहायक नदियों के नाम है----- राम गंगा, गोमती अपनी सहायक वाली या शारदा के साथ घाघरा, राप्ती और गण्डक दाहिने किनारे पर मिलती हैं ---- सोन, टौंस और अपनी सहायक नदियों ---- चम्बल, सिन्ध, बेतवा और केन के साथ यमुना। बाये किनारे पर मिलने वाली सभी नदियां गोमती को छोड़कर ।। जिसका उद्गम स्थान पीलीभीत जिले में है, हिमालय या उससे भी आगे से प्रारम्भ होती है। दाहिने किनारे पर मिलने वाली सभी नदियाँ विन्ध्य अथवा सतपुड़ा पर्वत श्रेणियों से निकलती है यमुना नदी एक मात्र अपवाद है।

विन्ध्यांचल के तरफ से जो पानी बहकर गंगा में आता है, उसका आधे से अधिक यमुना की सहायक नदियां ---- चम्बल, सिंध, बेतवा और केन लाती है। इनमें चम्बल सबसे बड़ी है। यह विन्ध्यांचल की उपत्यका से निकलती है और आगे चल कर इसमें अनेक सहायक नदियां मिलती है दक्षिण से आकर गंगा में मिलने वाली दो मुख्य नदियां हैं ---- टोंस और सोन। इनमें सोन बड़ी है यह सतपुड़ा पहाड़ियों की अमरकण्टक श्रेणी से निकलती है इसका उद्गम स्थान नर्मदा और महानदी के उद्गम स्थानों के ही पास है। दक्षिणी किनारे पर मिलने वाली इन सहायक नदियों के अतिरिक्त गंगा के दक्षिण में बहने वाली अन्य नदियां चन्द्रप्रभा, कर्मनासा, रिहन्द, बेलन और घसान है।

हिमालय से निकलने वाली नदियां लगभग पूरे वर्ष पानी से भरी रहती हैं जबकि विन्ध्यांचल से निकलने वाली नदियां गर्मियों में अक्सर सूख जाती हैं इसका कारण यह है कि हिमालय से निकलने वाली नदियों में बर्फ पिघलने से गर्मियों में भी पानी कम नहीं होता है। एक और कारण यह है कि हिमालय पर विन्ध्याचल की तुलना में अधिक वर्षा होती है। उत्तर और दक्षिण से निकलने वाली नदियों में एक और अन्तर यह है कि गंगा और उत्तरी नदियां मैदान के मध्य से न होकर काफी नीचे से घूमकर बहती है। अत: उनका प्रवाह मार्ग काफी लम्बा है, जबकि दक्षिणी नदियों का बहुत कम। यही कारण है कि दक्षिणी नदियों का वेग उत्तरी नदियों की तुलना में कहीं अधिक है। इसी प्रकार हिमालय से निकलने वाली नदियां धीरे-धीरे भरती है और उनमें बाढ़ की स्थिति धीरे-धीरे ही पहुंच पाती है, जबकि विन्ध्याचल से निकलने वाली नदियां एक तरफ गर्मी में तो सूख जाती है और दूसरी तरफ वर्षा काल में बाढ़ का दृष्य उपस्थित कर देती है। दोनों प्रकार की नदियों में एक और अन्तर यह है कि हिमालय से निकलने वाली नदियां अपेक्षाकृत मिट्टी और बालू अधिक लाती है।

<u>मिट्टी</u> :---- प्रदेश की मिट्टी को मुख्य रूप से तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है :---

१- वन की और पहाड़ी मिट्टी

२- कांप मिट्टी

३- मिश्रित लाल और काली मिट्टी

<u>१- वन की और पहाड़ी मिट्टी</u> :---- इसके अर्न्तगत उत्तरी पहाड़ी संभाग में पायी जानी वाली और हिमालय के अधोभाग के उपपर्वतीय भूखण्ड में पायी जाने वाली मिट्टी का समावेश है। उत्तरी पहाड़ी संभाग की मिट्टी समान्यत: छिछली और अपरिपक्व है तथा बनावट एवं गहराई में भी भिन्नता है इसे चार स्पष्ट किस्मों में विभक्त किया जा सकता है :---

।।क।। <u>लाल दोमट</u> :--- इस किस्म की मिट्टी अधिकतर निम्नतर पहाड़ों की ढालों या पर्वतों के किनारे-किनारे पायी जाती है।

।।ख।। <u>वन की भूरी मिट्टी</u> :--- इस किस्म की मिट्टी विस्तृत भाग में फैली हुई है।

।।ग।। <u>भस्मी मिट्टी</u> :--- इस कम ढालू स्थानों पर मिट्टी के नीचे तथा पहाड़ियों और पर्वत श्रेणियों के अंचलों में और उप-उष्णदेशी तथा समशीतोष्ण सभागों, दोनों के ही छायादार स्थानों में पायी जाती है।

।।घ। चारागाह की मिट्टी :------ यह स्थानी तथा कम महत्वपूर्ण है और जल धराओं के निकट पायी जाती है। उपपर्वतीय भूखण्ड में यह मिट्टी हिमालय से आती हैं और पथरीली तथा छिछली होती है। इसमें मटियार दोमट से लेकर बलुई दोमट तक की मिट्टी पायी जाती है। इसका वर्गीकरण इस प्रकार किया जाता है :-------

१-मटियार दोमट जो बहुत कम चूनेदार होती है सतह पर इसका रंग भूरा होता है। मूलत: इसमें नाइट्रोजन की मात्रा अधिक होती है।
२-अत्यधिक चूनेदार दोमट।
३-कम चूनेदार दोमट।
४-गैर चूनेदार दोमट।
५- बलुई दोमट जिसका रंग गहरा भूरा से लेकर लाल भूरा तक होता है।त

२- कांपमिट्टी :------ सिन्धु-गंगा के मैदान में यह मिट्टी दो प्रकार की पायी जाती है :-----

१-पुरनी कांप मिट्टी ।।बांगर।।
२-नयी कांप मिट्टी ।।खादर।।

इन्हे पश्चिमी प्रक्षेत्र, केन्द्रीय प्रक्षेत्र तथा पूर्वी प्रक्षेत्र में बांटा जा सकता है।

पश्चिमी प्रक्षेत्र :----- इसके अर्न्तगत देहरादून, सहारनपुर, मुज्जफर नगर, मेरठ, बिजनौर, मु मुरादाबाद, नैनीताल, बरेली, तथा पिलीभीत जिले आते है। उत्तर-पश्चिमी तराई क्षेत्र की मिट्टी अधिकांशत: गहरी भूरी है और कहीं पर चिकनी है। कहीं - कहीं उसमें कुछ बालू मिली है। यह मिट्टी छिछली है इसमें कंकड़-पत्थर बड़ी मात्र में पाये जाते है समान्यत: यह अम्लीय है प्रदेश के पश्चिमी मैदानों में ।।सहारनपुर, मुज्जफ-फर नगर तथा मेरठ के जिले।। मिट्टी गहरी तथा समान्यत: अधिक उर्वर है। थोड़ा पूर्व की ओर आगे चल कर ।।बरेली, बिजनौर, पीलीभीत तथा मुरादाबाद।। मिट्टी अधिक चिकनी है। पीलीभीत के पूर्व की ओर तो मिट्टी अम्लीय है किन्तु बाकी मिट्टी में थोड़ा सा क्षार तल है।

केन्द्रीय प्रक्षेत्र :----- ।।खीरी, सीतापुर, हरदोई, लखनऊ, बाराबंकी, जौनपुर, आजमगढ़ और कानपुर जिले।। उत्तर-पूर्वी भाग में ।।खीरी तथा सीतापुर।। मिट्टी चिकनीय बलुई-चिकनी है। उसमें थोड़ा सा अम्ल भी है। अन्य भागों में मिट्टी बलुई-चिकनी है।

पूर्वी प्रक्षेत्र :----- ।।गोरखपुर, बस्ती तथा गोंडा जिले।। यहां दो प्रकार की भिन्न-भिन्न मिट्टियाँ है, जिनके स्थानीय नाम ।।मार्ट।। और बंजर है। जल प्लावित नदी के किनारे पर पायी जाने वाली मिट्टी को ।।दूह।। कहते है मार्ट मिट्टी चिकनी बलुई होती है और उसमें चूना अधिक होता है इसकी जलधारण शक्ति अधिक होती है। बंजर मिट्टी चिकनी और बलुई चिकनी दोनों प्रकार की होती है। इसमें चूना अपेक्षाकृत कम होता है। उत्तर पश्चिमी भाग की मिट्टी में फफूद

फास्फेट कम होता है। देहरादून, जौनपुर तथा आजमगढ़ के जिलों में पोटाश की कमी है। शुष्कतर भागों में ऊसर तथा रेह है। इससे मुख्य रूप से अलीगढ़, मैनपुरी, कानपुर, सीतापुर, उन्नाव, एटा, इटावा, रायबरेली और लखनऊ के जिले आक्रान्त हैं।

३- मिश्रित लाल औरकाली मिट्टी :------ मिश्रित लाल और काली मिट्टी मिर्जापुर, इलाहाबाद जिले की करछना और मेजा तहसीलें और वाराणसी जिलेकि चकिया तहसील में पायी जाती है। काली मिट्टी को समान्यतः ।।भार और काबर।। कहते है।यह चिपचिपी तथा कैल्केरिया युक्त और उर्वर होती है भींग जाने पर बहुत चिपचीपी और फैलने वाली हो जाती है सूखने पर सिकुड़ती है और गर्मियों में इसमें दरारें पड़ जाती है। काबर नमी कम धारण करती है। लाल मिट्टी पठार के उपरी भाग में तथ उपरी ढलानों पर पायी जाती है। यह दो प्रकारकी होती है :-----

१-"परवा" और २-"राकर"

"परवा" हल्की बलुई अथवा बलुई चिकनी होती है जबकि "राकर" अपक्षारित मिट्टी होती है।

खनिज पदार्थ :------- उत्तर-प्रदेश में पाये जाने वाले खनिज पदार्थ है :--- चूना-पत्थर ।।देहरादून और चकराता तहसील, जिला देहरादून, लैन्सडाउन तहसील, जिला गढ़वाल और मिर्जापुर जिले की राबर्टस गंज तहसील के अन्तगत गुर्मा-कनच-बभुहारी और कजरहट पट्टियों में।। मैग्नेलाइट और खड़िया पत्थर ।।जिला अल्मोड़ा और अलकनन्दा घाटी, जिला चमोली में।। डोलामाइट ।।जिला मिर्जापुर, टिहरी, बांदा आर देहरादून में।। कोयला ।।मिर्जापुर जिले के मकरी सोह और बन्सी क्षेत्र में।। ताबां ।।चमोली जिले के पोखरी और धानपुर क्षेत्र में तथा नैनीताल, अल्मोड़ा, गढ़वाल और टिहरी गढ़वाल जिलों में।। जिप्सम।। देहरादून, नैनीताल और टिहरी गढ़वाल जिलों में।। ग्लास-सैण्ड ।।जिला इलाहाबाद में करछना और बांदा में करवी एवं मऊ तहसील।। तथा संगमरमर ।।देहरादून, टेहरी, गढ़वाल और मिर्जापुर जिलों में।। इनके अतिरिक्त फास्फोराइट, मोरंग बालू, डायसपोर और पाइरोफिलाइट बेरियाइट्स, बाक्साइट आदि भी उपलब्ध हैं। मिर्जापुर जिला में मध्यम कोटि की नानप्लास्टिक फायरक्ले के लगभग ३० लाख मैट्रिक टन संभाव्य भण्डार का पता लगाया गया है। विन्ध्यन बलुआ पत्थर, कंकड़, रेह, कलमी, शोरा और बालू भी प्रदेश में पाये जाते हैं। सभी खनिज पदार्थ मुख्य रूप से आठ उत्तरी जिलों ।।उत्तर काशी, चमोली, पिथौरागढ़, टिहरी-गढ़वाल, गढ़वाल, अल्मोड़ा, नैनीताल और देहरादून।। तथा छः दक्षिणी जिलों ।।झांसी, हमीरपुर, बांदा इलाहाबाद, मिर्जापुर, तथा आगरा में केन्द्रित हैं।

उ०प्र० के पिछड़ेपन के कारण:---- यद्यपि योजना काल में उत्तर-प्रदेश की अर्थव्यवस्था में विकास के लक्षण दिखायी देने लगे हैं, तथापि आज भी उत्तर-प्रदेश की अर्थव्यवस्था की परम्परागत विशेषतायें विद्यमान हैं, जिनके कारण हम यह नहीं कह सकते हैं कि इसमें अल्पविकास या पिछड़ेपन के समस्त लक्षण लुप्त हो गये हैं। उत्तर-प्रदेश की अर्थ व्यवस्था की मुख्य लक्षण निम्न लिखित हैं :-----

१- <u>गरीबी</u> :---- उत्तर-प्रदेश पिछड़ा ह क्योंकि यहाँ गरीबी ह अर्थात निर्धनता रेखा से नीचे रहने वाले व्यक्तियों की संख्या अधिक है। निर्धनता रेखा के नीचे का आशय है कि आय इतनी कम होना कि जीवन की न्यूनतम आवश्यकताओं को पूरा करने लायक व्यय करने की भी सामर्थ न हो अर्थात "निर्धनता" से भी नीचे की स्थिति। वर्ष १९७७-७८ में एक अनुमान के अनुसार उत्तर-प्रदेश में ५०.०९ प्रतिशत व्यक्ति निर्धनता रेखा के नीचे जीवन व्यतित कर रहे हैं। नगरी क्षेत्र में ४९.२४ प्रतिशत तथा ग्रामीण क्षेत्र में ५०.२३ प्रतिशत लोग प्रदेश में निधनता रेखा के नीचे अपने जीवन के क्षण ह व्यतीत कर रहे हैं।[1] सातवें वित्त आयोग ।।१९७८।। की एक रिपोर्ट के अनुसार उत्तर प्रदेश के ग्रामीण और शहरी क्षेत्र में क्रमशः ३०.७१ रु० तथा ४६.८७ रु० की नीचे जीवन व्यतीत करने वाले व्यक्ति गरीबी रेखा के नीचे माने जाते है। और इस प्रकार ग्रामीण क्षेत्र में ३६५ लाख तथा शहरी क्षेत्र में ८९ लाख ।।कुल ४५१ लाख।। व्यक्ति गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रहे हैं।[2] अन्य प्रदेशों की तुलना में उत्तर-प्रदेश में सबसे अधिक जनसंख्या ।।४५१ लाख।। गरीबी रेखा के नीचे जीवन व्यतीत कर रही है।

भारतीय योजना आयोग ने ने ग्रामीण क्षेत्रों के लिए एक व्यक्ति के लिए एक दिन में २४०० कैलोरी तथा शहरी क्षेत्रों के लिए एक दिन में २१०० कैलोरी के अधार पर दरिद्रता रेखा को बताया है। इस अधारपर उ०प्र० में लगभग ५६ प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्र में तथा लगभग ४६ प्रतिशत जनसंख्या शहरी क्षेत्र में गरीबी रेखा के नीचे निवास करती है।[3]

प्रदेश में गरीबी की स्थिति बहुत दयनीय है। ~~प्रारं~~ प्रारम्भिक आवश्यकताओं में रोटी, कपड़ा और मकान का नाम आता है। लेकिन प्रदेश में भूखे, अर्धनग्न व्यक्तियों की संख्या बहुत है लोग झोपड़ों के नीचे जीवन व्यतित कररहे हैं। एक तरफ कितने लोगों को भर पेट भोजन नहीं मिल रहा है, जबकि दूसरी ओर अनाज भण्डारों में सड़ रहा है। तथा दूसरे देशों को सहायता के रूप में दिया जा रहा है। कुछ लोग अर्धनग्न है लेकिन दूसरी ओर कुछ लोगों के पास कितने कपड़े है इसका अन्दाजा नहीं लगाया जा सकता। साथ ही, लगभग एक करोड़ रुपये का कपड़ा प्रतिवर्ष विदेशों को भेजा जा रहा है इसी प्रकार की स्थिति आवास की है कुछ लोग झोपडियों और शहर की गन्दी बस्तीयों में जीवन व्यतीत कर रहें हैं तो कुछ लोग कई मंजिल क महलों में जीवन के क्षण गुजार रहे हैं।

२- <u>प्रति व्यक्ति नीची आय</u> :---- कुछ राज्यों को छोड़कर उ०प्र० में प्रति व्यक्ति वार्षिक आय का स्तरबहुत नीचा है। वर्ष १९६०-६१ में प्रति व्यक्ति वार्षिक आय मात्र २५२ रु० थी, जो वर्ष १९७५-७६ में ।।४ १९६०-६१ के भावो पर।। ६.३ प्रतिशत बढ़ी अर्थात २६८ रु० हुई लेकिन प्रचलित भावों पर यह ७८१ रु० थी। वर्ष १९७९-८० में

१- सिक्स्थ फाइव ईयर प्लान ।।१९८०-८५।। गवर्नमेंट आफ इंडिया, प्लानिंग कमीशन, पेज १७।
२- राजेन्द्र प्रसाद पाठक : महगाई - गरीबों पर असर का अध्ययन, लेख - प्रकाशित "आर्थिक जगत" ६ अप्रैल १९८१, पृ० १०-११।
३-"योजना" १५ अगस्त, १९७९, द्वारा - आनन्द स्वरूप सेक्रेटरी, डिपार्टमेंट आफ पलानिंग, उ०प्र०, पेज-९३।

लगाये गये त्वरित अनुमान के अनुमान अनुसार वर्ष १९७०-७१ के भावों पर उ०प्र० में प्रति व्यक्ति राज्य आय ४४१ रु० अनुमानित की गई, जबकि प्रचलित भावों पर ९८१ रु० थी। इसी प्रकार १९७०-७१ के भावों पर ही राष्ट्रीय प्रति व्यक्ति आय ६७७.८ रु० अनुमानित की गई जो प्रचलित भाव पर १३७८.८ रु० थी। [1] इसका तात्पर्य यह है कि जिस गति से प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय आय में वृद्धि हुई उस गति से प्रति व्यक्ति राज्यआय में वृद्धि न हो सकी अर्थात सम्पूर्ण देश के अनुरूप उ०प्र० का विकास न हो सका। प्रति व्यक्ति आय कम होने का मुख्य कारण प्रदेश की बढ़ती हुई जनसंख्या है।

३- <u>कृषि की प्रधानता</u> :—— वर्ष १९७१ की जनगणना के अनुसार उ०प्र० की लगभग ७२ प्रतिशत श्रम शक्ति कृषि एवं सम्बद्ध क्रियाओं में सलंग्न थीं। ।। लगभग ५० प्रतिशत कृषक के रूप में तथा लगभग ३२ प्रतिशत खेतिहर मजदूर के रूप में ।। प्रदेश एक कृषि प्रधान राज्य है वह इस तरह से भी स्पष्ट है कि लगभग ५० प्रतिशत राज्य-आय केवल कृषि से प्राप्त होती है। वर्ष १९७०-७१ के भावों के आधार पर वर्ष १९७९-८० में कृषि से ५१.६ प्रतिशत आय प्राप्त हुई। [1] इसके अतिरिक्त लगभग प्रति १० रोजगार प्राप्त व्यक्तियों में ७ व्यक्ति कृषि व्यवसाय में सलग्न हैं। कृषि भूमि पर जनसंख्या का भारी दबाव होने के कारण, प्रदेश "भूमि-मनुष्य अनुपात" अनुकुल नहीं है। अर्थात प्रति हेक्टेअर भूमि पर आश्रित मनुष्यों कीसंख्या अधिक है। कृषि की न्यून उत्पादकता के कारण प्रदेशीय उत्पादन में कृषि का योग दान कृषि में संलग्न श्रमशक्ति के अनुपात मु में बहुत कम है।

४- <u>जनसंख्या का भार</u> :—— १९४१-५१ की अवधि में पिछले दस वर्ष की तुलना में १३.९ प्रतिशत की वृद्धि हुई, लेकिन नियोजन काल में स्वास्थ्य सुविधाओं एवं सफाई व्यवस्था में प्रसार तथा विस्मै-निरोधात्मक औषधियों का प्रयोग बढ़ने के कारण मृत्यु दर में कमी आ गयी ।। जन्मदर पूर्ववत ऊँची ही रही ।। फलत: १९५१-६१ के बीच १९.८ प्रतिशत तथा १९७१-८१ के बीच २५.५ प्रतिशत वृद्धि हो गई। इस प्रकार जन्मदर अधिक तथा मृत्युदर में कमी से जो उ०प्र० की जनसंख्या १९५१ में ६३२ लाख थी वर्ष १९८१ की जन गणना में ११०८ लाख पहुंच गई। [2] इस जनसंख्या वृद्धि से बेरोजगारी और अल्प-बेरोजगारी की समस्या और जटिल होती जा रही है। प्रति व्यक्ति आय, उपभोग तथा जीवन-स्तर का निम्न होना जनसंख्या प्रभाव का ही प्रभाव है। अन्तत: प्रदेश में बढ़ती हुई जनसंख्या आर्थिक विकास में बाधक सिद्ध हो रही है।

५- <u>व्यापक बेरोजगारी</u> :—— प्रदेश में व्याप्त बेरोजगारी पिछड़ेपन का एक बड़ा लक्षण है। बेरोजगारी के साथ-साथ कृषि में अदृश्य बेकारी की स्थिति भी विराजमान है। प्रदेश में अदृश्य बेकारी और अशिक्षित बेकारी के साथ-साथ शिक्षित बेकारी का परिमाण भी बढ़ता जा रहा है। वर्ष १९६० में पंजीकृत बेकारों की संख्या ५८८.१ हजार थी, वह मार्च १९८० तक १५२८.१ हजार तक पहुंच गई। इस प्रकार २० वर्षों में बेरोजगारों की संख्या में लगभग तीन गुनी वृद्धि हो गई। नियोजन के फलस्वरूप यद्यपि लोगों को रोजगार बहुत दिया गया है लेकिन जनसंख्या वृद्धि के कारण उसका परिणाम अच्छा नहीं दिखायी पड़ रहा है।

१- सांख्यिकीय डायरी, १९८० उ०प्र०, अर्थ एवं संख्या प्रभाग, उ०प्र० लखनऊ, पृ० ४९।

२- भारत जनगणना-१९८१, श्रृंखला-१ भारत, जनसंख्या के अन्तिम आंकड़े, पृ० ३।

६– औद्योगिकरण का अभाव :—— औद्योगिक दृष्टि से उ०प्र० एक पिछड़ा राज्य है राज्य आय में १९ १९७०–७१ के भावों पर वा:निर्माण क्षेत्र से ८.९ प्रतिशत आय प्राप्त हुई जो वर्ष:१९७९–८० में १०.९ प्रति शत हुई लेकिन यह वृद्धि बहुत ही कम रही। यह आश्चर्य की बात है कि स्वतन्त्रता के पूर्व औद्योगिक उत्पादन में उ०प्र० का स्थान काफी ऊँचा था लेकिन धीरे-धीरे यह प्रदेश औद्योगिक क्षेत्र में पिछड़ता जा रहा है। सन् १९४१ की जनगणना के अनुसार कानपुर की जनसंख्या १० लाख थी जो उस समय केवल बम्बई, कलकत्ता और और मद्रास से कम थी। लेकिन आज स्थिति कुछ और है यह कपड़ा, ऊन, जूट और चमड़े के सामान के उत्पादन का मुख्य केन्द्र था। उ०प्र० में लगभग ८० गन्ना मिलें थी देश के कुल उत्पादन में इनका ६० प्रतिशत हिस्सा पड़ता था, लेकिन वर्ष १९७६–७७ में केवल २७.३ प्रतिशत ही चीनी उत्तर- प्रदेश से भारत को दी है।[1] इस प्रकार देश में एक तो उद्योगों की बहुत बड़ी कमी है, दूसरे जो उद्योग है वे बहुत कम उत्पादन क्षमता रखते है। अधिकतर मशीनें पुरानी है। आधुनिकतम मशीनों एवं तकनीकों का अभाव है।

७– पूँजी की कमी तथा क्षेत्रीय विषमता :——— उ०प्र० में प्रति व्यक्ति उपलब्ध पूँजी की मात्रा कम है तथा पूँजी निर्माण की प्रचलित दर बहुत नीची है। प्रदेश में घरेलू निवेश की दर प्रदेशीय आय की ३ से ८ प्रतिशत तक है। प्रदेश में प्रति व्यक्ति आय कम होने से घरेलू बचत का स्तर नीचा रहता है। वर्ष: १९७८–७९ में कुल १४१११ लाख रुपये की बचत थी लेकिन वर्ष १९८०–८१ में घटकर ६५४२ लाख रु० हो गई। इस प्रकार प्रदेशीय आय कम, बचत और निवेश का स्तर नीचा होने से पूँजी निर्माण की गति धीमी होती है।

उ०प्र० में क्षेत्रीय विषमता बहुत अधिक है। जनसंख्या की दृष्टि से जहां पर्वतीय और बुन्देलखण्ड में उत्तर-प्रदेश की कुल जनसंख्या का ४.३ प्रतिशत तथा ४.९ प्रतिशत निवास करती है। वही पश्चिमी और पूर्वी उ०प्र० में ३५.४ प्रतिशत तथा ३७.६ प्रतिशत है नगरीय जनसंख्या की दृष्टि से पूर्वी उत्तर-प्रदेश सबसे पीछे है। यहां केवल ७.४ प्रतिशत लोग नगरों में रहते है, जबकि पश्चिमी और केन्द्रीय उ०प्र० में क्रमश: १७.२ तथा १६.१ प्रतिशत लोग नगरों में निवास करते है। इसीप्रकार औद्योगिक दृष्टि से पश्चिमी उ०प्र० विकसित है। जबकि पूर्वी उ०प्र० में उद्योगों की बड़ी कमी है। क्रियात्मक जोतों का ४३.१ प्रतिशत पश्चिमी उ०प्र० में २९.२ प्रतिशत है जबकि केन्द्रीय, पर्वतीय तथा बुन्देलखण्ड में क्रमश: का १८.८, ३.८ तथा ५.१ प्रतिशत है। इस प्रकार उ०प्र० में आर्थिक विषमता के कारण भी प्रदेश पिछड़ा हुआ है। सामान्यत: पश्चिमी उ०प्र० में औद्योगिक स्थिति अच्छी तथा उत्पादकता की भी दृष्टि से प पश्चिमी क्षेत्र प्रदेश में अन्य क्षेत्र से आगे है।

८– रहन-सहन का स्तर :—— प्रदेश के वासियों का रहन-सहन का स्तर घरेलू उपभोग के आंकड़ों से प्र प्रतीत होता है उ०प्र० में ग्रामीण उपभोक्ता व्यय ।।१९६३–६४।। पर एक सर्वेक्षण कार्य हुआ था तथा उसके बाद १९७०–७१ में भारत सरकार के राष्ट्रीय प्रतीक सर्वेक्षण के समन्वय से राज्य नियोजन संस्थान उ०प्र० के अर्थ एवं संख्या प्रभाग द्वारा ग्रामीण तथा नगरीय क्षेत्रों के लिए अलग-अलग न्यादर्श प्रणाली से चुने गये ग्रामों तथा नगरीय खण्डों में प्रतीक परिवारों से घरेलू उपभोग के आंकड़े एकत्रित किये गये थे। यह आंकड़े ग्रामीण क्षेत्रों में छोटे कृषक परिवारों, भूमिहीन परिवारों तथा शेष ग्रामीण परिवारों के अलग-अलग तथा नगरीय क्षेत्र में समस्त परिवारों से संग्रह किये गये थे।

१– सांख्यिकीय डायरी, १९८०, अर्थ एवं संख्या प्रभाग, उ०प्र०, लखनऊ, पृ० २७६।

वर्ष १९६३-६४ के सर्वेक्षण के अधार पर ग्रामीण क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति मासिक व्यय २१.० रु० था जिसमें से १५.० रु० खाद्यान्नों पर तथा शेष ६.० रु० अन्य मदों में खर्च किया जाता था। दूध और कपड़े पर प्रति व्यक्ति मासिक व्यय क्रमश: १.६ रु० तथा २.० रु० था इन आकड़ों से ग्रामीण क्षेत्र के लोगों की गरीबी तथा अपर्याप्त पोषण की जानकारी का बोध होता है।[1]

प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में उपभोग-व्यय में बहुत असमानता है। ग्रामीण जनसंख्या के लगभग ३४ प्रतिशत लोगों का प्रति व्यक्ति प्रति मास लगभग १५ रु० व्यय है। उच्चतम व्यय वर्ग ।।५५ रु० से अधिक।। कुल ग्रामीण जनसंख्या का केवल २ प्रतिशत है जबकि १२ प्रतिशत गरीब जो गांवों में रहते है, प्रति व्यक्ति प्रतिमास व्यय ११.० रु० सेभी कम है।[2]

इसी प्रकार नगरीय क्षेत्रों की भी स्थिति बहुत अच्छी नहीं है। नगरीय क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति २५ रु० प्रति माह कुल उपभोग व्यय है, जिसमें से १६ रु० खाद्यान्नों पर तथा शेष अखाद्यान्नों पर व्यय ह होता है। इसी प्रकार दूध और कपड़े पर व्यय क्रमश: २.८ रु० तथा २.० रु० से भी कम है। नगरीय क्षेत्रों में भी उपभोग-व्यय में बड़ी असमानता है। कुल नगरीय जनसंख्या में में लगभग २६ प्रतिशत लोगों का प्रति व्यक्ति १५ रु० प्रतिमाह से भी कम व्यय है। उच्चतम व्यय वर्ग ।।५५ रु० से अधिक।। ६ प्रतिशत है जबकि ९ प्रतिशत गरीब लोगों का प्रति व्यक्तिप्रतिमाह व्यय ११.० रु० से भी कम है।[3]

वर्ष १९७०-७१ के सर्वेक्षण के अधार पर समस्त प्रदेश में जनसंख्या का लगभग ६० प्रतिशत व्यक्तियों का मासिक उपभोग व्यय ३४ रु० से कम था तथा १२ प्रतिशत ही ऐसे व्यक्ति थे जिनका मासिक उपभोग व्यय ५५ रु० से अधिक था। नगरीय और ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना करने पर ज्ञात होता है कि ३४ रु० प्रतिमास व्यय करने वालों का प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों में ६२ प्रतिशत और नगरीय क्षेत्र में ४९ प्रतिशत था उच्चतम व्यय वर्ग ।।५५रु० से अधिक।। में आने वाले व्यक्ति ग्रामीण क्षेत्र में १० प्रतिशत जबकि नगरीय क्षेत्र में यह प्रतिशत लगभग २० था। सर्वेक्षण से यह भी ज्ञात होता है। कि प्रदेश में प्रति - व्यक्ति मासिक उपभोग व्यय लगभग ३६ रु० था। ग्रामीण तथा नगरीय क्षेत्रों में यह व्यय क्रमश: ३४.८८ रु० और ४३.३४ रु० पाया गया।[4]

प्रदेश में सर्वेक्षण से स्पष्ट है कि ग्रामीण क्षेत्र में कुल व्यय का ७०.८ प्रतिशत खाद्य पदार्थों पर प्रतिशत खाद्य पदार्थों पर प्रति व्यक्ति मासिक उपभोग व्यय हुआ और शेष २९.२ प्रतिशत अखाद्य पदार्थों पर। इसकी तुलना में नगरीय क्षेत्र में खाद्य पदार्थों पर ६६.१ प्रतिशत और ३३.९ प्रतिशत हुआ ग्रामीण क्षेत्र में जीवन स्तर नीचा होने के कारण कुल उपभोग व्यय में खाद्यान्न पर हुए व्यय का अनुपात

१-।डा० कृपाशंकर: इकोनामिक डेवलपमेंट आफ उ०प्र० पृ० १२।

२-"रूरल कन्ज्यूमर एक्सपेन्डीचर इन यू०पी०, १९६३-६४" डायरेक्ट्रेट आफ इकोनामिक्स एण्ड स्टैटस्टि गर्वनमेंट आफ उ०प्र०, टेबुल न० ३, पृ०५६।

३- वही, पृ० ५०।

४-"उ०प्र० की आर्थिक समीक्षा, १९७३" राज्य नियोजन संस्थान, अर्थ एवं संख्या प्रभाग, उ०प्र०, लखनऊ पृ० १५।

नगरीय क्षेत्र की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्र में अधिक था । वर्ष १९७०-७१ के सर्वेक्षण से ज्ञात है कि प्रदेश में खाद्यान्न पर प्रतिव्यक्ति प्रतिमास व्यय १४.४३ रु० था । जबकि ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र में यह व्यय क्रमश: १६.१७ रु० और १३.३४ रु० था । दुग्ध और दुग्ध पदार्थों पर प्रतिव्यक्ति प्रतिमास व्यय उत्तर-प्रदेश में ४.००७ रु० था जबकि नगरीय और ग्रामीण क्षेत्र में यह व्यय क्रमश: ५.१४ रु० और ३.०० रु० था । अखाद्य पदार्थों के अर्न्तगत अन्य व्यय, जिसमें शिक्षा, चिकित्सा, मनोरंजन, इत्यादि में शामिल है, से सापेक्षिक खुशहाली का संकेत मिलता है । यह प्रतिव्यक्ति प्रति-मासिक व्यय प्रदेश में औसतन ५.२८ रु० था और नगरीय क्षेत्र में ८.९७ रु० था तथा ग्रामीण क्षेत्र में ४.७५ रु० था ।[1] इन आंकड़ो से ग्रामीण और नगरीय जीवन-स्तर के बीच असमानता का कुछ अभास मिलता है । ग्रामीण तथा नगरीय क्षेत्रों में उपभोक्ता व्यय मेंअन्तर उत्तरोत्तर कम होता जा रहा है । यह धारणा इस बात पर अधारित है कि वर्ष १९५६-५७ में रपज्य के ग्रामीण क्षेत्र में प्रति व्यक्ति उ उपभोक्ता व्यय नगरीय क्षेत्र के उपभोक्ता व्यय का केवल ६० प्रतिशत था जो वर्ष १९६४-६५ में बढ़कर ८८ प्रतिशत हो गया तथा वर्ष १९६४-७१ की अवधि मे इस प्रतिशत में ८० और ८८ के बीच उतार - चढ़ाव होता रहा ।[2] लोगों का जीवन स्तर उनके भोजन से भी जाना जा सकता है। एक अध्ययन के अनुसार प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में प्रतिदिन के भोजन में २२३७ कैलोरीसे भी कम पर जीवन व्यतीत करने वालों की संख्या १८.१३ प्रतिशत है ।[3] इस प्रकार प्रदेश के निवासियों का जीवन स्तर देखने से स्पष्ट होता है कि प्रदेश में गरीबों की संख्या अधिक है ।

इस प्रकार प्रदेश में गरीबी, प्रति व्यक्ति आय की कमी, कृषि की प्रधानता, जनसंख्या का अधिक भार, व्यापक बेरोजगारी, औद्योगीकरण के अभाव, पूंजी की कमी तथा क्षेत्रीय विषमता तो है ही जिसके कारण प्रदेश पिछड़ा है । इसके अतिरिक्त उत्तर-प्रदेश में कृषि उत्पादकता का स्तर भी निम्न है, तकनीकी ज्ञान और शिक्षा का अभाव है । बैंकिंग सुविधाओं का अभाव बिलकुल था, इसमें कुछ प्रगति हो रही है । अब ग्रामीण क्षेत्रों में भी कुछ बैंकिंग सुविधायें खोली जारही है । राजनीतिक अस्थिरता और प्रशासनिक अकुशलता ने भी इस सम्बन्ध में कोई अच्छा उदाहरण प्रस्तुत नहीं किया है । प्रदेश में कालाबाजारी, भ्रष्टाचार और बेईमानी विस्तृत रूप में पायी जाती है । यद्यपि नियोजन काल में देश विकास की ओर उन्मुख है लेकिन उ०प्र० पिछड़ता चला जा रहा है ।

१- वही, पृ० १६-१७ ।

२- "उ०प्र०, १९७७" सूचना एवं जन-सम्पर्क विभाग, उ०प्र०, लखनऊ, पृ० ८४-८५ ।

३- पावर्टी इन इंडिया: वी० यम० डान्डेकर एवं नीलकण्ठ रथ, इंडियन स्कूल आफ पोलिटिकल इकौनमी, पृ० १० ।

<u>उ0प्र0 में पिछड़े जिलों की सूची</u> :------

उ0प्र0 सरकार द्वारा निम्न लिखित जिले पिछड़े घोषित किये गये है :-

<u>पर्वतीय क्षेत्र</u> :	१- अल्मोड़ा	२- पिथौरागढ़	३- गढ़वाल
	४- चमोली	५- टिहरी गढ़वाल	६- उत्तर काशी ।
<u>पश्चिमी क्षेत्र</u> :	१- बदायूं	२- बुलन्दशहर	३- एटा
	४- इटावा	५- फररूखाबाद	६- मैनपुरी
	७- मथुरा	८-मुरादाबाद	९-रामपुर
	१०-पीलीभीत	११-शाहजहाँपुर ।	
<u>केन्द्रीय क्षेत्र</u> :	१- बाराबंकी	२-फतेहपुर	३- हरदोई
	४- रायबरेली	५- सीतापुर	६- उन्नाव ।
<u>पूर्वी क्षेत्र</u> :	१- आजमगढ़	२-बहराइच	३- बलिया
	४- बस्ती	५- देवरिया	६-फैजाबाद
	७- गाजीपुर	८- गोंडा	९- जौनपुर
	१०- प्रतापगढ़	११- सुलतानपुर ।	
<u>बुन्देलखण्ड क्षेत्र</u> :	१- बांदा	२- हमीरपुर	३- जालौन
	४- झांसी	५- ललीतपुर ।	

इस प्रकार उ0प्र0 में कुल ३९ जिले पिछड़े घोषित किये गये हैं।

१- उ0प्र0 में औद्योगिक सुविधायें एवं विस्तार, गवर्नमेंट आफ यू0 पी0, डायरेक्टरेट आफ इनडस्ट्रीज, कानपुर, पृ0 ४३ ।

उ०प्र० के प्रशासनिक क्षेत्र :--------

प्रशासन की दृष्टि से उ०प्र० में ११ कमिश्नरीयां है, जिनके अन्तर्गत निम्नलिखित ५६ जिले आते है :-------

क्रम.संख्या	कमिश्नरियाँ	जिले
१-	आगरा	आगरा, अलीगढ़, एटा, मैनपुरी और मथुरा ।
२-	इलाहाबाद	इलाहाबाद, इटावा, फर्रुखाबाद, फतेहपुर कानपुर ।
३-	फैजाबाद	बहराइच, बाराबंकी, फैजाबाद, गोण्डा, प्रतापगढ़ और सुलतानपुर ।
४-	गढ़वाल	चमोली, गढ़वाल, टिहरी-गढ़वाल, उत्तरकाशी और देहरादून ।
५-	गोरखपुर	आजमगढ़, बस्ती, देवरिया और गोरखपुर ।
६-	झांसी	ललितपुर बांदा, हमीरपुर, जौलौन और झांसी ।
७-	कुमाऊँ	अल्मोड़ा, नैनीताल और पियौड़ागढ़ ।
८-	लखनऊ	हरदोई, खीरी, लखनऊ, रायबरेली, सीतापुर और उन्नाव ।
९-	मेरठ	बुलन्दशहर, बिजनौर, मेरठ, मुजफ्फरनगर, गाजियाबाद, और सहारनपुर ।
१०-	बरेली	बरेली, मुरादाबाद, बदायूं, पीलीभीत, रामपुर और सहारनपुर ।
११-	वाराणसी	बलिया, गाजीपुर, जौनपुर, मिर्जापुर और वाराणसी ।

उत्तर-प्रदेश के आर्थिक क्षेत्र :--------

उ०प्र० को पांच आर्थिक क्षेत्रों में विभाजित किया गया है जिसमें निम्न-लिखित जिले सम्मलित है :-------

आर्थिक क्षेत्र	सम्मिलित जिले		
१- पर्वतीय क्षेत्र	१- अल्मोड़ा	२- पियौड़ागढ़	३- देहरादून
	४- गढ़वाल	५- चमोली	६- नैनीताल
	७-टेहरीगढ़वाल	८- उत्तर-काशी	

आर्थिक क्षेत्र	सम्मिलित जिले		
२- पश्चिमी क्षेत्र	१- सहारनपुर	२- मुजफ्फरनगर	३- मेरठ
	४- बुलन्दशहर	५- अलीगढ़	६- मथुरा
	७- आगरा	८- मैनपुरी	९- एटा
	१०- बरेली	११- बिजनौर	१२- बदायूँ
	१३- मुरादाबाद	१४- शाहजहापुर	१५- पीलीभीत
	१६- रामपुर	१७- फर्रुखाबाद	१८- इटावा
	१९- गाजियाबाद ।		
३- केन्द्रीय क्षेत्र	१- कानपुर	२- फतेहपुर	३- लखनऊ
	४- उन्नाव	५- रायबरेली	६- सीतापुर
	७-हरदोई	८- बाराबंकी	९- खीरी
४- पूर्वी क्षेत्र	१- इलाहाबाद	२- वाराणसी	३- मिर्जापुर
	४- जौनपुर	५- गाजीपुर	६- बलिया
	७-गोरखपुर	८- देवरिया	९- बस्ती
	१०-आजमगढ़	११- फैजाबाद	१२- गोंडा
	१३- बहराइच	१४- सुलतानपुर	१५- प्रतापगढ़
५- बुन्देलखण्ड	१- बांदा	२- हमीरपुर	३- जालौन
	४- झांसी	५- ललितपुर ।	

प्रदेश के क्षेत्रीय असमनताओं का अध्ययन करने के उद्देश्य से उनकी स्थलाकृति, जलवायु जनसंख्या का धनत्व व उत्पादित फसलों के आधार पर प्रदेश को पांच आर्थिक क्षेत्रों ---पर्वतीय पश्चिमी, केन्द्रीय पूर्वी तथा बुन्देलखण्ड ---में विभाजित किया गया है। इनमें से पूर्वी तथा पश्चिमी क्षेत्र क्षेत्रफल की दृष्टि से बहुत बड़े तथा बुन्देलखण्ड का क्षेत्रफल सबसे छोटा है। पूर्वी तथा पश्चिमी क्षेत्रों का क्षेत्रफल क्रमश: ८६ हजार तथा ४२ हजार वर्ग किमी० तथ बुन्देलखण्ड का क्षेत्रफल केवल २९ हजार वर्ग: किमी० है। अन्य दो पर्वतीय तथा केन्द्रीय क्षेत्रों का क्षेत्रफल ५१ हजार तथा ४६ हजार किमी० है। पूर्वी तथा पश्चिमी क्षेत्रों का क्षेत्रफल समस्त प्रदेश के क्षेत्रफल का क्रमश: २९.१ तथा २७.९ प्रतिशत है।

उत्तर-प्रदेश में रोजगार की प्रकृति एवं मात्रा :--------

भारत में अन्य राज्यों की तुलना में उत्तर प्रदेश में बेरोजगारी सबसे अधिक है। इसका मुख्य कारण है कि प्रदेश में जनसंख्या वृद्धि बहुत तेज है और उस अनुपात में आर्थिक विकास नहीं हो पा रहा है। प्रथम पंचवर्षीय योजना के आरम्भ में प्रदेश की जनसंख्या ६.३२ करोड़ थी जो वर्ष १९६१ में ७.३७ करोड़ हो गयी। १९७१ की जनगणना के अनुसार प्रदेश की जनसंख्या ८.८३ करोड़ थी जो १९८१ की जनगणना तक ११.०८ करोड़ हो गई। इस प्रकार १९६१-७१ के बीच जनसंख्या में १९.७८ प्रतिशत की वृद्धि हुई और १९७१-८१ के बीच २५.४९ प्रतिशत बढ़ गई। स्पष्ट है कि विगत दशक में उसके पूर्व वर्ती दशक की अपेक्षा जनसंख्या में वृद्धि की दर अधिक रही, लेकिन उस गति से प्रदेश का औद्योगिक या आर्थिक विकास न हो सका। इसलिए बेरोजगारी में तेजी से वृद्धि होना स्वभाविक हो गया।

उत्तर-प्रदेश एक कृषि प्रधान राज्य है इस लिए प्रदेश में बेरोजगारी के साथ-साथ मौसमी बेरोजगारी भी पायी जाती है क्योंकि कृषि क्षेत्र में पूरे वर्ष के लिए काम उपलब्ध नही रहता है। शकुंतला मेहरा के अनुसार कृषि क्षेत्र में श्रमशक्ति का लगभग छठा भाग प्रच्छन्न बेरोजगार है।[1] इसके अतिरिक्त प्रदेश में खुली बेरोजगारी पायी जाती है, जहां लाखों व्यक्ति ऐसे है जो शिक्षित है, तकनीकी योग्यता प्राप्त है, लेकिन उनको काम करनेका अवसर नहीं मिल रहा है। शिक्षित वर्ग में अपेक्षाकृत तेजी के साथ बढ़ती हुई बेरोगारी का मुख्य कारण यही है कि अर्थ व्यवस्था का इतनी धीमी गति से वि विकास हो रहा है कि वह स्कूलों, कालेजों और तकनीकी संस्थानों से शिक्षा लेकर निकलने वालों को रोजगार दे पाने में असमर्थ है। मार्क ब्लाग के अनुसार, "भारत में ग्रेजुएट्स की मांग निश्चित रूप से बढ़ी है परन्तु इसमें सन्देह नहीं है कि इनकी पूर्ति मांग की तुलना में अधिक तेजी के साथ बढ़ी है। इस स्थिति का कारण यह है कि जहां भारत में स्कूल और कालेज की शिक्षा निजी लागत बहुत कम है। वहां इससे लाभ की प्रत्याशा बहुत अधिक होती है। इतनी ही नहीं प्राय: शिक्षित लोग अधिक लाभप्रद रोजगार पाने की प्रत्याशा से अपनी योग्यता से नीचे स्तर का काम स्वीकार नहीं करते चाहे उन्हें कुछ समय तक बेरोजगार ही क्यों न रहना पड़े।[2]

१- शकुंतला मेहरा : सरप्लस लेबर इन इंडिया एग्रीकल्चर, इंडियन इकोनामिक रिव्यू अप्रैल १९६६, पृ०११२

२- मार्क ब्लाग - कालेज आफ एजुकेटेड अनइम्प्लायमेंन्ट इन इंडिया।

उत्तर-प्रदेश में बेरोजगारी की स्थिति :-[1,2]

तालिका न० : २

वर्ष	पंजीकृत प्रार्थी	काम दिलाये गये प्रार्थी	सूचित रिक्त स्थान
१९६०	५८८.१	६४.७	९४.५
१९६५	७३३.४	७८.२	१११.३
१९६८	६५९.४	६३.१	९४.३
१९७३	९००.२	७८.५	११४.६
१९७५	८७१.५	४२.०	६१.२
१९७८	१३६९.३	४६.९	७०.६
१९७९	१४४४.९	३२.९	६३.९
१९८०[2]	७९१९४७	३१६४०८९	६३०३२
१९८२	८२९४००	४०६३७	६७६४७

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि पंजिका में क्रमागत वृद्धि की प्रवृत्ति रही है। वर्ष १९७८ की तुलना में वर्ष १९७९ में लोगों को रोजगार कम दिया जा सका तथा रिक्तस्थानों की संख्या में भी वर्ष: १९७९ में कमी रही। वर्ष १९७९ में केवल ३२.९ हजार व्यक्तियों को रोजगार में लगाया जा सका जबकि १९८२ में ४०६३७ लोगों को सेवायोजित कराया गयाइसके समय उत्तर प्रदेश में सेवायोजन कार्यालयों के माध्यम से भी बहुत लोगों को रोजगार दिलाया जाता है लेकिन इनकी भूमिका बहुत संतोषजनक नहीं है।

महिलाओं में भी बेरोजगारी की स्थिति दिन पर दिन बढ़ती जा रही है। वर्ष १९७९ सितम्बर तक में ४३.४ महिलाएँ पंजीकृत हुई जिसमें से केवल १७० महिलाओं को रोजगार दिया जा सका। वर्ष १९७९ तक कुल बेरोजगार महिलाओं की संख्या ७२५४४ है जो एक बड़ी संख्या है। वर्तमान समय मार्च १९८० में विभिन्न

१- स्रोत:- प्रशिक्षण एवं सेवा योजना निदेशालय, उत्तर-प्रदेश।

२- वार्षिक कार्य विवरण १९८२ प्रशिक्षण एवं सेवायोजन निदेशालय, उत्तर-प्रदेश।

सेवायनेजन कार्यालयों की केन्द्रसरकार का निदेश प्राप्त है कि रोजगारदेने में महिलाओं को प्रथम प्राथमिकता प्रदान की जाय जिससे यह आशा की जा सकती है कि निकट भविष्य में महिलाओं को अधिक रोजगार प्राप्त हो सकेगा । इसके अतिरिक्त विश्व-विकलांग दिवस के अवसर पर उत्तर-प्रदेश के समस्त सेवायोजन कार्यालयों में वर्तमान समय में ३८५९ विकलांग पंजीकृत है तथा इन कार्यालयों द्वारा ५१२ विकलांगों को विभिन्न व्यवसायों में सेवायोजित कराया जा चुका है।

बेरोजगारी की स्थिति :-------

उत्तर-प्रदेश में बेकारी का सही-सही अनुमान लगाना सम्भव नहीं है, क्योंकि विश्वसनीय आंकड़ो का अभाव है। कुछ व्यक्ति बेरोजगार है लेकिनरोजगार कार्यालय में पंजीकृत नहीं है, कुछ लोग रोजगार प्राप्त व्यक्ति है फिर भी और अच्छी जगह पहुंचने की आशा में पंजीकरण जारी रखते है। कुछ लोग कई कार्यालयों में पंजीकृत हैं इसलिए सरकारी आंकड़े बहुत सही नहीं हैं फि र भी इन आंकड़ो से बेरोजगारी की एक झलक मिलती है बेरोजगारी सम्बन्धी अनुमानों के विषय में योजना आयोग द्वारा नियुक्त विशेषज्ञ समिति १९७० ने अपने रिपोर्ट में यहां तक कहा था कि इस देश की जटिल अर्थ व्यवस्था में श्रमशक्ति,बेरोजगारों को एक ही श्रेणी में रखकर देखना ठीक न नहीं है।[१]

भारत सरकार के महानिदेशक प्रशिक्षण एवं सेवायोजन द्वारा वर्ष १९६८ में किये गये एक अध्ययन के अनुसार उत्तर-प्रदेश में सेवयोजन कार्यालयों में पंजीकृत व्यक्तियों में से ३६.५ प्रतिशत व्यक्ति ग्रामीण क्षेत्र के थे। इन पंजीकृत व्यक्तियों में से ६३.५ प्रतिशत व्यक्ति रोजगार में लगे थे और ६.१ प्रतिशत विद्यार्थी थे। राष्ट्रीय प्रतीक सर्वेक्षण के एक अन य अध्ययन के अनुसार बेरोजगार व्यक्तियों में से केवल ५० प्रतिशत ही वास्तवमें पंजीकृत होते हैं, अतएवं नगरीय क्षेत्र में बेरोजगार व्यक्तियों की संख्या अधिक है और प्रतिवर्ष बढ़ती जा रही है। उत्तर-प्रदेश में लगभग ७५ प्रतिशत काम करने वाले खुद अपने कार्य में लगे हैं, लगभग १४ प्रतिशत सामयिक कार्यकर्ता के रूप में और लगभग ११ प्रतिशत स्थायी वेतन या मजदूरी पर कार्यरत है। स्वत: रोजगार प्राप्त व्यक्ति ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक है और इनकी संख्या कुल कर्मकरों में ७८ प्रतिशत से अधिक है तथा ये अधिकतर कृषि कार्य में लगे हैं।

१- पांचवी पंचवर्षीय योजना का नीति-पत्र, उत्तर-प्रदेश, पृ० १६-१७।

यहां कोई भी ऐसा स्रोत नहीं है जिसके द्वारा प्रदेश में बेरोजगारी का सही विश्वसनीय पता लग सके। किसीप्रकार, सूचना के तीन स्रोत, रोजगार कार्यालय की जीवितपंजिका, सेंसस और नेशनल सैम्पुल सर्वे उत्तर-प्रदेश में बेरोजगारी का स्वरूप तथा मात्रा को बताते हैं। यद्यपि १९७१ के सेंसस ने बेरोजगार व्यक्तियों के विषय में कोई सूचना एकत्र नहीं किया किन्तु १९८१ सेंसस ने इन बेरोजगारों के सम्बन्धित सूचना एकत्रित किया है।

उत्तर-प्रदेश में बढ़ते हुए पंजीकरण के तरफ जीवित पंजिका संकेत करती है जिसको निचे की सारणी में देखा जा सकता है[1] :-———

तालिका न० : ३

जीवित पंजिका के अनुसार बेरोजगारी १९७१-८४

वर्ष	।। पंजीकृत लाख में ।।
१	२
१९७१ जून	४.२५
१९७५ "	७.२२
१९७९ ,,	१४.३६
१९८१ दिसम्बर	१.०६
१९८२ ,,	१६.१५
१९८४ ,,	१८.८७

उपरोक्त तालिका में बढ़ते हुए पंजीकृत अभ्यर्थियों के स्वरूप वर्तमान आर्थिक क्रियाओं की ओर संकेत करती है, यह सम्भव नहीं है कि इन काम चाहने वालों की बढ़ती हुई संख्या को कार्य दिया जा सके। नेशनल सैम्पुल सर्वे ने भी ग्रामीण और नगरीय दोनों क्षेत्रों में बढ़ती हुई बेरोजगारी के तरफ संकेत दिया है। तुलनात्मक रूप से, जनसंख्या का बढ़ता हुआ प्रतिशत नगरीय क्षेत्रों में अधिक दिखायी देता है जो कि निम्न तालिका से स्पष्ट है[2]:———

१- स्रोत :- डायरेक्टरेट आफ ट्रेनिंग एण्ड इम्प्लाइमेंट, यू०पी०।

२- स्रोत :- इम्प्लाइमेंट सिचिवेसन इन यू०पी० ड्यूरिंग द सेवेन्थ प्लान, मैनपावर प्लानिंग डिविजन, पेज - ८।

तालिका न० : ४

।। १५–५९ वर्षो के आयु–वर्ग में ।।			
चक्र	ग्रामीण	नगरीय	योग
२७ वां चक्र ।। १९७२–७३ ।।	१.२४	१.६८	१.३०
३२ वां चक्र ।। १९७७–७८ ।।	१.४१	२.६४	१.५९

नवीनतम सूचना के अनुसार, १५–५८ आयु वर्ग के श्रम–शक्ति में २.७७ प्रतिशत बेरोजगार थे, जिसमें ग्रामीण और नगरीय क्षेत्रों में यह प्रतिशत यथाक्रम २.४० प्रतिशत तथा ५.११ प्रतिशत था। श्रम–शक्ति में पुरूषों का भाग ३.११ तथा महिलाओं का १.४८ था। इस प्रकारकार्य करने वालों में एक बहुत बड़ी संख्या अपर्याप्त रोजगार प्राप्त व्यक्तियों का है।

उ०प्र० तथा भारत में, नेशनल सैम्पुल सर्वे के अनुसार, १५–५९ वर्षो के आयु–वर्ग के तुलनात्मक श्रम – शक्ति की विशिष्टता को नीचे की तालिका में देखा जा सकता है[1]:

तालिका न० : ५

जनसंख्या में श्रम शक्ति का प्रतिशत	उ०प्र०	भारत
जनसंख्या में श्रम–शक्ति का प्रतिशत	५७.५२	६२.९४
जनसंख्या में कार्यकारी–शक्ति का प्रतिशत	५५.९२	५९.९०
श्रम–शक्ति में बेरोजगारों का प्रतिशत	२.७७	४.८४
उपयोग में आने वाले कार्य में लगे व्यक्तियों का प्रतिशत ।। उपयोगी दर पर ।।	५.५८	८.५४
शुद्ध प्रान्त की घरेलू उत्पादन गुणन–खंड पर ।। प्रति व्यक्ति आय ।। १९७७–७८ के मूल्य स्तर पर ।। रु० में ।।	९१६	११८९

१– ड्राफ्ट एनुअल प्लान १९८३–८४, वाल्यूम–१, प्लानिंग डिपार्टमेन्ट उत्तर–प्रदेश पेज १७२।

पिछले तालिका में यह देखा गया ह कि यद्यपि उत्तर-प्रदेश में बेरोजगारी की दर भारत की तुलना में औसत रूप में कम है, प्रान्त की प्रति व्यक्ति कम आय से पता चलता है कि अर्थ व्यवस्था निम्न स्तर पर कार्य कर रही है तथा एक कमाने वाला एक बड़े परिवारका भरण-पोषण करता है। अन्तर-प्रान्तीय तुलना आगे परिशिष्ट २ में देखा जा सकता है।

बेरोजगारी की विशेषताएं :------

प्रदेश में बेरोजगारी की दर प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न-रूप में देखने को मिलती ह। नैशनल सैम्पुल सर्वे के २७ वें चक्र के अनुसार।। प्रति दिन की स्थिति के अधार पर। प्रदेश में बेरोजगारी का अनुमान ३.६८ प्रतिशत लगाया था। इस बेरोजगारी का बदलता हुआरूप हिमालयन क्षेत्र में १.१८ प्रतिशत तथा पूर्वी क्षेत्र में ४.५६ प्रतिशत है। दक्षिणी क्षेत्र में बेरोजगारी का दर ३.२८ प्रतिशत अंकित किया गया जबकि पश्चिमी तथा केन्द्रीय क्षेत्र में इस बेरोजगारी का दर यथा क्रम २.७६ और २.२८ प्रतिशत है।[१]

जीवित पंजिका में पंजीकृत १५ लाख में से, ५.४३ लाख अशिक्षित थे जबकि हाईस्कूल तथा इण्टर मिडियट तक शिक्षा प्राप्त करने वालों की संख्या ६.८६ लाख थी। स्नातक और इसके ऊपर तक शिक्षा प्राप्त करने वालों कीसंख्या २.०७ लाख थी जबकि व्यवसायिक और तकनीकी कार्य की खोज करने वालों कीसंख्या ०.७० लाख थी।

शैक्षाणिक स्तर पर जीवित पंजिका में पंजीकृतों का वितरण इस प्रकार है[२]:---------

तालिका न0 :- ६

श्रेणी	योग का प्रतिशत
१- अशिक्षित	३६.०६
२- हाईस्कूल और इन्टरमीडियट	४४.५५
३- स्नातक और ऊपर तक	१३.७४
४- व्यवसायिक और तकनीक	४.६५

१- ड्राफ्ट एनुअल प्लान-१९८३-८४, वाल्यूम - १, प्लानिंग डिपार्टमेन्ट उत्तर-प्रदेश पेज - १७३।

२- वही पेज १७३।

शिक्षित बेरोजगारी व्यक्तियों का स्वरूप नेशनल सेम्पूल सर्वे के ३२ वें चक्र में यह मिलता है कि बेरोजगार व्यक्तियों में मीडिल स्तर तक के बेरोजगारों का भाग ३३ प्रतिशत था। हायर सेकेन्डरी का भाग १७ प्रतिशत जबकि स्नातक और इसके ऊपर तक का भाग ९ प्रतिशत था। अशिक्षित बेरोजगार व्यक्तियों का बहुत बड़ा भाग ४१ प्रतिशत था। ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र में पूर्ण बेरोजगार व्यक्तियों को निचे की सारणी में दिया गया है[1] :-----

तालिका न० :७

वर्ग	ग्रामीण		नगरीय		योग	
१	२ २७ वें चक्र	३ ३२ वें चक्र	४ २७ वें चक्र	५ ३२ वें चक्र	६ २७ वें चक्र	७ ३२ वें चक्र
१- अशिक्षित	५७.९६	४९.३८	२१.८७	१५.१६	४८.८२	४०.७८
२- मिडिलसे ऊपर	३२.९०	२९.४५	४८.२९	४४.८७	३६.४७	३३.३३
३- हायर सेकेन्डरी	८.३९	१५.३०	१७.९९	२१.३४	१०.६२	१६.८२
४- स्नातक और ऊपर तक	१.७५	५.८७	१३.८५	१८.६३	४.०९	९.०७
योग	१००.००	१००.००	१००.००	१००.००	१००.००	१००.००

उत्तर-प्रदेश में रोजगार :-----

श्रम-शक्ति में कर्मकर तथा बेरोजगार दोनों श्रेणियों के व्यक्ति शामिल होते हैं। राष्ट्रीय प्रतीक सर्वेक्षण के साप्ताहिक स्तर के अधार पर वे सभी व्यक्ति कर्मकर होंगे जिन्होंने संदर्भित सप्ताह में एक दिन के लिए भी अपनी सेवायें दिया है अथवा कार्य किया है।

इस परिभाषा के अधार पर श्रम-शक्ति में कर्मकरों का प्रतिशत ९७.२३ था अर्थात जो १५-५९ वर्ष आयु वर्ग की जनसंख्या में ५५.९२ प्रतिशत के समतुल्य था जबकि अवशेष २.७७ प्रतिशत बेरोजगार व्यक्ति श्रम-शक्ति में सम्मलित थे। लगभग ५.४३ प्रतिशत श्रम-शक्ति में अर्द्ध बेरोजगार प्राप्त रही। इस प्रकार पूर्ण तथा आंशिक रूप से बेरोजगार व्यक्तियों सहित कुल ८.२० प्रतिशत व्यक्ति बेरोजगार थे।

१- ड्राफ्ट एनुअल प्लान-१९८३-८४, वाल्यूम - १, प्लानिंग डिपार्टमेंट उत्तर-प्रदेश पेज १७३।

१- रोजगार की प्रवृत्ति तथा आकृति :-----------

यद्यपि विभिन्न जनगणनाओं में कर्मकरों का विभाजन उपलब्ध है। किन्तु, इन जनगणनाओं में प्रयुक्त परिभाषाओं एवं संकेतो में एकरूपता न होने के कारण विभिन्न जनगणनाओं कीसूचना तुलनीय नहीं है। तथापि विभिन्न जनगणनाओं से उपलब्ध आंकड़े यह अवश्य संकेत करते है कि गत ३५ वर्षों के नियोजित प्रयासोंके बावजूद कृषि की निरन्तर प्रभावी भूमिका है। उदाहरणार्थ :--- सन् १९५१ में ७७ प्रतिशत व्यक्ति कृषि - क्षेत्र पर ही आत्म निर्भर एवं आश्रित थे। सन् १९६१ में कुल कर्मकरों के ४६ प्रतिशत तथा वर्ष १९७१ में लगभग ७८ प्रतिशत कर्मकर इस क्षेत्र में कार्यरत थे। लगभग सभी देशों में कृषि पर श्रम-शक्ति के भार में कमी को आर्थिक विकास का द्योतक माना गया है। अत: उक्त स्थिति से स्पष्ट है कि अकृषि क्षेत्र में रोजगार की दर श्रमशक्ति में हुई वृद्धि कोैं अपनाने में असमर्थ रही है।

२- उत्तर-प्रदेश में क्षेत्रानुसार रोजगार तथा बेरोजगार :-------

ऊपर, यह स्पष्ट किया जा चुका है कि रोजगार की दर में हुई वृद्धि भी श्रम-शक्ति में हुइ वृद्धि को अपना सकने में असमर्थ रही और इसी का परिणाम है कि देश बेरोजगारी का अखाड़ा बना हुआ है। अकृषि क्षेत्रों में तो यह स्थिति और भी भयानक है। इसे देखने और समझने के लिए यहां, उत्तर-प्रदेश में क्षेत्रानुसार रोजगार तथा बेरोजगारों की संख्या को निम्नलिखित तालिका के माध्य से प्रस्तुत किया जा रहा है।

तालिका नं० : ८

उत्तर-प्रदेश में क्षेत्रानुसार रोजगार तथा बेरोजगार[१]

।। लाख में ।।

क्षेत्र	पर्वतीय		पश्चिमी		मध्यवर्ती		बुन्देलखण्ड		पूर्वी	
	बेरोजगार	रोजगार प्राप्त	बेरोजगार	रोजगार प्राप्त	बेरोजगार	रोजगार प्राप्त	बेरोजगार	रोजगार प्राप्त	बेरोजगार	रोजगार प्राप्त
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११
ग्रामीण	०.१६	०.५७	०.८८	४.८५	०.४५	२.६१	०.२३	१.०९	१.७९	१०.७
नगरीय	०.०९	०.१२	०.५३	१.३४	०.३३	०.४०	०.०७	०.२५	०.३६	०.४९

१- पर्सपेक्टिव प्लानिंग, उत्तर-प्रदेश, पृष्ठ - ८७।

राष्ट्रीय प्रतीक सर्वेक्षण की ३२ वीं आवृत्ति पर आधारित आंकड़ों से उभरने वाले सेक्टोरल विभाजन से स्पष्ट है: कि कर्मकरों में लगभग ७५ प्रतिशत स्वत: रोजगार प्राप्ततथा ११ प्रतिशत नियमित वेतन तथा मजदूरी प्राप्त कर्मिक थे। स्वत: रोजगार प्राप्त व्यक्तियों का अशं ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक था जहां यह कुल कर्मकरों का ७८ प्रतिशत था। स्वत: रोजगार प्राप्त यह व्यक्ति कृषि के क्षेत्र में ही केन्द्रित थे। कदाचित ग्रामीण क्षेत्रों में अर्द्ध बेरोजगारी का अकार अधिक होने का भी यही कारण है। क्योंकि लगभग ७० प्रतिशत कृषक परिवार एक हेक्टेयर से कम जोत वाले वर्ग के अन्तर्गत आते हैं। कृषि गणना १९७० -७१ एवं १९७६ - ७७ से स्पष्ट है कि इस अवधि में एक हेक्टेयर से कम जोतों की संख्या में १३ प्रतिशत एवं १.२ हेक्टेयर की जोतों में ३.४४ प्रतिशत की वृद्धि हुई है। यह स्थिति ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगारी कीमहानता में और अधिक वृद्धि करती है।

पिछले तालिका के अनुसार, पर्वतीय क्षेत्र में बेरोजगारों की तुलना में रोजगार प्राप्तों कीसख्या अधिक है। जैसे - ग्रामीण और नगरीय बेरोजगारों की संख्या जहां ०.१६ और ०.०९ है वही रोजगार प्राप्तोंकीसंख्या ०.५० और ०.१२ है। पश्चिमी, मध्यवर्ती, बुन्देलखण्ड और पूर्वी क्षेत्रों मेए भी यही स्थिति है।

३- श्रम-शक्तिकी तुलना में :-------

उत्तर-प्रदेश में क्षेत्रानुसार रोजगार प्राप्त और बेरोजगारों का तुलनात्मक परिचय प्राप्त करने के बाद यह जिज्ञासा होना स्वभाविक है कि उत्तर-प्रदेश कीश्रम-शक्ति किस प्रकार की है। इसका परिचय प्राप्त करने के लिए हमें प्रदेश की श्रम-शक्ति को भारत की श्रम-शक्ति के साथ-साथ देखना होगा। इसे हम निम्न लिखित तालिका में अवलोकन करेंगे :-----------

तालिका न0 : ९

उत्तर-प्रदेश तथा भारत में श्रम - शक्ति की तुलना[१]

।। लाख में ।।

मद	१९७१		१९८१	
	उ0प्र0	भारत	उ0प्र0	भारत
१	२	३	४	५
१- पूरी जनसंख्या	८८३.४१	५४८१.६०	११०८.६२	७७५२.८८
२- काम करने वालों की संख्या	२७३.३४	१८०४.८५	३४६.५१	२४४६.०५
३- बिना काम वालों की संख्या	६१०.०७	३६७६.७५	७६८.११	४२०६.८३
४- आश्रित अनुपात	२.२२	२.०४	२.२६	१.७२

१- ड्राफ्ट सेवेन्थ फाइव एअर प्लान एण्ड एनूअल प्लान १९८५-८६, वाल्यूम-१, उ0प्र0 पेज १३५।

४- संगठित क्षेत्र में रोजगार :—

यद्यपि रोजगार तथा उसके स्वरूप के बारे में कोई नियमित सूचना उपलब्ध नहीं है, तथापि रोजगार बाजार सूचना कार्यक्रम की परिधि में सार्वजनिक क्षेत्र के समस्त प्रतिष्ठान तथा निजी क्षेत्र में १० या उससे अधिक व्यक्तियों को रोजगार प्रदान करने वाले अकृषि प्रतिष्ठान आते है। प्रदेश में वर्ष १९७१ में कुल कर्मकरों का ७ प्रतिशत ही संगठित क्षेत्र में कार्यरत थे जैसा कि रोजगार बाजार सूचना प्रतिवेदनों से स्पष्ट है। संगठित क्षेत्रों में रोजगार वृद्धि की वार्षिक दर १९७१-७९ की अवधि में २१ प्रतिशत है जो प्रति वर्ष लगभग ०.४४ लाख व्यक्तियों के सापेक्ष्य है। किन्तु राज्यवार तुलना से स्पष्ट होता है कि देश में कुल संगठित क्षेत्र के रोजगार में प्रदेश का अंश १०.४४ प्रतिशत से घटकर १९६७-७९ की अवधि में १०.२५ हो गया। इसका प्रमुख कारण प्रदेश में उक्त क्षेत्र में रोजगार की वृद्धि का अन्य प्रदेशों की तुलना में कम होना है।

उत्तर प्रदेश में सार्वजनिक क्षेत्र में रोजगारी को निम्न लिखित तालिका में दिखाया गया है :-

५- उत्तर-प्रदेश में सार्वजनिक क्षेत्र में रोजगारी [१]:---

तालिका न० : १०

रोजगार	रोजगार प्राप्त व्यक्तियों का प्रतिशत				
	१९७४	१९७८	१९७९	१९८२	१९८३
१	२	३	४	५	६
१- केन्द्रीय सरकार में	२६.६	२५.७	२५.४	२४.०	२४.०
२- राज्य सरकार में	४१.१	३९.२	३७.५	३८.३	३८.६
३- अर्द्ध सरकारी कार्यालयों में	१३.८	१७.९	१८.७	२०.४	२०.८
४- स्थानीय निकायों में	१८.५	१७.२	१८.४	१७.३	१६.६
५- कुल	१००.०	१००.०	१००.०	१००.०	१००.०
कुल रोजगार प्राप्त व्यक्तियों की संख्या ।000।।	१५१४	१६३५	१६९३	१८६२	१८८९

१- सांख्यिकीय डायरी, उत्तर-प्रदेश १९७९, तथ १९८३।

पिछले तालिका में रोजगार प्राप्त व्यक्तियों का प्रतिशत उत्तर-प्रदेश के सन्दर्भ में देखने से पता चलता है कि १९७४ में केन्द्रीय सरकारमें रोजगार प्राप्त व्यक्तियों का जो प्रतिशत २६.६ था वह १९८२ में एवं १९८३ में घटकर क्रमश: २४.० तथा २४.० हो गया है। राज्य सरकार की सेवा में का प्रतित भी इसी के अनुसार घटता हुआ प्राप्त प्राप्य होता है। स्थानीय निकायों में घट-बढ़ की स्थिति देखने को मिलती है। जैसे १९७४ में १८.५ प्रतिशत से घटकर बढ़ १७ .२ प्रतिशत का होना और १९७९ में बढ़कर १९७८ के १७.२ प्रतिशत के स्थान पर पुन: १८.४ प्रतिशत का होना। तथा १९८२ तथा १९८३ में क्रमश: १७.३ प्रतिशत तथा १७.६ प्रतिशत होना परन्तु अर्द्ध सरकारी कार्यालयों में यह स्थिति नहीं है। इसमें रोजगार प्राप्त व्यक्तियोंका प्रतिशत निरन्तर बढ़ता हुआ देखने को मिलता है। जैसे १९७४ में १३.८ प्रतिशत १९७८ में उससे बढ़कर १७.९ प्रतिशत और १९७९ में उससे भी बढ़कर १८.७ प्रतिशत तथा १९८२ - ८३ में क्रमश: बढ़कर २०.४ तथा २०.८ प्रतिशत। यह प्रतिशत घटने का अर्थ यह नहीं हैकि रोजगार प्राप्त व्यक्तियों कीसंख्या में कोई वृद्धि हुई ही नहीं है। क्योंकि कुल रोजगार प्राप्तव्यक्तियों की संख्या में क्रमश: वृद्धि प्राप्त होती है। आंकड़ों को आत्मसात करने से पता चलता है कि वर्ष १९७४ में जहां रोजगार प्राप्त व्यक्तियों की संख्या इस प्रदेश में १५१४ प्रतिशत थी वहीं १९७८ एवं १९७९ में वह क्रमश: १६३५ एवं १६९३ तथा १९८३ तक १८८९ तक हो गयी थी।

श्रम-शक्ति का केवल ७ प्रतिशत भाग ही संगठित क्षेत्र में रोजगार में लगा हुआ है, किन्तु नेशनल सैम्पुल सर्वे के सूचना के अनुसार सम्पूर्ण मजदूरों में से प्रतिशत का ११ प्रतिशत भाग ही मजदूरी प्र प्राप्त करने वाले कर्मकरों का भाग अमृषिय क्षेत्र में है। इस प्रकार संगठित क्षेत्र के आंकड़े इस भाग के रोजगार का एक विश्वसनीय तस्वीर प्रकट करता है। यह सूचना रोजगार दफ्तर द्वारा रोजगार बाजार संचना कार्यक्रम केअन्तर्गत लगतार या खण्ड के रूप में भी एकत्र किया गया है।

पिछले कुछ वर्षमें संगठित क्षेत्रोंमें रोजगार के स्वरूप को आगे की तालिका देखा में देखा जा सकता है :-----------

तालिका न० ११

सार्विजनिक और नीजि क्षेत्रों में रोजगार का स्वरूप[१] ।।लाख में ।।

वर्ष	सार्वजनिक क्षेत्र	संकेतक न०	नीजि क्षेत्र	संकेतक न०	योग	संकेतक न०
१	२	३	४	५	६	७
मार्च १९७५	१५ .२९	१००.००	५.६२	१००.००	२०.९१	१००.००
,, १९७६	१५.६२	१०२.१६	५.४७	९७.३३	२१.०९	१००.००
,, १९७७	१५.८५	१०३.६६	५.४९	९७.६९	२१.३४	१०२.०६
,, १९७८	१६.४५	१०७.५९	६.३१	११२.२८	२२.७६	१०८.८५
,, १९७९	१६.९५	११०.८६	५.८७८	१०४.४५	२२.८२	१०९.१३
,, १९८०	१७.३८	११३.६७	५.५३	९८.४०	२२.९१	१०९.५६
,, १९८१	१७.९४	११७.३३	५.६३	१००.१८	२३.५७	११२.७२
जून १९८२	१८.६२	१२१.७८	६.२८	१११.७४	२४.९०	११९.०८

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि संगठित क्षेत्र में रोजगार वर्ष १९७५ -८२ के बीच १९ प्रतिशत के हिसाब से बढ़ा । इसी प्रकार यह भी देखा गया कि १९८०-८२ जो कि छठवीं पंचवर्षीय ~~सनेजम~~योजना के प्रारम्भ मे दो वर्ष थे, तुलनात्मक रूप में इस अवधि में भी वृद्धि हुई । इन वर्षों के अवधि में रोजगार में पहले जैसे ही वृद्धि होती रही जो कि पंचवर्षीय योजना १९७५-८० के मध्य ९ प्रतिशत के क्रम में बढ़ते हुए अंकित किया गया । १९८०-८२ के इन दो वर्षों के अवधि में, सार्वजनिक क्षेत्र के ८ प्रतिशत के विपरित नीजि क्षेत्र में १३ प्रतिशत रोजगार की वृद्धि हुई ।

१९७५-८२ के अन्तर्गत औसत वार्षिक जोड़ लगभग ५७ हजार थे । यह स्पष्ट है कि बढ़ते हुए संगठित क्षेत्र में गिरता हुआ रोजगार श्रम-शक्ति में कम बढ़ोतरी के रण है । भारत के पूरे प्रकरण में यह माना गया कि उत्तर-प्रदेश का संगठित क्षेत्र में रोजगार में भाग लेने की मात्रा प्रत्येक वर्ष घटती जा रही है । संगठित क्षेत्र के रोजगार में १९६७ में प्रान्त का १०.४४ प्रतिशत हिस्सा था जो कि १९८१ में घट कर १० .२५ प्रतिशत हो गया ।

१- ड्राफ्ट एनुअल प्लान, १९८४ - ८५, वाल्यूम - १, उत्तर-प्रदेश पृ० ८१ ।

तालिका न0 : १२

खण्डवार रोजगार में वृद्धि ।। कर्मकरों की संख्या मार्च के अनुसार[1]।।

।। लाख में ।।

उद्योग श्रेणी	वर्ष १९७९	१९८०	१९८१	१९८२	प्रतिशत-परिवर्तन १९७९-८२
१	२	३	४	५	६
१- कृषि, शिकार,वनविज्ञान	०.५८	०.५९	०.६२	०.६५।+।	१२.०७
२- और मछली	।२.५५।	।।२.५८।	।।२.६४	।२.६१ ।	
२- खनन और क्वायरिंग	०.०५	०.०५	०.०५	०.०६ ।।	२०.००
	।२.२२।	।०.२२।	।०.२१ ।	।०.२४।	
३- मैन्यूफैक्चरिंग	४.७८	४.८१	४.५३	५.३२	११.३०
	।२१.०२।	।१९.०८।	।१९.२८।	।२१.३६।	
४- निर्माण	१.४७	१.४९	१.५३	१.५८	७.४८
	।६.४६।	।६.५२।	।६.५१।	।६.३४।	
५- बिजली, गैस और पानी	०.८६	०.८८	०.८९	०.९१	५.८१
	।३.७८ ।	।३.८५।	।३.७९।	।३.६५।	
६- होलसेल, रिटेल , ट्रेड, जलपान और होटल	०.२५	०.२४	०.२६	०.२७	८.००
	।१.१०।	।१.०५।	।१.१०।	।१.०८।	
७- यतायात,स्टोर और संचार	३.२१	३.२८	३.३६	३.३४	४.०५
	।१४.१२।	।१४.३४।	।१४.३०।	।१३.४१।	
८- वित्तीय, इन्सूरेन्स,रियलइस्टेट और व्यापार सेवायें	०.७०	०.७७	०.८१	०.८९	२७.१४
	।३.०८।	।३.३६।	।३.४५ ।	।३.५७।	
९- सामुदायिक, सामाजिक और व्यक्तिगत सेवायें	१०.८४	११.१६	११.४५	११.८९	९.६९
	।४७.६७।	।४८.८०।	।४८.७२।	।४७.७४।	
योग	२२.७४	२२.८४	२३.५०		९.५४
	।।१००.००।।	।।१००.००	।१००.०० ।।		

।।नोट : कोष्ठक में दियें गये अंक प्रतिशत को प्रगटकरते है ।।

१- स्रोत:ई0 एम0 आई0 डाटा ।

पिछली तालिका से स्पष्ट है कि संगठित क्षेत्र के रोजगार में वर्ष १९८२ में जनसमुदाय उद्योग श्रेणी सामाजिक और व्यक्तिगत सेवाओं में एक बहुत बड़ा कर्मकरों का भाग है। दूसरे मुख्य विभाग वस्तुओं का निर्माण करने ।।१२प्रतिशत ।। और यातायात, गोदाम में माल की रखवाई, संचार ।।१३ प्रतिशत ।। का भाग है। इस प्रकार १९७९-८२ में रोजगार में वृद्धि २७ प्रतिशत से भी अधिक उद्योग वर्ग का वित्तीय विभाग, बीमा, वास्तविक जायदाद इत्यादि में हुई, खान औरपत्थर की खान में २० प्रतिशत और निर्माण कार्य क्षेत्र में रोजगार ११ प्रतिशत से भी अधिक था। दूसरे क्षेत्रों में रोजगार में वृद्धि चार वर्षों में ४ और १२ प्रतिशत के बीच रही।

६- महिला रोजगार :---

परिवार को चलाने में महिला श्रम-शक्ति की भागीदारी प्रारम्भ से ही गौण मानी गयी है। मशीनों के बढ़ते हुए उपयोग के कारण परम्परागत व्यवसायों में ह्रास तथा सामाजिक प्रतिबन्ध महिलाओं को हमेशा ही पीछे रखते रहे है। जनगणनाओं तथा अन्यत्रकिये गये अध्ययनों से भी यह स्पष्ट होता है कि यद्यपि कुल कार्मिकों में महिलाओं का बड़ा भाग कृषि-कार्यों एवं घरेलू व्यवसायों में है, तथापि उन्हें सदैव कर्मकर के रूप में मान्यता नहीं दी जाती है।

यह भी ज्ञात हुआ है कि महिला जनसंख्या में कर्मकरों का अनुपात निरन्तर कम हुआ है। वर्ष १९ में यह प्रतिशत २७ था जो वर्ष १९७२-७३ में घटकर १९ हो गया १९७१ की जनसंख्या के आंकड़ों से विदित होता है कि कृषि क्षेत्र में महिलाओं का वृहद अंश ।। प्राय: ८७ प्रतिशत ।। कार्यरत था जिनमें से अधिकांश कृषि श्रमिकों के रूप में कार्यरत थी। राष्ट्रीय प्रतीक सर्वेक्षण की ३२ वीं आवृत्ति ।।१९७७-७८ ।।से यह विदित होता है कि १५-५९ वर्ष की आयु में ८३ प्रतिशत महिलायें ग्रामीण क्षेत्रों में स्वत: रोजगार में लगी थी ७३प्रतिशत महिलायें कृषि तथ १० प्रतिशत महिलायें अकृषि कार्यों में लगी थी। इसके साथ ही १५ प्रतिशत महिलायें अनियमित श्रमिक थीं। ग्रामीण क्षेत्र में नियमित मजदूरी तथा वेतन प्राप्त महिलायें केवल दो प्रतिशत ही थी।

नगरीय क्षेत्रों में ६५ प्रतिशत महिला कर्मकर स्वरोजगार में थीं, जिसमें से ४८ प्रतिशत अकृषिय कार्यकलापों और १७ प्रतिशत कृषिय कार्यकलापों मे में थी। पूरी महिला कर्मकर जनसंख्या में से २७ प्रतिशत से भी अधिक वेतन भोगी रोजगार प्राप्त महिलाओं का भाग था जबकि सामयिक श्रमिक के रूप में ९ प्रतिशत ही थीं।[2]

१- प्रशिक्षण एवं सेवायोजन महानिदेशालय, श्रम मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित :---इम्प्लायमेंट रिव्यू --१९६७-६८ तथा जुलाई १९७९।

२- ड्राफ्ट एनुअल प्लान १९८४-८५ वाल्यूम-१, उ0प्र0 पृ0 ८६।

संगठित क्षेत्र के रोजगार में, महिला कर्मकरों का भाग ६ प्रतिशत और ७ प्रतिशत के मध्य रहा यद्यपि इनकी संख्या वर्ष में १९७६ से १.३५ लाख से १९८२ में १.६८ लाख बढ़कर हो गया । सभी संगठित क्षेत्रों में यह महिला रोजगार के प्रतिशत में वृद्धि वर्ष १९७६-८२ के अन्तर्गत१९ प्रतिशत से विप २४ प्रतिशत के लगभग हुई । राष्ट्रीय स्तर पर १९८२ में महिला रोजगारमें संगठित क्षेत्रों मे १३ प्रतिशत की बढ़ोत्तरी हुई ।[1]

उ० प्र० में १५-५९ वर्ष आयु-वर्ग में महिला कर्मकरों के रूप में हिस्सा लेने की दर निम्न प्रकट है जो केवल २६.०५ प्रति-शत ग्रामीण और १२.७० प्रतिशत नगरीय क्षेत्र में है । जबकि राष्ट्रीय औसत य यथा क्रम ३७.६० प्रतिशत और १९.५४ प्रतिशत के समतुल्य थे ग्रामीण क्षेत्रों में भारत के कुछ प्रान्तों में ऊँची दर पायी जाती है जैसे ५९.५४ प्रतिशत ।। महाराष्ट्र और ५२.९१ प्रतिशत ।। आन्ध्र नगरीय क्षेत्रों के लिए यह दर ३०.३९ प्रतिशत और केरला का २५.८६ प्रतिशत है ।[2]

उ०प्र० में ई० एम० आई० की रिपोर्ट भी इस बात की पुष्टी करता है विसंगठित क्षेत्रों के रोजगार में महिलाओं कानिम्न हिस्सा है । १९६९-८२ के अन्तर्गत महिला कर्मकरों का हिस्सा ६ से ७ प्रतिशत के आस-पास ही स्थिर रहा है ।

महिला रोजगार हेतु केवल थोड़ी सी ही ऐसी क्रियायें हैं जो अकृषि क्षेत्र में उनके लिए योग्य है । इसलिए, यह आवश्यक है कि इन क्रियाओंमें विविधता लायी जाय और केवल प्रान्त स्तर पर ही नहीं बल्कि पूरे राष्ट्र स्तर के महिला कर्मकरों के औसत में वृद्धि की जाय । शिक्षित महिलायें अपनी रुचि विशेष प्रकार के कामों में, जैसे टंकण, सौन्दर्य प्रसाधन, होटल उद्योग, भोजन - कौशल, आन्तरिक सजावट इत्यादि में अब दिखा रही हैं । इन चुने हुए क्षेत्रों में व्यय किया जाय तो इसका परिणाम महिला रोजगार के लिए अधिक लाभप्रद होगा ।

श्रम-शक्ति में महिलाओं की भागीदारी में प्रगति निम्न रूप से हो सकती है :------

---

१- ड्राफ्ट एनुअल, प्लान १९८४-८५ वाल्यूम-१,उ०प्र० पृ० ८६ ।

२- ड्राफ्ट सेवेन्थ फायफ इअर प्लान एण्ड एनुअल प्लानिंग १९८५-८६, वाल्यूम - १, उ०प्र०,पृ०१३७

१- महिलाओं को दक्ष बनाया जाय अर्थात घरेलू उद्योग - क्षेत्र का विकास किया जाय ताकि महिला कर्मकर दूसरे स्थान पर गये बिना इसमें अपना हिस्सा ले सकें और वे सेवा क्षेत्र को सुदृढ़ करते हुए अपने कार्य-चुनाव के अनुसार कार्य में लग सकें।

२- कुछ भागों में जनसंख्या के कुछ अनुभागों घरेलू मायों का बोझ महिलाओं पर अधिक है इसलिए प्रयास हो कियह बोझ महिला कर्मकरों पर कमपड़े ताकि वे अपनीशक्ति को अधिक उत्पादक कार्यों के तरफ लगा सके। इसके लिए आवश्यक है कि विशेष रोजगार कार्यक्रम चलाये जाय।

उत्तर-प्रदेश में महिलाओं के काम करने कीस्थिति सामाजिक गुणन-खण्डों पर है। कम प्रगतिशील महिलाओं के लिए पुरूषों के प्रतिस्थापन के साथ प्रतिस्पर्धा में कठिनाइयां होती है। वर्तमान समय में उत्तर-प्रदेश में ऐसा कोई भी संगठन नहीं है जो उनको व्यवसायके चयन,स्व-रोजगारकी जानकारी तथा अन्य रोजगार के पहलुओं के सम्बन्ध में मार्ग दर्शन करे। महिलाओं को मार्ग दर्शनकरने वाले सेलों की सम्भवनाओं कीपरिक्षण की आवश्यकता है। प्रान्त स्तर पर एकऐसे संगठन को कायम किया जाय जाय जो कि पूरे महिला रोजगार की निगरानी करे और प्रान्त में उनको इस सम्बन्ध में उचित ~~सस्म~~ परामर्श दे।

तालिका न० : १३

उ०प्र० में विभिन्न व्यवसायों में कार्यरत व्यक्ति[१]

क्रम सं०	व्यवसाय	१९५१	१९६१	१९७१
१-	कृषक	७६.६५	६३.८८	५७.४२
२-	कृषि श्रमिक	-	११.३०	१९.९५
३-	पशुपालन, वन, मत्सत्यपालन, आखेट, बागान, फल,खद्यानों तथा सम्बन्धित व्यवसाय	-	०.६०	०.६०
४-	खान खोदने, खान से पत्थर निकालने	-	-	०.०५
५-	वस्तु निर्माण, प्रोसेसिंग, सफाई मरम्मत इत्यादि :----			
	।।क।। उद्योग ।।	७.७२	६.२५	३.६६
	।।ख।। अन्य उद्योग	-	२.७८	३.६२
६-	भवन निर्माण	-	०.७४	०.६०
७-	वाणिज्य एवं व्यापार	३.८९	३.६८	४.००
८-	यतायात, भण्डार एवं संचार	१.१०	१.३८	१.७३
९-	अन्य सेवाऐं	१०.६४	९.३९	८.२७

१- ड्राफ्ट सिक्स्थ फाइव ईयर प्लान - १९८०-८५,रिव्यू,वाल्यूम, पृ० १०७।

कार्यरत युवकों के अधिकांश भाग ।।७७.३ प्रतिशत ।। कृषि एवं तत्सम्बन्धी संवर्गीय व्यवसायों में कार्यरत है। ग्रामीण क्षेत्र में उक्त व्यवसायों में कार्यरत युवकों का ८७ प्रतिशत से भी कुछ अधिक तथा नगरीय क्षेत्र में केवल १० प्रतिशत के लगभग है।

नगरीय क्षेत्र में युवकों का सबसे अधिक अंश ३४.५ प्रतिशत उत्खनन विनिर्माण तथा निर्माण सरीखे उद्योगों में लगा हुआ है। ग्रामीणक्षेत्र में ५ प्रतिशत तथा नगरीय क्षेत्र में २७.४ प्रतिशत युवक अन्य सेवाओं में लगे हुए है। वाणिज्य यतायात एवं संचार आदि उद्योगों में ग्रामीण क्षेत्रों में २.१ प्रतिशत तथा नगरीय क्षेत्र में २७.९ प्रतिशत युवक लगे हुए हैं[1]। स्पष्ट है कि प्रदेश का ग्रामीण क्षेत्र कृषि प्रधान तथानगरीय क्षेत्र कृषि के अतिरिक्त अन्य उद्योगों एवं व्यवसायों का क्षेत्र है।

छठी पंचवर्षीय योजना काल ।।१९८०-८५ ।। में ग्रामीण क्षेत्र में ३८.९३ लाख श्रम-शक्ति में वृद्धि होगी जिसमें ३०.४३ लाख पुरूष तथा ८.५० लाख स्त्रियां होगी। नगरीयक्षेत्र में ९.०७ लाख श्रम-शक्ति कानव आगमन होगाजिसमें ८.०४ लाख पुरूष तथा १.०३ लाख स्त्रियां होगी। इस प्रकार पूरे उत्तर-प्रदेश में वर्ष १९८५ के अन्त तक ४८.०० लाख नयी शक्ति का आगमन होगा जिसमें कुल ३८.४७ लाख पुरूष तय ८.५३ लाख स्त्रियां होगी[2]।

<u>तकनीकी या प्रोफेसनल ।। किसी व्यवसाय वाला मनुष्य।। के बीच बेरोजगारी :—</u> शिक्षित क्षेत्र में भी विभिन्न क्षेत्रों में डिग्री या डिप्लोमा प्राप्त करने के बाद बेरोजगारों की श्रेणी में पड़े हैं इससे सम्बधित विवरण निम्न लिखित है[3]:———

श्रेणी		१९७५	१९७९
इंजिनियरिंग ----			
	१- डिग्री प्राप्त	१३४८	१३९२
	२- डिप्लोमा प्राप्त	४२५०	१५१९१
कृषि---			
	१- स्नातक	१८८१	२७८२
	२- स्नातकोत्तर	४५७	२०७
मेडिकल ----	१-मेडिकल ग्रेजुएट और पोस्ट ग्रेजुएट	२६८	६९०
	२- परा मेडिकल ।। नर्स, फर्मासिस्ट, सिनेटरी आदि।।	६३५	१५८९
अध्यापक ----			
	१- प्राइमरी स्कूल अध्यापक	१०६८५	११९८६
	२-मीडिल स्कूल, अध्यापक	३२६	१९६८८
	३- हायर सेकेन्ड्री अध्यापक	७१६१	१६३८५
	४- विश्व विद्यालय अध्यापक	३२६	२०१

१- उ०प्र० १९७४, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, उ०प्र०, लखनऊ, पृ० ७२ ।
२- ड्राफ्ट सिक्स्थ फाइव ईयर प्लान १९८०-८५ पृ० १०६ ।
३- वही, पृ० १११ ।

जनसंख्या और रोजगार :——

उ०प्र० भारत काएक बाहुल्य जनसंख्या वाला प्रान्त है जिसकी जनसंख्या १९८१ में ११०८.६२ लाख थी पिछले तीन दशक १९५१–८१ में उ०प्र० की जनसंख्या १.८९ प्रतिशत की दर से बढ़ी फिर भी यह वार्षिक वृद्धि दर २.३० प्रतिशत था[1]। ग्रामीण – नगरीय क्षेत्र में जनसंख्या वृद्धि दर नि निम्नवत तालिका से स्पष्ट है[2]:---

तालिका न० : १४

क्षेत्र		१९६१–७१	१९७१–८१
ग्रामीण			
	पुरूष	१.८७	१.७८
	महिला	१.४८	१.७६
	योग	१.६८	१ .८१
नगरीय			
	पुरूष	२.६६	४.७५
	महिला	२.७८	५.०६
	योग	२.७१	४.८९
उ०प्र० —— ।। ग्रामीण – नगरीय ।।			
	पुरूष	१.९८	२.२६
	महिला	१.६४	२.३४
	योग	१.८२	२.३०

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि ग्रामीण पुरूषों के अतिरिक्त अन्य सभी जनसंख्या घटक में पि पिछले दशकों में तुलनात्मक वृद्धि दर रही है। पुरूषों के अपेक्षा महिलाओं में वृद्धि दर अधिक रही है और २ प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या में वृद्धि की तुलना में नगरीय जनसंख्या में ५ प्रतिशत कीवृद्धि दिखायी देती है।

इस वृद्धि दर पर, उ०प्र० की जनसंख्या २६.६९ लाख वर्षिक वृद्धि से मार्च १९८३ तक ११६०.४५

१– ड्राफ्ट सेवेन्थ फाइव इयर प्लान एण्ड एन्यूवेल प्लान १९८५–८६, वाल्यूम-१,उ०प्र०।

२– ड्राफ्ट एन्यूवेल प्लान, वाल्यूम-१, १९८३-८४,प्लानिंग डिपार्टमेन्ट, उ०प्र०, पेज १७१।

लाख तथा मार्च १९८४ तक ११८७.१४लाख हो जायेगी । जनसंख्या के विभिन्न घटकों में यह वृद्धि वार्षिक योजनाओं के अन्तर्गत इस प्रकार होगी[1]:---

तालिका न० : १५

क्षेत्र	१९८३	१९८४	जोड़ ।।लाख।
ग्रामीण	९४२.१५	९५९.११	१६.९६
नगरीय	२१८.३०	२२८.०३	९.७३
पुरूष	६१५.४०	६२९.६२	१४.२२
महिला	५४५.०५	५५७.५२	१२.४७
योग ।।उ०प्र०।।	११६०.४५	११८७.१४	२६.६९

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट ह कि १९८४-८४ में, १४.२२ लाख पुरूष एवं १२.४७ लाख स्त्रीयों की जनसंख्या हो जायेगी । ग्रामीण क्षेत्रों में यह १६.९६ लाख होगी जबकि नगरीय जनसंख्या ९.७३ लाख होगी । यह ऊंची जनसंख्यावृद्धि दर जन्मदर में वृद्धि से ही नहीं बल्कि मृत्यु दर में कमी होने से है । देश के दूरवर्ती क्षेत्रों में चिकित्सीय सुविधाऐं एवं परिवार कल्याण नियोजन सुविधाओं से प्रान्त में मृत्युदर कम हुई है । इस सम्बन्ध में निचे की तालिका में देखा जा सकता है ।

तालिका न० :१६

जन्म दर और मृत्यु दर तीन वर्षीय औसत गति के आधार पर १९७१-८१[2]

	उ०प्र०		भारत	
वर्ष	जन्म दर	मृत्यु दर	जन्म दर	मृत्यु दर
१९७१-७३	४३.२	२१.७	३६.३	१५.९
१९७३-७५	४२.३	२०.६	३४.८	१५.३
१९७५-७७	४१.२	२०.७	३४.२	१५.२
१९७७-७९	४०.१	१८.५	३३.१	१३.९
१९७९-८१	३९.५	१६.४	३३.८	१२.७
१९८०-८२	३९.२	१६.०	३३.७	१२.३

१- ड्राफ्ट वैन्यूवेल प्लान, वाल्यूम-१, १९८३-८४

उ0प्र0 के नियोजन संस्थान के अर्थ एवं संख्या विभाग ने १९७१-८१ के जनसंख्या वृद्धि दर के अधार पर अनुमान लगाया है कि जनसंख्या सातवीं पंचवर्षीय योजना ।।१९८५-९०।। के प्रारम्भ में १२१५ लाख और इस योजना के समाप्ति तक यह जनसंख्या १३६३ लाख हो जायेंगी । क्रमीक दश-वर्षीय १९७१-८१ के २२ लाख के विपरित १९८१-९० में २८ लाख औसत वार्षिक जोड़ हो जायेगा[१]।

तालिका न0 :१७

उ0प्र0 में जनसंख्या का मान-चित्रण ।।प्रोजेक्सन।।[२]

।।लाख में ।।

वर्ष	सम्पूर्ण जनसंख्या	ग्रामीण	नगरीय	पुरूष	महिला
१	२	३	४	५	६
१९८१	११०८.[illegible]२	९०९.६३	१९८.९९	५८८.१९	५२०.४३
१९८५	१२१५.१४	९७७.७९	२३७.३५	६४३.७०	५७१.४४
१९८६	१२४४.३३	९९५.५६	२४७.७७	६५८.३७	५८४.९६
१९८८	१३७२.१७	१०३१.९८	२६९.७१	६८८.७४	६१२.९५
१९८९	१३३१.८९	१०५०.६४	२८१.२५	७०४.४४	६२७.४५
१९९०	१३६२.७९	१०६९.६३	१९३.१६	७२०.५०	६४२.२९

श्रम-शक्ति :——

नेशनल सेम्पुल सर्वे के ३२ वें चक्र के अनुसार, सम्पूर्ण जनसंख्या का५४.०५ प्रतिशत १५-५९ आयु वर्ग के थे । इस आयु वर्ग में सम्पूर्ण राष्ट्र के ६२.९४ प्रतिशत के विपरित सम्पूर्ण जनसंख्या का ५७.५२ प्रतिशत श्रम-शक्ति में है । उ0प्र0 में निम्न श्रम-शक्ति का मुख्य कारण राष्ट्र के श्रम-शक्ति के तुलना में महिलाओं का श्रम-शक्ति में कम भाग लेना है । आगे की तालिका से उ0प्र0 और भारत में श्रम-शक्ति की तुलनात्मक स्पष्टीकरण होती है ।

१- ड्राफ्ट सेवेन्थ फाइव एअर एण्ड एन्यूवेल प्लान १९८५-८६, वाल्यूम-१, उ0प्र0 पेज १३५ ।

२- वही पेज १३५ ।

तालिका न०[1] : १८

क्षेत्र	आयु - वर्ग ।। १५-५९ वर्ष ।।	
	उ०प्र०	भारत
ग्रामीण	५८.५६	६४.९९
नगरीय	५१.६५	५५.५४
पुरूष	८८.७२	८९.१६
महिला	२४.५१	३५.८०
उ०प्र०	५७.५२	६४.९२

इस अनुपात के अधार पर, ग्रामीण - नगरीय श्रम-शक्ति का अनुमान १९८३ और ८४ तथा वार्षिक जोड़ निम्नलिखित तालिका में दिया गया है[2]:----

तालिका न० : १९

।।लाखमें ।।

क्षेत्र	मार्च १९८३	मार्च १९८४	जोड़ १९८३ स ८४
ग्रामीण	३०२.२०	३०९.१५	६.९५
नगरीय	५८.४५	५९.८०	१.३५
योग	३६०.६५	३६८.९५	८.३०

श्रम-शक्ति में, काम करने वाले और बेरोजगार व्यक्ति दोनों ही सम्मलित होते है। अनुमान लगाया गया कि श्रमशक्ति में ९७.२३ प्रतिशत काम पर लगे थे जो कि आयु वर्ग के ५७.९२ प्रतिशत

१- ड्राफ्ट एनुअल प्लान, १९८३-८४, वाल्यूम-१, प्लानिंग डिपार्टमेंट उ०प्र० पेज १७१।

२- वही, पेज १७२।

जनसंख्या के बराबर ह जबकि २.७७ प्रतिशत व्यक्ति बेरोजगार थे। इसके अतिरिक्त ५.४३ प्रतिशत श्रम-शक्ति अपर्याप्त रोजगार में लगी थी। सम्पूर्ण पूर्ण बेरोजगार तथा आंशिक रोजगार प्राप्त व्यक्ति ओं का प्रतिशत ८.२० था।[1]

अनुमान है कि १५-५९ आयु वर्ग की जनसंख्या का प्रतिशत १९८५ और १९९० में यथा क्रम ५६.१८ और ५६.६२ रहेगा[0] इस अनुपात और तालिका न० १७ के अनुमानसे यह आकलन किया गया कि इस आयु-वर्ग में जनसंख्या सातवीं योजना के प्रारम्भ में तथा योजनावधि ।।१९८५-९० ।। के अन्त तक इस प्रकार हो जायेगी[2]:----

तालिका न० : २०

१५-५९ आयु-वर्ग में जनसंख्या

।।000 ।।

	मार्च १९८५	मार्च १९९०	जोड़
	१	२	३
पुरुष	३६४९८	४११६९	४६७१
महिला	३११६९	३६००६	४२३७
ग्रामीण	५४६३१	६०१३५	५५०४
नगरीय	१३६३६	१७०४०	३४०४
योग	६८२६७	७७१७५	८९०८

0 जनसंख्या एक्सपर्ट कमेटी अपने रिपोर्ट, सीरीज - १, पेपर-१, १९७९, में अनुमान लगाया कि १५-५९ आयु-वर्ग कीजनसंख्या का अनुपात वर्ष, १९८१, १९८६ और १९८९ में यथा क्रम ५४.३८, ५६.६२ और ५६.६२ होगा। इस दर से सातवी योजना में १५-५९ आयु वर्ग की जनसंख्या के लिए योजना तैयार कखिया गया।

१- ड्राफ्ट एनुअल प्लान १९८३-८४, बाल्यूम-१, प्लानिंग डिपार्टमेंट, उ०प्र० पेज १७२।

२- ड्राफ्ट सेवेन्थ फाइव एअर प्लान एण्ड एनुअल प्लान १९८५-८६, बाल्यूम-१, उ०प्र०, पेज १३५।

तालिका न0 : २१

१५-५९ वर्ष के आयु वर्ग में श्रम-शक्ति का अनुमान[1]

॥ '000 ॥

	मार्च १९८५	मार्च १९९०	श्रम-शक्ति के लिए जोड़
	१	२	३
पुरूष	३२३८१	३६५२५	४१४४
महिला	६८८६	७८६६	९८०
ग्रामीण	३१९९२	३५२१५	३२२३
नगरीय	७२७५	९१७६	१९०१
योग	३९२६७	४४३९१	५१२४

इस प्रकार से, सातवी योजनाके अर्न्तगत ५१.२४ लाख जनसंख्या श्रम-शक्ति में जुटेगी जोकि वार्षिक औसत १०.२५ लाख है। ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र में इस योजनावधि में यह यथा क्रम ३२.२३ लाख और १९.०१ लाख होगा[2]।

रोजगार का स्वरूप :-----

प्रदेश में १९८१ के सेंसस के अनुसार मुख्य कर्मकरों तथा सीमांत कर्मकरों का वितरण आगे दिया गया है :-----

१- ड्राफ्-ट सेवेन्थ फाइव एअर प्लान एण्ड एनूअल प्लान १९८५-८६ वाल्यूम-१, उ0प्र0 पेज १३५।

२- वही, पेज १३५।

तालिका न० : २२

उत्तर-प्रदेश में मुख्य कर्मकर तथा सीमांत कर्मकरों का वितरण और उनका जनसंख्या में प्रतिशत १९८१ [१]

१	मुख्य कर्मकर २	सीमान्त कर्मकर ३
ग्रामीण	२६८.७९	२७.३३
	॥२९.५७॥	॥३.०१॥
नगरीय	५४.२३	२.३३
	॥२७.१५॥	॥०.०१॥
पुरूष	२९१.६५	११.१८
	॥४९.६१॥	॥१.९०॥
महिला	३१.३८	१८.४८
	॥ ६.०२॥	॥३.५५॥
योग	३२३.०३	२९.६५
	॥२९.१३॥	॥२.६७॥

मुख्य कर्मकरों में ५२.०२ प्रतिशत या १८७.४० लाख कृषक थे और १६.३२ प्रतिशत या ५२.७३ लाख कृषिक श्रमिक थे। घरेलू उद्योग में लगभग ४.३९ प्रतिशत या १४.१९ लाख थे जबकि अन्य कर्मकरों का प्रतिशत २१.२७ प्रतिशत या ६८.७० लाख था। इस प्रकार देखा गया कि लगभग ७४ प्रतिशत मुख्य कर्मकर कृषि में या इसी प्रकार कृषक रूप में या खेतिहर मजदूर के रूप में रोजगार में लगे थे। उ०प्र० की कृषि पर अधारितअर्थ व्यवस्था से यह संकेत मिलता है कि अकृषिय क्षेत्र में कृषि क्षेत्र से कोई उत्पादकक्षेत्र का विकास नहीं हो पाता है।

१- ड्राफ्ट एनुअल प्लान, १९८३-८४, वाल्यूम - १, प्लानिंग डिपार्टमेन्ट उत्तर- प्रदेश, पेज १७३।

नेशनल सैम्पुल सर्वे के ३२ वें चक्र प्रकट करता है कि ७५ प्रतिशत कर्मकर स्वरोजगारमें लगे हुए थे। इस प्रकार ये कर्मकर ग्रामीण क्षेत्रों में ७८ प्रतिशत जबकि नगरीय क्षेत्र में ५२ प्रतिशत थे। यह रोचक है कि स्वरोजगार में लगे कर्मकरों का भाग ग्रामीण कृषि क्षेत्र में ८५ प्रतिशत तथानगरीय अकृषि - क्षेत्र में भी इसी प्रकार के अनुपात को बताया गया था।

उ0प्र0 में नियमित वेतनमजदूरी पर रोजगार प्राप्त११ प्रतिशत थे जो ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र में ७ और ३८ प्रतिशत के समतुल्य थे, ग्रामीण और नगरीय दोनों क्षेत्र ों में सार्वजनिक काम में स सामयिकश्रमिक आधे प्रतिशत से भी कम थे। उ0प्र0 में सामयिक श्रमिकों का प्रतिशत कृषि क्षेत्र में १० प्रतिशत तथा ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र में यथा क्रम १२ प्रतिशत तथा २ प्रतिशत से कममें था। किसी प्रकार, अकृषिय कार्यो में सामयिक श्रमिकों का प्रतिशत ३ प्रतिशत से अधिक था, ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र में यह प्रतिशत यथाक्रम ३ प्रतिशत और ८ प्रतिशत है। कृषि क्षेत्र में ऊंची एकाग्रता में सरोजगार प्राप्त करने में श्रम-शक्ति का उपयोग करना सहायक है। इस सम्बन्ध में सूचना परिशिष्ट ३ में है।

१९६४-६५ और १९७४-७५ के ग्रामीण श्रम निरक्षण कमेटी ने यह बताया किलगभग ४६ प्रतिशत घरेलू ग्रामीण श्रमिक भूमिहिन थे। उ0प्र0 में १९७०-७१ और १९७६-७७ में कृषि सैंसस संचालित किया गया, जो संकेत दिया कि भूमि-स्वामियों के भूमि खण्ड लगातार छोटे होते जा रहे हैं। नीचे की तालिका भूमि स्वामित्व के अकार मे प्रतिशत में विभिन्नता को प्रकट कर रही है। परिशिष्ट ४ में भी विभिन्न क्षेत्रोंमें इसे देख सकते हैं।

तालिका न0 :२३[१]

हेक्टेअर में अकार	जोत का विभिन्न प्रतिशत	जोत का क्षेत्र
0.५ से कम	११.५	१८.३
0.५-१.0	६.0	६.५
१.0-२.0	॥-॥३.४	२.१
२.0-३.0	॥-॥१.३	॥-॥२.0
३.0-४.0	॥-॥२.0	॥-॥२.६
४.0-५.0	॥-॥0.२	॥-॥0.९
५.0-१0.0	॥-॥६.५	॥-॥७.५
१0 और ऊपर	॥-॥२३.७८	॥-॥ २६.८५
पूरा अकार	॥+॥८.५	॥-॥१.६

१- ड्राफ्ट एनुअल प्लान १९८३-८४, वाल्युम-१, प्लानिंग डिपार्टमेंट उ0प्र0, पेज १७४।

१९८० का आर्थिक सेंसस उद्यमियों के उत्पादन , वस्तुवों का वितरण और सेवाओं का लाभदायक आंकड़ा एकत्र किया । कृषि उद्यमी जो कृषि उत्पादन तथा कृषि क्षेत्र से सम्बन्धित थे इस सेंस में छूट गये । प्रान्त की सामयिक बनावट से संकेत मिलता है कि २१७० लाख उद्यमी प्रदेश में निवास करते हैं जिसमें से ११.४४ लाख या ५२.७० प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्र में और १०.२६ लाख या ४७.३० प्रतिशत नगरीय क्षेत्र में थे । ऐसे प्रतिष्ठानों में सामान्य कर्मकर ५६.३० लाख थे ।। २५.१० लाख ग्रामीण और ३१.२९ लाख नगरीय क्षेत्र में थे ।। उद्यमों में लगभग ४.८१ लाख या ४४.१६ प्रतिशत किराये के मजदूर के रूप में रोजगारमें लगे हुए थे । किराये के मजदूरों कासम्पूर्ण योग २७.३३ लाख था, जिसमें क्रमशः ९.९० लाख और १७.४३ लाख ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र में थे ।

उ0प्र0 में समस्त उद्यमों में रोजगार में लगे५४.७० लाख व्यक्तियों में से २०.८१ लाख या ९५.८८ प्रतिशत अकृषि उद्यमों में लगे थे । यह प्रतिशत प्रदेश के सभी आर्थिक क्षेत्रों मेंसमान था । परिशिष्ट ५ में आर्थिक क्षेत्र में उद्यम तथा रोजगार प्राप्तलोगों को देखा जा सकता है ।

उ0प्र0 में १९५१ से ही शिक्षा सुविधाओं में महत्वपूर्ण व्यय होता रहा है । नामांकनस्तर हाई स्कूल में लगभग ८ बार, इण्टरमीडियट में ११ बार से अधिक तथा स्नातकस्तर पर १२ बार से अधिक बार ऊंचा उठा । उ0प्र0 में एक अनुमानसे पता चलता है कि जो १९८० में हाईस्कूल तथा इण्टरमीडियट की संख्या ५९ लाख है १९८५ तक इनकी संख्या ९० लाख हो जायेगी । इसी समय स्नात तथा इसके ऊपर तकवालों की संख्या १० लाख से बढ़कर १६ लाख हो जायेगी ।

पूरे पंजीकृतों में, ६४ प्रतिशत शिक्षित थे । हाईस्कूल और इण्टर मीडियटों की गणना ४६ प्रतिशत थी जबकि स्नातक और इसके ऊपर तक की गणना लगभग १४ प्रतिशत थी । नेशनल सैम्पुल सर्वे के आधार पर यह अनुमानलगाया गया कि छठवीं पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ, मार्च १९८०, तक १३.४४ लाख मानव वर्ष बेरोजगार होंगे जिसमें से २.०० लाख मैट्रीकुलेट और इण्टरमीडियट जबकि ५०,००० स्नातक और इसके ऊपर तक वालों कीसंख्या होगी। पांच वर्ष:१९८०-८५ के बीच, २.१० लाख स्नातकनये रोजगार के लिए प्रवेशार्थी होंगे ।इस प्रकार पूरे, इस पांच वर्ष में कामचाहने वालों में ४.१० लाख मानव वर्ष के लिए हाईस्कूल -इण्टरमीडियट और १.५२ लाख मानव वर्ष केलिए स्नातक तथा स्नातकोत्तर का होगा।[१]

१- ड्राफ्ट एनुअल प्लान - १९८३-८४ वाल्यूम-१ प्लानिंग डिपार्टमेंट उ0प्र0 पेज १७५ ।

रोजगार पीढ़ी :——

सातवीं पंचवर्षीय योजना ।।१९८५–९० ।। के अर्न्तगत अतिरिक्त कार्य की आवश्यकता को निचे की तालिका में स्पष्ट कियागया है [1] :——

तालिका न0 : २४

	।।लाख मानव –वर्ष।।
१–छठ्वीं योजना के अन्त में बेरोजगारों की संख्या	२०.७७
२–सातवीं योजना के अर्न्तगत श्रम–शक्ति में प्रवेश	५१.२४
३–कुल रोजगार के अवसरों की आवश्यक्ता	७२.०१

सातवीं योजना में रोजगार के सुअवसरों का निर्माण योजना के अर्न्तगतअर्थ व्यवस्था के प्रगति और श्रम उत्पादन के सम्बन्ध पर निर्भर करेगा । संबद्ध अनुमान नीचे की तालिका में दिखाया गया है [2] :——

तालिका न0 :२५

सातवीं योजना के अर्न्तगत रोजगार के सुअवसरों का प्राक्कलन

।।लाख मानव वर्ष ।।

मद	Alt. I ।।६.५%।।	Alt. II ।।६.०%।।	Alt. III ।।५.५%।।	Alt IV ।।५%।।
१– रोजगार पीढ़ी	४९.०८	४५.००	४०.६३	३६.५७
२– सातवीं योजना के अन्त में बेरोजगारों की संख्या	२२.९३	२७.०१	३१.३८	[illegible]

१– ड्राफ्ट सेवेन्थ फाइव एअर प्लान एण्ड एनुअल प्लान १९८५–८६, वाल

२– वही, पेज ५१ ।

राज्य सरकार अनुसुचित जाति और अनुसुचित जन जाति के आर्थिक दशा को सुधारने का प्रयास कर रही है । जिनका प्रदेश की जनसंख्या में २१ प्रतिशत और ०.२ प्रतिशत यथाक्रम भाग है । गुणात्मक सुधार के लिए विभिन्न प्रकार का प्रोत्साहन, छात्रवृत्ति, शुल्क मुक्ति, पुस्तकों की खरीदारी में सहायता, मुफ्त ट्रेनिंग सुविधाऐं, प्रतियोगात्मक परिक्षा के लिए मुफ्त कोचिंग के रूप में दिया जा रहा है । आर्थिक प्रोत्साहन भी अनुसुचित जाति और अनुसुचित जन जातियों के आर्थिक विकास के लिए दिया जा रहा है । स्पेशल कम्पोनेन्ट प्लान से छठी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत १५ लाख अनुसुचित जाति के परिवार गरीबी रेखा से ऊपर उठे । सातवीं योजना के अन्तर्गत बहुत ऐसे परिवार गरीबीरेखा के ऊ पर उठने में अवश्य समर्थ होगें ।

अनुसुचित जन जातियों का सकेंद्रण प्रान्त के विशेष भागों में है परिणाम स्वरूप रोजगार द दफ्तर का उनसे दूर स्थिति होने के कारण उसका लाभ उन्हें नहीं मिल पाता है । एक अध्ययन ० ने संकेत दिया था कि १३ ऐसे रोजगार दफ्तर अनुसुचित जन जातियों क्षेत्र में स्थापित किये जा सकते स है और एक रोजगार निर्वाचकों की नामावलीभी मुख्य-कार्यालय, डायरेक्टरेट आफ ट्रेनिंग एण्ड इम्प्लाइमेंन्ट लखनऊ में खोला जा सकता है । इन अनुसुचित जन जातियों के सकेंद्रण में सी ग्रुप की की सेवाओं क विभिन्न श्रेणियों के लिए प्राथमिक परिक्षा कोचिंग सेंटर खोला जाना चाहिए ।

उपरोक्त के अतिरिक्त, बहुत से उत्पादक कार्य है जिनमें कमजोर वर्ग के मजदूर लगे हुए है, जैसे बुन्देलखण्ड क्षेत्र में जंगल उत्पादित खनिज का एकत्रीकरण, ए हस्तकरघा, कुटीर उद्योग इत्यादि । वास्तविक उत्पादक पूर्ण लाभ अपने प्रयास का नहीं उठा पाए हैं । एकत्रीतकरने के तरीके का मूल्यां०० कन करने पर पता चलता है कि वहां मजदूरी स्तर में वृद्धि में गुजांइश है । जंगल निगम जो कि तेदू पत्ती के एकत्रीत करने के लिए उत्तरदायी है निश्चित करने के लिए अनुमानलगाया कि आदिवासी जो कि इसके मुख्य कर्मकर है उचित मजदूरी प्राप्त करें । उसी प्रकार से, एबुनकर भी अपने परिश्रम से पर्याप्त आय नहीं पारहें है । मध्यस्थयों के कारण उत्पादित वस्तेवों का विक्री के मूल्य का एक अ अच्छा भाग उपभोक्ता उनसे ले लेते है ।

०- ए स्टडी आफ ट्राइबल रीप्रेजेन्टेशन इन सर्विस एण्ड इनक्लुडेन्स आफ अनइम्प्लाइमेंट एमांग सीडूल ट्राइ० स आफ यू०पी०, मैनपावर प्लानिंग डिविजन, स्टेट प्लानिंग इंस्ट्यूट, यू०पी०, पेज ७० ।

००- इम्प्लाइमेंन्ट एमांग आदिवासी फाम द मानर फोरेस्ट प्रोड्यूस ।।ए केश स्टडी आफ टेन्दू लीफस ।।, मैनपावर प्लानिंग डिविजन, स्टेट प्लानिंग इन्स्ट्यूट, यू०पी० ।

सातवीं योजना में रोजगार की स्थिति – १९८५–९०

नवीनतम सूचक के अनुसार सातवीं पंचवर्षीय योजना में २०.७७ लाख मानव वर्ष का बैकलाग है जिसमें से १४.९० लाख मानव वर्ष बेरोजगार और ५.८७ लाख मानव वर्ष आंशिक बेरोजगार की तीव्रता का प्रतिनिधित्व करते है। इसके अतिरिक्त ५१.२४ लाख व्यक्ति श्रम-शक्ति में नये रूप में प्रवेश करेंगें। इस लिए सातवीं योजना काल में ७२.०१ लाख नये रोजगार के अवसरों की आवश्यकता पड़ेगी[1]। यह अनुमान लगाया गया कि सातवीं पंचवर्षीय योजना के अर्न्तगत ४५ लाख मानव वर्ष के लिए कार्य: के सुअवसरों का सृजन किया जायेगा। इस प्रकार सातवीं योजना के अन्त में २७ लाख का बैकलाग बाकी रहेगा।

यद्यपि सातवीं योजना में लगभग दुगुनें रोजगार के सुअवसरों के सृजन के उद्देश्यों के पर विचार हो रहा है यह स्पष्ट है कि सभी काम के चाहने वालों को काम देने में यह योजना समर्थ नहीं होगी इसी कारण से स्वरोजगार के सृजन का महत्व होगा। सातवीं योजना के लिए औद्योगीकरण, नगरीय करण और निर्माण कार्यक्रम की परियोजनाऐं केवल आंशिक रूप में ही ग्रामीण क्षेत्रों के विभिन्न प्रकार की बेरोजगारी में कमी लायेगी। बेरोजगारी का विस्तार ग्रामीण क्षेत्रों में लघु और सीमान्त कृषकों में पायी जाती है लघु और सीमान्त खेतीहरों में उनके सिंचाई में वृद्धि फसल उत्पादन में तीव्रता और पर्याप्त उपरी सतह पर व्यवस्था और भूमिगत जल, वृक्ष बाढ़ निवारण और मैले पानी के निकास के बिना अर्थिक समृद्धशाली बनाये बिना बेरोजगारी में महत्वपूर्ण कमी होने की सम्भावना नहीं की जा सकती। सीमान्त और लघु कृषकों के आर्थिक समृद्धी के लिए सातवीं योजना में एक व्यूह-रचना काम कर रहा है और इसकी सफलता के आई० आर० डी० पी०, एन० आर० ई० प पी० और ई० एल० जी० ई० पी० के साथ सम्मलित है जो ग्रामीण क्षेत्रों के बेरोजगारी को वास्तविक रूप में घटाती है[2]।

१– ड्राफ्ट सेवेन्थ फाइव एअर प्लान एण्ड एनुअल प्लान १९८५–८६, वाल्यूम–१, उ०प्र०, पेज – १४१।

२– वही, पेज–१४२।

अध्याय दो

बेरोजगारी की परिभाषा, तात्पर्य तथा प्रकार

बेरोजगारी की परिभाषा

श्रम- से मनुष्य शारीरिक, मानसिक शक्तियों का विकास कर अपने व्यक्तित्व का सामाज में रहने के योग्य बनाने का प्रयत्न करता है। श्रम के बदले में जो धन या पारितोषिक मनुष्य प्राप्त करता है, उसी से वह अपना जीवन निर्वाह करता है। लेकिन जब मनुष्य कार्य करने की इच्छा, योग्यता शक्ति रखते हुए भी समाज में प्रचलित मजदूरी की दर पर कार्य ढूढ़ने पर भी रोजगार पाने से वंचित रह जाता है -तब ऐसे व्यक्तियों को बेरोजगार व्यक्ति कहते है।

सधारण तथा बेरोजगारी का अर्थ बिना काम के होने से लगाया जाता है किन्तु इस दृष्टि से आलसी व्यक्ति, जो करना काम नहीं चाहता, उसे भी बेकार कहना पड़ेगा लेकिन वस्तुत: बेकारतो वह है जो सामर्थ तथा इच्छा के बावजूद भी प्रचलित मजदूरी की दर पर काम नहीं पा सकता है तथा इधर-उधर कामके चक्कर में घूमा करता है। वास्तव में हमारी वर्तमान आर्थिक प्रगति का नाकारात्मक पहलू ।।निगेटिव आसपेक्ट।। है। क्योंकि व्यक्ति अपनी योग्यता, इच्छा, एवं काम ढूढ़ने के लिए प्रयत्न के बावजूद परिस्थिति वश कार्य से अलग रहने के लिए विवश कर दिया जाता है। वास्तव में इसका मुख्य कारण वर्तमान पूंजीवादी संगठन है। वर्तमान पूंजीवादी संगठन में सदा कुछ बीमार, वृद्ध, जख्मी, पागल तथा अपाहिज व्यक्ति होते है जो काम करने योग्य नहीं ह होते, अत:उन्हें बेरोजगार नहीं कहा जासकता अत: अर्थशास्त्र के दृष्टि से हम कह सकते है कि बेरोजगारी श्रम बाजार की वह स्थिति है जिसमें श्रम-शक्ति की पूर्ति कार्य करने के लिए उपलब्ध सुविधाओं तथा अवसरोंकी अपेक्षा अधिक अपेक्षा अधिक होती है। प्रो०पीगू के नुसार, एक व्यक्ति केवल उसी समय बेकार होता है जबकि उसे काम करने की इच्छा होती है और कामपर लगा हुआ नहीं होता है। दूसरे शब्दों में प्रो० पीगू के अनुसार, बेकार श्रमिक वह है जिसे काम करने कीइच्छा पर भी कामनही मिलता है:। किन्तु यहां हमारा काम करने की इच्छा से तात्पर्य क्या है इच्छा एक सापेक्षिक शब्द है। इसका आर्थिक शब्द स्पष्ट कर देना उचित है। इसका सम्बन्ध काम करनेके घंटे, काम करने के वातावरण एवं मजदूरी की दर एवं मजदूर के स्वास्थआदि से है। यदि किसी व्यक्ति को किसी व्यवसाय में केवल ६ घंटा ही काम करना पड़ता है जबकि उसकी इच्छा ८ घंटे काम करने की है तो इसका यह अभिप्राय नहीं कि दो घंटे प्रतिदिन वह बेकाररहता है। इसके अतिरिक्त काम करने की इच्छा इस बात से भी जानी जा सकती है कि एक

व्यक्ति मजदूरी की चालू दर पर काम करने को तैयार है कि नहीं। उदाहरण के लिए कोई: व्यक्ति तभी काम करना चाहता है जबकि मजदूरी की दर बाजार में प्रतिदिन १५ रुपये हो किन्तु बाजार मे मजदूरी की प्रचलित दर केवल ४ रुपये प्रतिदिन ही है और अन्त में यदि कोई व्यक्ति अपनी बीमारी के कारण कार्य नहीं करना चाहता है तो उसे बेकार नहीं कह सकते। इस प्रकार प्रो० पीगू के विचार पूर्ण तथा सहीनहीं है।

यद्यपि बेकारी कीपरिभाषा देना कठिन है पर कठिन कार्य का समनधान यह नहीं है कि हम उसको छोड़कर अपना रास्ता लें, कुछ शर्तों के साथ में इसके परिभाषा के हेतु कार्य करना उचित ह होगा। बेरोजगारी नापने के प्राय: दो अधार माने गये हैं:------

१- काम करने की इच्छा,

२- बिना काम का होना।

बेरोजगारी वह स्थितिहैजिसमें कोई व्यक्ति बिना काम के रहने के लिए विवश होता है। इस स्थिति में बेकार व्यक्तिबिना कामके होता है। उसके पास कोई रोजगार नहीं ओता है। किन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि साधु-सन्यासी, बिमार एवं अपाहिज व्यक्तियों को बेकार कहा जाय वस्तुत: इन्हे बे कार नहीं कहा जासकता क्यों कि इन लोगों को कार्य करने की इच्छा ही नहीं होती है। दूसरी ओर कुछ व्यक्ति ऐसे होते है जोकामकरने में समर्थ नही है। उदाहरण के लिए लूल्ले, लगड़े, अपाहिज आदि। इस प्रकार बेरोजगार केवल वही व्यक्ति होते है जिनमेंकाम करने कीयोग्यता एवं इच्छा होती है फिर भी उन्हे समाज मे काइ काम नहीं मिलता।

देश के आर्थिक विकास का रोजगार की स्थिति तथा मानव शक्ति के उपयोग से घनिष्ट सम्बन्ध होता है भारत जैसे अनेक विकासशील देशों में रोजगार अवसरों के कमी के कारण जनसंख्या में श्रम-शक्ति काएक भारी भाग बेरोजगार तथा अर्द्ध बेरोजगार पड़ा रहता है जिसके कारण आर्थिक वृद्धि की हानि हो रही है। बेरोजगारी कीसमस्या भारत के लिए बहुत नयी नहीं है। किन्तु पिछले क कुछ वर्षों में जनसंख्या वृद्धि तीव्र दर की तुलना में रोजगार के नये अवसरों की वृद्धि वृद्धि न होने के कारण यह समस्या प्रति वर्ष अधिक जटिल होती जा रही है। बेरोजगारी की परिभाषा के स सम्बन्ध में समय -समय पर विद्वानों तथ कुछ संस्थाओं ने अपने विचार प्रकट किये है जिनमें सेकुछ विचार यहां प्रस्तुत है।

एक विद्वान के अनुसार[1] कार्य प्राप्त करने में असफल व्यक्ति को रोजगार से अलग माना जा सकता है। तथा उसके कार्य न प्राप्तकर सकने तथा कार्य प्राप्त करने के मध्य कीसमयावधि में उसे बेरोजगार कहा जायेगा।

उपरोक्त विचार बेरोजगारी कीसमस्या का उचित स्पष्टी करण करने में असमर्थ है। कीन्स से पहले के आर्थिक साहित्य में बेरोजगारी की समस्या की ओर विद्वानों का कुछ ध्यान गयाकिन्तु इस समस्या पर कीन्स के समय से अधिक ध्यानदियाजाने लगा। इनकी पुस्तक सामान्य सिद्धान्त के प्रकाशन के पश्चात बेरोजगारी को आर्थिक मंदीका परिणाम समझा जाने लगा। कीन्स ने मांग की अपर्याप्तता को बेरोजगारी का प्रमुख कारण माना है।

पीगू के अनुसार बेरोजगारी मजदूरी प्राप्त करने वाले वर्ग में होती है[2]। उन्होंने एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया है कि यदि मजदूरी पर कार्य करने वाला कोई व्यक्ति अपने सामान्य कार्यों को कम करने के पश्चात फुरसत के समय में कुछ अन्य कार्य को करता है तो उसे बेरोजगार व्यक्तियों की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता है। क्योंकि इनव्यक्ति पर बेरोजगारी क प्रभाव किसी अन्य ऐसे व्यक्ति से भिन्न होगा जो किसीअन्य वैकल्पिक कार्य को नहीं करता। इस भिन्नता का व्यवहारिक महत्व है। मजदूरीपर किए जाने वाले कार्यों के सम्बन्ध में ही बेरोजगारी हो सकती है। इस लिए मजदूरी प्राप्त कर सकने योग्य व्यक्तिको ही बेरोजगार कहा जा सकता है।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के अनुसार[3] ऐसेसभी व्यक्तियों को बेरोजगार माना जायेगा जो कार्य की खोज में लगे हैं। ऐसे व्यक्ति कार्य न मिलने के कारण रोजगार में संलग्न नहीं होते, परन्तु यदि उन्हे कार्य उपलब्ध हो तो उसे करने के योग्य होते है।

१- वार्थिंग, गाडन, एस एण्ड डाड, पौल ए, " लेबर प्रोब्लम्स", १९४७, पेज १७३-७४।

२- पीगू, ए० सी०, "अनइम्प्लाइमेन्ट," १९१३, पेज न १४।

३- इम्प्लाइमेन्ट एण्ड अनइम्प्लाइमेन्ट, लेबर फोर्स स्टेटीस्टीक्स स्टडी आफ मेथड, आई० एल० ओ० जेनेवा १९४८।

अर्द्ध बेरोजगारी के लिए अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के द्वारा जो परिभाषा दी गई है उसके अनुसार – ऐसे व्यक्तियों को अर्द्ध बेकार कहा जायेगा जो पूर्ण कालीन कार्य नही कर रहे है। वे जितना कार्य वास्तव में कर रहे हैं उससे अधिक कार्य करने की उनकी इच्छा तथा योग्यता होती है अथवा यदि व्यक्ति की आय व उत्पादकता अधिक सुधरे हुए उत्पादन की शर्तों के कारण या दूसरे किसी उद्योग में स्थानान्तरि हो जाने पर विशेष योग्यता के कारण पहले की अपेक्षा बढ़ जाय तो पहले वाली स्थिति में उसे अर्द्ध बेकार कहा जायेगा ।

इस सम्बन्ध में दृश्य तथा अदृश्य तथा अर्द्ध बेरोजगारी को भी स्पष्ट किया गया है। दृश्य बेरोजगारी केअन्तर्गत व्यक्ति सामान्य से कम समय तक कार्य करता है। अदृश्य अर्द्ध बेकारी के अन्तर्गत कार्य का समय तो पूरा रहता है परन्तु व्यक्ति कीउत्पादकता तथा आय सामान्य से कम होती है। अर्थात कार्य के अन्तर्गत व्यक्ति के कौशल तथा योग्यता का पूर्ण उपयोग नहीं हो पाता ।। इसेछिपी हुई बेरोजगारी भी कह सकते है।।

केन्द्रीय सांख्यिकी संगठन[1] के अनुसार वे सभी बेरोजगार हैं जिनके पास कोई ऐसा कार्य नहीं है जिसके बदले में उन्हे भुगतान होता है । ऐसे व्यक्ति कार्य खोजते रहते है इनके अन्तर्गत ।।अ। ऐसे व्यक्ति भी हो सकते है जिनका रोजगार किसी कारण से अवरुद्ध हो गया हो चाहे यह अस्थायी रहा हो या स्थायी, ।।ब। तथा तथा ऐसे व्यक्ति भी हो सकते हैं जो पहली बार कार्य की तलाश में हों। परन्तु इसकेअन्तर्गत ऐसे व्यक्तियों को नहीं रखा जा सकता है जिनकी आयु या तो १४ वर्ष से कम हो अथवा ६० वर्ष से अधिक।

डा०राजकृष्णा ने भारतीय सन्दर्भ में बेरोजगारी का अर्थ व इसके मापन के लिए चार सिद्धान्तों का उल्लेख किया है।[2] इनके आधार पर किसी व्यक्ति के बेरोजगार होने की पहचान की जा सकती है ये सिद्धान्त है :——

१– स्टैन्डर्ड फार सर्वे आन लेबर फोर्स, इम्प्लाइमेन्ट, एण्ड अनइम्प्लाइमेन्ट, सेन्ट्रल स्टेटीस्टीकल ओर्गनाइजेशन कैबीनेट सेक्रेटीयेट, १९६१।

२– राज कृष्णा, "रूरल अनइम्प्लाइमेन्ट पौलिसीज फार फीफ्थ प्लान, इकोनामिक एण्ड पौलिटिकल वीकली, मार्च ३, १९७३।

१- समय का सिद्धान्त

२- आय का सिद्धान्त

३- इच्छा का सिद्धान्त

४- उत्पादकता का सिद्धान्त

प्रत्येक राष्ट्र के लिए यह एक महत्व की बात है कि इसे वर्तमान समय में उत्पादक कार्यों के लिए कितने व्यक्तियों की आवश्यकता है इसकी गणना रखे। ऐसे व्यक्ति जो वर्तमान समय में कार्य की खोज में लगे है अथवा जो अधिक कार्य करने याग्य होने के कारण अधिक कार्य करना चाहते है उन्हें बेरोजगार या अर्द्ध बेकार कहा जा सकता है। ऐसे व्यक्तियों का श्रम-शक्ति में रहना आवश्यक है। श्रम-शक्ति के अन्तर्गत ऐसे व्यक्ति आते है जो पारिश्रमिक ।। वेतन, मजदूरी आदि ।। के बदले में अपनी सेवाओं को देने के लिए उपलब्ध होते है। श्रम- शक्ति की वृद्धि दर, जनसंख्या में कार्यशील आयु तथा कार्य में भाग लेने वालों की दर पर निर्भर होती है।

विकासशील देशों में श्रम-शक्ति को सही अर्थ में प्रयुक्त करने के कारण इसके अधार पर बेरोजगारी को स्पष्ट करना कठिन होजाता है। कोई व्यक्ति तभी बेरोजगार माना जासकता है जबकि वह श्रम-शक्तिका सदस्य हो परन्तु ऐसी स्थिति में जबकि यही निश्चय नहीं है कि श्रम-शक्ति में कौनसे व्यक्ति सम्मलित होते हैं यह भी अस्पष्ट होगा कि कौन से व्यक्ति बेरोजगार है तथा किसे बेरोजगार नहीं माना जा सकता।[१]

वर्तमान काल में बढ़ती हुई जनसंख्या के साथ एक सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न बेरोजगारी का है इस प्रश्न का सामाधान बड़ी कठिनाई से होता है। बेकारी की समस्या भारतीय अर्थव्यवस्था की सबसे गम्भीर समस्या है। मानवीय साधनों का इतना बड़ा अपव्यय शायद ही किसी देश में दिखाई

१- माउली, जे० एण्ड कोस्टा, ई० इम्प्लाइमेन्ट पोलिसीज इन डिवलपिंग कन्ट्रीज, एडिटेड बाई लर्माटिन एट्स पी०, पब्लिसड् आन बी आफ आफ द इन्टरनेशनल लेबर आफि स जेनेवा, लन्दन, जार्ज अलेन एण्ड अनविन लिमिटेड , पेज ३१ ।

देता है। हमारे यहाँ श्रम-शक्ति में तीव्र गति से विस्तार हो रहा है। बढ़ती हुईजनसंख्या के लिए हम उचित मात्रा में रोजगार के अवसर नहीं उपलब्ध करा पाते है। कृषि क्षेत्र में भी बेरोजगारी की समस्या अति चिन्तनीय प्रकरण है। एक व्यक्ति जो काम करने योग्य है और काम करना चाहता है, उसे देश में प्रचलित मजदूरी की दर पर काम न मिलने की अवस्थायें उसे बेरोजगार कहेंगे[1]। ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी के सन्दर्भ में सरकार को विशेष ध्यान देना चाहिए।[2]

बोल चाल की भाषा में बेरोजगारी का अर्थ है, "बिना किसी काम के, बेकार में, बिना कुछ किये हुए समय व्यतित करने से है।"[3] अर्थशास्त्रीय परिभाषित शब्दावली में, "बेरोजगारी श्रम की बरबादी के रूप में सधारणतया विवेचन किया जाता है।"[4] ए० सी० पीगू बेरोजगारी को इस प्रकार परिभाषित करते है, "एक वह व्यक्तिबेरोजगार है जो कि रोजगार प्राप्त नहीं है और रोजगार प्राप्तकरना चाहता है।"[5] जे० ई० मीड भी बेरोजगारी की परिभाषा निम्न लिखित शब्दों में व्यक्त करते है : व्यवसायों में श्रम के माँग में कमी होने से वे व्यक्ति बेरोजगार है, इसलिए नहीं है कि वे दूसरे किसी काम में नहीं जा सकते बल्कि किसी भी व्यवसायमें श्रम की माँग नही होती है।[6]

१- लांग, ओ० : प्राब्लम्स आफ पोलिटिकल इकोनामी आफ सोसलिज्म, पृ० संख्या ७८।

२- बोस, वी० के० : अप्रोच टु इम्प्लायमेन्ट प्राब्लम्स इन रुरल एरियाज आफ इंडिया, एम० एस० स्वामीनाथम् के सम्पादन "साइंस" एण्ड इंटिग्रेटेड रूरल डेवलपमेंट" में संकलित,एपृ० संख्या ८२।

३- रोनाल्ड जी० रीडकर एण्ड हारोल्ड, लूवेल, इम्प्लाइमेन्ट एण्ड अनइम्प्लाइमेंट प्रोब्लेम आफ द मीयर इस्ट एण्ड साउथ एशिया , बाल्यूम-१, ।। विकास पब्लिसिंग, देलही, १९७१ ।। पे० २७४

४- मिर्डल गुनार, एशियन ड्रामा, बाल्यूम-२ ।। पेनग्यून, लन्दन, १९६८ ।।, पेज ९६१।

५- सक्सेना, आर० सी० लेबर प्राब्लेम्स एण्ड सोशल वेलफेयर ।। के० नाथ, मेरठ, १९७४ ।। पेज१५१।

६- मीड, जे० ई०, एन इन्ट्राडक्सन टू इकोनामिक एनलसिस एण्ड पोलिसी ।। आक्सफोर्ड प्रेस, लन्दन, १९३७ ।। पेज ६१।

कमेटी आफ एक्सपर्ट आन इम्प्लाइमेंट इस्टीमेट जिसके श्री एम० एल० दन्तवाला अध्यक्षा थे "बेरोजगारी को निम्नलिखित शब्दों में परिभाषित किया है : "एक व्यक्ति जो पूरे सप्ताह बेरोजगार रहता है, और उसे भविष्य में लाभ प्रद काम मिलने की आशा नहीं रहती, जबकि वह काम की खोज में रहता है याइसके योग्य होता है, उपयुक्त रूप में वास्तव में बेरोजगार समझा जायेगा[1]। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम-संगठन के अनुसार, "बेरोजगारी" में वे काम चाहने वाले व्यक्ति सम्मलित किये जा सकते है जो वास्तव में रोजगार प्राप्त नहीं है बल्कि यदि उन्हें काम दिया जाय जो काम के योग्यहोते हों[2] डा० ई० एफ० शुमेचर बेरोजगारी को निधन की समस्या के एक पहलू और भाग के रूप में परिभाषित करते है। जो प्राप्त श्रम के उपयोग न करने से उत्पन्न होती है, इसमें उपभोग किय जा रहे या उपभोग हुए अप्रतिरक्षणीय निम्न स्तर का उत्पादन सम्मलित है[3]। प्रधान हरिशंकर प्रसाद उल्लेख करते है कि बेरोजगारी शब्द वर्तमान मजदूरी की दर पर कार्य विहिन दशा को सूचित करता है। जब अर्थ व्यवस्था अक्षम होती है, यह अनौच्छिक बेरोजगारी कहलाती है अर्थशास्त्रीय विश्लेषण केअन्तर्गत, बेरोजगारीशब्द अनौच्छिक बेरोजगारी केअर्थ में आता है[4]।इस प्रकार बेरोजगारी को एक ऐसी कार्य की दशा के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जबकि एक राष्ट्र में कार्य करने की उम्र वाले योग्य व्यक्तियोंकी बड़ी संख्या वर्तमान मजदूरी की दर पर कार्य करना चाहती है किन्तु उन्हें काम नहीं मिलता है। द दूसरे शब्दों में, वह व्यक्ति बेरोजगार है यदि उसे पुरे समय तक काम नहीं मिलता हौर जबकि वह सक्रीय रूप से कार्य करना चाहता है या प्रचलित मजदूरी पर कार्य के लिए योग्य है। जो व्यक्ति शाररिक या मानसिक रूप से काय करने के योग्य नहीं होते हैं या जो कम नही करना चाहते है वे बेरोजगारी के श्रेणी में नहीं आते हैं।

१- गवर्मेन्ट आफ इंडिया, रिपोर्ट आफ दी कमेटी आफ एक्सपर्ट आन इम्प्लाइमेन्ट इस्टीमेट्स ।।प्लानिंग कमीशन देलही, १९७० ।। पेज १७।

२- सीता पति, पी०, "अनइम्प्लाइमेन्ट अन्डर इम्प्लाइमेन्ट एण्ड फुल इम्प्लाइमेन्ट", कामर्स पम्पलेट, न० ५१,१९७२, पेज ७।

३- शुमेचर, ई० एफ० अनइम्प्लाइमेन्ट आर वर्कलेस अनइम्प्लाइमेन्ट इन इंडिया ।।एलाइड पब्लिसर्स, बाम्बे, ।। पेज ४३।

४- प्रसाद, प्रधान हरिशंकर, "अनइम्प्लाइमेन्ट इंडिया", इंडियन इकोनामिक जर्नल, वाल्यूम I। बाम्बे ।।, पेज १०७।

बेरोजगारी के प्रकार

बेरोजगारी कई प्रकार की होती है प्रो० चैपमैन ने बेरोजगारी को मोटे तौर पर दो भागों में विभाजित किया है – १– भावगत ।।सब्जेक्टिव ।। २– वस्तुगत ।। आब्जेक्टिव।।

भावगत बेरोजगारी मनुष्य के शररीक तथा मानसीक दोषों के कारण उत्पन्न होती है चाहे ये दोष जन्म जात हो याप्राप्त किये हुए, चाहे ये दोष उपचार योग्य हों या ठीक न होने वाले हो । इसमें अनिश्चित बेरोजगारी भी सम्मिलित रहती है ।

वस्तुगत बेरोजगारी उन कारणों से उत्पन्न होती है जो मनुष्य के वश में नहीं होते है जैसे व्यापारचक्र से उत्पन्न होने वाली बेरोजगारी, मौसमी मांग एवं पूर्ति के परिवर्तनों केकारण उत्पन्न होने वाली बेरोजगारी, आकस्मिक बेरोजगारी आदि ।

वास्तव में बेरोजगारी के विभिन्न प्रकार बताये जाते है जो निम्नवत् है :------

।।अ।। सामान्य या अस्थायी बेरोजगारी :-----

इस प्रकार की बेरोजगारी श्रमिकों की स्वतन्त्र गतिशीलता के कारणउत्पन्न होती है, जो प्रत्येक समय तथा प्रत्येक समाज में पायी जाती है । श्रमिक सदा एक स्थान से दूसरे स्थानको, एक उद्योग से दूसरे उद्योग को जाने के लिए स्वतन्त्र रहते है । सधारणतया एक स्थानसेनौकरी छोड़कर दूसरे स्थान पर जाने पर शीघ्र ही नौकरी नहीं मिल जाती अतएवं जब तक उन्हें कामनहीं मिलता, वे बेरोजगार रहते है, परन्तु इस सीमा तक बेकारी तो समाज में हमेशा बनीरहती है । बेवरीज ने इसे बेरोजगारी की वह न्यूनतम सीमा बताया है जिसे कम नहीं किया जा सकता । प्रो०पीगू न इसे न मालूम होने वाली न्यूनतम सीमा कहा है जिससें नीचे बेकारी का प्रतिशत कभी नहीं गिरता ।

।।ब।। मौसमी बेरोजगारी :---

मौसमी बेरोजगारी उत्पादन में मौसमी परिर्वतनों के कारण उत्पन्न होती है । कुछ ऐसे रोजगार है जो मौसमी होत्रे,तथाइनमें वर्ष के कुछ समय में लोग बेकार रहते है । दूसरे शब्दों में कुछ उद्योग ऐसे होते है जिनमें मजदूरो को केवल कुछ समय के लिए ही काम मिलता है ।

उदाहरण के लिए भारत के चीनी के कारखानों में ऐसे ही होता है। चीनी के कारखानों में नवम्बर से लेकर अप्रैल तक या मई तक कार्य चलता है। वर्ष के शेष भाग में उसमें कार्य करने वाले व्यक्ति बेकार रहते है। इसके अतिरिक्त हमारे देश में कृषि में लगे लोगों की भी यही दशा है।

।।स।। चक्रीय बेरोजगारी :-----

व्यवसाय चक्र सम्बन्धी परिवर्तनों के कारण इस प्रकार की बेरोजगारी उत्प होती है पानी में उठने वाली नीची, ऊंची तरंगों के समान ही व्यवसाय चक्र मे भी तेजी और मंदी के समय आते रहते हैं। इन व्यवसाय चक्रों का बेरोजगारी की मात्र ा पर बहुत ज्यादा प्रभाव पड़ता है। जब व्यवसाय अच्छा रहता है बेकारी कम तथा जब व्यवसाय को मंदी का सामना करना पड़ता है तो बेरोजगारी की मात्र ा में भी वृद्धि हो जाती है। पूंजीवादी प्रणाली की बनावट में इस प्रकार की बेरोजगारी का उत्पन्न होना असम्भव नहीं कहा जा सकता।

।।द।। अस्थिर बेरोजगारी :-----

ऐसी बेरोजगारी श्रम बाजार की त्रुटियों के कारण उत्पन्न होती है। श्रमिकों में पूर्ण गतिशीलता या परस्पर परिवर्तनशीलता का अभाव पाया जाता है क्योंकि या तो मजदूर मांग के अनुसार नहीं मिलते या अपेक्षित स्थानों पर नहीं मिलते। जब कभी उत्पादनके तकनीकों एवं विधियों में याउपभोक्ताओं की आदतो में परिवर्तन होते हैं तो ऐसी ही बेकारी उत्पन्न होती है। इसमें कुछ उद्योगों में तो आवश्यकता से अधिक मजदूर लगे रहते है या कुछ में श्रम पूर्ति का अभाव दिखाया पड़ता है। दूसरीश्रेणी के उद्योगों में काम करने वालों को श्रम बाजार की त्रुटियों के कारण कुछ समय तक काम ही नही मिलता इस प्रकार की बेरोजगारी के प्रमुख कारण श्रमिको की गतिशीलता, काम की अस्थायी प्रकृति,संसाधनों का अ भाव, मशीनरीए एवं प्रशाधन का गति रोध अ और कार्य के सुअवसरों के सम्बन्ध में अज्ञानता आदि है।

।।य।।अनैच्छिक बेरोजगारी :-----

अनैच्छिक बेरोजगारी वह है जो श्रमिको की इच्छा के विरुद्ध इन पर लादी जाती है। मजदूर काम करना चाहते है पर उन्हें मजदूरी कीप्रचलित दर पर काम नहीं मिलता। इस प्रकार की बेरोजगारी का श्रेय कीन्स को है। कीन्स ने इसे इस प्रकार से परिभाषित किया है :---

"अनैच्छिक बेरोजगारी वह दशा है जिसमें एक व्यक्ति प्रचलित मजदूरी की अपेक्षा न्यूनतम वास्तविक मजदूरव पर काम करना चाहता है, यद्यपि वह न्यून मजदूरी को ग्रहण करना नहीं चाहता ।" इस प्रकार की बेरोजगारी समाज की सम्पूर्ण मांग की प्रभावोत्पादकता में कमी के कारण उत्पन्नहोती है । वास्तव में इस प्रकार के बेकारी मे मूल कारण उत्पादनकी विभिन्नता, श्रम- विभाजन एवं विशिष्टी करण की अधिकता तथा बाजार की मूल्य एवं साख प्रणाली एवं वितरण की व्यवस्था अ आदि है ।

।।र।। छिपी हुई बेरोजगारी या अर्द्ध बेरोजगारी :-------

भारत के ग्रामीण क्षेत्र में इस प्रकार की बेरोजगारी बहुत अधिक प्रचलित है । इस बेरोजगारी का तात्पर्य यह कि श्रमिक वैसे तोअपने आपको काम पर लगा हुआ समझता है लेकिनउसकी सामान्य उत्पत्ति बिलकुल नगण्य होती है । यह बेरोजगारी मुख्यत: कृषिगत ग्रामीण क्षेत्रों में पायी जाती है । यह बेकारी विशेषत: सरकारी विभागों में भी पायी जाती है । भारत का प्रशासनिक व्यय दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है । कई स्थानों पर आवश्यकता से अधिक कर्मचारी नियुक्त किये जाते है, यह भीऐसा ही बेकरी है । प्राय: ग्रामीण घरों की स्त्रियां अर्द्ध बेरोजगार की शिकार होती है ।

।।ल।। औद्योगिक ढाचे सम्बन्धी बेरोजगारी :-------

देश के औद्योगिक ढाचे में विभिन्न उद्योगों का अकार अलग अलग होता है । ऐसी बेकारी काप्रधान श्रोत विनियोजन में परिवर्तन है । एक उद्योग समाप्त याक्षीण होता है दूसरा उद्योग उसका स्थान ग्रहण करता है । क्षीण होने वाले उद्योग के श्रमिक बेकार हो जाते है क्योंकि उन्हें दूसरा काम सीखने याढूढ़ने में समय लगता है । कुछ व्यक्ति जो बहुत पुराने होते है वे नये वातावरण तथा मशीनों पर कार्य ही नहीं कर पाते है । इस प्रकार के श्रमिक क्षीण होने वाले उद्योगों में अधिक हो होगें जबकि दूसरे उद्योगों में श्रमिकों की कमी होगी। ऐसी बेरोजगारी प्राय: समनज में पायी जाती है यही बेकारी औद्योगिक ढाचे सम्बन्धी बेरोजगारी है ।

रोजगार सिद्धान्तो का भारतीय सन्दर्भ में मूल्यांकन

रोजगार सिद्धान्तों की पृष्ठ-भूमि :------

सिद्धान्त एक निश्चित परिवेश में जन्म पाते हैं जिसके आधार पर ही विभिन्न प्रकार की नीतियों कीरचना की जाती है ताकि समाज में भिन्न प्रकार की मानवीय क्रियाओं को सुनिश्चित उद्देश्य की ओर ले जाया जा सकें तथ उनमें इस प्रकार ताल-मेल बैठाया जा सके जिससे समाज का वैज्ञानिक संगठन आदर्श हो जाए, व्यक्ति तथा समुदाय अपना-उत्कर्ष अधिक से अधिक कर सकें। ऐसीही दशा में कार्यक्षमता उत्पादकता और सहकारिता की भावनाबलवती हो जाती है। जब तक वह वातावरण, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, राजनीतिक और आर्थिक रूप में बना रहता है तब तक नीति अपनी सम्पूर्ण शक्ति के साथ कार्य करती है। अत: सिद्धान्तों के प्रतिपादन में सामाजिक राजनीतिक और आर्थिक संस्थाओं को स्थिर कमान लिया जाता है सिद्धान्तों की रचना के लिए गत्यात्मक परिस्थितिसे उन आकड़ों और विचारों को पृथक कर लिया जाता है जिसका अध्ययन करना रहता है। हमारा अध्ययन अधिकांशत: स्थैतिक हो जाता है परन्तु वस्तु स्थिति निरन्तर परिवर्तनशील रहती है, जिसके फ लस्वरूप एक अच्छा सिद्धान्त भी ऐसी जटिल समस्याओं को उत्पत्ति कर ता है जिसका निराकरण करना यदि असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य हो जाता है। यदि सामाजिक संस्थाओं और सामाजिकसंगठनों में कोई परिवर्तन नहीं होता तो ऐसी दशाऐ उत्पन्न हो ज जाती है जो पुराने विचारों का विनाश करने काप्रयत्न करेंगें ताकि नये मूल्यों कीस्थापना की जा सके।

नये और पुरानेमूल्यों में निरन्तर संघर्ष होता रहता है। जब तब विशिष्ट सिद्धान्तके अनुसार मूल्य स्थापित नहीं हो जायेगें तब तक उनके अधार पर नई नीतियों काउपयोग ठीक से नहीं किया जा सकता है। नियोजन में सफलता तभी मिल सकती है जब तक उसी के अनुरूप मूल्यों को स्थापना नहीं हो जाती है। नये मूल्य नई दशा को पृष्ठि भूमि का कार्य करते है जो विकास की गति को तीव्रता प्रदान करते है। क्लासिकी अर्थशास्त्रीयों अर्थशास्त्रीयों ने जिन विचारों का विकास किया वह एक तो पूंजीवादी अर्थव्यवस्था पर, एक निश्चित प्रकार के उत्पत्ति सम्बन्धों पर निर्भर है। जिसमें सरकार के कार्यो को न्यूनतम सीमा पर निश्चित किया और नीजि साहस को प्रोत्साहित करने के लिए "हस्तक्षेप न करने की नीति", स्वतन्त्र प्रतियोगिता और पूर्ण प्रतियोगिता को स्वीकार किया।

सभी साधनों के भिन्न उपयोगों और स्थानों में वितरण की आदर्श देशा की कल्पना की थी । जब सभी उत्पत्ति के साधनों को अपनी सेवाओं के बेचने को स्वतन्त्र रहे तब वे अपनी सम्पूर्ण योग्यतातथा क्षामता के अनुसार सेवायें प्रदान करते थे । अधिक से अधिक व्यक्तियों का अधिक से अधिक कल्याण हुआ करता था । सामाजिक कल याण तथा संतुष्टि भी अधिक हो जाती थी उपयुक्त दशाओं का विकास और विस्तार तभी तक न्यायपूर्ण होता रआ जब तक एक निश्चित प्रकार के मूल्य और सामाजिक दशाएं मिलती रही ।

स्थैतिक अध्ययन के अधार पर निर्मित किये गये सिद्धान्तों का नवीन परिस्थितियों में भी उसी प्रकार उपयोग किया जाता है तो परिणाम बड़े भयंकर निकल सकते है । १९ वीं शता० दी में उपनिवेशवाद अपनी चरम सीमा को छू रहा था । शक्तिशाली देशों ने अपने प्रभुत्व और सम्पन्नता को बढ़ाने के लिए उपनिवेशों का अधिकाधिक शोषण किया । अपने देशों की अतिरिक्त उत्पत्ति उपनिवेश में भेजते थे । निर्मित माल के स्थान पर कच्चा माल लेते थे । उपनिवेशों के विरुद्ध हमेशा व्यपार की शर्तें रहीं । भुगतान शेष निरन्तर इन्हीं साम्राज यवादी देशों के पक्ष में रहा । सम्राजवादियों का विकास इसी शोषण नीति पर निर्भर करता था फलस इन साम्राजवादियों में पूंजी या बचत की दरों में वृद्धि हुई और बचत निरन्तर बढ़ती चली गयी । जिसका विनियोग अधिक से अधिक किया जाता रहा क्योंकि १९ वीं शताब्दी में प्रभावशील मांग, या बाजार का विस्तार अधिक था । एक और जनसंख्या का विकास अधिक हो रहा था ए दूसरे बिना विकास हुआ क्षेत्र प्रचुर मात्र T में उपलब्ध था, तीसरे अविष्कार के कारण पूंजी का उपयोग विस्तृत तथा गहनहोने लगा था, तकनीकी ज्ञान काविकास तथा पूंजी की मात्रा की वृद्धि अधिक हो रही थी । इनकारणों से निवेश अधिक प्रोत्साहित हुआ जिसके फलस्वरूप इन साम्राज यवादी देशों में केवल वास्तविक राष्ट्रीय आय, तथा प्रति प्रतिव्यक्ति राष्ट्रीय आय कीवृद्धि ही नही हुई अपितु उपभोग के स्तर में, कार्य कुशलता तथा उत्पादक में, व्यपार में, और रोजगार के उच्चतम स्तर को स्थापितकिया जा सका । रोजगार के अवसरों का विकास तीव्रता आर शीघ्रता से होता चला गया। युद्ध ने भी अपनी भूमिका अदा की । परन्तु गत्यात्मक तत्वों में धीरे - धीरे शिथिलता आती चली गयी । आर्थिक प्रणाली में उतार -चढ़ाव समय-समय पर आने लग गये जिसकेकारणबेरोजगारी और आर्थिक प्रणाली को उच्चतर पर बनाए रखना पूंजीवादी देशों के लिए असम्भव होता चला गया । पूंजीवादी आर्थिक प्रणाली दीर्घकालीन दृष्टि के अनुसार विकासोन्मुख रही । इसी विकास कीप्रवृत्ति में समय-समय पर व्यवसायिक चक्र आने

लग गये थे। जिसके कारण मानवीय श्रम का तथा उत्पति के अन्य साधनों का समय-समय पर अपव्यय होने लगा। मुख्य रूप में मानव सम्बन्धी या रोजगार की समस्या गहन होती चली गयी। इसका मुख्य कारण यह था कि 20 वीं शता० दी में उपनिवेश साम्राज्यवादियों से स्वतन्त्र होते चले गये। इन देशों ने विदेशी पूंजी, राजनीति और सहायता पर अंकुश लगाना अनिवार्य समझा विदेशी कूटनीति से बचने का प्रयत्न करने लगे। क्योंकि आर्थिक और राजनितिक विस्तार का महत्वपूर्ण अंग आदर्श हीन और मानवताहीन कूटनीति थी जो उपनिवेश को स्वतन्त्र आर्थिक, सामाजिक और राजनि रचना की लिए बहुत घातक थी। अत: लाभदायक स्रोतों में संकुचन आया। एक और उपनिवेश छिन गये दूसरे इन देशों में प्राकृतिक साधनों के शोषण कीसीमा पहुंच गयी। पूंजी के विस्तृत उपयोग के स्थान पर गहन उपयोग किया जाने लगा तथा ऐसे अविष्कार किये जाने लगे जिसमें पूंजीका प्रतिस्थापनकरने ल लगे। तीसरे जनसंख्याइन साम्राज्यवादी देशों की गिरने लगी थी। बाजार का विस्तार या प्रभावशील मांग में कमी आ गयी। बेरोजगारी कीसमस्या बढ़ने लगी। इन सबका प्रभाव यह हुआ कि लाभ की दशाओं और अवसरों में गिरवट आयी।

पूंजीवादी सिद्धान्तों काइस विचार पर विकास हुआ कि स्वतन्त्र प्रतियोगिता बनी रहेगी। ज्यो-ज्यों समाज सम्पन्न होता जायगायाया ज्यो-ज्यो उत्पत्ति तथा राष्ट्रीय आय बढ़ती जयगी त्यों-त्यों श्रमिकों की वास्तविक आय भी बढ़ती जायगी। उपभोक्ताओं को अराम मिलेगा ए इनका कल्याण बढ़ेगा और इस धरा पर स्वर्ग को उतारा जा सकेगा। परन्तु इन अधारभूत अवस्थाओं में ही परिवर्तन हो गया। साहसियों तथ उत्पादकों की संख्या अधिक रहने लगी। उत्पत्ति राष्ट्रीय अधार प पर सुनिश्चित उद्देश्यों के अनुसार नहीं की जाती थी। अपितु व्यक्तिगत रूप में की जाती थी। जिसका फल यह होता थाकि उत्पत्ति उपभोग से याप्रभावशील मांग से अधिक हो जाती थी यानि फिर कभी कम हो जाती थी। इस अनिश्चितता के वातावरण के कारण एक ओर हानि की स सम्भावना बढ़ जाती थी तो दूसरी ओर निवेश अनिश्चित हो जाता था। इसी के कारण पूर्ण प्रतियोगिता का आधार धीरे-धीरे समाप्त होने लगा। और पूर्ण प्रतियोगिता एक कल्पना की वस्तु बन गया। उसके स्थान पर एकाधिकार कीस्थापना होने लगी। गुटबाजी उद्योगों का मिलन और सम्मिश्रण की प्रवृत्ति प्रोत्साहित हो गयी। कीमतों तथा उत्पत्ति पर नियंत्रण किया जाने लगा। कृत्रिम न्यूनता उत्पन्न की जाने लगी तोकि मनमानी कीमत ली जासके। उपयोगिताओं तथा श्रम का

अधिक शोषण किया जा सके और निजी लाभ की दर को अधिक से अधिक किया जा सकें। श्रमिकों के स्थान पर मशीनें अधिक उपयोग किये जाने लगी। प्प्रतिस्थापन के नियम के अधार पर मंहगे साधन के स्थान पर सस्ते साधनों का उपयोग किया जाने लगा। श्रमिकों की बेरोजगारी सेना बढ़ने लगी और दूसरी ओर उपभोक्ताओं के कल्याण में भी गिरावट आने लगी। मानवी मूल्यों का ह्रास हुआ उसके स्थान पर माद्रिकमूल्यों का काबोलवाला रहा जिसका मार्क्स ने अच्छा विश्लेषण किया।

प्रारम्भ में सरकार के नियम भी उत्पादकों के पक्ष और श्रमिकों के विपक्ष में थे। जिसके विरुद्ध प्रतिक्रिया उत्पन्न हुई और अन्तर में सरकार को निर्बल और असहाय सर्वहारा वर्ग की सहायता करनीपड़ी। उनका जीवन नारकीय बन गया था। उनके रहन-सहन का, उपभोग और आय कास्तर बहुत नीचा था। जीवनयापन किसी प्रकार कर पाते थे। श्रमिकों को किसी प्रकार कीसुरक्षा नहीं थी और नहीं उन्हें चोट आदि की क्षतिपूर्ति ही की जाती थी कुछ उदारवादियों और परोपकारियो का आश्रय ही श्रमिकों को मिल पाता था। जब दो असमान शक्ति सम्पन्न व्यक्ति अपने व्यवहार के लिए स्वतन्त्र रहते है तो उनमें कमजोर ही को विभिन्न प्रकार कीकठिनाइयां उठनी पड़ती है यदि उसकी सहायता नहीए की जाती है तो विपन्न व्यक्ति की भौतिक राजनैतिक और सामाजिक दशा बहुत शोचनीय हो जाती है। अत: सरकार बहुत समय तक श्रमिकों की दयनीय दशा देख कर उसवर्ग की सुविधा देने के विचार से ही उनके संगठन को वैधानिक मान्यता देने लगी। न्यूनतम मजदूरी तथा अन्य प्रकार कीसुविधाओं को उत्पादकों के द्वारा दिलवाने लगी। श्रमिकों के संगठन के कारण श्र श्रमिकों में आत्म विश्वास जागा और वे भी अपने हितों को सुरक्षित रखने का कार्य करने लगे। श्रमिक संगठन उत्पादनप्रणाली का महत्वपूर्ण अंग बन गया। पूंजीवादी अर्थ:व्यवस्था के विकास में यह भी एक नवीनकड़ी थी। जिसको वर्तमान औद्योगिक और आर्थिक प्रणाली से नजरांदाज नहीं किया जा सकता है श्रमिकों संगठन वर्ग संघर्ष की पाठशालाएं बन गयी।

सरकार ने केवल श्रमिक संगठनों को वैधानिक मान्यता ही नहीं दी अपितु बेरोजगार,एवृद्धावस्था पंगुता, गन्दगी तथा अभाव से छुटकारा दिलाने का भी कार्य आरम्भ कर दिया। ताकि कल्याण-कारी समाज की स्थापना की जा सके। यह समाज वह होगा जिसमें प्रत्येक नागरिक को रोजगार पाने का अधिकार रहेगा। इसके लिए सरकार निरन्तर प्रयत्नशील रहेगी। पूर्णरोजगार की स्थापना करेगी, उत्पादन प्रणाली काइस प्रकार उपयोग करेगी जिससे अधिकतम उत्पत्ति प्राप्त की

जा सके। राष्ट्रीय वास्तविक उत्पत्ति को अधिकतम किया जा सके, धन के वितरण को न्यायपूर्ण तथा अधिक से अधिक समान किया जाए। असमानता को कम किया जा सके और प्रत्येक को र समान अवसर, आय और धन के वितरणको न्यायपूर्ण बनाया जासके तथा कुछ व्यक्तियों के हाथों में आर्थिक तथा राजनैतिक शक्ति का केन्द्रीय करण न होने पाए उसका ध्यान रखेगी। सामातिक सुरक्षा के अधीन बेवरीज की सुरक्षा योजगा को लागू किया गया। बिमारी , अपंगुता, वृद्धावस्था कमाने वाले की मृत यु हो जाने पर आश्रितोंको सहायता पहुंचाना, क्षतिपूर्ति, मातृत्व लाभ, स्वास्थ सुरक्षा, चिकित्सा तथा प्राविडेण्ट फंड की सुविधा प्रदानकरना तथा कल्याण की सुविधाओं का विस्तार करना महत्वपूर्ण हो गया था। और शोषण पूंजी के स्थान पर कल्याणकार राज य एवं कल्याण कारी पूंजी के विचार की स्थापनाकीइसी प्रकार उपभोक्ताओं के सुरक्षा के लिए भी सरकार ने उद्योग मिश्रण के विरुद्ध विधान की रचना करके उनके हितो की सुरक्षित किया जिससे उपभोक्ता अपने सीमित साधनो और आय के द्वारा चुनाव का उपभोग करके अधिकतम संतुष्टि प्राप्त कर सके। उपभोक्ता को पूंजीवाद में सर्व - शक्तिमान समझा जाता है। यह कहा जाता है कि उसी के आदेशानुसार याउपभोग या मांग के अनुसार उसकीइच्छाएं उद्घाटित होती है जिसका बिम्ब कीमतों के द्वारा परिलक्षित होता है। जिनकी कीमतें अधिक होतीहै उसी वस्तु की उत्पत्ति में साधनो और मशीनों तथा भूमि आदि का उपयोग किया जाता है। सापेक्षिक कीमतों के परि- वर्तन पर उत्पत्ति के साधनों के उपयोग का सापेक्षिक महत्व भी परिवर्तित हो जाता है। साधनों का उसी प्रकार प्रतिस्थापन तथा स्थानान्तरण और हस्तनान्तरण हो जाता है। जिसके फलस्वरूप साधनों कावितरण पुनः कियाजाता है जिससे न्यूनतम लागत पर अधिक से अधिक लाभ तथा उत्पादन प प्राप्त किया जासके। अतः पूंजीवाद में कीमत ही वह केन्द्र होता है जिसके चारों ओर आर्थिक शक्तियां चक्कर काटती है।

परन्तु समय इतना बदल गयाहै कि उपयोगिता की सत्ता एक काल्पनिक सुमन के समान ही है। क्योंकि उपभोक्ता एक तो सीमित आयो से ग्रस्त रहता है दूसरे विद्यमान वस्तुवों से उसके क्रय की मात्रा सीमित हो जाती है। विज्ञापन उसके क्रय को प्रभावित करता है। सरकार के नियम तथा राजनैतिक तंत्र से वह प्रभावित होता है और फि र वह स्वयं अपनी आदतों का दास रहता है। उसका आचरण दूसरों के अनुकरण से भी प्रभावित होता है और फिर विक्रय कला आदि का उपयोग करके उन वस्तुओं की मांग पैदा की जाती है जिसकी ओर उसकाध्यान भी नही जाता है।

इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि उपभोक्ता की स्वतन्त्रता तथा सत्ता का विचार कल्पना की वस्तु है। उसका शोषण ही उत्पादकों के द्वारा किया किया जाता है। सरकार ने अपनी नीतियों में परिवर्तन किया जिससे उपभोक्ता के हितों को सुरक्षित किया जा सके। इस प्रकार से सरकार आर्थिक प्रणाली में हस्तक्षेप कर ने लगी। अत: हस्तक्षेप न करने की पुरानी नीति का अन्त हो गया परन्तु उनके अधार पर बनाये गये सिद्धान्तों का अब भी बोल-बाला बना रहा।

जिस भी देश ने औद्योगिक क्रान्ती सर्वप्रथम आरम्भ की उसको उस समय के आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक विचारो ने सहायता पहुंचाई। उनके अधार पर निर्मित सिद्धान्तों तथानियमें से उन देशों को लाभ मिला। इग्लैण्ड औद्योगिक क्रान्ती में अग्रणी था। युराप में उसका विकास शीघ्रता से होन लगा। सापेक्षिक रूप में आयोगिक स्भ्यता तथा संस्कृति का आलिंगन सर्वप्रथम किया परन्तु १७ वीं तथा १८ वीं आदि शताब्दियो में यूरोप के अन्य देश अधिक पिछड़े हुए ये जिनमें कृषि तथा कच्चे माल का ही महत्त्व था। इसी कारण इनदेशो की आर्थिक प्रणाली काविकास बहुत समय बा सम्भव हो सका। इसका कारण आन्तिरिक अर्थव्यवस्था की दुर्दशा या कठिनाई ही नहीं थी अपितु व व्यापार का असन्तुलन भी था जिसमें इग्लैण्ड की निर्मित वस्तुवें ही उत्कृष्ट बैठती थीं। इसी कारण इन देशों तथा अमेरिका ने भी विकास की प्रक्रिया संरक्षण की अवस्था में ही की जो तुलनात्मक तथा अर्न्तराष्ट्रीय श्रम विभाजन के सिद्धान्त के विरुद्ध है। वर्तमान काल में विकासशील देश भीसंरक्षण की नीति का अनुमोदन कर रहे है। जबकि अर्न्तराष्ट्रीय मुद्रा कोष तथा गैट आदि जैसी अर्न्तराष्ट्रीय संस्थाओं की स्थापना का उद्देश्य ही स्वतन्त्र व्यपार पर अधारित है। जिसमें सभी सदस्य देशों की पृथक-पृथक मौद्रिक और वित्तीय नीति को स्वीकार किया गया है। इस प्रकार सामाजिक और आर्थिक मान्यताओं में परिवर्तन होता जा रहा है। सरकारे भुगतान शेष के असन्तुलन को स्वतन्त्र आर्थिक शक्तियों पर नहीं छोड़ देती है। विनिमय की दर कानियंत्रण करती ह। जिससे आन्तिरिक पूंजी के श्रोतों की कमी को पूर्ण किया जासके और देश की आर्थिक गति के विकास कीप्रक्रिया को अधिक तीव्रगामी बनाया जा सकें। विदेशी विनिमय कीमांग और पूर्ति या आर्थिक प्रणाली के एक बड़े हिस्से पर सरकार अपना प्रभाव डालती है। अपने बजट का उपयोग करती है। घाटे के बजट का समय-समय पर उपयोग करती है। क्षतिपूर्ति वित्त के सिद्धान्त का उपयोग किया जाने लगा है। कार्यशील राजस्व ।। फंक्शनल फाईनेन्स ।। काउपयोग किया जा जा रहा है ताकि आर्थिकविकास की दर को बढ़ाया जा सके। इन विचारों का विकास तथा इन पर आधारित सिद्धान्त और नीतियां परिवर्तित दशा का ही द्योतक है।

इन सब परिवर्तित दशाओं में यह अनुभव किया जाने लगा कि क्लासिकी विचार तथा सिद्धान्त असामयिक हो गये हैं क्योंकि उनके द्वारा विद्यमान समस्याओं का निराकरण करना कठिन हो गया है उनमें भौतिक रूप में कमी प्रतीत होने लगी थी और धीरे-धीरे पूंजी वादी प्रणाली की भयंकर खराबियां जो समय के साथ बढ़ती चली गयी सामने स्पष्ट रूप में आ गयी। इन खराबियों का १९२९-३० के व्यपारिक चक्र ने सामने लाकर रख दिया कुछ के द्वारा विचार किया जाता था कि व्यपार चक्र भूत की वस्तु हो गयी ह जैसा विहैवरलर ने अपनी पुस्तक "प्रासपेरटो एण्ड डिप्रेशन", में भिन्न वि विचारों का उल्लेख किया है। हैवरलर कायह विचार था कि भयंकर प्रकार के उतार-चढ़ाव वाले व्यापार चक्र १९ वीं शताब्दी के विशेषता थे क्योंकि उस समय सरकारें आर्थिक प्रणाली में हस्तक्षेप करना पसन्द नहीं करती थी। उस समय यह विचार था कि आर्थिक प्रणाली स्वयं अपना साम्य प्राप्त कर लेती ह उसमें साम्य की ओर चलने की प्रवृत्ति रहती है। यह स्वचालित रूप में होता है। स्वतन्त्र आर्थिक शक्तियों के कार्यशील में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। परन्तु 20 वीं शता० दी में सरकारें, मौद्रिक तथा बजटीय या वित्तीय अभिकरण तथा कीमत नियंत्रण आदि का प्रयोग करके अत्यधिक आर्थिक उतार-चढ़ाव को नियंत्रित करने लगी। कम से कम अवसाद या गिरावट पर अधिक नियंत्रण प्राप्त कर लिया। परन्तु जब १९२९ ई० में विश्व व्यापी आर्थिक मंदी आयी और बेरोजगारी की समस्या गहन हो गयी। एसी स्थिति का मुकावला करने में जबक्लासिकी दवा का उपयोग प्रयोग किया गया तो बेरोजगारी की समस्या हल होने के बजाय और खराब हो गयी। ज्यों-ज्यों दवाई लागू की गयी समस्या गहन हातीचली गई। मंदी से निपटने के लिए जर्मनी में मजदूरी को कम कर दिया गया जिसके फलस्वरूप बिमारी और बढ़ गयी। हिटलर जैसे तानाशाह का उत्थान हुआ जिसने रोजगार प्रदान करने का वादाकिया और युद्ध के आधार पर अर्थव्यवस्था को व्यवस्थित करने का यत्न किया गया। यह विचार किया जाने लगाकिक्लासिकी दवाईयां पुराजी पड़ गयी। जिनमें आमूल परिर्वतन करना भी आवश्यक है। सर जान मेनर्ड कीन्स ने अपने विचारों के द्वारा पूंजीवाद की बढ़ती हुई खराबियों पर अपना हाथ रखा। और यह पायाकि पूर्ण रोजगार आय को यदि बनाए रखना है तो क्लासिकी दवाई कारगर नहीं हो सकती है। जिन राष्ट्रों में बचत की बाहुल्यता के कारण अपच हेता जा रहा है उसको दुर करने के लिए क्लासिकी अर्थशास्त्रीयों की मजदूरी कम करने की दवा उपयुक्त नहीं हो सकती है क्योंकि मजदूरी श्रमिकों की आय होती है। जिसपर प्रभावशील मांग निर्भर करती ह यदि उसमें कमी आ जायेगी तो रोजगार और लाभ तथा राष्ट्रीय आय का स्तर हमेशा गिर जायेंगे।

परन्तु क्लासिकी अर्थवेत्ताओं का विचार था कि यदि कुल प्रभावशील मांग स्थिर रहती है तो किसी एक उद्योग में बिना बिका हुआ माल एकत्रित हो सकता है। इसका मुख्य कारण मजदूरी की अधिकता हो सकती है जिससे वस्तु की लागत अधिक हो जाती है। जो हानि को जन्म देती है। इस दशा को ठीक करने के लिए मजदूरी कम कर दी जाए तो उत्पत्ति की लागत कम हो जायेगी जिसके कारण उस वस्तु की कीमत गिर जाएगी और उस वस्तु के कुल विक्रय की मात्रा बढ़ जाएगी उद्योगपति की आय बढ़ने लगेगी। उद्योगपति की कुल बढ़ी हुई आय उसके द्वारा दी गई कुल मजदूरी से अधिक रहेगी। रोजगार की वृद्धि होगी बेकार पड़े साधनों का उपयोग होने लगेगा। परन्तु इस प्रकार का सिद्धान्त अधिक महत्वपूर्ण नहीं रह गया। मजदूरी आदि की समस्या के समझने की लिए आय के पक्ष का लागत के पक्ष की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण स्थान है। अत: आय को नियंत्रित करना तथा उसमें स्थिरता लाना अपेक्षाकृत अधिक महत्वपूर्ण है। जब तक प्रभावशील मांग को ऊंचे रोजगार आय पर स्थिर नहीं किया जाता तब तक आर्थिक प्रणाली का उत्थान सम्भव नही हो सकता है। अत: पूंजीवादी दशा में तो परिवर्तन होता रहा, परन्तु उससे सम्बन्धित सिद्धान्तों में स्थिरता बनी रही जो घातक होने लगी।

परन्तु दूसरी ओर रूस की अर्थव्यवस्था निरन्तर विकास के विभिन्न सोपानों को पार करने लगी। जार के समय की अर्थ व्यवस्था का लेनिन और स्टालिन की सरकार ने क्याकल्प कर दिया और सर्वहारा वर्ग को निश्चित मरियादा और सम्मान तक पहुंचाया तथा आर्थिक समृद्धि का भोग भी कराया आज रूस समाजवादी प्रक्रिया का उपयोग करके उन सिद्धान्तों का उपयोग कर रहा है जिससे समाज में न्याय, समानता और भाई चारा जैसे मानवीय संवेदनाओं का विकास तथा विस्तार हो सके और उसी के साथ भौतिक जीवन को उन्नतिशील किया जा सके तथा आर्थिक प्रणाली में स्थिरता के साथ प्रगति होती जाए। सामाजिक न्याय प्रदान करने के लिए वितरण की समस्या को रोजगार की समस्या की तथा जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं से सम्बन्धित समस्याओं का निराकरण कर रहा है। जिससे अन्त में बाहुल्य उत्पादन एवं वर्गहीन समाज की स्थापना की जा सके। राज्य का अस्तित्व समाप्त किया जा सकें, सर्वहारा वर्ग के हाथों में सत्ता का केन्द्रीकरण हो जाए, सर्वहारा वर्ग की सरकार उसी के लिए तथा उसी के द्वारा स्थापित हो जाए, किन्तु जब तब साम्यवाद की स्थापना पूर्ण रूप में नहीं होती तब तक तानाशाही का रहना आवश्यक समझा जाने लगा समाजवादी प्रक्रिया में पूंजीवाद किसी भी प्रकार का विघ्न न डाल सकें। आर्थिक क्रियाओं को नियोजित करना आवश्यक समझा गया

वस्तुओं की उत्पत्ति में अनिवार्यताओं की उत्पत्ति को प्राथमिकता दी गयी। ताकि समाज को कम से कम आवास, भोजन और वस्त्र अवश्य ही सस्ते दामों पर प्राप्त हो सके। कीमतों की रचना में ही पूंजी के विकास और वृद्धि का ध्यानरखा गया। उत्पत्ति उपभोग के लिए की जाने लगी व की समाजवाद की स्थापना के लिए। सीमित साधनों का सुनिश्चित उद्देश्य को निश्चित समय में प्राप्त करने के लिए प्रयत्न किया जाने लगा। उत्पत्ति की वृद्धि आदि के लिए प्रोत्साहन की व्यवस्था की गयी। कृषि का संयुक्तिकरण किया गया तथा रोजगार प्रदान करने के कार्य राज्य का हो गया। जो एक निश्चित योजना के अनुसार ही किया जाता है। साधनों का आवंटन f विभिन्न उपयोगों तथा क्षेत्रों में सचेत रूप में सरकार द्वारा नियुक्त केन्द्रीय योजना पदाधिकारियों के द्वारा किया जाने लगा। जो कार्य कीमत पूंजीवादी प्रणाली में करती है वह कार्य केन्द्रीय योजना पदाधिकारी करते है।

ऐसे समाज कीरचना में उन सिद्धान्तों का उपयोग किया जाता है जिसमें व्यक्तिगत चुनाव को समाप्त कर दिया जाता है। वस्तुओं की विभिन्नता की बाहुल्यता को समाजवाद में ठीक नहीं समझा गया। चुनाव को सिमित रखा जाता है। चुनाव नियंत्रित रहता है। पैदा कीगयी वस्तुओं में ही चुनाव किया जाता है। विविधिता अधिक नहीं होती है। इसके द्वारा पूंजीवादी अपव्यय से तथा लागत कीवृद्धि से बचा जा सकता है। उत्पत्ति काउद्देश्य व्यक्तिगत लाभ प्राप्त करना नहीं है अपितु सार्वजनिक लाभ पहुंचाना ही है। इसी कारण कीमतों कीतीन स्तर को स्तर को स्वीकार किया गया जिनका उन योजना पदाधिकारियों को वस्तुओं के स्तर से सम्बन्ध है। अनिवार्यताओं की कीमत लागत या कभी-कभी उससे भी कम रखी जाती है। उनकी प्रचुर मात्रा में उत्पत्ति की जाती है जिससे श्रमिक वर्ग: की मजदूरी-वस्तुऐं ।। वेज-गुड्स।। या अन्य जीवन कीवस्तुवे सस्ते दामों पर प्रदान की जा सकें। उत्पत्ति के लागत को नियंत्रित रखा जा सके दूसरे सोपानपर उन वस्तुओं को रखा जाता है जो आराम दायकहोती है उनकी कीमतों को लागत से अधिक रखा जाता है और अन्त में विलासिता की वस्तुओं की कीमत सबसे अधिक रखी जाती है जिसमें पूंजी आदि के निर्माण की समस्या को भी हल किया जाता है। कीमतों को स्वतन्त्र आर्थिक शक्तिओं पर नहीं छोड़ दिया जाता है। स्वतन्त्र आर्थिक शक्तिओं की अवस्था में स्थिरता बनाऐं रखना अत्यधिक कठिन है। आर्थिक प्रणाली के स्थिरता के साथ -प्रगतिशील करना या उच्च स्तर पर विकास करना स्वतन्त्र साहस में कठिन होता है जिसमें निजी साहसी ही स्वतन्त्र निर्णय लेते है। उनके निर्णयों में एकीकरण और समन्वय का

अभाव रहता है यही कारण है कि स्वतन्त्र साहस या पूंजीवादी प्रणाली में उतार-चढ़ाव को नियंत्रित करना कठिन रहता है। कीन्स ने स्वयं यह अनुभव किया था कि पूंजीवादी आर्थिक प्रणाली में पूर्ण रोजगार पर जितनी बचत प्राप्त होती है, विशेषकर विकसित देशों की अर्थ-व्यवस्था में, उसके निवेश के अवसरों को निरन्तर कमी के कारण बचत और निवेश निवेश का अन्तराल पड़ने लगता है जो समय की गति के साथ बढ़ता जाता है। इस अन्तराल को निजी साहस पाट नहीं पाता है। जिसके पाटने के लिए कीन्स ने सरकारी या " निवेश के समाजीकरण" की बात कही थी। जिसको ठीक करने के लिए ही सार्वजनिक क्षेत्रों का विस्तार किया जाने लगा तथा घाटे की अर्थव्यवस्था का उपयोग किया जाने लगा। घाटे की अर्थव्यवस्था के कारण ही पूंजीवादी प्रणाली की समस्याओं कास्वरूप परिवर्तितहोता चला गया। कहां कीन्स ने दीर्घकालीन जड़ता की कल्पना थी जिसमें स्थायी रूप में बेरोजगारी की सेना बनी रहने कीसम्भावना थी। इस अवस्था से बचने के लिए स सरकारी खर्चों की मात्रा इतनी अधिक बढ़ गयी जो स्फीति को स्वयं स्फूर्तिदायक तथा संचयी रूप में अग्रसर करती जा रही है। जिसमें संकुचन और स्फीति दोनों की दशाएं उत्पन्न होती जारही है जिसके कारण बेरोजगारी का स्वरूप भयंकरता की सीमा पार करता जा रहा है। पूंजीवादी प्रणाली ऐसी दोहरी धार वाली दुष्चक्र में फंस गई जिसमें यदि सरकार खर्च बढ़ायेगी तो स्फीति की अवस्था उत्पन्न होने लगेगी और यदि खर्च कम करेगी तो संकुचन के चक्कर में फंसने लगेगी। यह भी पूंजीवादी समाज के विकास काएक क्रम हो गयाजो इसके परित्याग में के लिए उत्तरदायी हो जायेगा। तब हो सकता है इन देशों को भी समाजवादी सिद्धान्त का ही उपयोग करना पड़े। एक ही सिद्धान्त हर समय में सामान्य रूप से लागू नहीं किया जा सकता है क्योंकि उनके पीछे की परिकल्पनाओं में परिवर्तन होन लगता है। तथा प्रत्येक स्थान के लिए भी उपयुक्त नहीं हो सकता। अतः नवीन सिद्धान्तों की रचना समयानुकुल तथा स्थानुकुल करना एक अनिवार्यता है।

समाजवादी आर्थिक प्रणाली में पूंजीवादी व्यवस्था की भयंकरता उत्पन्न नहीं हो सकती है। इसमें आर्थिक शक्तियों को स्वतन्त्र नहीं छोड़ा जाता है उनके निश्चित दिशा और उद्देश्य प्रदान किया जाता है। मांग तथा पूर्ति की शक्तियां प्रतिबन्धित रहती है। सरकार किसी वस्तु की विक्रय के लिए बाजार में प्रस्तुत कीगई मात्रा को कठोरतासे निश्चित कर देती है जिसके अनुरूप मांग का रहना आवश्यक हो जाता है। यदि मांग कम रह जाती है तो उस वस्तु कीउत्पत्ति कम कर दी जाती है और जब उस वस्तु कीसम्पूर्ण मात्रा बिक नहीं जाती तब तक प्रयत्नचलता रहता है। उस वस्तु कीउत्पत्ति में

लगे हुए उत्पत्ति के साधनों में भी हेर-फेर करती है जिससे पूर्ति मांग से व्यवस्थित हो जाए। जिस समय मांग पूर्ति की अपेक्षा अधिक हो जाती है तो सरकार कीवह वस्तु शीघ्रता से बिक जाती है या उस वस्तु का बाजार में अभाव होने लगता है। उसके वितरण को नियंत्रितकर देती है जिससे सभी को वह वस्तु उपलब्ध हो सके ।। जिसकी ओर पूंजीवादी अर्थ व्यवस्था में बहुत ध्यान नहीं दिया जाता है। काले बाजार की उत्पत्ति होने दी जाती है साधन सम्पन्न ही सीमित पूर्ति और सीमित कर देते है। और वितरण को विषम बना देते है ।। समाजवादी प्रणाली में सामाजिक न्याय पर ध्यान रखा जाता है यदि किसीवस्तु की पूर्ति अधिक भी हो जाती है तब भी सरकार मांग और पूर्ति का साम्य बनाए रखती है। ऐसीदशा में जबकि विक्रय नियत्रि त रहता है, सरकार अतिरिक्त वस्तुए के विक्रय के नये तरीकों काउपयोग करती है। अतिरिक्त पूर्ति वाली वस्तु भी लेना अनिवार्य कर सकती है। यदि कोई व्यक्ति वस्तु खरादता है तो उसको अतिरिक्तपूर्ति की वस्तुओं को भी खरीदना अनिवार्य कर देती है। इस प्रकार आर्थिक प्रणाली में साम्य की दशा को बनाए रखने का यत्न सचेत रूप में करती रहती है जिससे स्थिरता के साथ आर्थिक विकास की प्रक्रिया को अग्रसर किया जा सके।

समाजवादी और पूंजीवादी विकास के सिद्धान्त एक दूसरे के विकल्प के रूप में मिलते है। पूंजीवाद में जब कि स्वतंत्रता ।। असमानता के साथ ।। रहती है जो अन्तिम विश्लेषणकी दशा में केवल सतही रह जाती है परन्तु समाजवाद में नियंत्रण होते हुए भी ।।उद्देश्यो की पूर्ति नियंत्रित होती है ।। स्वतन्त्र रहती है। पूंजीवाद में रोजगार को पूर्ण स्तर पर या साम्य को बनाए रखना कठिन है। मानवीय समस्याएँ विशेषकर, बेरोजगारीकी समस्या अधिक कठोर रहती है क्योंकि प्रभाव-शील मांग के विभिन्न अंगों में संतुलन रखना सम्भव नहीं रह पाता है। उतार-चढ़ाव ही उसके विकास के लिए आवश्यक है जिसमें दीर्घकालीन प्रवृत्ति विकास कीमिलती है। पूंजीवाद का विकास सुचार रूप से कभी नहीं हुआ परन्तु समाज वाद में विकास की प्रक्रिया की दर स्वयं सरकार अपने नियंत्रण और उद्देश्य के अनुसार करतीहै। आर्थिक प्रणाली को उचित दिशा भीप्रदान करती है विकस पर जबनियंत्रण रखा जाता है तब आर्थिक शक्तियों में संतुलन बनाए रखना अधिक कठिन नहीं रहता है रोजगार का स्तर निरन्तर बढ़ता जाता है। अल्पकाल में रोजगार की वृद्धि और स्थिरता रहती है जिसे दीर्घकाल में बनाए रखना कठिन नहीं रहता है। अत: पूंजीवादी सिद्धान्त समाज वादी अर्थ-व्यवस्था के उसी प्रकार मृत्यु के समान है जिस प्रकार से समाजवादी आर्थिक विकास कीप्रक्रिया पूंजीवाद के लिए अनुपयुक्त और निरर्थक है। इस समाजवादी विचारों का साकार स्वरूप कहा जा सकता है

जिसमें आर्थिक विकास की प्रक्रिया के लिए सम्पूर्ण नियोजित अर्थव्यवस्था का उपयोग किया जा रहा है रोजगार, राष्ट्रीय आय तथा प्राकृतिक और अन्य साधनों का उपयोग सुनिश्चित योजना के अनुसार किया जा रहा परन्तु उत्पत्ति विशेषकर कृषि की उत्पत्ति कीसमस्या को सुलझाने के लिए बहुत हीसीमित या नगण्य आधार पर निजी स्वामित्व का समन्वय भीकिया गया है जिससे मनुष्य को उस भावना की तुष्टि की जा सके जिसको वह निजी स्वामित्व से जोड़ता है। परन्तु उसपर कठोरता से नियंत्रण भी रखा जाता है ताकि व्यक्तिगत आधार पर ढील का दुरूपयोग करके पूंजीवादी समाज की खराबियां न उत्पन्न हो सके और आर्थिक प्रणाली सट्टे के चक्कर से बची रह सके। समाजवादके लिए नियोजन अनिवार्य शर्त है। परन्तु नियोजन के लिए समाजवाद का होना कोई अनिवार्य नहीं है क्योंकि अब पूंजीवादी प्रणालियों में सरकारें सार्वजनिक क्षेत्रों का नियोजन विकास करने का प्रयत्न कर रही है। जिससे निजी साहस की खराबियों को दूर किया। जा सके। दूसरी ओर विकास की प्रक्रिया पूंजीवादी हो सकती जिसका अब भी विश्व में बोल बाला है। जो निरन्तर जटिल से जटिलतम होती जा रही है।

विश्व के समस्त देशों में दो प्रकार के सिद्धान्त के अनुसार विकास की प्रक्रिया चल रही है जिनकी मान्यताए और परिकल्पनाएँ अलग-अलग है। एक ओर समाज वादी रूस तथा दूसरी ओर अमेरिकाए प पश्चिमी यूरोप्र इग्लैण्ड तथा अ य विकसित पूंजीवादी देश है और तीसरी ओर वह सब देश है जिन्हें कुछ ही समय पूर्व परतंत्रता एवं दासता की जंजीरों को तोड़कर स्वतन्त्रता प्राप्त की है जिनको अपनी औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था को समाप्त करके स्वतन्त्र, स्वयं स्फूर्तिदायक तथा सुंचयी रूप में बढ़ने वाली अर्थव्यवस्था में सरलता तथा सुगमता के साथ परिवर्तित करना है ताकि बिना उतार-चढ़ाव के तथा स्फीति और संकुचन एवं अस्थिरता के सम्पन्नता को प्राप्त किया जा सके। ऐसे सिद्धान्तों का उपयोग करना है जिससे नागरिकों को आकांक्षाओं और आशाओं की पूर्ति कम समय में की जा सके। विकास के उस सिद्धान्त का उपयोग किया जाए जो वर्तमान रोजगार, उपभोग तथा विनियोग के स्तरको ही न बढ़ाए अपितु भविष्य में बिना समस्या के आर्थिक विकास में स्थिरता के साथ और प्रगति में सहायक

हो सके। यह तीसरे प्रकार के देश जो विश्व शक्ति संतुलन के बनाए रखने के लिए आवश्यक समझे जाते है वे अधिकांशत: पिछड़े हुए है याविकासशील है। इनमें भी अन्तर है कुछ तुलनात्मक रूप में अधिक विकसित है। विकसित देशों की तुलना में कम विकसीत है। इन देशों में पूर्वी गोलार्द्ध में सोसत भारत कास्थान सभी दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है। जो सांकृतिक रूप में समृद्धिशाली है जो राजनीतिक रूप में स्वतन्त्र है जिसकी अर्थव्यवस्था पिछड़ी हुई रह जाती है। राजनीतिक स्वतन्त्रता को बनाए रखने के लिए केवल निरन्तर जागरूकता ही पर्याप्त नहीं है। अपितु आर्थिक विकास एवं सम्पन्नता भी आवश्यक है। भारत को अपना आर्थिक विकास तीव्रता से करना है।

भारत की आर्थिक प्रणाली विकासशील की दशा में है क्योंकि अभी तक आर्थिक प्रणाली में किसी ऐसीप्रक्रिया का जन्म प्राप्त नहीं हुआ है जिससे आर्थिक प्रणाली गतिहीन,एपिछड़ी और निम्नकोटि की अवस्था से निकलकर स्वयं स्फूर्तिदायक बनकर रोजगार और राष्ट्रीय आय के उच्चतम विकास के स्तर को प्राप्त कर सके। एक ऐसे सिद्धान्त की आवश्यकता है जो नवीनीकरण कीवृद्धि कर प्रतिव्यक्ति वास्तविक आय को वृद्धि कर दे। पिछड़ा हुआ देश वह है जिसकी अर्थव्यवस्था में राष्ट्रीय वास्तविक आय का आकार प्रतिव्यक्ति वास्तविक आय, उत्पादकता तथा प्रतिव्यक्ति पूंजी विनियोग नीचा रहता है और जनसंख्या के सबसे बड़े भाग का जीवन स्तर जीवन निर्वाह के ।।सब्सस्टेन्स लेविल।। स्तर पर रहता है। भारत की अर्थव्यवस्था निर्धनता के दुष्चक्र में फंसी हुई है जिसमें राष्ट्रीय आयकी ही कमी नहीं है अपितु प्रतिव्यक्ति आय भी कम है जिसके कारण बचत का स्तर बहुत नीचा है जो निवेश को बहुत ही कम बना देता है। आर्थिक विकास की दर और कम हो जाती है। जनसंख्या अवश्य ही अधिक है किन्तु आय का स्तर निम्नकोटि का है। पूंजी के विनियोजन के लिए मांग भीकम है कमजोरी मांग और पूर्ति दोनों ही पक्षों में है। जनसंख्या केवल अ अधिक ही नहीं है अपितु उसमें और सापेक्षिक रूप से बढ़ने की प्रवृत्ति भी है। जो कुछ वास्तविक आय बढ़ती है उसकी दर से अधिक ~~जनसंख्या~~ जनसंख्या की दर बढ़ जाती है। बढ़ी हुई आय का उपयोग कर लेती है पूंजी निर्माण के लिए पर्याप्त साधन नहीं बच पाता है। कहा जाता है कि एक प्रतिशत जनसंख्याके वर्तमान रहन-सहन के स्तर को बनाए रखने के लिए राष्ट्रीय आय के तीन से चार प्रतिशत का विनियोजित करना आवश्यक रहेगा। किन्तु भारत के पास आन्तरिक साधनों से बचत पर्याप्तमात्रा में नहीं मिल पाती है जबकि सरकार काफी समय से घाटे की अर्थव्यवस्था का भी उपयोग करतीरही है। निजी बचत निगमों की बचत,एसरकारी आय से बचत, बैंकों आदि की ब बचत तथा अन्तर्राष्ट्रीय निजी , सरकार तथा वित्तीय संस्था के द्वारा प्राप्त पूंजी भी देश के विकास

के लिए पर्याप्त नहीं है। बेरोजगारी अधिक मात्रा में है। भुगतान शेष पक्ष में चल नहीं पाता है। तक्नीकी ज्ञान तथा शिक्षित और प्रशिक्षित श्रम आदि का अभाव है। उपर्युक्त त्रुटियों के कारण ही भारतीय अर्थव्यवस्था पिछड़ी हुई है जिसमें केवल रोजगार के बनाए रखने की समस्या नही हैबल्कि रोजगार के स्तर के अवसरों तथा स्रोतों के विकास और विस्तार की समस्या है। रोजगार के अवसरों के विस्तार के साथ हीराष्ट्रीय आय में भी वृद्धि होगीऔर जीवन स्तर को उठाया भी जा सकेगा और निर्धनता तथा दरिद्रता के अभिशाप को दूर कियाजा सकेगा। क्या रोजगार तथा आर्थिक सम्पन्नता या विपन्नता में काई सम्बन्ध है इन समस्याओं के हल करने के लिए रोजगार के सिद्धान्तों का किस प्रकार उपयोग किया जाये।

अल्पकाल में आर्थिक विकास एवं कुल उत्पत्ति की वृद्धि के साथ ही रोजगार की भी वृद्धि होती है। दीर्घकाल में आर्थिक विकास की गति और दर को अत्यधिक बढ़ाया जा सकता है परन्तु यह कोई आवश्यक नहीं है कि रोजगार की मात्रा और स्तर में भी वृद्धि हो जाए। दीर्घकाल में श्रमिकों की उत्पादकता तथा कार्य कुशलता को अधिक बढ़ाया जा सकता है शिक्षा और प्रशिक्षण के द्वारा उनकी तक्नीकी ज्ञान कीवृद्धि की जा सकती है और कार्य कुशलता बढ़ाने के लिए प्रति श्रमिक के लिए पूंजी के उपयोग को बढ़ाया जा सकता है। अतः दीर्घकार में रोजगार तथा सम्पन्नता को बनाए रखने की समस्याउत्पन्न होजाती है। अल्पकाल में ही रोजगार बढ़ाने का यत्न करना आवश्यक है और दीर्घकाल की भी व्यवस्था करना आवश्यक है। जिन सिद्धान्तों का विकास और प्रतिपादन पाश्चात देशों में किया गया है क्या उन्हीं सिद्धान्तों का भारत में रोजगार तथा आर्थिक विकास में प्रयोग कर सकते है। पाश्चात देशों में पूंजी गहन उद्योगोंे का अधिक उपयोग किया जाता है क्योंकि उनकी जनसंख्या के विकास के दर स्थिर है या उसमें नगण्य वृद्धि हो रही है या तो फि र जनसंख्या गिरती जा रही है। भारत में जनसंख्या की वृद्धि दर अधिक है। यदि विकास की दर कम रहती है तो रोज-गार का स्तर शीघ्रता से नहीं बढ़ सकता है। ऐसे देशों में श्रम गहन सिद्धान्तों का उपयोग करना उचित होगा। फि र क्या भारत के लिए क्लासिकीरोजगार । सिद्धान्त उपयुक्त होगा जो इस मान्यता पर आधारितहै कि पूर्ण प्रतियोगिता तथा स्वतंत्रता रहती है जिसमें धीरे-धीरे परिवर्तन भी आता गयाऔर एकाधिकार कीशक्तियां उत्पन्न होती गयी जिसके कारण निजी साहस के गत्यात्मक तत्व कीगत्यात्मकता में कमी आती चली गई। इसी कारण लार्ड जान मेनर्ड कीन्स ने रोजगार का एक नवीन सिद्धान्त प्रतिपादित किया। क्या भारत के लिए रोजगार का कीन्स कासिद्धान्त

उपयुक्त होगा जिसकी रचना करते समय कीन्स ने अमेरिका तथा इंग्लैण्ड की समस्याओं को ही ध्यान में रखा था जिनमें दीर्घ ।।एजिंग ।। की समस्याउत्पन्न हो रही है क्योंकि उपनिवेश समाप्त होने लग गये थे जिसके अतिरिक्त उत्पत्ति के विक्रय के बहुत ही बड़े केंन्द्र हुआ करते थे। जिनके शोषण पर साम्राज्यवादी देश टिका हुआ था। अब ऐसे देशों के अपने ही क्षेत्र] की खोज करनी होगी वर्हिमुखी होने के बजाए अन्तर्मुखी होते जा रहे है। क्या रोजगार के नव क्लासिकी सिद्धान्त सहायता पहुंचायेंगे संक्षेप में क्या पूंजीवादी रोजगार के सिद्धान्त भारत के लिए उचित है क्या समाजवादी सिद्धान्त का सहारा लिया जा सकता है जिसका आधार पूंजीवादी सिद्धान्त से भिन्न है

क्या भारत दोनों सिद्धान्तों के स्वर्णिम बीच में मार्ग उपयोग करे जैसा की भारत वर्तमान काल में कर रहा है। क्या भारत के लिए मिश्रित अर्थव्यवस्था का दार्शनिक सिद्धान्त उचित हो सकता है जिसमें निजी साहस तथा सार्वजनिक साहस का स्वतन्त्रता तथा नियंत्रण का उपयोग किया गया है जो परस्पर सहयोग की कल्पना पर आधारित है। जिसमें संयुक्त क्षेत्र के विकास पर भी प्रयोग करना आरम्भ में समझा जा रहा है। जिसकी प्रवृत्ति प्रत्येक औद्योगिक नीति की घोषणा पर सार्वजनिक क्षेत्र के विकास और विस्तार की ही है। क्या भारत की बेरोजगारी और निर्धनता की समस्या के मूल में मिश्रित अर्थव्यवस्था जैसा अनिश्चित और अव्यवहारिक सिद्धान्त नहीं हो सकता है। इन विकल्पों के बावजूद कोई और भी विकल्प हो सकता है।

अत: भारतीय रोजगार के लिए एकऐसे सिद्धान्त को प्राप्त करना है जो रोजगार तथा आर्थिक विकास को सुदृढ़ नींव पर रख सके। इसके लिए क्लासीकी और कीन्स के सिद्धान्तों T पृथक -पृथक विश्लेषण करना आवश्यक हो जाता है। यदि सिद्धान्त देश की आवश्यकता के अनुरूप नहीं होगा तो उससे समस्या हल होने के बजाय निरन्तर बढ़ती जायेगी और अन्त में उसको यदि छोड नहीं दिया जाता है तो सामाजिक क्रान्ति की दशाएं प्रबल होती जायेगी तब पुन: एक नयी समाज का संगठन करना पड़ेगा। जिसमें पुरानी मान्यताऐं प्राय: समाप्त होती जायेगी। सिद्धान्त वही उचित हो सकता है जो अल्प और दीर्घ कालीन विकास की शक्तियों को ही प्रोत्साहित न करे अपितु उनमें समन्वय स्थापित करके एक ऐसी गत्यात्मक और प्रगतिशील आर्थिक प्रणाली की स्थापना में सहायक हो जिसमें निरन्तर राष्ट्रीय आयऔर रोजगार के स्तर ो उठाता हुआ तब तक प्राप्त किया जाये जब तक पूर्ण रोजगार की स्थापना नहीं हो जाती है। यदि अनुकूल शक्तियां उत्पन्न नही हो पाती है

और आर्थिक प्रणाली विकास के सोपानों को प्राप्त करनेमें असमर्थ रहती है तथा समस्याएं कम होने के बजाए और गहन हो जाती है तब ऐसे सिद्धान्त कभी भी अर्थव्यवस्था के लिए उपयुक्त नहीं हो सकता है। ऐसी अवस्था में सिद्धान्त को अनुकुल बनाने के लिए उसमें संशोधन करना आवश्यक हो ाता है या फिर उसमें आमूल परिर्वन करना ही आवश्यक हो ायेगा या एक नये सिद्धान्त की रचना करके आर्थिक विकास प्राप्त करने का यत्न किया जाएगा। भारत की आर्थिक प्रणाली के विकास के लिए भिन्न रोजगार के सिद्धान्तों की जांच करना आवश्यक है तभी उनकी उपयुक्तता या अनुपयुक्तता का बोध हो सकता है।

क्लासीकल रोजगार सिद्धान्त :------

क्लासीकल अर्थशास्त्र की परिभाषा करते हुए कीन्स ने कहा है कि यह परम्परागत आर्थिक सिद्धान्तों का वह समूह है जो रिकार्डो के समय से पीढ़ी दर पीढ़ी चला आ रहा है क्लासीकल सिद्धान्तों को अनुवर्ती अर्थशास्त्रीयों द्वारा यद्यि यद्यपि समय - समय पर विस्तृत, संशोधित एवं परिवर्तित किया गया था तथापि इनका मुख्य स्वरूप ज्यों का त्यों ही बना रहा। ये सिद्धान्त स्वयं में ही आर्थिक विचारधारा की एक सुस्पष्ट प्रणाली है। अनेक उन अर्थशास्त्रीयों को जिन्होंने इनसिद्धान्तों को विकसीत, परिवर्तित एवं संशोधित किया है, प्राय: क्लासीकल अर्थ - शास्त्रियों की संज्ञा दीजाती है। "क्लासीकल अर्थशास्त्री" शब्दों काप्रयोग सर्वप्रथम कार्लमाक्स[1] ने रिकार्डो एवं उनके उन पूर्वगामी अर्थशास्त्रीयों के सन्दर्भ में किया था जिनमें एडम स्मीथ भी समिलित थे। साथ ही साथ कीन्स ने इन शब्दों का प्रयोग विस्तृत रूप में रिकार्डो के उन अनुयायियों के लिए भीकिया है जिनमें जेम्स स्टुअर्ड मिल, अल्फ्रेड मार्शल और ए० सी० पीगू के नाम विशेषत: उल्लेखनीय है। दूसरे श० दों में जब कभी कीन्स "क्लासीकल सिद्धान्त" शब्दों का प्रयोग करते थे तो उनका अभिप्राय "नवीनक्लासीकल सिद्धान्त से ही होता था। ~~मार्शल के~~ इस सिद्धान्त को विशिष्ट रूप में मार्शल अथवा पीगू का सिद्धान्त कहा जाता है। मार्शल के पश्चात पीगू ही क्लासिज्म के उत्तराधिकारी बनें। वह अपनी मृत्यु तक क्लासीकल सिद्धान्तों के महानतम प्रतिनिधि बने रहे।

क्लासीकल मान्यता यह थी कि श्रम एवं उत्पादनके अन्य साधन सदैव ही पूर्ण रोजगार की स्थिति में रहते है। वास्तव में, क्लासीकल अर्थशास्त्रीयों के लिए पूर्ण रोजगार सामान्य दशा थी

१- सामान्य सिद्धान्त , फुटनोट, पेज ३।

और उसमें किसी भी प्रकार के परिवर्तन असामान्य दशा माने जाते थे[1] यदि किसी समय पूर्ण रोजगार की वास्तविक दशा नहीं होती है तो भी क्लासीकल अर्थशास्त्रीयों के अनुसार पूर्ण रोजगार की प्रवृत्ति सदैव विद्यमान रहती है।

क्लासीकल विचार के अनुसार आर्थिक शक्तियों की निर्बाध क्रियाशीलता के परिणाम स्वरूप श्रम सहित समस्त आर्थिक साधनों का स्वयं ही पूर्ण प्रयोग होता रहता है। यदि बाजार की शक्तियों की क्रियाशीलता में किसी भी प्रकार का अहस्तक्षेप कियागया तो उससे पूर्ण रोजगार की दशा उत्पन्न नहीं हो सकेगी। इसी आधार पर क्लासीकल अर्थशास्त्रीयों का मत था कि श्रम एवं अन्य साधनों को पूर्णरोजगार प्रदान करने के लिए यह आवश्यक है कि सरकार आर्थिक क्षेत्र में किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप न करें। प्रो० से द्वारा प्रतिपादित "बाजार का नियम" क्लासीकल अर्थशास्त्र की इसी क मान्यता की पुष्टि करता है कि निर्बाध व्यपार के अन्तर्गत सभी साधनों को सदा ही पूर्ण रोजगार प्राप्त होता रहता है। वास्तव में, यह नियम क्लासीकल अर्थशास्त्र का मूलभूत सिद्धान्त है।

प्रो० से के अनुसार सामान्य अति उत्पादन असम्भव है। उनके कथनानुसार, चुकि सामान्य अति - उत्पादननहीं हो सकता इसलिए सामान्य बेरोजगारी का प्रश्न हीउत्पन्न नहीं होता। क्लासीकल अर्थशास्त्रीयों का दृढ विश्वास था कि किसी भी समय बेरोजगारी नहीं हो सकती अथवा सदैव पूर्ण रोजगार की दशा बनी रहती है।

वास्तव में, क्लासीकल अर्थशास्त्रीयों की पूर्णरोजगार सम्बन्धी इस धारणा में कुछ सीमा तक ऐच्छिक बेरोजगारी भी सम्मलित है। ऐच्छिक बेरोजगारी की दशा तभी उत्पन्न होती है जबकि मजदूर चालू मजदूरीसे कुछ कम मजदूरीको लेना अस्वीकार कर देते है। मजदूरी की ऊंची दर पाने के लिए मजदूरों द्वारा हड़तालो का किया जाना ऐच्छिक बेरोजगारी का ही उदाहरण है। ऐच्छिक बेरोजगारी के अन्य उदाहरण भी होसकते है। उदाहरणार्थ जब एक राजकुमार अथवा बड़ा जमीदार कोई कार्य नहीं करता और अपनी सम्पत्ति की आय पर निर्भर रहता है, तो यह भी एक ऐच्छिक बेरोजगारी

१- सामान्य सिद्धान्त, पेज २४९-५०।

है। अत: जब कार्य उपलब्ध हो और तब भी व्यक्ति कोई कार्य न करना चाहे तो ऐसी दशा को बे बेरोजगारी की दशा नहीं कहना चाहिए। इसी प्रकार, क्लासीकल अर्थशास्त्रीयों की पूर्ण रोजगार सम्बन्धी धारणा में किसी सीमा तक संघर्षात्मक बेरोजगारी भी विद्यमान रहती थी। अब प्रश्न उठता है कि संघर्षात्मक बेरोजगारी किसे कहते है यह एक ऐसी बेरोजगारी है जो विशुद्धत: श्रम बाजार सम्बन्धी अपूर्णताओं आदि जैसे संघर्षात्मक कारणो से उत्पन्न होती है। ऐसी बेरोजगारी का एक मुख्य कारण यह है कि श्रमिकों को रोजगार सम्बन्धी अवसरों के बारे में पूर्ण जानकारी उपलब्ध नहीं होती। बहुत से श्रमिक उसी अज्ञानता के कारणबेरोजगार रहते है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि कारखानेदारों के पास कच्चे माल की कमी अथवा मशीनों के खराब हो जाने के कारण मजदूर बेकार हो जाते है। क्लासीकल अर्थशास्त्रीयों का कथन है कि इस प्रकार की बेरोजगारी एकपूर्ण रोजगार युक्त समाज में कभी हो सकती है। वे यह शर्त स्वीकार करते है कि उनके पूर्ण रोजगार युक्त समाज में इस प्रकार कीबेरोजगारी हो सकती है, किन्तु वे यह मानने को तैयार नहीं हैं कि उनके पूर्ण रोजगार युक्त समाज में अनैच्छिक बेरोजगारी भी हो सकती है। वे यह स्वीकार करने को तैयार नहीं है कि काम चाहने वाले श्रमिको को काम नहीं मिलता है। अनैच्छिक बेरोजगारी की अनुपस्थिति ही क्लासीकल अर्थशास्त्रीयों का मूलभूत विचार है। जब उनको यह बताया जाता है कि

वास्तविक समाज में अनैच्छिक बेरोजगारी होती ही है और काम चाहने वाले करोड़ो लोग बेकार रहते है तो क्लासीकल अर्थशास्त्रीयों का उत्तर यही होता है किइस प्रकार की बेरोजगारी आर्थिक प्रणाली की स्वतन्त्र क्रियाशीलता में हस्तक्षेप करने का ही परिणाम होती है। इस प्रकार के हस्तक्षेप कई प्रकार के हो सकते है : १ - मजदूरी की दर को बढ़ाने के लिए ट्रेडयूनियनों का सामूहिक प्रयास, २ - मजदूरों को न्यूनतम मजदूरी दिलवाने के लिए सरकारी हस्तक्षेप, ३ - बेरोजगारी के विरुद्ध बीमा और ४ - बेरोजगारों को सरकार की ओर से दिये जाने वाले भत्ते आदि। यदि इन हस्तक्षेपों को समाप्त कर दिया जाय और आर्थिक प्रणाली को निर्बाध रूप से कार्य करने दिया जाय और मजदूरी अपना स्तर स्वयं स्थापित करने के लिए स्वतन्त्र छोड़ दी जाए तो बेरोजगारी निश्चय ही अदृश्य हो जायेगी और प्रत्येक काम चाहने वाला व्यक्ति काम पा सकेगा। यह सब कैसे होगा व क्लासीकल अर्थशास्त्र के महानतम आधुनिक प्रतिनिधि प्रो० पीगू अपने तर्क प्रस्तुत करते हुए कहते है कि इन हस्तक्षेपों को समाप्त करने और स्वतन्त्र स्पर्द्धा स्थापित करने से मजदूरी यहां तक नीचे गिर जाय कि कारखानेदारों को सभी काम चाहने वाले व्यक्तियों को काम पर लगाना सम्भव हो जायगा। इस प्रकार क्लासीकल अर्थशास्त्री यह मानते है कि अनैच्छिक बेरोजगारी मजदूरी के ढ़ाचे की बेलोचता के

कारण ही उत्पन्न होती है। उनका विश्वास है कि बेरोजगारी के समय में यदि मजदूरी की दर को पर्याप्त मात्रा में घटा दिया जाय तो समस्त अनैच्छिक बेरोजगारी अदृश्य हो जायेगी। इस प्रकार क्लासीकल अर्थशास्त्रीयों के अनुसार बेरोजगारी का उपचारयह है कि सभी प्रकार के हस्तक्षेपों को समाप्त करके ।। वे चाहें यूनियनों के हों अथवा सरकार द्वारा हों ।। आर्थिक प्रणाली को स्वतन्त्र रूप से कार्य करने दिया जाय। यदि आर्थिक प्रणाली हस्तक्षेप के बिना स्वतन्त्र रूप से कार्य करती है तो अति उत्पादन अथवा बेरोजगारी की दशा उत्पन्न नहीं होगी। क्लासीकल विचारों के समर्थक अमेरिकी अर्थशास्त्री प्रो० हेनरी हैजलिट के कथनानुसार सन् १९३०-३९ के मध्य अमेरिका में और सन् १९२०-३९ के मध्य ग्रेट ब्रिटेन में होनेवाली स्थिर बेरोजगारी पूंजीवाद की स्थायी विशेषता नहीं थी इसके विपरित, यह स्थिर बेरोजगारी मजदूरी की बेलोचता के ही कारण थी, और मजदूरी की बेलोचता का कारण श्रम संघों की वह नीति थी जिसके अधार पर वे मजदूरी की कटौती का विरोध किया करते थे। इस नीति को सरकार का भी सक्रिय समर्थन प्राप्त था। यदि मजदूरी लोचपूर्ण होती अथवा इसे गिरती हुई कीमतों के अनुसार गिरने काअवसर दिया जाता, तो इनदेशों की बेरोजगारी एक अस्थायी घटना ही होती। संक्षेप में, यह श्रमिक संघों एवं सरकारों द्वारा आर्थिक शक्तियों की क्रियाशीलता में किया गया हस्तक्षेप ही था, जिसके कारण अमेरिका तथा ग्रेट ब्रिटेन में बड़े पमाने पर लम्बे समय के लिए बेरोजगारी फैली।

क्लासीकल अर्थशास्त्री विश्वास करते थे कि पूर्ति और मांग में कभी भी असन्तुलन अथवा असमंजस्य नहीं हो सकता। अत: न तो कभी अति उत्पादन और नहीं कभी न्यून-उत्पादन हो सकता है। प्रो० से का नियम यह था कि पूर्ति और मांग सदा ही एक दूसरे के साथ सन्तुलितरहते हैं और आगे चल कर सन्तुलन की यह प्रतिक्रिया स्वचालित एवं स्वयं समायोजित हो जाती है। कीन्स ने प्रो० से के नियम को मानने से इन्कारही नहीं किया बल्कि उन्होंने उसपर डट कर भी प्रहार किया।[1] कीन्स कृत "सामान्य सिद्धान्त" की प्रस्तावना ।। प्रथम खण्ड ।। में प्रो० से के नियम की कटु आलोचना की गयी है उन्होंने केवल "से" के नियम की ही नहीं बल्कि प्रो० "से" के उस नियम के स्वरूप की भी विशेष रूप

१- पौल एम० स्वीजी इन द न्यू इकोनामिक्स, ।।इडी० ।। सैम्योर ई० हरीस, पेज १०५।

आलोचना की है जिसे पीगू ने प्रतिपादित किया था। समाज के असमान ढ़ाँचे के कारण इस के विशेष दो वर्ग होते है, अमीर और गरीब, और उनमें धन का असमान वितरण है अमीरों के पास अपार धन होता है और वे उसका पूर्ण उपयोग नहीं करते है। इसके विपरित, गरीबों के पास बहुत कम धन ह होता है जिससे वे अपनी सभी आवश्यकताओं की प्रर्ति तक नहीं कर पाते। परिणाम यह होता है कि राष्ट्रीय उपभोग राष्ट्रीय उत्पादन के समतुल्य नहीं रहता ।। अर्थात उससे कम हो जाता है।। इस प्रकार कुल मांग कम हो जाती है, अथवा दूसरे शब्दों में, अति उत्पादन और बेरोजगारी की दश उत्पन्न हो जाती है। क्लासीकल अर्थशास्त्रीयों का यह कथन किअतिउत्पादन एवं सामान्य बेरोजगारी की दशा उत्पन्न ही नहीं होती, एकदम गलत विश्लेषण है, और जहां वे यह कहते है कि आर्थिक प्रणाली स्वयं समायोजित होती है, यर्थाथ में वह कभी भी समायोजित नहीं हो पाती। अत: कीन्स के विचारानुसार, पूर्ति एवं मांग में सन्तुलन बनाये रखने के लिए राज्यकीय हस्तक्षेप आवश्यक है। क्लासीकल अर्थशास्त्र के दुर्ग पर किया गया कीन्स का यह प्रथम प्रहार था।

पीगू का मत था कि यदि श्रमिक अपनी स्वेच्छा से ही मजदुरी कटौती को स्वीकार कर लेते हैं तो बेरोजगारी अदृश्य होजाएगी,किन्तु कीन्स ने इस मत पर भी तीव्र प्रहार किया था। उन्होंने दृढ़ता के साथ कहा कि मन्दी के समय में लोचपूर्ण मजदूरी रोजगार वृद्धि का साधन नहीं बन सकती[१]। इसके विपरित, यह मानते थे कि रोजगार की वृद्धि एवं विस्तार के लिए मजदूरी की बेलोचता का होना अत्यन्त आवश्यक है, अर्थात मजदूरी में कटौती नहीं होना चाहिए। कीन्स का कथन था कि मजदूरी - कटौती से श्रमिको की क्रय - शक्ति कम हो जायेगी जिससे उद्योगों के उत्पादन में उनकी ।।श्रमिकों की ।। प्रभाव पूर्ण मांग घट जायेगी। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि सभी उद्योगों में सामान मजदूरीकटौती के परिणाम स्वरूप वस्तु लागत तो अवश्य हीघट जायेगीकिन्तु क्रय-शक्ति के कम हो जाने के कारण प्रभावपूर्ण मांग में वृद्धि नहीं हो सकेगी। सामान्य मजदूरी कटौती के कारण श्रमिक अब उतनी वस्तुयें नहीं खरीद सकेगें जितनी वे कटौती के पूर्व खरीद सकते थे। इस प्रकार, कुल प्रभाव पूर्ण मांग में ~~वृद्धि नहीं हो सकेगी। सामान्य मजदूरी कटौती के कारण श्रमिक अबतक~~

१- सामान्य सिद्धान्त, पेज २६९।

पूर्ण माँग में गिरावट आ जायेगी और रोजगार की मात्रा बढ़ने की अपेक्षा वास्तव में कम हो जायगी । पीगू का मत यह था कि बेरोजगार के समय मजदूरी की सामान्य कटौती से रोजगार में वृद्धि होती है, किन्तु कीन्स के मतानुसार सामान्य मजदूरी कटौती के परिणाम स्वरूप क्रय-शक्ति घट जाती है और प्रभावपूर्ण माँग कम हो जाती है । प्रभावपूर्ण माँग की कमी से उत्पादन में कमी आ जाती है, फलत: रोजगार घट जाती है । मजदूरी लागत ही नहीं बल्कि आय भी होती है मजदूरी का प्रभाव लागत पर ही नहीं, बल्कि आमदनी पर भी प्रभाव पड़ता है । प्रो० पीगू केवल प्रथम पहलू अर्थात लागत पर ही बल देते थे, जबकि कीन्स ने आय पर ही पूर्ण रूप से बल दिया है । यह कहना असत्य नहीं है कि पीगू सहित सभी क्लासीकल अर्थशास्त्रीयों ने प्रभावपूर्ण माँग की उपेक्षा की है, अथवा यह कहना भी गलत न होगा कि क्लासीकल अर्थशास्त्री प्रभावपूर्ण माँग के सिद्धान्त से ही अपरिचित थे ।

यदि कीन्स मजदूरी -कटौती का विरोध करते थे तो मजदूरी बढ़ोतरी को भी वह पसन्द नहीं करते थे । अर्थात मन्दी के समय बेरोजगारी का उपचार करने हेतु वह मजदूरी वृद्धि के पक्ष में नहीं थे । श्रम संघवादियों का तर्क तो यह था कि मन्दी का केवल यही एक उपचार है कि ऐसे अवसर पर नदकमौद्रिक मजदूरी स्तर को ऊंचा करना चाहिए क्योंकि मौद्रिक मजदूरी की वृद्धि के परिणाम स्वरूप श्रमिकों की क्रय-शक्ति बढ़ेगी और उसके कारण कुल प्रभाव पूर्ण माँग में भी वृद्धि होगी । किन्तु कीन्स इस विचार से सहमत नहीं थे । इस सन्दर्भ में कीन्स की मुख्य शिष्या श्रीमती जोन रोबिन्सन[1] का कथन है कि "यदि उद्यमी अपने श्रमिकों को अधिक मजदूरी देने को तैयार होते है तो माल की माँग बढ़ जाती है और इससे यह तर्क प्रस्तुत किया जाती है कि उत्पादन में भी वृद्धि होजाती है । किन्तु माँग की यह वृद्धि ऊंची मजदूरी के फलस्वरूप उत्पादन लागत में होने वाली वृद्धि को तटस्थ कर देती है ।"

दूसरे शब्दों में, मन्दी के समय में कीन्स का मजदूरी-वृद्धि के विरोध में तर्क यह था कि इससे लागतों में वृद्धि होगी और ऊंची मजदूरी के कारण होने वाली यह वृद्धि कुल प्रभावपूर्ण माँग में होने वाली वृद्धि से अधिक मात्रा में होगी, अर्थात बढ़ी हुई माँग उत्पादन की बढ़ी हुई लागत की तुलना में कम होगी जिससे रोजगारकी मात्रा में न के बराबर वृद्धि होगी ।

१- जोन राबिन्सन इन्ट्रोडक्सन टू द थियूरी आफ इम्प्लाइमेन्ट, पेज ४० ।

साराशत: कीन्स का सिद्धान्त मन्दी के समय न तो मजदूरी कटौती के ही पक्ष में है और न मजदूरीवृद्धि की ही आज्ञा देता है। यह तो नकद मजदूरी को यता स्थिर बनाये रखने का ही समर्थन करता है। चूकि कीन्स मजदूरियों में वृद्धि के विरोधी थे, अत: श्रम संघवादियो ने उन पर कडा प्रहार किया है।[१]

प्रो० पीगू "स्वतन्त्र" व्यापार प्रणाली की ओर ही लौटना चाहते थे। वे यही तर्क देते थे कि "पूर्ण-प्रतियोगात्मक प्रणाली" ही रोजगार वृद्धि का एक मात्र साधन होती है। किन्तु कीन्स के अनुसार संसार की परिवर्तित दशाओं में पीगू का यह विचार उचित नहीथा। प्रो० पीगू आर्थिक प्रणाल की स्वतन्त्र कार्यशीलता में वर्तमान "राज्य हस्तक्षेप को अच्छा नहीं समझते थे। उनके अनुसार हस्त क्षेप से आर्थिक प्रणाली की स्वतन्त्र कार्यशीलता में बाधाएं उपस्थित होती है, जिनके फलस्वरूप अर्थ व्यवस्था मे बेरोजगारी उत्पन्न हो जाती है। उनका कहना था कि इन हस्तक्षेपों के समाप्त होते ही आर्थिक प्रणाली स्वयं सुचारू रूप से कार्य करने लगेगी और श्रम एवं अन्य साधनों को पूर्ण रोजगार प्राप्त होगा। पीगू के मतानुार श्रम संघों की सामूहिक सौदेवाजी मजदूरी को गिरने नहीं देती है और मजदूरी के न गिरने से बेरोजगारी की मात्रा में वृद्धि होती है। प्रत्येक न्याय प्रिय व्यक्ति यह स्वीकार करेगा कि श्रम संघ आधुनिक समाज के अभिन्न अंग बन गयो है और उनको समाप्त नही किया जा सकता तथा उनका अस्तित्व बना ही रहेगा। और भविष्य में सामूहिक सौदेबाजी और भी अधिक लोक प्रिय होती चली जायेगी। प्रो० पीगू के अनुसार "न्यूनतम मजदूरी विधान" आर्थिक प्रणाली की स्वतन्त्र कार्यशीलता में एक प्रकार का राज्यकीय हस्तक्षेप ही है। परन्तु पीगू के इस विचार से कोई भी विचार शील व्यक्ति सहमत नहीं हो सकता। आज शायद ही ऐसा कोई प्रगतिशील सरकार होगी जिसने न्यूनतम मजदूरी-निर्धारण सिद्धान्त को स्वीकार एवं क्रियान्वित न किया हो, और न ही हम आधुनिक सरकारों से यह आशा करते है कि मन्दी और बेरोजगारी के समय में लोगों को बेरोजगारी से राहत देने सम्बन्धी अपने बचन से विचलित हो जायँ संक्षेप में, समूची क्लासीकल सिद्धान्त अयथार्थ, असामयिक एवं अप्रचलित है तथा इस बात की कोई आशा नही है कि आज अथवा कल की दशाओं में वह अपनाया जा सकेगा।

१- देखे मार्क एगैन्सद् किन्सीयन वाई जोहन एटन पेज ४१।

कीन्सीयन रोजगार सिद्धान्त :----

कीन्स से पूर्व भी रोजगार के दो सिद्धान्त प्रचलित थे : १- अबन्ध-नीति सिद्धान्त, और २- प्राकृतिक आवेग सिद्धान्त [१]। प्रथम सिद्धान्त के अनुसार बेरोजगारी इसलिए उत्पन्न होती है क्योंकि बाजार की शक्तियों की स्वतन्त्र क्रियाशीलता में सरकार अनावश्यक हस्तक्षेप करती है। बेरोजगारी, इस सिद्धान्त के अनुसार, इस कारण भी होती है कि समूचे बाजार पर कुछ मुट्ठी भर लोगों का एकाधिकार स्थापित होजाता है। यदि सरकारआर्थिक क्रियाओं में सामाजिक कानूनों, उपादानों, करों आदि द्वारा हस्तक्षेप न करे और नीजि व्यवसाय एवं स्वतन्त्र सौदेबाजी को बाजार में स्वतन्त्र रूप से क्रियाशील होने दे, तो रोजगार स्वत: ही अधिक मात्रा में प्राप्त होता रहेगा। यह सिद्धान्त इस मान्यता पर आधारित था कि पूर्ण रोजगार पूंजीवादी अर्थव्यवस्था की एक सामान्य दशा होती है। इस सिद्धान्त के अनुसार बेरोजगारी, राज्यहस्तक्षेप एवं कारखाने दारों अथवा श्रम - संघवादियों की एकाधिकारात्मक कार्यवाहियों के ही कारण होती थी। यदि इस प्रकार के हस्तक्षेप एवं एकाधिकार को समाप्त कर दिया जाय तो बेरोजगारी तत्काल ही अदृश्य हो जायेगी। तात्पर्य यह है कि जैसे ही ये प्रतिबन्ध हटा लिये जायेंगे वैसे ही स्पर्द्धा उत्पन्न हो जायेगी। यह स्पर्द्धा मजदूरियो को उस स्तर तक नीचे गिरा देगी जहां पर उद्यमियों को अधिक मजदूर लगाने से लाभ होने लगेगा। किन्तु इस प्रकार का दृष्टि कोण अयथार्थ एवं अवास्तविक है तथा आज अथवा कल की परिवर्तित परिस्थितियों में इसे मुश्किल से ही अपनाया जा सकेगा।

प्राकृतिक आवेग सिद्धान्त के भिन्न-भिन्न रूप है इस सिद्धान्त के अनुसार व्यापार - चक्र की क्रियाशीलता के कारण बेरोजगारी होती है। यह सिद्धान्त इस बात पर जोर देता है कि व्यावसायिक उतार-चढ़ाव प्राकृतिक होते है और यदि सीमित हो तो लाभदायक भी होते है। प्राकृतिक आवेग सिद्धान्त के प्रतिपादकव्यापार-चक्र की क्रियाशीलता का कोई एक निश्चित कारण नहीं बताते। इसके विपरीत, उनमें व्यापार - चक्र के कारणों के प्रश्न पर भी मतभेद है। इस सम्बन्ध में जिन मुख्य कारण को प्रस्तुत किया गया है, उनमें से कुछ ये है : "फसलों की मात्रामेंपरिवर्तन, उद्यमियों की आशावादित

१- देखें, द बास आफ अनइम्प्लाइमेंट वाई एफ० ए० बुर्वट, पब्लिश्ड इन द इकोनामिक्स आफ फुल इम्प्लाइमेंट, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी इन्सटिट्यूट आफ स्टेटिस्टीक्स ।। १९४८ ।।

और निराशावादिता, समय-समय पर बैंकिंग नीति में होने वाली भूलें, समय-समय पर होने वाले नवीन अविष्कार ।" इनमें से कोई भी कारण ऐसा नहीं है जो बेरोजगारी के स्वरूप की व्यापक एवं विस्तृत व्याख्या कर सके । यही कारण है कि बेरोजगारी की सही व्याख्या करने के लिए प्राकृतिक आवेग-सिद्धान्त भी असन्तोषजनक सिद्ध हुआ है ।

कीन्स द्वारा प्रतिपादित रोजगार सिद्धान्त प्रथम क्रमबद्ध एवं वैज्ञानिक रोजगार-सिद्धान्त है । इस सिद्धान्त को प्राय: न्यून मांग सिद्धान्त कह कर भी पुकारा जाता है । इस सिद्धान्त के अनुसार बेरोजगारी प्रभावपूर्ण मांग की कमी अथवा उपभोग एवं निवेश पर किये गये व्यय की कमी के कारण होती है । यहां हम केवल न्यून मांग - सिद्धान्त का ही अध्ययन करेंगे । कीन्स के न्यून-मांग सिद्धान्त की विवेचना करने से पूर्व हम उन कतिपय मान्यताओं की चर्चा करेंगे जिनपर यह सिद्धान्त आधारित है :——

१- कीन्स का सिद्धान्त केवल अल्पकाल से ही सम्बन्धित है । कीन्स के शब्दों में, "दीर्घकाल में तो हम सब मर जाते हैं ।" कीन्स यह मान कर चलते थे कि अल्पकाल में उत्पादन की एवं स्थिर पूंजी की मात्रा स्थिर रहती है । यह कीन्स के सिद्धान्त की महत्वपूर्ण मान्यता थी और इस मान्यता में उनका विश्लेषण बहुत ही सरल हो गया था । इस मान्यता के परिणाम स्वरूप अर्थव्यवस्था में रोजगार की मात्रा उत्पादन ।। अथवा आय ।। के अनुपात में बढ़ती है ।

२-कीन्स का सिद्धान्त इस मान्यता पर निर्मित किया गया है कि बाजार में पूर्ण प्रतियोगिता पायी जाती है अथवा कमसे कम बाजार में एकाधिकार के अंश में कोई परिवर्तन नहीं होता है

३- कीन्स यह मानकर चले थे कि उत्पादन में उत्पत्ति ह्रास नियम अथवा बढ़ती हुई लागत का नियम क्रियाशील होता है । वास्तव में, यह मान्यता केज के लिए आवश्यक थी क्योंकि वह पहले ही यह मानकर चले थे कि उद्योग में उत्पादन तकनीक अपरिवर्तित रहती है ।

४- कीन्स का सिद्धान्त "बन्द अर्थव्यवस्था" की मान्यता पर निर्मित किया गया है । दूसरे शब्दों में कीन्स ने रोजगार की मात्रा पर पड़ने वाले विदेशी व्यापार के प्रभावों को अपने सिद्धान्त में कोई स्थान नहीं दिया था ।

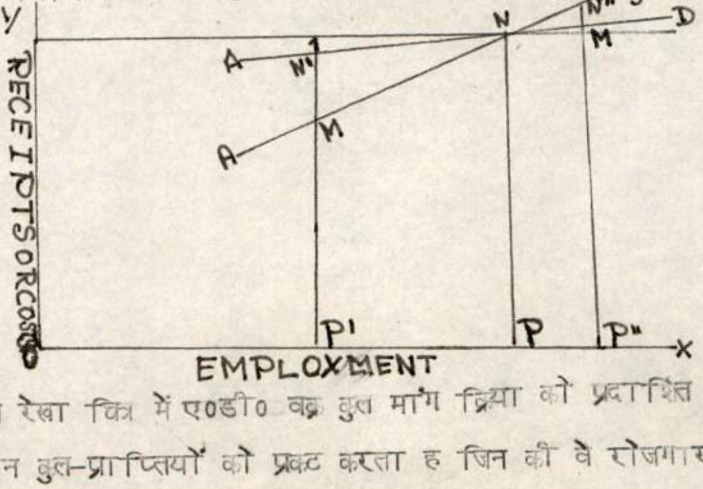
५- कीन्स का सिद्धान्त सापेक्षिक मजदूरियों एवं कीमतों जैसे सापेक्षिक धारणाओं के द्वारा व्यवहार नहीं करता । यह तो पूर्णत: योगात्मक धारणाओं से ही सम्बन्धित है ।

रोजगार मापन की अन्य किसी उत्तम इकाई के अभाव में कीन्स राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में रोजगार की मात्रा को कुल उत्पादन के माध्यम से ही मापते है। कीन्स की धारणा यह थी कि जितना ही अधिक उत्पादन होगा, रोजगार की मात्रा भी उतनी ही अधिक होगी, और जितना कम उत्पादन होगा, रोजगार की मात्रा भी उतनी ही कम होगी, अर्थात रोजगार की कमी – वेशी उत्पादन की कमी –वेशी के अनुसार होता है। किन्तु राष्ट्रीय उत्पादन प्रभावपूर्ण मांग पर आधारित होता है। दूसरे शब्दों में, रोजगार की मात्रा प्रभावपूर्ण मांग की मात्रा पर निर्भर करती है प्रभाव पूर्ण मांग के दो अंग होते है :- १- उपभोग मांग और २- निवेशमांग। प्रथम मांग उपभोग-वस्तुवों की मांग से सम्बन्धित होती है और द्वितीय प्रकार की मांग पूंजीगत- वस्तुवों की मांग कहलाती है। स्मरण रहे "प्रभावपूर्ण मांग" खरीदने की इच्छा और खरीदने की शक्ति एवंतत्परता केअन्तर को समुचित ढंग से व्यक्त करती है। वस्तुओं के खरीदने की इच्छा सेही रोजगार की मात्रा प्रभावित नहीं होती। यह प्रभाव पूर्ण मांग ही है जिसपर रोजगार की मात्रा निर्भर करती है। चूंकि रोजगार प्रभाव पूर्ण मांग पर निर्भर करता है, अत: यह स्पष्ट है कि पर्याप्त प्रभाव –पूर्ण मांग की कमी से ही बेरोजगारी फैलती है, और यदि बेरोजगारी काउपचार करना है तो प्रभाव पूर्ण मांग में वृद्धि की जानी चाहिए चूंकि पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में बेरोजगारी एक सामान्य दशा होती है।। केवल युद्ध काल को छोड़ कर अत: स्पष्ट है कि कुल प्रभाव पूर्ण मांग की कमी पूंजीवादी अर्थव्यवस्था की एक सामान्य विशेषता होती है। प्रश्न यह है कि शान्ति काल में पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में कुल प्रभावपूर्ण मांग में कमी क्यों होती है इस उत्तर स्पष्ट है। जब राष्ट्रीय आय बढ़ती है तो राष्ट्रीय उपभोग राष्ट्रीय आय के अनुपात मेंनहीं बढ़ता है अथवा, सामुदायिक आय और सामुदायिक उपभोग के बीच एक खाई उत्पन्न हो जाती है। जब तक इस खाइ को निवेश वृद्धि द्वारा पाट नहीं दिया जाता तब तक बेरोजगारी को समाप्त नहीं किया जा सकता है। अत: सारांश यह है कि रोजगार की समुन्नति के लिए निवेश वृद्धि केमाध्यमसे प्रभावपूर्ण मांग को बढ़ाना चाहिए। कीन्स के रोजगार सिद्धान्त में प्रभावपूर्ण मांग के नियम का महत्वपूर्ण स्थान है।

प्रभावपूर्ण मांग का निर्धारण दो तत्वों से होता है जिनको कीन्स ने क्रमश: "कुल मांग – क्रिया तथा कुल-पूर्ति –क्रिया कह कर पुकारा है। जिस प्रकार मार्शल के विश्लेषण में पूर्ति एवं मांग की बाजार-शक्तियों से कीमत का निर्धारणहोता है, ठीक उसी प्रकार से ही कीन्सीयन विश्लेषण में प्रभावपूर्ण मांग का निर्धारण कुल मांग एवं कुल पूर्ति की शक्तियों से किया जाता है। कुल मांग

क्रिया ।।ए०डी० एफ० ।। द्रव्य की उन भिन्न -भिन्न राशियों की अनुसूची की बिक्री से प्राप्त होने की आंशका सा रहती है। यह वह कुल प्राप्ति होती है जिसे सभी उद्यमी मिलकर अपने उत्पादन की बिक्री से प्राप्त होने की आशंसा करते है। इसके विपरित, कुल पूर्ति -क्रिया ।।ए० एस० एफ० ।। द्रव्य की उन भिन्न-भिन्न राशियों की अनुसूचि होती है जो ।।रोजगार के भिन्न - भिन्न स्तरों पर उत्पादनकी बिक्री से उद्यमियों को मिलनी ही चाहिए। इसप्रकार कुल पूर्ति क्रिया किसी अर्थव्यवस्था में , उद्यमियों की कुल लागतों का और कुल मांग क्रिया उनकी कुल प्राप्तियों का प्रतिनिधित्व करती है।यह एक साधारण समझ की बात है कि किसी भी दशा में लागतों को प्राप्तियों से अधिक नहीं होना चाहिए। यदि, रोजगार के किसी विशेषस्तर पर उद्यमियों को यह पता लग जाता है कि ला की अपेक्षा उनकी प्राप्तियां कम है, तो वे उत्पादन का स्थगन करके मजदूरों को काम देने से इन्क कर देंगे यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि जब तक लागतें प्राप्तियों से कम रहती है, उद्यमीकर्ता उत्पादन बढ़ाकर रोजगार में वृद्धि करते चले जाते है। यह क्रम तब तक चलता रहता है जब तक कि ला और प्राप्तियां समान नहीं हो जाती । स्मरण रहे कि यदि लागतें प्राप्तियों से अधिक हो है तो उद्यमकर्ता किसी भी दशा में मजदूरों को रोजगार प्रदान नहीं करेगा।

प्रभावपूर्ण मांग के उस बिन्दु कानिर्धारण को कुल मांग क्रिया और कुल पूर्ति क्रिया की पारस्परि क्रियाओं द्वारा निश्चित होता है, एक रेखा चित्र द्वारा व्यक्त किया जा सकता है :-



उपरोक्त रेखा चित्र में ए०डी० वक्र कुल मांग क्रिया को प्रदर्शित करता है।। अर्थात यह वक्र उद्यमियों की उन कुल-प्राप्तियों को प्रकट करता है जिन की वे रोजगार के भिन्न-भिन्न स्तरों पर क कल्पना करते है।। और ए० एस० वक्र कुल पूर्ति क्रिया को प्रकट करता है।। अर्थात यह वक्र उद्यमियों की उन कुल लागतों को प्रदर्शित करता है जिनका रोजगार के भिन्न-भिन्न स्तरों पर उद्यमियों द्वारा प्राप्त करलेना अनिवार्य है।

रेखा चित्र में दोनों वक्र एक दूसरे को एन बिन्दु पर काटते है। यही बिन्दु प्रभाव पूर्ण मांग का बिन्दु है। इस बिन्दु पर कुल मांग क्रिया और कुल पूर्ति क्रिया पूर्णत: सन्तुलित है। प्राप्तियां- लागतें। उपलब्ध रोजगार को व्यक्त करता है इस बिन्दु के अतिरिक्त कोई ऐसा बिन्दु नहीं है जहां पर दोनो वक्र सन्तुलित हो। पर कुल पूर्ति क्रिया - , जबकि कुल मांग क्रिया - । - ।।कुल मांग क्रिया ।। -।।कुल पूर्ति क्रिया ।। ही उद्यमियों को अधिक रोजगार देने के लिए उत्साहित करेगा क्योंकि उससे उनको अधिक लाभ होगा। पर कुल पूर्ति क्रिया ।।लागतें।। कुल मांग क्रिया ।। प्राप्तियों ।। से अधिक है, अत: संख्या में लोगों को रोजगार नही दिया जा सकता। की अपेक्षा संख्या में ही लोगों को रोजगार दिया जा सकता है क्योंकि बिन्दु पर कुल मांग क्रिया और कुल पूर्ति क्रिया एक दूसरे के ठीक-ठीक- बराबर हो जाते है।

कीन्स ने अपने "सामान्य-सिद्धान्त" में इन दोनों शक्तियों ।। कुल मांग क्रिया ।। एवं ।। कुल पूर्ति क्रिया ।। में से कुलपूर्ति क्रिया पर अधिक ध्यान नहीं दिया। उन्होने केवल कुल मांग क्रिया पर ही पूर्ण ध्यान दिया है। वास्तव में, वह कुल पूर्ति क्रिया को स्थिर मानते है। क्यों कीन्सीयन अर्थशास्त्र अल्पकालीन अर्थशास्त्र है जो केवल अल्पकाल की ही व्याख्या करता है। अल्पकाल में कुल पूर्ति क्रिया को आवश्यकरूप से स्थिर मानना ही चाहिए। अल्पकाल में लागतों में फेर-बदल नहीं की जा सकती। दूसरी बात यह है कि कीन्स के "सामान्य सिद्धान्त" का मुख्य विषय बेरोजगारी और न्यून रोजगार ही है। ऐसी दशा में, युक्तीकरण आदि द्वारा कुल पूर्ति क्रिया ।।लागतें।। में प फेर-बदल करने से कोई लाभ नहीं होता है। औद्योगिक युक्तीकरण से मशीनों काप्रयोग बढ़ जाता है जिससे बेरोजगारीउत्पन्न होती है इस प्रकार, यदि बेरोजगारी के समय लागतोंको कम किया जाता है ।।अथवा कुल पूर्ति क्रिया में फेर बदल की जाती है।। तोपरिणाम यह होता है कि बेरोजगारी घटने की अपेक्षा और भी अधिक बढ़ जाती है। इसी कारण कीन्स ने कुल पूर्ति क्रिया को अछूता ही छोड़ दिया और इसे एक ऐसी स्थिति मात्र मानलिया जिसमें फेर-बदल किया ही नहीं जा सकता था। भारतीय परिस्थियों में इस प्रकार का विचार प्रासंगिक प्रतीत होता है। भारत की वर्तमान बेरोजगारी के प्रसंग में युक्तीकरण की बात कीन्सीयन विश्लेषण की दृष्टि से असंगत होगी। भारत के करोड़ों लोगों की बेरोजगारी की गम्भीर समस्या के समक्ष इस प्रकार की किसी भीयुक्तिकरण की योजना का समर्थन नहीं कर सकते थे।

कीन्सीयन-रोजगार सिद्धान्त और भारत एवं विकासशील राष्ट्र :--------

कीन्सीयन प्रणाली सार्वभौमिक रूप से लागू नहीं होती है। इसका उपयोग केवल ब्रिटेन एवं संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे देशों तक ही है। प्रो० जे०ए० शुमपीटर ने अपनी साहित्यिक शैली में लिखते हुए कहा है, "व्यावहारिक कीन्सीयन वाद एक ऐसा पौधा है जिसे विदेशी भूमि में ले जाकर उगाया नहीं जा सकता है। यदि इसपाधे को अन्य देशों में लगाया जाता है तो वह वहां सूख ही नहीं जाता, बल्कि विषाक्त भी हो जाता है। ------ यदि पौधे को इग्लैण्ड की भूमि तक ही सीमित रखा जायतो यह स्वस्थ्य कर सिद्ध होने के साथ-ही साथ देश के लिए लाभप्रद भी सिद्ध होता है। ---- कीन्स कीएक-एक बात पर, जो कुछ भी उन्होंगने कहा, यह सब कुछ चरितार्थ होता है।[1] इस प्रकार, कीन्सीयन रोजगार सिद्धान्त का उपयोग भारत जैसे अविकसित देश में सीमित रूप में ही किया जा सकता है।

प्रो० कीन्स ने अपने रोजगार सिद्धान्तमें अपना ध्यान चक्रीय बेरोजगारी पर ही पूर्ण रूप से केन्द्रित रखा है, इसका अर्थ उस बेरोजगारी से होता है जो व्यापार चक्र की मन्दी-अवस्था के कारण उत्पन्न होती है। प्रभावपूर्ण मांग की कमी के कारण व्यापार की यह मन्दी उत्पन्न होती है जबकि देश की राष्ट्रीय उत्पादन क्षमता बढ़ रही होती है। किन्तु, किसी अर्द्ध विकसित देश की बेरोजगारी विकसित देशों की बेरोजगारी से कुछ भिन्न होती है। अर्द्ध-विकसित देशों की बेरोजगारी चक्रीय न होकर चिरकालिक होती है। फि र भी, इसका अर्थ यह नहीं है कि अर्द्ध-विकसीत देशों में चक्रीय बेरोजगारी बिल्कुल होती हीनहीं है। ऐस देशों में अधिकांश में चिरकालीन बेरोजगारी का समामना करना पड़ता है। जिसका कारण प्रभावपूर्ण मांग की कमी न होकर पूंजी साधनों की कमी होती है किन्तु अपने आय्, उत्पादन, एवं रोजगार के सिद्धान्त का प्रतिपादन करते समय प्रो० कीन्स के मस्तिष्क में केवल विकसित देशों का ही चित्र रहा है उन्होंने अपने सिद्धान्त के प्रतिपादन में अर्द्ध-विकसित देशों की या तो उपेक्षा की है या उनकी ओर न के तुल्य ध्यान दिया है[2]। विकसित पूंजीवादी देशों की

१- जे० ए० सुम्पीटर, टैन ग्रेट इकोनामिस्ट, पेज - २७५।

२- फिलिप कोटनी, द फिलासफी आफ लार्ड कीन्स, पब्लिसड् इन द क्रीटीक्स आफ कीन्सीयन इकोनामिक्स, इडी, हेनरी हेजलीट, पेज-२०९।

समस्या आर्थिक अस्थिरता को नियन्त्रित करने की होती है, अर्थात उन्हें व्यावसायिक उतार-चढ़ावों का नियमन करना पड़ता है। प्रो० कीन्स ने अपने रोजगार सिद्धान्त का प्रतिपादन मुख्यतया इसी अस्थिरता को ही ध्यान में रखकर किया है। इसके विपरित, अर्द्ध-विकसीत देशों की समस्या "आर्थिक अस्थिरता" ।। यद्यपि आर्थिक अस्थिरता का पूर्ण रूप से अभाव नहीं होता ।। की न होकर आर्थिक विकास की होती है। इन देशों में आर्थिक विकास का उद्देश्य चिरकालिक बेरोजगारी से पिंड छुड़ाना होता है। किन्तु कीन्सीयनस रोजगार-सिद्धान्त में इस प्रकार की बेरोजगारी को मिटाने की व्यवस्था नहीं है।

कीन्स केकथनानुसार अर्द्ध विकसित देश पहले ही से पूर्ण रोजगार की स्थिति में होते है ।। ।। क्योंकि वे पूर्ण रोजगार युक्त अर्थव्यवस्था की विशेषताओं को प्रदर्शित करते है ।। किन्तु हम जानते है कि यह निष्कर्ष वास्तविकता से कितना दूर है। डा० वी० के० आर० वी० राव ने संक्षेप में व्यक्त करते हुए कहा है, "अर्द्ध विकसित देशों में विशेष रूप से व्याप्त बेरोजगारी, वास्तव में, गुप्त बेरोजगारी ही होती है जिसके परिणाम स्वरूप इन देशों की अर्थव्यवस्था लगभग पूर्ण रोजगार युक्त अर्थव्यवस्था के ही समान हो जाती है, और उस सीमा तक गुणक की क्रियाशीलता में बाधक होती है अर्थातउत्उत्पादन अथवा रोजगार को बढ़ने नहीं देती है।"

कीन्सीयन रोजगार सिद्धान्त का प्रयोग भारत में कहां तक सम्भव है इस सम्बन्ध में सारांश रूप में प्रो० दास गुप्ता का कथन है कि " प्रो० कीन्स' ने अपने ग्रन्थ 'सामान्य सिद्धान्त' में 'सामान्य' शब्द की'सामान्यता' का अर्थ चाहे जो कुछ भी रखा हो, उसमें प्रतिपादित सिद्धान्तों के प्रयोग काक्षेत्र अर्द्ध-विकसित देशों में अति सीमित ही है।[1] फिर भी, प्रो० दासगुप्ता ने स्वीकार किया है कि कीन्सीयन सिद्धान्त भारतीय अर्थव्यवस्था के केवल उस छोटे एवं संगठित क्षेत्र में लागू हो सकता है। जिसमें पश्चिमी देशों की सभी विशेषताएं विद्यमान है। किन्तु उक्त क्षेत्र का हमारी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में कोई महत्वपूर्ण स्थान नहीं है, क्योंकि जहां तक रोजगार की मात्रा कास सम्बन्ध है, उस क्षेत्र का अंशदान लगभग नगण्य ही है, यद्यपि राष्ट्रीय आय में इसका योग निश्चिय ही उल्लेखनीय है।

१- देखें आर्टीकल, "कीन्सीयन इकोनामिक्स इन अन्डर-डेवलप्ड कन्ट्रीज" पब्लिस्ड इन द सेम्पोजियम आन कीन्सीयन इकोनामिक्स, इडी०,भी० वी० सिंह, पेज-१५९।

तब फिर, रोजगार की वृद्धि एवं उच्च जीवन -स्तर की प्राप्ति के लिए अर्द्धविकसीत देशों को क्या करना चाहिए प्रो० दास गुप्ता ने रोजगार के बढ़ेहुए अवसरों की प्राप्ति के लिए बड़े पैमाने पर सरकारी निवेश का समर्थन किया है। पर्याप्त विदेशी पूंजी एवं पर्याप्त सरकारी बचत के अभाव में उन्होंने घाटे के बजट तक का समर्थन किया है। उनका कथन है कि अन्तरिम काल में घाटे के बजट के स साथ ही साथ आर्थिक नियंत्रणों ।। जैसे ।। कीमत एवं पूंजी-निर्गमन-नियंत्रण ।। का होना भी अनिवार्य है ताकि कीमत स्तर को स्थिर रखा जासकेे। प्रो० दास गुप्ता नेजोरदार शब्दों में कहा है कि "यह सब कुछ उदार अर्थव्यवस्था के ढाचें में, जिसको बनाये रखना प्रो० कीन्स को प्रिय था, नहीं किया जा सकता है।"

किन्तु डा० वी० के० आर० वी० राव का कथन है कि "प्रो० कीन्स ने पूर्ण रोजगार की प्रप्ति केलिए घाटे के बजट एवं उपभोग व्यय के समर्थन सहित जिस आर्थिक नीति काप्रतिपादन किया है वह अर्द्ध विकसित देशों में लागू नहीं होता।" उनके इस विचार का आधार मुख्य तथा यह है कि अर्द्ध-विकसित देशों के उत्पादन का पूर्ति वक्र बेलोचदार होता है और ऐसी अर्थव्यवस्था के घाटे के बजट से स्फीतिक शक्तियों का प्रबल होना अनिवार्य ही है। अत: डा० राव इस पक्ष में नहीं है कि अर्द्ध विकसित देशों में प्रो० कीन्स द्वारा प्रतिपादित विकास के सिद्धान्तों का अन्धाधुन्ध प्रयोग किया जाय "अर्द्धविकसितदेशों में आर्थिक विकास के निमित लगभग उसी नीति का अपनाया जाना अधिक उपयुक्त है जिसे क्लासीकल अर्थशास्त्रीयों ने प्रतिपादित किया था। -------- जहां तक अर्द्ध-विकसित देशों का प्रश्न है, 'कठिन परिश्रम करो और अधिक बचाओ' नामक पुराना क्लासीकल उपचार अब भी उन्नति की उत्तम औषधि प्रतीत होती है।

उपर्युक्त विचारों ।। जिनकेअन्तर्गत अर्द्ध विकसित देशों के आर्थिक विकास की समस्या को आवश्यक रूप से वित्तीयमाना जाता है ।। के विपरित प्रो० मौरिस डाब[1] एक अन्य वैकल्पिक उपायको प्रस्तुत करते हुए कहते है कि अर्द्ध-विकसीत देशों का विकास आवश्यक रूप से आर्थिक संगठन का ही विषय है यदि लोग आर्थिक विकास और रोजगार की वृद्धि के लिए वृत संकल्प है तो इनको ।। अर्थात आर्थिक विकास एवं रोजगार वृद्धि को ।। एक ऐसीविधि द्वारा प्राप्त किया जा सकता है जिसमें न तो

१- मौरिस डाब : सम एसपेक्ट्स आफ इकोनामिक्स डेवल्पमेंट ।। १९५१ ।।

विदेशी पूंजी, न घाटे के बजट और न ही घरेलू उपभोग की कटौती की आवश्यकता पड़ती है। इस विधि का सारांश यह है कि अर्द्ध-विकसित देशों की गुप्त बेरोजगारी में निहित शक्तियों एवं अतिरिक्त कृषिश्रम को गतिशील बनाकर पूंजी - संचय किया जाय। गावों के उन लोगों को, जो गुप्त बेरोजगारी के शिकार होते हैं, देहाती क्षेत्रों में ही बड़े पैमाने पर कियेजाने वाले सार्वजनिक निमार्ण -कार्यों में खपाया जाय। इससे स्वभावत: ही देश में बिक्री -योग्य अतिरिक्त उत्पादन बढ़ जायेगा तथाउसका उपयोग विदेशों से पूंजीगत वस्तुओं एवं शक्ति-उत्पादक यन्त्रों के आयात के लिए किया जा सकेगा। यह कहा जा चुका है कि साम्यवादी चीन ने यही मार्ग अपनाया है और अब वह आर्थिक समृद्धि एवं बढ़ते हुए रोजगार के मार्ग पर अग्रसर हो रहा है।

एक अन्य सम्बन्धित विषय यह भी है कि प्रो० कीन्स द्वारा प्रतिपादित रोजगार सिद्धान्त साम्यवादी देशों में कहां तक लागू होता है। "यदि साम्यवादी पनपता है तो प्रो० कीन्स का अस्तित्व उसी प्रकार समाप्त होजायगा जिस प्रकार रूस में रिकार्डो का हुआ।"[१] इस कथन का आशय यह है कि प्रो० कीन्स द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों काप्रयोग साम्यवादी देशों में हो ही नहीं सकता है। प्रो० कीन्स के सिद्धान्तों को किसी भी साम्यवादी अर्थव्यवस्था में स्थान प्राप्त नहीं है। कीन्स T किसी ऐसी अर्थव्यवस्था में दखल नहीं है, जिसमें निजीव्यवसाय का अन्त करके सभी उद्योगों को सरकार अपने स्वामित्व में ले लेती है। 'निवेश की अस्थिरता' निजीव्यवसाय की अर्थव्यवस्था का प्रतीक होती है, क्योंकि निवेश सम्बन्धी निर्णय उद्यमियों के उस समूह द्वारा लिये जाते हैं जो विशुद्धत: लाभ-उद्देश्य से हीप्रेरित होता है"। इस प्रकार सम्पूर्ण कीन्सीयन रोजगार सिद्धान्त का उद्देश्य इस अस्थिर तत्व को स्थिर बनाना होता है। इसका अर्थ यह है कि राजकोषिय एवं मौद्रिक उपायों को अपना कर निवेशीय उतार-चढ़ावों को नियन्त्रित किया जाता है। प्रो० कीन्स का कथन है किमन्दीकाल में सस्ती मुद्रा नीति ही नीजि निवेशकों को अधिक निवेश के लिए प्रेरित कर सकती है। किन्तु प्रश्न यह है कि "क्यासाम्यवादी अर्थव्यवस्थाओं को 'निवेश की अस्थिरता' जैसी समस्या का सामना करना पड़ता है" साम्यवादी देशों में यह प्रश्न उत्पन्न ही नहीं होता क्योंकिवहां पर निजीव्यवस्था को करने

१- हरिश : द न्यू इकोनामिक्स, पेज-४६।

वाले उद्यमी होते ही नहीं है। वहां पर सभी व्यवसाय सरकार द्वारा ही किये जाते है और सरकार निवेश - स्थिरता को बनाये रखने में समर्थ होती है।

किन्तु, इसका अर्थ यह नहीं है कि साम्यवादी अर्थव्यवस्था में कुल मांग की कमी की समस्या उत्पन्न ही नहीं हो सकती। साम्यवादी अर्थव्यवस्था में भी मांग की कमी हो सकती है क्योंकि वहां के उपभोक्ता सरकार द्वारा आयोजित मात्रा के अनुसार कई वस्तुओं की खरीद न करें। हम घ घोड़े को तलवार पर तो लेजा सकते है किन्तु उसे पानी पीने के लिए मजबूर नहीं कर सकते। फिर भी, यदि किसी साम्यवादी अर्थव्यवस्था में मांग की गिरावट की समस्याउत्पन्न होती है तो वह देश पूंजीवादी देश की अपेक्षा इस समस्या को अधिकप्रभाव पूर्ण ढ़ग से हल करने मेंसमर्थ होता है। साम्यवादी व्यवस्था कुल मांग को अनेक विधियों से ऊंचा उठा सकती है, जैसे कीमत-कटौती, करों की कमी, एमजदूरी दर में वृद्धि आदि। सामान्यत: साम्यवादी अर्थव्यवस्था को मांग कीगिरावट की समस्या की अपेक्षा कुल मांग कीअधिकता कीसमस्या का अधिक सामना करना पड़ता है। इस दृष्टि से भी साम्यवादी अर्थव्यवस्थाएं मांग की अधिकता की समस्याका सामाधान करने में पूंजीवादी देशों की अपेक्षा अधिक अच्छी स्थिति में होती हैं। कुछ भी हो, हमारा यहां पर इस समस्या से कोई तात्कालिक सम्बन्ध नहीं है।

साराशंत: कीन्सीयन विश्लेषण काप्रयोग केव ल उन्ही देशों में किया जा सकता है जो अपेक्षाकृत अधिक विकसित, अधिक औद्योगिकतथा अधिक धनी होतेहै और जिनमें निजीव्यवसाय प्रथा आज भी बड़े पैमाने पर प्रचलित है।

अध्याय तीन

मानव पूंजी और बेरोजगारी

मानव पूंजी और आर्थिक प्रगति

आर्थिक विकास की प्रक्रिया में मानवीय संसाधनों का योग विश्व के समस्त विकासवादी अर्थशास्त्रीयों ने स्वीकार किया है यदि किसी देश की जन शक्ति संगठित, सबल, सचेष्ट व सक्रिय हो तो वहां विरल प्राकृतिक सम्पदा होने पर भी आर्थिक विकास वांछित दर से करना सम्भव होता है। लेकिन यदि जन शक्ति दुर्बल निष्क्रीय एवं विश्रृंखल हो तो बहुल प्राकृतिक उपादानों के बावजूद आर्थिक जड़ता बनी रहती है। जनसंख्या उत्पादनका ऐसा कारक है जो साध्य व साधन दोनो है। जहां तक मानव पूंजी के परिणाम की बात है, किसी भी अर्थतंत्र के स्वतन्त्र, सतत् एवं समग्र विकास के लिए मानव पूंजी की अभिष्टम मात्रा होनी चाहिए, अन्यथा उस देश का व्यापकआर्थिक कल्याण कठिन है मानव पूंजी ही उत्पादन का मूल साधन है। मनुष्य ही अपनी बौद्धिक एवं शारिरिक शक्ति के कारण भौतिक साधनों का शोषण करता है। नए परिवर्तनों तथा नयी-नयी खोजों के द्वारा उत्पादन प्रक्रिया को को सजाता, संवारता है एवं आर्थिक विकास का मार्ग प्रशस्त करता है।

समस्त उत्पादनों काएकमात्र उद्देश्य मानव की विभिन्न आवश्यकताओं को सन्तुष्ट करना ही होता है। ताकि जीवन स्तर ऊंचा उठाया जा सके। यही कारण है कि समाजवादी समाज की स्थापना करने वाले देश जनता को अधिक से अधिक सुख सुविधाओं को प्रदान करना चाहते है।

"मानवीय साधनों का विकास ज्ञान, योग्यता, व समाज के व्यक्तियों की कार्यक्षमता में वृद्धि होने वाली एक प्रक्रिया है आर्थिक अर्थों में यह कहा जा सकता है कि यह मानवीय पूंजी का संचय है, जिसका अर्थव्यवस्था के विकास में प्रभावशाली विनियोग किया जाता है। राजनैतिक अर्थों में मानवीय साधन विशेषकर जनतंत्रीय राज्य के नागरिकों को राजनीतिक विधियों में भाग लेने को तैयार करता है। सामाजिक व धार्मिक अर्थ में, मानवीय साधनों के विकास से जनता को उच्च जीवन स्तर प्राप्त करने में सहायता मिलती है जिसमें परम्परा का कम महत्व हो[१]

१- फ्रेडिरिक हरिलसन एवं चार्ल्स ए० मेयर,एजूकेशन, मैनपावर एण्ड इकोनामिक ग्रोथ।।लन्दन।। १९६४,पृ० २।

इन सुख सुविधाओं की व्यवस्था बहुत अंशों में जनसंख्या के आकार पर निर्भर करती है। जब आर्थिक साधनों की तुलना में किसी भी क्षेत्र की जनसंख्या अधिक होती है, तब वहाँ बेरोजगारी अर्द्ध बेरोजगारी, निम्न आय, निम्न जीवन स्तर, निम्नविनियोग स्तर आदि अनेक समस्यायें मिलती है जो उस क्षेत्र के आर्थिक विकास में बाधक हो जाती है ठीक यही स्थिति उत्तर-प्रदेश की इस स समय है।

स्पष्ट है कि आर्थिकविकास, एक यंत्रीकृत प्रक्रिया ही नहीं है, अपितु एक मानवीय उद्यम भी है। इसका प्रतिफल अन्तिम रूप से मानवीय गुणों, उसकी कार्यकुशलता तथा इसके दृष्टिकोण पर निर्भर करता है।

"यदि कोई राष्ट्र मानवीय साधनों काविकास करने में असमर्थ है, तो वह दूसरे क्षेत्रों में भी अधिक विकासनहीं कर सकता, चाहे राजनैतिक और सामाजिक ढाचा हो या राष्ट्रीय एकता या आर्थिक कल्याण का उच्चतर स्तर ही क्यों न हो[1]।

मानव पूंजी और आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण सहसम्बन्ध होता है विकास, जनसंख्याकी जन्म व मृत्यु दरों में जीवन काल याआयु में, जनसंख्या की संरचना दर जनसंख्या के व्यवसायिकवितरण, घनत्व आदि सब पर प्रभाव डालता है। उसी तरह से जनसंख्याके शिक्षा, स्वास्थ के स्तर, उन्नत तकनीकी के प्रति मनोवृत्ति, परिवासर नियोजन के प्रति मनोवृत्ति, जन्म व मृत्यु दर आदि का पूंजी निर्माण, विनियोजन, तकनीकी आदि अर्थात राष्ट्रीय आय याविकास पर महत्वपूर्ण असर होता है।

यह समझना भ्रामक है कियह सह सम्बन्ध पूर्ण तथा धनात्मक होता है यह स्थिति भी है कि वि विकास की दर के अधिक होने पर भी जन्मदर में परिवर्तननहीं आता या कई ऐसे भी विकसितदेश है, जहाँ जनसंख्या वृद्धि दर, कमविकसीत देशों से कम न होते हुए भी ।। यू०एस०ए०,।। आस्ट्रेलिया, कनाडा, न्यूजीलैण्ड।[2]विकास की दर कहीं अधिक है। तात्पर्य यह है कि जनसंख्या विकास काएक घटक है और यह विकास में बाधक व सहायक दोनोंदोनों हो सकती है। लेकिन विकसित व विकासशील देशों की पृष्ठभूमि में जनसंख्या व आर्थिक विकास के सम्बन्ध में पर्याप्त अन्तर हो जाता है।

१- वही, पृ० १३।

२- विलर्ड, द पापुलेशन आब्सटकल आफ इकोनामिक डेवलप मेन्ट, चैप्टर ६, स्पेंगलर एण्ड डंकन।

विकसित देशों में आर्थिक विकास और जनसंख्या वृद्धि साथ-साथ होती है, क्योंकि इन अर्थ-व्यवस्थाओं के विकास का कारण सक्रिय जनसंख्या में वृद्धि रही है। जैसे जैसे जनसंख्या में वृद्धि हुई है, वैसे-वैसे इन देशों का राष्ट्रीय उत्पादन भी बढ़ा है। जनसंख्या वृद्धि ने इन देशोंएके ार्थिक विकास को ।।अ।। उत्पादन के विस्तार और वृद्धि के लिए आवश्यक श्रम प्रदान किया है।, ।।ब।। देश में उत्पादित वस्तुओं के मांग में वृद्धि की है और इस प्रकार बाजार के विस्तार को सहायता दी है। ।।स।। परोक्ष रूप से अर्थव्यवस्था ने पूंजी निर्माण में भी योगदान दिया है। १९ वीं शदी में पश्चिमी देशों की प्रगति जनसंख्या वद्धि से इतनी अधिक प्रभावित हुई कि माल्थस हौर रिकार्डो क जनसंख्या अनुमान झूठे सिद्धान्त हो गये। प्रो० हैसनजनसंख्या वृद्धि को आर्थिक विकास की पूर्ण आवश्यकता मानते है। प्रो० लेविस ने अपने एक माडल द्वारा यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि ऐसी अर्थव्यवस्था में जिसमें एक ओर पूंजीवादी क्षेत्र को विकसित किया जाय, तो दूसरा क्षेत्र स्वत: विकसित हो जायेगा। फलत: पूंजीवादी क्षेत्र जीवन-निर्वाह क्षेत्र सेअधिकाधिक श्रम, ऊंची मजदूरी प पर आकर्षित करेगा। अत: स्पष्ट है कि विकसित देशों में जनसंख्या वृद्धि आर्थिक विकास में सहायक है

गिल के अनुसार[१] जनसंख्या में वृद्धि आर्थिक विकास में सहायक भी हो सकती है एवं आर्थिक विकास में बाधक भी। यहइस बात पर निर्भर करता है कि जनसंख्यामें कब, कहां और कैसे वृद्धि हो रही है इसको स्पष्ट करने के लिए गिल ने आर्थिक इतिहास का सहारा लिया है। उनका कहना है कि१८ वीं और १९ वीं शताब्दी में, विश्व में बहुत बड़ा क्षेत्र मानव आवास के लिए खाली था, इस अवधि में जनसंख्या वृद्धि ने आर्थिक विकासको उत्तेजित ही किया अर्थात आर्थिक विकास में इस अवधि में होने वाली जनसंख्या ने धनात्मक कारक क रूप में सहायता प्रदान की। लेकिन आज भारत में इसके विपरित स्थिति है, जहां तेजी से हो रही जनसंख्या वृद्धि आर्थिक विकास में बाधक हो गयी है।

विश्व में आर्थिक दृष्टि से समृद्धशाली देशों में विगत दो शताब्दियों से जनसंख्या वृद्धि के साथ-साथ मृत्यु दर में कमी हुई है, जो आर्थिक विकास से घनिष्ट रूप से सम्बन्धित है। आर्थिक विकास ने जीवन - स्तर को ऊंचा उठाया है, अच्छे आहार की व्यवस्था किया है, पर्याप्त रूप में वस्त्र एवं

१- गिल रिचर्ड टी०, इकोनामिक डेवलपमेंट, पास्ट एण्ड प्रजेन्ट, १९६५, पृ० ५-७।

आवासीय सुविधा प्रदान किया है। साथ ही प्राकृतिक बिमारीयों,सुखा व अकालों से रक्षा भी की है। सामान्य रूप में यह कहा जा सकता है कि यूरोप एवं उत्तरी अमेरिका में आधुनिक काल में हुई जनसंख्या वृद्धि ने, लोगों के रहन - सहन के स्तर को उच्च किया है एवं औद्योगिकरण में सहायता प्रदान किया है साथ ही तकनीकी विकास में सहायता दी है।

दूसरी तरफ, दुनिया के विकासशील देशों में आज जनसंख्या -विस्फोट की स्थिति हो गयी है, इन देशों में आर्थिक विकास की गति तो बहुत मन्द रही ह जब जनसंख्या में काफी तीव्रगति से विकास हुआ है। ये देश पाश्चात्य देशों से उन तकनीकों का आयात तो कर लिए है, जिनसे बिमारियों इत्यादि पर नियंत्रण प्राप्त करके मृत्यु दर को नीचे लाने में सफल हुए है, लेकिन रहन-सहन के स्तरको ऊँचा उठाने में सफल नहीं हुए है जनसंख्या वृद्धि के कारण। इन देशों में सार्वजनिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में तो क्रान्ति पहले शुरू हो गयी है, औद्योगिक क्रान्ति का विकासनहीं हो पाया है।

लेकिन विकासशील देशों में, जनसंख्या और उसके दबाव की विशेषता भिन्न होती है इन देशों में जनसंख्या वृद्धि की दर, विकसित देशों की अपेक्षा कहीं अधिक होती है। जनसंख्या वृद्धि आर्थिक विकास पर विमन्य प्रभाव डालती है। जनसंख्या वृद्धि के कारण अतिरिक्त उत्पादन काअधिकांश भाग बढ़ती हुई जनसंख्या की आवश्यकताओं की पूर्ति करने में प्रयुक्त हो जाता ह। इसलिए कठिन प्रयत्न करन के बाद भी राष्ट्रीय उत्पादन में विशेष वृद्धि नहीं हो पाती। "विकासमान देशों ऐसे व बहुत से देशों में ऊँची जन्मदर, आर्थिक विकास केमार्ग में भारी अड़चन है। वस्तु स्थिति यह है कि कुछ देशों की आर्थिक वृद्धि, जनसंख्या वृद्धि केअनुपातसेनहीं हो पार ही है। उनकी अर्थव्यवस्था एक ऐसीलारीकी तरह है जो फिसलवां चढ़ाई पर चढ़ रही है। पहिए घुमते है लेकिन लारी एक ही जगह जमी खड़ी रहती है और कभी-कभी तो पीछे खिसक आती है[1]। जनसंख्या वृद्धि से विकास के निर्धारकों का अनुकूल परिवर्तन अवरुद्ध हो जाता है। यही नहीं, यदि जनसंख्यावृद्धि, प्रति व्यक्ति आय के लगभग होगी तोविकास नगण्य ही होगा। उदाहरण के लिए यदि प्रति व्यक्ति आयमें $2\frac{1}{2}$ प्रतिशत वार्षिक की वृद्धि दर हो और जनसंख्या में वृद्धि दर $2\frac{1}{4}$ प्रतिशत वार्षिक हो तो प्रति व्यक्ति आय में व वास्तविक वृद्धि $\frac{1}{4}$ प्रतिशत वार्षिक ही होगी। विकासशील देशों के पृष्ठ भूमि में, जनसंख्यावृद्धि को आर्थिक विकास केअनुरूप मानना एक बहुत बड़ी भूल होगी इनदेशों में एक ओर आर्थिक साधनों की

१- कूरियर, यूनेस्को, विश्व जनसंख्या वर्ष १९७५ - ७६, बोरिस उरलानिस : निर्णय का क्षण पृ० २६-२७।

न्यूनता है तो दूसरी ओर सामाजिक दशाए प्रतिकुल है। अतः जनसंख्या वृद्धि आर्थिक विकास में तभी सहायकसिद्ध हो सकती है, जबकि सामाजिक अभिरूचियों तथ सामाजिक मूल्यों में आर्थिक विकास के अनुरूप परिवर्तन हो।

उत्तर-प्रदेश एवं देश के आर्थिक विकास पर मानव पूंजी में वृद्धि का क्या प्रभाव पड़ता है एवं आर्थिक विकास का मानव पूंजी वृद्धि पर क्या प्रभाव पड़ता है इसका स्पष्टीकरण ही हमारे आर्थिक विकास एवं जनसंख्या उर्वरता के सम्बन्ध को सरल रूप में स्पष्ट कर देगा।

१- मानव पूंजी का आर्थिक विकास पर प्रभाव :------

किसी भी अर्थव्यवस्था में विकास की गति प्रायः

जनांकिकी चरों :-----

१- जनसंख्या का आकार

२- जनसंख्या वृद्धि दर

३- आयु संरचना, से प्रभावित होती है। जनसंख्या विकास काप्रति व्यक्ति आय पर पड़ने वाले प्रभावों के अन्तर्गत कोल व हूवर[1] ने इन्हीं कारकों को जिम्मेदार ठहराया है ये घटक उत्पादन, उपभोग, शुद्ध विनियोग आदि को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रभावित करते ही रहते है जिससे विकास की गति पर नियंत्रण रहता है। वास्तविक विनियोग की मात्रा किसी भी अर्थव्यवस्था के आधुनिकरण की प्रक्रिया को तीव्रतर गति उसी अवस्था में प्रदान कर सकते हैं जबकि जनसंख्या की विकास दर तथा इसका गुणात्मक एवं परिणात्मक दोनों ही पक्ष इसकेअनुरूप हो अर्थात प्रतिव्यक्ति राष्ट्रीय आय जिसे आर्थिक विकास का सूचकांक माना जाता है में वृद्धि से एक तो वास्तवमें राष्ट्रीय आय में वृद्धि हो सकती है, दूसरे यदि विकास यथावत रहे और जनसंख्या -प्रवास विदेशों को अधिक हो जाय, या फिर अधिक मृत्यु हो जाय तो भी ।।राष्ट्रीय आय।। प्रति व्यक्ति अधिक होगी। इसका सीधा अभिप्राय है कि ये जानांकीकी चर भी अर्थव्यवस्था में विकास को विभिन्न दिशाओं से प्रभावितकरते रहते है।

१- कोल, जे० अन्सले एवं हूवर, एम० एडगर, पापुलेशन ग्रोथ एण्ड इकोनामिक डेवलपमेंट इनलो-इन कम कन्ट्रीज "ए केसरु स्टडी आफ इण्डियाज प्रास्पैक्ट्स" १९५८, पृ० १८ प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस।

उत्तर-प्रदेश में बढ़ती हुई जनसंख्या के परिणाम स्वरूप प्रति व्यक्ति उपलब्ध भूमि की मात्रा में कमी हुई है शुद्ध कृषित भूमि एवं खाद्यान्नों में प्रति व्यक्ति कमी हुई है राज्य में प्रतिव्यक्ति भौगोलिक क्षेत्र १९६१ में ०.४० हेक्टेयरथा जो १९७१ में घटकर ०.३३ हेक्टेयर हो गया। राज्य में खाद्यान्नों का उत्पादन १९६०-६१ में १४४.८६ लाख टन था, जो १९७०-७१ में बढ़कर १९४.६५ लाख टन हो गया, अर्थात इन दस वर्षों में खाद्यानों में ३४.४ प्रतिशत की वृद्धि हुई लेकिन इसी अवधि में जनसंख्या में तीव्र वृद्धि केकारणप्रतिव्यक्ति खाद्यान्नों में आनुपातिक वृद्धि सम्भव नहीं हो सकी। यद्यपि राज्य में प्रतिव्यक्ति खाद्यानों का उत्पादन, जो १९६०-६१ में १९६ कि०ग्रा० था, १९७०-७१ में १२.२ प्रतिशत बढ़कर २२० कि०ग्रा० हो गया इसी तरह की प्रवृत्ति शुद्ध बोए गये क्षेत्रफल के विषय में भी देखने को मिलती है। ग्रामीण क्षेत्रों की जनसंख्या में प्रतिव्यक्ति शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल १९६०-१ में ०.२७ हेक्टेयर था, जो १९६९-७० में घटकर ०.२३ हेक्टेयर हो गया[१]।

उत्तर-प्रदेश में अधिक जनसंख्या होने से श्रम-शक्ति की प्रचुरता है उपभोग हेतु बड़े बाजारों की आवश्यकता है। राज्य की तेजीसे बढ़ती हुई जनसंख्या ने अधिकांश अंशों में सार्वजनिक उपभोग के क्षेत्र में किए गए प्रयासों को निष्फल कर दिया है जैसे सड़कों, चिकित्सालयों आदि के क्षेत्र में। प्रदेश में ।।उत्तराखण्ड।। को छोड़कर सड़कों की वास्तविक लम्बाई में १९६१से १९७१ के दशक में मात्र २८ प्रतिशत की वृद्धि हुई है, जबकि प्रतिलाख जनसंख्या की दृष्टि से यह वृद्धि ७ प्रतिशत से भी कम है। चिकित्सालयों व औषधालयों की संख्या ।।राज य के आर्युवेदिक एवं यूनानी दवाखानों को सम्मलित करते हुए।। १९२२ एवं २३४७ क्रमश: १९६१ एवं १९७१ के दशक में थी। जनसंख्या की दृष्टि से यह विकास नगण्य है।

इस प्रदेश मेंउर्वरता ।।प्रजननता।। की ऊंची-दर बच्चों की संख्या में तीव्र वृद्धि कर रही है, जिससे प्रदेश में निर्भरता का अनुपात बढ़ गया है। अर्थात अनुपादक एवं आश्रित जनसंख्या में अधिक वृद्धि हुई है जो प्रदेश के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण रुकावट बन गयी है। हमारे देश की भी स्थिति प्रदेश

१- ड्राफ्ट, पांचवीं पंचवर्षीय योजना, उत्तर-प्रदेश, वाल्यूम -१, नियोजन - विभाग, उ०प्र० पृ०३६

से काफी मिलती है। १९६१ में हमारे देश में अनुत्पादक उपभोक्ताओं की संख्या १९६१ के ४३९ मिलियन से बढ़कर १९७१ में ५४७.३ मिलियन हो गयी, जबकि कुल कामगरों की संख्या घट गयी ।। १९६१ के १८८.५ मिलियन से घटकर १९७१ में १८३.७ मिलियन हो गयी, ।। परिणामत: अनुत्पादक जनसंख्या १९७१ में ३६३.७ मिलियन हो गयी जो १९६१ में २५० मिलियन ही थी। उत्तर-प्रदेश में भी कुल कामगरों की संख्या में कमी हुई है, अनुत्पादक जनसंख्याउ० एवं निर्भरत का भार काफी बढ़ गया है।

आर्थिक विकास कीगति तीव्र होन होने के कारण गरीबी है सतत् मातृत्व बहुत बड़ी संख्या में महिलाओंको उत्पादक कार्यों के अयोग्य बना देती है अवेउत्पादक क्रियाओं में एक लम्बी अवधि तक भाग नहीं ले सकती परिण

उत्तर-प्रदेश में बढ़ती हुई जनसंख्या का एक अन्य महत्वपूर्ण परिणाम यह है कि यह बचत और विनियोग कीक्षमता घटा देती है आर्थिक विकास की सबसे बड़ी कसौटी पूंजी -निर्माण का पक्ष है। सारे साधनों का उपभोग, प्रदेश की बढ़ती हुई जनसंख्या की की भरण - पोषण में होता जा रहा है - परिणामत: परिवार एवं राज्य गरीबी में है। प्रतिव्यक्ति आय ।, इतनी कम है जिससें से बचत करके उत्पादकीय कार्यों में विनियोग करना कठिन ही प्रतीत होता है आय तो पूरी उपभोग में ही खर्च कर दी जाती है यह लोगों के क्रय-शक्ति को भी घटा देती है, फलत: प्रभावप्रर्ण माँग कम हो जाती है, जो अन्य रूप से उत्पादन को प्रभावित करता है। स्पष्ट है कि प्रदेश में जनाधिक्य एवं गरीबी में बहुत निकट का सम्बन्ध है।

दो दशकों ।। १९५० से १९७० ।। में प्रदेश के दोनों ही क्षेत्रों कृषि एवं उद्योग में उल्लेखनीय प्र प्रगति हुई है यह अनुमान लगाया गया है कि इस अवधि में वस्तुवों एवं सेवाओं की मात्रा में तिगुनी वृद्धि हुई, लेकिन प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि नहीं हो सकी, इसका कारण जनसंख्या में वृद्धि थी। एक तरफ तो जनसंख्या में अधिक वृद्धि तथा समाज के एक छोटे वर्ग समृद्ध वर्ग में विशिष्ट उपभोग कीप्रवृत्ति ऐसीस्थिति उत्पन्न कर चुकी है किगरीबी ज्यों की त्यों बनी हुई है। जनसंख्या वृद्धि ने आर्थिक गतिहिनता को नेतृत्व प्रदान किया है - गरीबी एवं लाखों लेकगों के निम्न रहन-सहन के स्तर के रूप में ग्रामीण एवं नगरीय दोनों ही क्षेत्रों में। यह स्थिति हमारे देश की भी है इस सन्दर्भ में

अशिश बोस का कथन है,[1] "भारत में पुनरोत्पादक पैटर्न, अपव्ययपूर्ण, अनार्थिकएवं देश की सम्पत्ति तथा स्वास्थ्य के लिए अत्यधिक प्रतिकूल है। इसके अतिरिक्त आकार, घनत्व, विकास की दर एवं जनसंख्या की आयु संरचनाये सब आर्थिक विकास में बाधक है। हमारी भूमि सीमित है, पूंजी का अभाव है एवं संगठन अकुशल है। प्रचुर प्राकृतिकएवं मानवीयसं संसाधन ही आर्थिकी विकास नहीं कर सकते, वे केवल आदिम अर्थव्यवस्था को बनाए रख सकते है और यही इस समय, भारत में हो रहा है।" इस प्रदेश में जनसंख्या वृद्धि ने चार प्रकार सेआर्थिक विकास को प्रभावित किया है :-------

१- इससे भूमि एवं प्राकृतिक साधनों पर दबाव बढ़ा है

२- इससे प्राकृतिक साधनों का ह्रास हुआ है, लेकिन उत्पादन आशाजनक रूप में नहीं बढ़ सका है।

३- इससे बचते एवं पूंजी निर्माण कम हुई है।

४- बहुत सा विनियोजन प्रदेश को यथा स्थिति में रखने में निकल जाता है प्रदेश में २ प्रतिशत विकास दर तो इसी वृद्धि के कारण आवश्यक हो जाती ह।

ए० वी० वोल्फ[2] ने ऐसे चार कारक सुझाये हैं जिनसे जनसंख्या एवं आर्थिकविकास के सम्बन्ध व प्रभावों को स्पष्ट किया जा सकता है वे कारक है :------

।।अ।। जनसंख्या व पूंजी निर्माण

।।ब।। जनसंख्या व प्रतिव्यक्ति राष्ट्रीय आय

।।स।। जनसंख्या व विनियोग तथा तकनीकी

।।द।। जनसंख्या में वृद्धि हो, स्थिर हो, अथवा घटे।

ये चार घटक ऐसे है कि इनको अगर उत्तर-प्रदेश के सन्दर्भ में देखा जाय तो समस्या मूलभूत रूप में उभर आती है।

१- अशिश बोस, द पापुलेशन पजल इन इण्डिया-इकोनामिक डेवलपमेंट एण्ड कल्चरल चेंज, वाल्यूम -७, पृ० २३५, १९५९।

२- वोल्फ, ए० वी०, द पापुलेशन प्राब्लम सिन्स द वर्ल्डवार फर्स्ट।

१- जनसंख्या व पूंजी निर्माण :——

पूंजी निर्माण है, क्या किसी भी अर्थव्यवस्था में हुए पूंजी-निर्माण को राष्ट्रीय-आय के प्रतिशत के रूप में व्यक्त किया जाता है। जिस देश में जितना अधिक पूंजी निर्माण होगा उस देश में उतना ही अधिक जनसंख्या को उच्च-स्तर दिया जा सकता है। अधिक पूंजी निर्माण से जो विकास होता है, वह स्वयं ही जन्मदर घटा देता है और जनसंख्या वृद्धि भी कम हो जाती है।

जनसंख्या का पूंजी-निर्माण पर क्या प्रभाव होगा अथवा कितनी मात्रा में पूंजी-निर्माण की आवश्यकता होगी, यह जन्म व मृत्यु - दर की अवस्थाओं पर निर्भर होगा अवस्थाऐं इस प्रकार हो सकती है।

ऊंची जन्मदर व ऊंची मृत्युदर :——

अधिकांश विकासशील देशों में जन्म व मृत्यु दरें ऊंची होती है कम आय और निम्न जीवन स्तर, पिछड़ा व कम मात्रा में स्वास्थ्य व शिक्षा-सुविधाओं के कारण आयु कम होती है। इसी स्थिति में पूंजी निर्माण कम होता है अधिक जनसंख्यासे प्रतिव्यक्ति आय व बचतें कम होती है पिछड़े पन के कारण बहुत सी बचतें "आनार्थिक रूप" में रहती है या फिजूल खर्चों में उपभोग कर ली जाती है। दूसरी ओर एक अल्प-पूंजी-निर्माण का भी प्रयोग नहीं हो पाता, बहुत से बच्चे जवान होने से पूर्व ही मर जाते है, और वे केवल उपभोगकर्ता के रूप में जीवित रहकर अर्थात बगैर उत्पादनकर्ता बने संसार से चले जाते है। यह समस्त विनियोग बेकार जाता है। ~~एऐसे~~ ऐसी अवस्था से निकलने के लिए, पूंजी - निर्माण अधिक होना चाहिए और जन्म व मृत्यु दरोंको नीचे लाना चाहिए।

ऊंची जन्म दर व कम मृत्यु दर :———

जब इन देशों ।। यू०सी० सी० एस० ।। में जन्म व मृत्यु दरों को घटाने के प्रयास किये जाते है तो पहले मृत्युदर घट जाती है। स्वास्थ्य सुविधाओं में सुधार से मृत्यु दर शीघ्र गिर जाती है, परन्तु जन्मदर के गिरने में समय लग जाता है। यह संक्रमण काल होता है। इसकाल में बहुत अधिक मात्रा में पूंजी निर्माण की जरूरत होती है।

यदि जनसंख्या उर्वरता में कोई कमी नहीं होती इसमें वृद्धि जारी रहती है ।। वृद्धि का तात्पर्य निर्भर जनसंख्या में वृद्धि से है ।। तब तक वांछित आर्थिक विकास की दर नहीं प्राप्त की जा सकती । क्योंकि पूंजी का अधिकांश भाग उपभोग पदार्थों पर ही समाप्त हो जायेगा, एवं उत्पादकता में वृद्धि हेतु पूंजी का अत्यन्त स्वल्प अंश ही विनियोजित किया जा सकेगा ।

यदि परिवार के आकार को सीमित नहीं किया गया तो भविष्य में पूंजी-निर्माण हेतु बचत करना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य हो जायेगा । कोल[1] का अध्ययन है कि "उच्च ।। प्रजननता ।। उर्वरता, निजी बचतों को दो रूपों में दबाती या नीचे गिराती है :------

१- व्यक्तिगत परिवारों द्वारा बचतों की मात्रा में कमी जब ये बचतें राष्ट्रीय समग्र का महत्वपूर्ण अंश न हों ।

२- राष्ट्रीय आय के अनुपात में वृद्धि जिससे बचत न करने वालों में वृद्धि हो, यदि उपभोग के स्तर की भूमिका कम आय वाले परिवारों की आय के निर्धारण में हो ।

उच्च उर्वरता ।। प्रजननता ।।, विनियोग के स्तर को प्रभावित करती है इसके, प्रभाव से सरकार करों में वृद्धि कर देती है जिससे मुद्रा बढ़ायी जा सकें । इससे स्पष्ट है कि जनसंख्या उर्वरता की नीची दर से ही शुद्ध विनियोग के ऊंचे स्तर को प्राप्त किया जा सकता है । उर्वरता में कमी का प्रभाव प्रभाव तुरन्त जनसंख्या की प्रथम पीढ़ी पर पड़ता है - बच्चों की निर्भरता का भार कम हो जाता है दीर्घकाल में यह आर्थिक रूप से क्रियाशील जनसंख्या में वृद्धि करती है - फलत: उत्पादन में वृद्धि होती है तथा पूंजी निर्माण में विनियोग द्वारा क्रमिक वृद्धि होता है । वर्तमान उपभोग में नहीं, अपितु भविष्य की उत्पादकता में वृद्धि होती है । प्रदेश की बेकारी व अर्द्ध बेकारी की समस्या कम उत्पादकता का ही परिणाम है। व्यापक गरीबी को दूर करने के लिए जनसंख्या उर्वरता में कमी एवं उत्पादकता बढ़ाने के लिए प्रदेश में विनियोजन का होना अपरिहार्य है ।

१- कोल एवं हूवर, वही, १९६३, पृष्ठ ५४ ।

साथ ही यह अति आवश्यक है कि राष्ट्रीय आय में वृद्धि उसी दर पर हो, जिस दर पर देश की जनसंख्या बढ़ रही है जिससे वास्तविक प्रति व्यक्ति आय को बनायें रखा जा सके। जार्ज सी० जैयदन[१] ने प्रतिव्यक्ति आय को स्थिर रखने के लिए, कुल राष्ट्रीय उत्पाद ।। जी० एन० पी० ।। के कितने अंश का विनियोग हो का अनुमान लगाया है, विकसित देशों में इस उद्देश्य के लिए कुल राष्ट्रीय उत्पाद का पांच प्रतिशत से भी कम खर्च किया जाता है — विकासशील देशों जैसे :— भारत, कोलम्बिया, मोरक्को, ब्राजील एवं ट्यूनिशिया में दस प्रतिशत से भी ऊपर भारत में जनसंख्या वृद्धि की वर्तमान दर २.५ प्रतिशत वार्षिक है, प्रति व्यक्ति वास्तविक आय को स्थिर रखने के लिए राष्ट्रीय आय में भी २.५ प्रतिशत वार्षिक वृद्धि होनी चाहिए। इसको प्राप्त करने के लिए पूंजी निर्माण आवश्यक है भारतीय अर्थव्यवस्था में द्वितीय योजनायें पूंजी-उत्पाद अनुपात ३.९ आंकी गयी थी इसका अर्थ है, उत्पादन में एक अतिरिक्त इकाई की वृद्धि के लिए पूंजी की चार इकाईयां आवश्यक है। अत: राष्ट्रीय आय में २.५ प्रतिशत वार्षिक वृद्धि के लिए दस प्रतिशत ।। २.५ ३.१ ।। पूंजी संचय आवश्यक है।

उत्तर-प्रदेश की[२] १९७०-७१ में कुल आमदनी ४२५६ करोड़ रु० थी १९८२-८३ में १९७०-७१ के स्तर भावों पर यह बढ़कर ६०८५ करोड़ रु० हो गयी इसीप्रकार प्रति व्यक्ति आमदनी जो १९७०-७१ में ४८६ रु० थी। १९८२-८३ में ५२९ रु० आंकी गयी। प्रदेश की कुल आमदनी में हुई वृद्धि के अनुरूप ही प्रति व्यक्ति आमदनी में वृद्धि क्यों न हुई इसका कारण यह है कि पिछले वर्षों में यहां की जनसंख्या लगातार तेजी से बढ़ी है। उत्पादन बढ़ाने में जो सफलता मिली है उसका समुचित लाभ तभी मिलेगा जब जनसंख्या कीवृद्धि पर नियंत्रण किया जा सके।

कहना अप्रासांगिक नहीं होगा कि हमारे देश की स्थिति भी प्रदेश की ही तरह है। यहां मनुष्य की सबसे बड़ी समस्या मनुष्य है। एस०एन० अग्रवाल[३] ने मत व्यक्त किया है कि भारत कीवर्तमान

१- जार्ज सी० जैयदन ।। लन्दन स्कूल आफ इकोनामिक्स ।। : पापुलेशन एण्ड इकोनामिक ग्रोथ, फिनान्स एण्ड डेवलपमेन्ट, मार्च १९६९।

२- सांख्यिकीय डायरी, उ० प्र०, १९८३।

३- एस० एन० अग्रवाल, मेक स्टरलाइजेशन कम्पसरी-नाउ, द इलस्ट्रेड वीकली आफ इण्डिया, फरवरी २२-२८, १९७६, पृ० ६।

जनसंख्या अगले तीस वर्षों में दुगुनी हो जायेगी । इसका प्रभावअर्थव्यवस्था पर क्या होगा, इन्हीं के शब्दों में "एक अनुमान के अनुसार, भारत में १५-२० मिलियन लोग बेकार है। और करीब ६५ मिलियन विद्यालय जाने योग्य बच्चे विद्यालय नहीं जाते । प्रति व्यक्ति "अहार के उपभोग" में भी वृद्धि नहीं हुई है एवं करीब एक मिलियनआवासों की भी कमी है । यह अनुमान लगाया गया है कि १३ मिलियन लोग प्रतिवर्ष हमारी जनसंख्या में जुड़ जाते है । १२७०० अधिकविद्यालयों, ३७३००० अधिक अध्यापकों, २५०६००० अधिक आवासों ४०००००० अधिक सेवाओं, १९ करोड़ मीटर अधिक कपड़ा एवं १२५ लाख क्विन्टल अधिक ।। भोजन ।। अनाज की आवश्यकता होगी ।"

फलतः आवश्यकता यह है कि एक तरफ तो हमारे उत्पादन क्षमता में वृद्धि हो, जिससेअधिक जनसंख्या का जीवन यापन हो सके, जो पूंजी-निर्माण द्वारा ही सम्भव ह एवं दूसरीतरफप्रजननता की दर को कम किया जाय, जिससे अतिरिक्त जनसंख्या काफैलाव रूक सके वं जनसंख्या वृद्धि को निम्न स्तर पर स्थिर किया जा सके ।

२- जनसंख्या तथा प्रति व्यक्ति आय व आर्थिक स्थिति :-----

जनसंख्या में परिवर्तन से प्रति व्यक्ति आय व आर्थिक विकास पर क्या प्रभाव पड़ता है इस पर निश्चितता से कुछ नहीं कहा जा सकता । इसमें सह सम्बन्ध जटील है । वास्तव में जनसंख्या परिवर्तन से दूसरे घटकों में प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष परिवर्तन होते ह और इससे भी पुनः जनसंख्या प्रभावित होती ह यदि जनसंख्या का अनुपात अन्य उत्पादकीय अंगों के मुकाबले में बढ़ता ह आर यदि अन्य बाते समान रहें तो प्रति व्यक्ति औसतउ उत्पादन व आय घट जायेगी । इसका मूल कारण यह है कि श्रम, भूमि, पूंजी, तथा संगठन कापूर्ण प्रतिस्थापक नहीं है विकासशील देशों में पूंजी की मात्रा उतनी ही रहने के कारण जनसंख्याबढ़ने से हर व्यक्ति के पास पहले से कम पूंजी रह जाती ह जनसंख्या बढ़ने पर प्रतिव्यक्ति उत्पादन पर प्रभाव उस समय अधिकहोता ह जबकि मुख्य तयाभूमि या बढ़ाये न जा सकने वाले प्राकृतिक साधनों पर निर्भर रहता ह । जहां भूमि व प्राकृतिक साधनों का योगदान कमरहता ह वहां जनसंख्या - वृद्धि का उत्पादन पर कम प्रभाव पड़ता है

उत्तर-प्रदेश में जनसंख्यावृद्धि का प्रतिव्यक्ति आय पर प्रतिकुल प्रभाव पड़ रहा है । यह तीन तरह से प्रतिव्यक्ति आय पर प्रभाव डाल रही है :------

१- भूमि पर जनसंख्या का दबाव बढ़ रहा है।

२- उपभोग वस्तुवों की लागतें बढ़ रही है, क्योंकि उनकी पूर्ति बढ़ाने के लिए सहयोगी साधनों की दुर्लभता है।

३- यह पूंजी संचय में कमी कर रही है क्योंकि परिवार मे सदस्यों के बढ़ जाने से खर्च में वृद्धि होती जा रही है।

संयुक्त राष्ट्र संघ का अनुमान है कि किसी देश में जनसंख्या कीवार्षिक वृद्धि दर एक प्रतिशत होने पर वहां वर्तमान प्रतिव्यक्ति आय बनाए रखने के लिए उस देश में दो से पांच प्रतिशत बचते आय आवश्यक है। उत्तर-प्रदेश में जनसंख्या वृद्धि दर २ प्रतिशत है, इसलिए वर्तमान आर्थिक स्तर बनाये रखने के लिए चार से १२ प्रतिशत बचतों की आवश्यकता होगी इस प्रदेश के आर्थिक विकास के स्पष्टीकरण के लिए आवश्यक हो जाता है कि यहां की आर्थिक स्थिति को देखा जाय। हम यह जानतें है कि आर्थिक विकास का सर्वोत्तम सूचकांक घरेलू उत्पाद है। विका की दर का वास्तविक मापक अधार वर्ष पर आधारित राज्य के घरेलू उत्पाद के वार्षिक उतार-चढ़ाव से देखा जा सकता है। इस अधार पर वार्षिक वृद्धि दर लगभग १५ प्रतिशत है।

संयुक्त राष्ट्र संघ के एक अनुमान के अनुसार अगर देश की प्रति व्यक्ति आय 300 डालर से कम है तो वह गरीब है और यदि प्रति व्यक्तिआय १०० डालर से कम है तो वह अत्यधिक गरीब है इस दृष्टि से हमारे देश में प्रतिव्यक्ति आय करीब ६० डालर एवं उत्तर-प्रदेश की प्रति व्यक्ति आय ५० डालर आंकी है। कहना नहीं होगा कि यह प्रदेश आर्थिक विकास के क्षेत्र में कितना पीछे है। भारत एवं उत्तर-प्रदेश में समग्र विकास की दर एवं प्रतिव्यक्ति आय ।। १९५०-५१ से १९८०-८१ ।। को आगे की तालिका में देखा जा सकता है[1]:------

---

१- उ0प्र0 की आर्थिक समीक्षा - १९८१-८२, पृ0 ७।

भारत एवं उत्तर-प्रदेश में विकास की दरें

तालिका न० : १

समयावधि	सम्पूर्ण/राष्ट्रीय आय/ राज्य आय		प्रतिव्यक्ति आय/राष्ट्रीय आय/ राज्य आय	
	भारत+उत्तर-प्रदेश		भारत+उत्तर-प्रदेश	
प्रथम योजना	३.४	१.९	१.६	०.५
द्वितीय योजना	४.०	१.८	१.८	०.२
तृतीय योजना	२.२	१.६	०.०	(—)०.२
तीन वार्षिक योजनाऐं	४.०	०.८	१.८	(—)१.५
चतुर्थ योजना	३.३	२.३	१.१	०.४
पांचवी योजना	३.३	५.८	२.८	३.९
१९७८-७९ से	५.२	१.४	(—) १.३	(—)०.४
१९८०-८१	१.०			

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि चतुर्थ समय योजना काल तक प्रदेश की आर्थिक विकास दर सम्पूर्ण भारत की विकास दर से कम रहा और प्रथम तीन योजनाओं में तो स्थिति बहुत ही खराब थी। यद्यपि चौथी योजनावधि भी प्रदेश की विकास दर भारतीय विकास दर की अनुगामी रही किन्तु फिर भी प्रदेश की आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ और पांचवी योजनावधि में कुल राज्य आय में ५.८ प्रतिशत की दर से तथा प्रतिव्यक्ति राज्य आय में ३.९ प्रतिशत की दर से वृद्धि हुई। भारतीय स्तर पर हुई क्रमशः ५.२ प्रतिशत तथा २.८ प्रतिशत की वृद्धि से अधिक रही। वर्ष १९७९-८० में पड़े सूखे के कारण ध्वस्त प्रदेशीय अर्थव्यवस्था में यद्यपि वर्ष १९८०-८१ में पर्याप्त सुधार हुआ और १९७८-७९ से १९८०-८१ की अवधि में कुल राज्य आय में १.४ प्रतिशत की वृद्धि दर सम्भव हुई जबकि राष्ट्र स्तर पर केवल १.० रही।

राष्ट्रीय प्रतिदर्शी सर्वेक्षण के आंकड़ों के आधार पर हमारे देश में कुल जनसंख्या के ६३.१ प्रतिशत की मासिक आय २१ रु० से भी कम है, साथ ही सरकार इसके लिए प्रतिबद्ध थी कि १९७६ तक

प्रत्येक परिवार को कम से कम 20 रु० ।।प्रतिमास ।। मासिक आय प्राप्त हो । [1]उपलब्ध अनुमानों के अधार पर, करीब २२ करोड़ व्यक्ति इस स्तर के नीचें है – जिसे गरीब रेखा कहते है । राष्ट्रीय प्रतिदर्शी सर्वेक्षण के आंकड़ों के अनुसार भारत की ६३ प्रतिशत जनसंख्या न्यूनतम आय स्तर के नीचे है । उत्तर-प्रदेश में यह प्रतिशत और ऊंचा है। अत: आवश्यक है कि रोजगार के नए अवसर अधिक मात्रा में उपलब्ध हो, जिससे इस प्रदेश में प्रतिव्यक्ति आय में वद्धि की जा सके । यही कारण है कि भारत सरकार ने जनसंख्या -उर्वरता की दर में स्थिरता प्रदान करने कालक्ष्य स्वीकार किया है । जन्मदर को वर्तमान ४० से २५ प्रति हजार तक जितनी शीघ्रता से सम्भव हो सके, नीचे लाना अभिष्ट है ।

इस प्रदेश में, कुल जनसंख्या में बच्चों की प्रतिशतता अधिकहै, इससे प्रति व्यक्ति आय पर जन-संख्या वृद्धि के प्रतिकुल प्रभाव और भी कठोर हो रहे है । प्रदेश में कुल उत्पादन में होने वालीप्रत्येक वृद्धि के साथ-उपभोक्ताओं की संख्या भी बढ़ती जा रही है । जो वास्तव में अनुत्पादक है । एक प्रमुख कारणयह भी है कि उत्तर-प्रदेश में जीवन प्रत्याशा भी कम है । जिसका सीधा अर्थ है, पालन-पोषण के लिए बच्चों की संख्या अधिक है और कमाने वालों व्यस्कों की संख्या कम जिसके परिणाम स्वरूप प्रतिव्यक्ति आय घट जाती है । प्रदेश के उत्पादन में जो भीवृद्धि होती है, उसे जनसंख्या में हुई वृद्धि शुन्य कर देती है । इस प्रकार प्रतिव्यक्ति आय घट जाती है ।

यह प्रदेश कृषि प्रधान है, इसमें विनियोग होने पर भी उत्पादन में उत्पत्ति ह्रास नियम की क्रियाशीलता के कारण, साथ ही साथ जनसंख्या वृद्धि के भी प्रभाव स्वरूप प्रदेश की प्रतिव्यक्ति आय वांछित स्तर तक नहीं उठ पारही है , जो प्रदेश के आर्थिक विकास का अधार-स्तम्भ है ।

१- एस० एन० अग्रवाल, जनसंख्या, १९७७ संस्करण, पृ० ९७-१०१ ।

३- जनसंख्या तथा रहन-सहन का स्तर :--------

उत्तर-प्रदेश में बढ़ती हुई जनसंख्या व्यक्ति के रहन -सहन के स्तर को ऊंचा उठाने के प्रयासों को निष्फल बना देती है। किसी भी देश में व्यक्ति के रहन-सहन का स्तर कई कारकों से प्रभावित होता है, लेकिन सर्वाधिक प्रमुख कारण प्रदेशके प्राकृतिक संसाधनों एवं औद्योगिक विकास की तुलना में जनसंख्या में अधिक वृद्धि का होना है। अधिकांश विकासशील देशों में जिनमें जनसंख्या का आकार बहुत बड़ा है एवं जनसंख्या विकास की दर भी ऊंची है, में व्यक्ति के रहन -सहन कास्तर नीचे है। रहन-सहन का स्तर एक मिश्रित अवधारणा है इसके अन्तर्गत किसी भी समाज में व्यक्ति की आवश्यकताओंवश्यकताओं ।। यथा अहार, शक्ति, आवास आदि ।। की सन्तुष्टि की योग्यता से है।

हर्टले ने रहन-सहन के स्तर के स्पष्टी करण के लिए एक समीकरण दिया है[1] :-------

$$S = \frac{RQ\,(TASt) + ES + Tr \pm FW}{P}$$

उपरोक्त समीकरण में :----

S= रहनसहन का स्तर

P= व्यक्तियों की संख्या

R= संसाधनों की मात्रा

Q= संसाधनों के प्राकृतिक गुण का कारक

T= भौतिक तकनीकी कारक

A= प्रशासनिक तकनीकी कारक

St= संसाधन स्थिरता कारक

ES= आर्थिक तत्वों की स्केल ।। देश की सीमा, इत्यादि ।।

Tr = व्यपार के लिए अतिरिक्त संसाधन

W = अपव्यय या प्रयोग की तीव्रता

F = संस्थागत लाभ एवं प्रतिरोध। से ही

१- शैली फास्टर हर्टले, "पापुलेशन, क्वान्टिटी वर्सेस क्वालिटी," न्यु जर्सी, १९७२, पृ० २१३-१४।

परम्परागत एवं आधुनिक संस्कृतियों में भी व्यक्ति रहन-सहन के स्तर को अधिकतम सुविधाओं से जोड़ देते है। परम्परागत संस्कृतियों जैसे कि भारत एवं उत्तर-प्रदेश में भी कार्य एक दण्ड के रूप में लिया जाता है क्षमता या सामर्थ्य के रूप में नहीं। नियम यह था कि "उतना ही काम करो, जो जिवित रहने के लिए आवश्यक हो।" व्यक्ति कम से कम काम करता था, साथ ही वस्तुओं का उपभोग भी कम करता था। यह प्रवृत्ति आज भी उ० प्र० के अधिकांश लोगों में देखने को मिलती है। यद्यपि आधुनिक समाजों में भी जीवन स्तर को अधिकतम सुविधाओं से सम्बन्धित कर दिया गया है लेकिन परम्परागत संस्कृतियों के विरोध में आधुनिक समाज में सुविधाओं का तात्पर्य अधिकतम वस्तुओं के उपभोग से है। एक आधुनिक व्यक्ति के लिए सुविधा का अर्थ वस्तुओं के तकनीकीक्रम से है, आरामदायक कुर्सियां वातानुकुलित, रेफ्रीजेरेटर, टी०वी०, मोटर-कार टेलीफोन आदि।

रहन-सहन के स्तर को आहार, आवास, मनोरंजन, धार्मिक एवं अन्य क्रियाओं पर किये गए बजट के व्ययों द्वारा समझा जाता है। यदि पारिवारिक बजट में भोजन पर सर्वाधिक खर्च किया जा रहा है, जैसा कि औसत भारतीय परिवारों व इस प्रदे- के औसत परिवारों में है, तो बहुत कम धन व्यक्ति की इन आवश्यकताओं एवं सामाजिकतया मनोरंजक क्रियाओं के लिए बच पाता है जो निम्न जीवन-स्तर का संकेत देता है।

यद्यपि, ऐसे भी कुछ अमौद्रिक कारक है, जिनका अंशदान रहन-सहन के स्तर के निर्धारण में होता है - ऐसे कारक अनेक है, जिनका परिवार के जीवन स्तर में अंशदान होता है जो भौतिक मापकों में तो कोई वृद्धि नहीं करते, विश्वसनीय परम्पराओं, आध्यात्मिक गुणों आदि द्वारा उनमें विश्वास व सुरक्षा का भाव पैदा हो जाता है[1]।

यद्यपि कुछ ऐसे आधार भूत भौतिक आधार है, जिनसे विभिन्न देशों के व्यक्तियों के रहन-सहन के स्तर की तुलना की जा सकती है। इनको दो वर्गों में रखा जा सकता है :-------

---

१- जान एच० कोल्व एण्ड एडमन्ड डे्स वनेर, ए स्टडी आफ रूरल सोसायटी, न्यूयार्क १९५२-पृ० २८१।

३- जनसंख्या तथा रहन-सहन का स्तर :--------

उत्तर-प्रदेश में बढ़ती हुई जनसंख्या व्यक्ति के रहन -सहन के स्तर को ऊँचा उठाने के प्रयासों को निष्फल बना देती है। किसी भी देश में व्यक्ति के रहन-सहन का स्तर कई कारकों से प्रभावित होता है, लेकिन सर्वाधिक प्रमुख कारण प्रदेशके प्राकृतिक संसाधनों एवं औद्योगिक विकास की तुलना में जनसंख्या में अधिक वृद्धि का होना है। अधिकांश विकासशील देशों में जिनमें जनसंख्या का आकार बहुत बड़ा है एवं जनसंख्या विकास का दर भी ऊँची है, में व्यक्ति के रहन -सहन कास्तर नीचे है। रहन-सहन का स्तर एक मिश्रित अवधारणा है इसके अन्तर्गत किसी भी समाज में व्यक्ति की आवश्यकताओंवश्यकताओं ।। यथा अहार, शक्ति, आवास आदि ।। की सन्तुष्टि की योग्यता से है।

हर्टले ने रहन-सहन के स्तर के स्पष्टी करण के लिए एक समीकरण दिया है[1] :------

$$S = \frac{RQ\,(TASt) + ES + Tr \pm FW}{P}$$

उपरोक्त समीकरण में :----

S= रहनसहन का स्तर

P= व्यक्तियों की संख्या

R= संसाधनों की मात्रा

Q= संसाधनों के प्राकृतिक गुण का कारक

T= भौतिक तकनीकी कारक

A= प्रशासनिक तकनीकी कारक

St= संसाधन स्थिरता कारक

ES= आर्थिक तत्वों की स्केल ।। देश की सीमा, इत्यादि ।।

Tr = व्यपार के लिए अतिरिक्त संसाधन

W= अपव्यय या प्रयोग की तीव्रता

F= संस्थागत लाभ एवं प्रतिरोध। से है।

१- शैं फास्टर हर्टले, "पापुलेशन, क्वान्टिटी क्सेस क्वालिटी," न्यु जर्सी, १९७२, पृ० २१३-१४ ।

परम्परागत एवं आधुनिक संस्कृतियों में भी व्यक्ति रहन-सहन के स्तर को अधिकतम सुविधाओं से जोड़ देते है। परम्परागत संस्कृतियों जैसे कि भारत एवं उत्तर-प्रदेश में भी कार्य एक दण्ड के रूप में लिया जाता है क्षमता या सामर्थ्य के रूप में नहीं। नियम यह था कि "उतना ही काम करो, जो जिवित रहने के लिए आवश्यक हो।" व्यक्ति कम से कम काम करता था, साथ हीवस्तुओं का उपभोग भी कम करता था। यह प्रवृत्ति आज भी उ० प्र० के अधिकांश लोगों में देखने को मिलती है। यद्यपि आधुनिक समाजों में भी जीवन स्तर को अधिकतम सुविधाओं से सम्बन्धित कर दिया गया है लेकिन परम्परागतसं संस्कृतियों के विरोध में आधुनिक समाज में सुविधाओं का तात्पर्य अधिकतम वस्तुओं के उपभोग से है। एक आधुनिक व्यक्ति के लिए सुविधा का अर्थ वस्तुओं के तकनीकीक्रम से है, आरामदायक कुर्सियां वातानुकुलित, रिफ्रीजेरेटर, टी०वी०, मोटर-कार टेलीफोन आदि।

रहन-सहन के स्तर को आहार, आवास, मनोरंजन, धार्मिक एवं अन्य क्रियाओं पर किये गए बजट के व्ययों द्वारा समझा जाता है। यदि पारिवारिक बजट में भोजन पर सर्वाधिक खर्च किया जा रहा है, जैसा कि औसत भारतीय परिवारों व इस प्रदे० के औसत परिवारों में है, तो बहुत कम धन व्यक्ति कीइन आवश्यकताओं एवं सामाजिकतया मनोरंजक क्रियाओं के लिए बच पाता है जो निम्न जीवन-स्तर कासंकेत देता है।

यद्यपि, ऐसे भी कुछ अमौद्रिक कारक है, जिनका अंशदान रहन-सहन के स्तर के निर्धारण में होता है - ऐसे कारक अनेक है, जिनका परिवार केजीवन स्तर में अंशदान होता है जो भौतिक मापकों में तो कोई वृद्धि नहीं करते, विश्वसनीय परम्पराओं, आध्यात्मिक गुणों आदि द्वारा उनमें विश्वास व सुरक्षा का भाव पैदा हो जाता है[1]।

यद्यपि कुछ ऐसे आधार भूत भौतिक अधार है, जिनसे विभिन्न देशों के व्यक्तियों के रहन-सहन के स्तर कीतुलना की जा सकती है। इनको दो वर्गों में रखा जा सकता है :------

---

१- जान एच० कोल्व एण्ड एडमन्ड ब्रेस वनर, ए स्टडी आफ रूरल सोसायटी, न्यूयार्क १९५२-पृ० २८१।

१- मनुष्य की भौतिक आवश्यकताओं के गुणात्मक व संख्यात्मक आधारों पर यथा भोजन, ताजी हवा, ताजा पानी, आवास, वस्त्र आदि ।

२- मनुष्य की सामाजिक एवं सांस्कृतिक आवश्यकताओं की गुणात्मक एवं संख्यात्मक पक्ष यथा शैक्षिक स्तर, रोजगार के अवसर चिकित्सा एवं स्वास्थ्य कीसुविधाएं , कार्य की दशाएं सुरक्षा, यतायात, व्यक्ति की स्वतन्त्रता, मनोरंजन, रचनात्मक विकास के अवसर आदि ।

उत्तर-प्रदेश में, रहन-सहन के महत्वपूर्ण निश्चायकों में से प्रतिव्यक्ति आय एक है इसलिए जन-संख्या वृद्धि के संदर्भ में प्रतिव्यक्ति आय को प्रभावित करने वाले साधन रहन-सहन के स्तर पर भी समान रूप से लागू होते है । तेजीसे बढ़ती हुई जनसंख्या खाद्य-सामग्री, कपड़ों, मकानों, इत्यादि के लिए मांग बढ़ा देती है । परन्तु सहयोगीसाधनों जैसे कि कच्चे माल, कुशलश्रम और पूंजीइत्यादि के ~~अभाव के~~ अभाव के कारण, अल्पकाल में उनकी पूर्ति नहीं बढ़ायी जा सकती । परिणामत: उनकी लागतें तथा कीमतें बढ़ जाती है, जो सर्वसधारण के जीवन कीलागत बढ़ा देती है । इससे रहन-सहन का स्तर, जो पहले से ही नीचा होता है और भी गिर जाती है । दरिद्रता से बच्चों की बड़ी संख्या उपजती है, जो दरिद्रता को और भी बढ़ा देतीहै, और दरिद्रता का दुश्चक्र अधिक बच्चे, नीचा रहन-सहन का स्तर चलता रहता है ।

लेकिन प्रो० हर्शमैन[1] का कहना है कि "जीवन स्तरों पर जनसंख्या द्वारा दबाव से प्रति-दबाव उत्पन्न होगा, अर्थात ऐसी सक्रियता उत्पन्न होगी जो समाज के परम्परागत रहन-सहन स्तर को फिर से लाने या उसे बनाए रखने का प्रयास करेगी," जो " उसकी योग्यता बढ़ाएगी जिससे वह अपने वातावरण पर नियंत्रण कर सके और अपने आपको विकास के लिए संगठित करे ।" कोलिन क्लार्क[2] के विचार भीइनसे मिलते है इनके अनुसार जनसंख्या वृद्धि " उन समुदायों के लिए आर्थिक कठिनाइयां लाती है जो परम्परागत विधियों में बंधा जीवन व्यतीत करते है, परन्तु यही एक शक्ति है, जिसमें इतनी सामर्थ है कि इस प्रकार के समुदायों से उनके तरीके बदलवा सकती है और दीर्घकाल में उन्हें बहुत अधिक उन्नत तथा उत्पादनकारी समाजों में परिवर्तित कर देती है ।"

१- ए० ओ० हर्शमैन, द स्ट्रेटेजी आफ इकोनामिक डेवलपमेंट ।

२- कोलिन क्लार्क, पापुलेशन ग्रोथ एण्ड लैण्ड यूज ।

लेकिन कोलिन क्लार्क व हर्षमैन का यह विचार उत्तर-प्रदेश के सन्दर्भ में तर्क संगत नहीं है यहां तो जनसंख्या वृद्धि के परिणाम स्वरूप रहन-सहन का स्तर घट रहा है।

इस प्रदेश कीसबसे बड़ी समस्या कुपोषण की है जो निम्न जीवन स्तर की ओर संकेत करती है। उचित अहार के अभाव में हीइस प्रदेश में शिशु-मृत्यु दरें ऊंची है और इसका प्रभाव कम आय -वर्गों मे तो और भी अधिक है। उत्तर-प्रदेश में पौष्टिक आहार व जनसंख्या-उर्वरता ।। प्रजननता ।। में भी धनिष्ट सम्बन्ध है। पोषक तत्वों के अभाव में बचपन से ही ही बालकों का मानसिकव शारिरीक स्तर गिर जाता है, जो उत्पादकीय कार्यों में पौढ़ावस्था में अपनीपूरी क्षमता का उपयोग नहीं कर पाते।

इस प्रदेश में महिलाओं के मातृत्व काल में सन्तुलित अहार की कमी और उस पर शिशुओं द्वारा स्तनपान, मां व शिशु दोनों के ही शारिरीक स्वास्थ्य व विकास में बाधा पहुंचाता है। इससे प पुनरोत्पादक काल में तो और भी गम्भीर परिणाम मिलते है। इसका प्रभाव प्रदेश कीउत्पादकता पर पड़ता है जो अन्तत: जीवन-स्तर को प्रभावित करती है। उत्तर-प्रदेश में जीवन - स्तर के उच्च होने की प्रवृत्ति तो है लेकिन विकास के दृष्टिकोण से नगण्य ही है। यदि हम उत्तर-प्रदेश में उपभोक्ता आय को देखें तो स्थिति अधिक स्पष्ट हो जाएगी। जिस तरह प्रदेश में कीमतों में वृद्धि होती रही है उसी तरह उपभोक्ताओं के आय में भी। यदि कृषि -वर्ष १९५७-५८ में मूल्यों का सूचकांक १०० माना जाय तो किसानों द्वारा दीगयी कीमतों का सूचकांक १९६७-६८ में २३९.४ एवं १९६८-६९ में २०९ था तथा उसे मिले मूल्यों के उक्त वर्षों में क्रमानुसार सूचकांक २८६.२ और २२०.९ थे। स्पष्ट है कि उसकी आय में वृद्धि हुयी जिसके फलस्वरूप उसके जीवन -स्तर में सुधार हुआ है। अब वह मोटे अनाज के स्थान पर गेहूं और चावल तथा गुड़ के स्थान पर चीनी आदि खाने लगा है। कितने ही किसानों ने ईटों के पक्के मकान बनवा लिये है।

कारखानों में काम करने वाले श्रमिकों की औसत दैनिकआय में भी वृद्धि हुई है। चारसौ रुपये प्रतिमास तक पाने वाले श्रमिकों की १९६० में औसत दैनिक आय ३.२७ रु० थी जो १९६७ में बढ़कर ५.१८ रु० हो गयी। वेतन भोगी वर्ग की आय भी बढ़ी है इस बात का मोटा अनुमान प्रशासन के क्षेत्र में प्रति कर्मचारीपीछे राजस्व खाते से किये गए व्यय के प्रति राज्य कर्मचारीपर ३.३०४ रु० व्यय आता था जो १९६९-७० में बढ़कर हो गया।[1]

१- उत्तर-प्रदेश, १९७१, पृ० ७० ।

राष्ट्रीय प्रतीक सर्वेक्षण द्वारा अक्टूबर १९५० और मार्च १९५१ के बीच पहली बार उपभोक्तओं द्वारा किये गए व्यय का सर्वेक्षण किया गया। इससे स्पष्ट हुआ कि प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्र में प्रतिव्यक्ति पीछे १९४९-५० में वार्षिक व्यय लगभग २०५ रु० था १९६८-६९ में किये गये, प्रतिक सर्वेक्षण के फल-स्वरूप जो तत्व सामने आये उनसे पता चला कि ग्रामीण क्षेत्र में एक आदमी ने एक मास में औसतन ३२ रु० खर्च किया जबकि १९४९-५० में उसका मासिक व्यय लगभग १७.०८ था। राज्य सरकार द्वारा किये गये प्रतिक सर्वेक्षणों पर आधारित अनुमानों के अनुसार वर्ष १९७०-७१ में राज्य के ग्रामीण क्षेत्र में प्रति-व्यक्ति प्रतिमास औसत व्यय ३५.०० रु० के लगभग थी उसी वर्ष नगरीय क्षेत्र में उपभोक्ता व्यय लगभग ४४.०० रु० थे स्पष्ट है कि यह ग्रामीण क्षेत्र की तुलना में अधिक था। ग्रामीण तथा नगरीय क्षेत्रों में उपभोक्ता व्यय में अन्तर उत्तरोत्तर कम होता जारहा है। यह धारण इस तत्व पर आधारित है किवर्ष १९५६-५७ में राज्य के ग्रामीण क्षेत्र में प्रतिव्यक्ति उपभोक्ता व्यय नगरीय क्षेत्र के उपभोक्त व्यय का केवल ६० प्रतिशत-तथाजो वर्ष १९६४-६५ में बढ़कर ८८ प्रतिशत हो गया तथा वर्ष १९६४-७१ की अवधि में इस प्रतिशत में ८० और ८८ के बीच उतार-चढ़ाव होता रहा।

प्रदेश में आज के साधनों की स्थिति तथा समस्त तकनीकी सम्बन्धी उन्नति को ध्यान में रखकर यह कहा जा सकता है कि गरीबी को दूर करने वप्रतिव्यक्ति जीवनस्तर को बढ़ाने के लिए जनसंख्या वृद्धि को शीघ्रता से रोकना होगा। उन्नति व विकास की किसी भी योजना में जिसमें इस बात को ध्यान में नहीं रखा जाएगा, वह असफल हो जाएगी।

४- जनसंख्या एवं खाद्य-पूर्ति :-------

माल्थस द्वारा प्रतिपादित जनसंख्या के सिद्धान्त के समय से ही जनसंख्याएवं खाद्यानों की पूर्ति के सम्बन्ध में विचारकों द्वारा विचार-विमर्श होते रहे है। इसमें सन्देह नहीं कि हमारे देशोमें प्रतिव्यक्ति कृषि भूमि कम होती जा रही है। १९२१ से १९७१ तक की अवधि में प्रति-व्यक्ति कृषित भूमि १.११ एकड़ से घटकर ०.६२ एकड़ रह गयी अर्थात इस अवधि में प्रति व्यक्ति कृषि कृषित भूमि में ४४ प्रतिशत की कमी हो गयी। यही स्थिति उत्तर-प्रदेश की भी है। जनसंख्यावृद्धि होने पर भूमि - व्यक्ति अनुपात बिगड़ जाता है। भूमि पर जनसंख्या का दबाव इसलिए बढ़ता है कि भूमि की पूर्ति लोचरहित होती है। इससे छिपी बेरोजगारी बढ़ जाती है और प्रतिव्यक्ति आय और भी घट जाती है। कम प्रति व्यक्ति आय, बचत तथा विनियोजन की प्रवृत्ति को घटा देती है।

परिणामत: भूमि पर परिष्कृत तकनीकों तथा अन्य सुधारों का प्रयोग नहीं हो सकता है। कृषि में पूंजी-निर्माण को धक्का पहुंचता है और अर्थव्यवस्था निर्वाह-स्तरीय दलदल में धंस जाती है। अति-रिक्त जनसंख्या को भोजन का प्रबन्ध करना गम्भीर समस्या बन जाती है क्योंकि खाद्य-पदार्थों की बहुत कमी होती है। इनका आयात करना पड़ता है, जिससे भुगतान शेष की कठिनाइयां बढ़ जाती है। इस प्रकार जनसंख्या की वृद्धि कृषि विकास की गति को धीमा कर देती है तथा दूसरी अनेक समस्या उत्पन्न करती है।

फूड एण्ड एग्रीकल चर आर्गनाइजेशन[1] के अनुसार, "इस समय दुनिया में १000,000,000 लोग भूखें मर रहे है या गम्भीर रूप से अर्द्ध पोषित है। किन्तु इन बहुत से देशों में कृषि -उत्पादन में वृद्धि के लिए भौतिक साधनों और उचित सामाजिक व्यवस्था की आवश्यकता है। जिनका इनके पास अभाव है ऐसी स्थिति में इनकी जनसंख्या की समस्या और अधिक विकट हो गयी है।"

अगर हमारे देश में जनसंख्या उर्वरता की प्रवृत्ति पर अंकुश नहीं लगाया गया तो १९९0 तक १00 करोड़ एवं उ0प्र0 की जनसंख्या १३ करोड़ हो जायगी। जबकि जनसंख्या में वृद्धि का एक बड़ा भाग ग्रामीण क्षेत्रों में रहता है जो यह आभास मिलता है कि कुल खाद्यानों के उत्पादन में पारिवारिक उपभोग का अंश बढ़ जायेगा और भार के टेबुल अतिरेक के लिए बहुत ही अल्प भाग उपलब्ध हो सकेगा उ0प्र0 में जनसंख्या की वर्तमान वृद्धि दर से आहार के बढ़ती मांग के परिणाम स्वरूप यह सम्भावना बढ़ती जा रही है, कि बढ़ी हुई जनसंख्या को सन्तुलित आहार, प्रोटीन आदि के आभाव से भूख एवं व्याधियों का सामना करना पड़ेगा।

ह्रासमान प्रतिफल का नियम जनसंख्या वृद्धि की समस्या का केन्द्रीय तत्व है। यह नियम बताता है कि दुनिया के किसी भी क्षेत्र में, भूमि पर काम करने वालों की संख्या में कोई भी वृद्धि का परिणाम होगा, आहार की मात्रा में आनुपातिक कम वृद्धि[2]

१- कूरियर, यूनेस्को, अगस्त-सितम्बर, १९७४, विश्व जनसंख्या का निर्णय का क्षण -बोरिस उरलानिस, पृ0 २८।

२- एलमर पान्डेल, सम प्रिन्सिपुल्स आफ पापुलेशन इकानामिक्स, पापुलेशन रिव्यू १,२ ।। जनवरी १९७५ ।।, पृ0 ३३।

रासायनिक खादों के उपयोग, मशीनीकरण और भूमि-सुधार के तरीकों से कृषि उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है। लेकिन यह कहना भी गलत होगा कि उ०प्र० में कोई खाद्य-समस्या ही नहीं। उ०प्र० में जनसंख्या वृद्धि खाद्यान्नों की उपलब्धता को तीन तरह से प्रभावित करती है, जिनको दूर करने के लिए गम्भीर रुख अपनाना होगा :------

१- तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए पर्याप्त मात्रा में खाद्यान्न पूर्ति की आवश्यकता है। और इसके लिए खाद्यान्न के उत्पादन में वृद्धि करना है, पर "अधिक अन्न उपजाओ आन्दोलन," "कम बच्चा पैदा करो आन्दोलन" के बिना सफल नहीं हो सकता।

२- जनसंख्या की गुणात्मक प्रवृत्ति पर ध्यान देने की आवश्यकता है। आहार में पोषक तत्वों की कमी बनी रही है, उसे दूर करने की आवश्यकता है।

३- लोगों के जीवन-स्तर को ऊंचा उठाने के लिए एक ओर तो कृषि में उत्पादन बढ़ाया जाय दूसरी ओर प्रदेश में जनसंख्या-उर्वरता ।। प्रजननता ।। की बढ़ती हुई प्रवृत्ति पर अंकुश लगाया जाय, जिससे जन्मदर में गिरावट आ सके। तभी यह प्रदेश आर्थिक विकास के पथ पर तीव्रता से बढ़ सकता है।

५- जनसंख्या तथा श्रम-शक्ति :-----

अर्थव्यवस्था में, श्रम-शक्ति कुल जनसंख्या से कार्यशील जनसंख्या का अनुपात होती है। यदि उत्तर-प्रदेश में जीवन की औसत प्रत्याशा ५० वर्ष मान लिया जाय तो यह वस्तुतः उन लोगों की संख्या होगी, जो १५ से ५० वर्ष के आयु-वर्ग में है। जनांकिकी संक्रमण कालीन अवस्था के दौरान जन्म-दर अधिक होती है और मृत्युदर घटती है। परिणाम यह होता है कि कुल जनसंख्या की अधिक प्रतिशतता १५ वर्ष तक के निम्न आयु वर्ग की होती है जैसा कि वर्तमान समय में उ०प्र० में यह प्रतिशत ४० से भी ऊपर है जबकि श्रम-शक्ति की प्रतिशतता कम है। श्रम-शक्ति में बच्चों की प्रतिशतता अधिक होने के कारण अर्थव्यवस्था पर भारी बोझ पड़ता है जबकि थोड़ी श्रम-शक्ति का अभिप्राय है कि उत्पादक कार्यों में भाग लेने के लिए अपेक्षाकृत कम व्यक्ति हैं।

यदि जन्मदर घटनी भी शुरू हो जाय, तो भी अल्पकाल के दौरान उत्पादक कार्यों के लिए उपलब्ध श्रम - शक्ति की संख्या तो उतनी ही रहेगी पर बच्चों की संख्या घट जायेगी और इसका प्रभाव यह होगा कि प्रदेश की आय बढ़ेगी क्योंकि उपभोक्ताओं की संख्या कम हो जायेगी। परन्तु यह तभी

सम्भव है जब जनांकिकीय संक्रमण अवस्था पर वर ली जाय, यह तब तक सम्भव नहीं जब तक कि उत्तर-प्रदेश में जनसंख्या - उर्वरता पर अंकुश न लगाया जाय।

।।ब।। आर्थिक विकास का जनसंख्या-वृद्धि पर प्रभाव :------

आर्थिक विकास किस तरह जनसंख्या वृद्धि पर प्रभाव डालता है इस प्रश्न का उत्तर कूल एवं हूवर [१] ने इस तरह से दिया है -"जनसंख्या वृद्धि के तीन कारकों, जन्म, मृत्यु एवं देशान्तरण में एक या अधिक का क्रियाशील होना इसे प्रभावित करता है।"

जनसंख्या वृद्धि का प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रीय सिद्धान्त ।।जो मुख्यतया माल्थस के नाम से जुड़ा हुआ है।। के अनुसार आय में होने वाली कोई भी वृद्धि ।।मुख्यतया गरीब वर्गों की।। जन्मदर में वृद्धि की प्रवृत्ति रखती है, एवं अधिक निश्चयात्मक एवं शक्ति से मृत्युन्दर में कमी की प्रवृत्ति रखती है।

आर्थिक विकास का जनसंख्या पर पड़ने वाले प्रभावों की जनांकिकी परिवर्तन या "संक्रमण" सिद्धान्त के नाम से भी जाना जाता है इस सिद्धान्त के अन्तर्गत किसी भी देश की जनसंख्या को आर्थिक विकास के परिणाम स्वरूप तीन अवस्थाओं से गुजरना पड़ता है :-----

।।अ।। प्रथम अवस्था :---

आर्थिक विकास की प्रारम्भिक दशाओं में लोगों का आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टिकोण संकुचित होता है। अनेक आवश्यक सुविधाओं के अभाव में इन क्षेत्रों में जन्म एवं मृत्यु दर ऊंची होती है अपर्याप्त और असन्तुलित भोजन, चिकित्सा सम्बन्धी सुविधाओं का अभाव, गन्दगी, महामारियों के कारण इस अवस्था में मृत्युदर ऊंची होती है संकुचित सामाजिक रीति-रिवाजों, धार्मिक कारणों और पारिवारिक नियोजन की सुविधाओं के अभाव के कारण इन देशों में जन्म दर ऊंची रहती है। अतः इस जन्मदर एवं मृत्युदर दोनो ऊंची रहती है। बच्चे के पालन-पोषण का भार, प्रमुख्यतया कृषक परिवारों में महिलाओं के ऊपर रहता है। बच्चों के

१- कोल जे० ए० एण्ड हूवर एम० ई०, पापुलेशन ग्रोथ एण्ड इकोनामिक डेवलपमेंट इन लो इनकम कन्ट्रीज : ए केस स्टडीज आफ इण्डिया "प्रास्पेक्ट्स," १९६९, पृ० ९।

शिक्षा की लागत न्यूनतम होती है, क्योंकि इनको निचले स्तर तक ही शिक्षा दी जाती है। बच्चे छोटी अवस्था में से ही काम में हाथ बटाने लगते है और मां - बाप के लिए वृद्धावस्था में सुरक्षा का परम्परागत स्रोत्र होते है। मृत्यु की विशेषत: शिशु मृत्यु की ऊंची दर से यह संकेत मिलता है कि अधिक बच्चे उत्पन्न करके हीउक्त सुरक्षा प्राप्त की जा सकती है।[1] ऐसे समाज में जनसंख्यावृद्धि दर वास्तव में ऊंची नहीं होती, क्योंकि उच्च जन्मदर को उच्च मृत्युदरसन्तुलित कर कर देती है। यह अवस्था अधिक जन-वृद्धि की सम्भावना की अवस्था है, किन्तु इसमें वास्तविक वृद्धि कम होती है।

।।ब।। द्वितीय अवस्था :-------

आय के स्तर में वृद्धि के परिणाम स्वरूप जनता अपने भोजन में सुधार करने के योग्य हो जाती है। आर्थिक विकास के कारण सर्वांगीण सुधार होता है, जिसमें परिवहन का सुधार भीसमाविष्ट है परिवहन के सुधार के फलस्वरूप खाद्य-सम्भरण नियमित हो जाता है। इन सब कारणों से मृत्यु दर कम हो जाती है। इस प्रकार द्वितीय अवस्था में जन्मदर ऊंची रहती है किन्तु मृत्यु दर में गिरावट आने लगती है। परिणामत: जनसंख्या वृद्धि की गति बढ़ जाती है। मृत्युदर में कमी के कारण प्रथम अवस्था की उच्च जन्म-वृद्धि सम्भावना द्वितीय अवस्था में उच्च वास्तविक वृद्धि बन कर पकट होती है उच्च जनमदर, और घटती हुई मृत्युदर के कारणइस अवस्था में परिवार का आकार बड़ा हो जाता है।

संक्षेप में, इस अवस्था में सरकार और जनता के प्रत्यनों के कारण आर्थिक विकास की गति बढ़ती है। तकनीकी ज्ञान का प्रयोग धीरे-धीरे बढ़ने लगता है। आधुनिक कारखानों की स्थापना होती है। बैंक, परिवहन, शिक्षा, चिकित्सा आदि सुविधाओं में विस्तार होता है। खाधान्न - उत्पादन बढ़ता है। मृत्युदर कम हो जाती है और जन्मदर में कोई कमी नहीं आती। क्योंकि मानसिक, सामाजिक और धार्मिक विचारधारा में कोई उल्लेखनीय परिवर्तन नहीं होता है इस अवस्था को "जनसंख्या-विस्फोटन" की अवस्था भी कहते है। सम्प्रति उत्तर-प्रदेश वर्तमान समय में इसी अव अवस्था से गुजर रहा है।

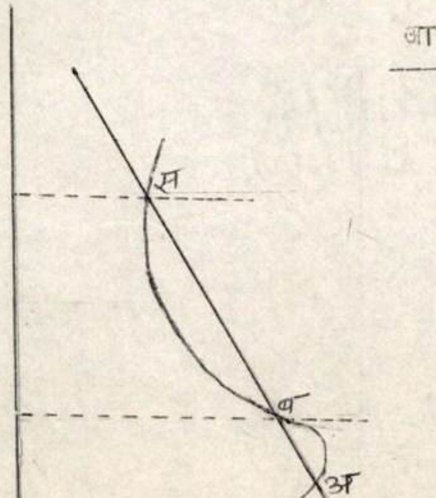
१- वही, पृ० ९-११।

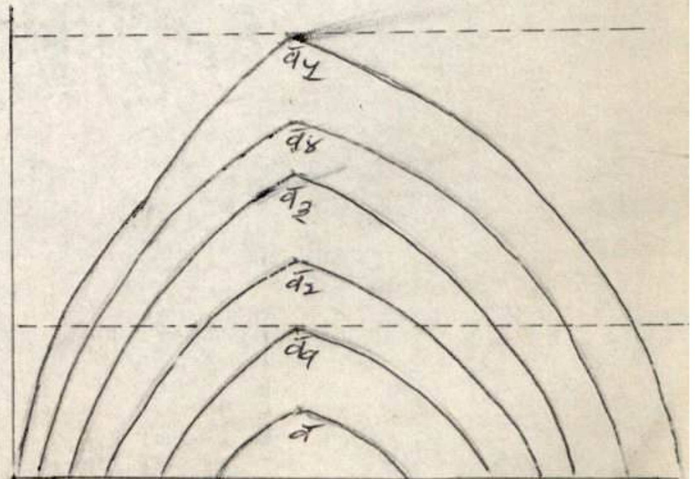
।।स ।। तृतीय अवस्था :------

आर्थिक विकास के कारण अर्थव्यवस्था का स्वरूप कृषक से परिवर्तित होकर अंशतः औद्योगिक हो जाता है। औद्योगीकरण में वृद्धि के परिणाम स्वरूप जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों से औद्योगिक और वाणिज्यक केन्द्रों की तरफ स्थनान्तरित होने लगती है। शहरी जनसंख्या में वृद्धि और स्त्रियों के लिए घर से बाहर आर्थिक कार्यों के विकास के परिणाम स्वरूप आर्थिक गतिशीलता की सम्भावना बढ़ जाती है, जिसे छोटे परिवारों के सहारे भली-भांति प्राप्त किया जा सकता है। परिणामतः बड़े परिवार की आर्थिक लाभ कारिता कम हो जाती है। आर्थिक विकास का एक लक्षण विशेष रूप से बढ़ता हुआ नगरीय करण है और ग्रामों के विपरित नगरों में बच्चे अमूल्य निधी नहीं, भार समझे जाते है। उचित जीवन स्तर बनाये रखने की चेतना औद्योगिक अर्थव्यवस्था में परिवार छोटा करने की प्रेरणा देती है।

इस अवस्था में जन्मदर एवं मृत्युदर दोनों ही निम्न स्तर पर होते है। आर्थिक विकास के परिणाम स्वरूप अर्थव्यवस्था, कृषि प्रधान से उद्योग प्रधान की ओर बढ़ती है। परिवहन सुविधाओं के कारण लोगों की गतिशीलता बढ़ने लगती है। महिलाओं को भी रोजगार प्राप्त होने लगता है। जीवन स्तर उच्चतम स्तर को छूने लगता है, जिससे उनके मानसिक दृष्टिकोण में भी परिवर्तन होता है बड़े परिवारों की आर्थिक उपयोगिता समाप्त होने लगती है लोग परिवार नियोजन तथा सन्तति-निग्रह के साधनों का उपयोग करते है।

आर्थिक विकास का जनसंख्या पर प्रभाव





इन तीनों अवस्थाओं को पीछे रेखा चित्र के माध्यम से भी स्पष्ट किया गया है चित्र में "अ" जन्मदर और मृत्युदर का प्रतिव्यक्ति आय पर प्रभाव दिखाया गया है। "चित्र ब" में $व_1$, $व_2$, $व_3$, $व_4$, $व_5$ वक्र प्रति व्यक्ति आय को स्पष्ट करते है, जो साधनों के विभिन्न स्तरों पर प्राप्त किये जाते है। इसमें आर्थिक विकास के साथ-साथ वक्र ऊपर की ओर बढ़ते जाते है। विकास के प्रथम चरण में "अ" स्थिति होती है यहां पर जन्म और मृत्यु दोनों दरे अधिक होती है एवं प्रति व्यक्ति आय कम होती है। "ब" स्थिति में जीवन-स्तर का प्रभाव जन्मदर पर पड़ने लगता है जिसके फलस्वरूप जन्मदर में कमी होती है। अन्त में "स" अवस्था आती है, जिसमें मृत्यु दर व जन्म दर दोनों ही कम हो जाती है और प्रतिव्यक्ति आय अधिकतम होती है। अधिकांश विकसित देश जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका, जापान, फ्रांस, ग्रेट ब्रिटेन आदि "स" अवस्था में हीहै। जबकि भारत, श्री लंका ब्रह्मा आदि "ब" अवस्था में है। भारत की स्थिति "ब" चित्र में "प" बिन्दु के द्वारा स्पष्ट की गयी है।

उत्तर-प्रदेश की स्थिति के विषय में उपरोक्त अधारों पर कहा जा सकता है कि यह जनांकिकी संक्रमण की अवस्था से द्वितीय अवस्था में प्रवेश कर चुका है। फलत: प्रदेश में मृत्युदर में गिरावट व जन्मदर में स्थिरता कीप्रवृत्ति ने असन्तुलन पैदा कर दिया है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह देखा गया है कि मृत्युदर का नियन्त्रण अपेक्षाकृत सरल है, क्योंकि मृत्युदर घटाने के उपाय वाह्य जात होने के कारण जनता उन्हें तत्परतापूर्वक स्वीकार कर लेती है। किन्तु जन्मदर में कमी के लिए अन्तर जात स तत्वों को अपनाया या सामाजिक मनोवृत्तियों और प्रथाओं में तथा परिवार के आकार और विवाह आदि के सम्बन्ध में कमी की अपेक्षा इसके लिए अधिक समय अपेक्षित होता है। परिणामत: जन्मदर में गिरावट विलम्ब से आती है। हमारे देश एवं प्रदेश के लिए यह अवस्था सर्वाधिक संकटमय है। "जितनी जिस देश की जनसंख्या अधिक होगीउतनी ही मात्रा में उस कम विकसितदेश को निम्न जीवत स्तर के फन्दे से निकलने के लिए अधिक मात्रा में अत्यावश्यक न्यूनतम प्रयास करने होगें।" [१]

१- लेबैन्स्टीन, एच०, इकोनामिक बैकवर्डनैस एण्ड इकोनामिक ग्रोथ, जान विली, १९५७, पृ० १५१-५२।

जनसंख्या वृद्धि दर आर्थिक विकास, औद्योगिकरण के बाद महत्वपूर्ण प्रभाव डालता है। विकास के पथ पर बढ़ने से पूर्व अर्थव्यवस्था में एक स्थिरता होती है, क्योंकि उर्वरता की उच्च दर के साथ मृत्यु क्रम की दर भी ऊंचीरहती है। जन्मदर ऊंची रहती है, क्योंकि पूर्व औद्योगिक समाज में विवाह कम आयु में एवं सर्वव्यापक रूप में सम्पन्न होता है। आर्थिक आवश्यकताओं के कारण, बच्चे भी काम करना शुरू कर देते है, जब तक औपचारिक शिक्षा की सुविधा उपलब्ध नहीं होती इनका कार्य परिवारिक आय में वृद्धि करना होगा जबकि मृत्युदर ऊंची है, परिवार अधिक बच्चों की इच्छा रखेगा, जिससे जीवन -यापन हो सके। पूर्व औद्योगिक समाज की एक महत्वपूर्ण विशेषता शिशु मृत्यु दर का ऊंचा होना है। इन समाजों में मृत्युदर ऊंची होने से जनसंख्या वृद्धि की कोई समस्या नहीं होती। आआर्थिक विकास होने के साथ, लोगों के आहार एवं रहन-सहन के स्तर में सुधार हो जाता है। लोगों को रहन-सहन की दशाओं का ज्ञान हो जाता है, केवल खाद्यान्नों के उत्पादन में ही वृद्धि नहीं होती, अपितु चिकित्सीय क्षेत्र में भी सुधार होता है। सार्वजनिक स्वास्थ्य के स्तर में भी सुधार हो जाता है -परिणामत: मृत्युदर में कमी हो जाती है। यह वह अवस्था है, जब मृत्यु दर में कमी हो जाती है। लेकिन जन्मदर पूर्ववत रहती है। यह स्थिति उ०प्र० में माल्थस के जनसंख्या सिद्धान्त की सार्थकता सिद्ध करती है।

अन्त में यह कहा जा सकता है कि उत्तर-प्रदेश में हुए विकास कार्यों और योजनाओं से जस सम्भाने जनसाधारण लाभान्वित नहीं हो पाया है। वास्तविकता यह है कि बढ़ती हुई जनसंख्या उन लाभों को प्रभावहीन बना देती है। १९५१ की ही तुलना में यदिहम आज की स्थिति को देखते हैं, तो पाते है कि योजना वृद्ध विकास के इन तीन दशकों ।। १९५१-८१ ।। में हमने भिन्न विकास योजना के द्वारा उन्नति की, हमें विभिन्न क्षेत्रों में महत्वपूर्ण उपलब्धियां हुई, किन्तु जन साधारण की आर्थिक स्थिति में कोई विशेष परिवर्तन कहीं भी दृष्टिगत नहीं होता। यहां श्री अशोक मेहता[1] के येशब्द सारगर्भित प्रतीत होते है -"जनसंख्या की इस वृद्धि के कारण न केवल जो हम दिन में बुनते है, वह रात में उधड़ जाता है, बल्कि हमारे धागे और भी बुरी तरह से उलझ जाते है।"

१- जैन अविनाश कमल, भारत की बढ़ती जनसंख्या और आर्थिक विकास, योजना एक अगस्त १९७१।

प्रदेश की बढ़ती हुई जनसंख्या ने बेकारी और भुखमरी जैसी विकराल समस्याओं को जन्म दिया है विशेष रूप से शिक्षित युवकों में बेकारी के कारण प्रदेश के भीतर-गम्भीर संकट की स्थिति निर्मित है इनके परिणाम स्वरूप आर्थिक विषमता की खाई और अधिक चौड़ी होती जा रही है ~~जनसंख्या~~ जनसाधारण का जीवन स्तर, जिस परिणाम में ऊंचा उठना चाहिए था, उस मापदण्ड से यह सुधार नितान्त असन्तोष जनक है। प्रदेश की आय जिस दर से बढ़ी है उस तुलना में प्रतिलव्यक्ति आय में वृद्धि नगण्य सी है। योजनाओं के माध्यम से विकास की जो दर चलती है, उस पर जन्मदर पानी फेर देती है। जब तक दोनों का सन्तुलन नहीं होगा, स्थिति अनियंत्रित रहेगी।

विशेषज्ञों के अनुसार जनसंख्या कीवृद्धि रोककर कर ही इस विपत्ति से बचा जा सकता है। परन्तु जहां एक ओर हमें जन्मदर पर नियंत्रण करना होगा वहीं दूसरी ओर हमें उत्पादन के क्षेत्र में उपलब्ध सभी साधनों का पूर्ण उपयोग उत्पादन वृद्धि के लिए करना होगा। अर्थव्यवस्था में बचत को प्रोत्साहित कर पूंजी निवेश को बढ़ावा देने के लिए ही सब सम्भव उपाय करने होंगे। इन तीनों के समन्वय से ही प्रदेश के आर्थिक विकास के पहिए को बढ़ती जनसंख्या के दलदल से निकाला जा सकता है

अध्याय चार

बेरोजगारी का अकार एवं प्रकृति

रोजगार दफ्तर के पूर्व रोजगार दिलाने वाले माध्यमों के कार्यों का मूल्यांकन

श्रमिकों के रोजगार में सर्व प्रथम समस्या उनकी भर्ती के विषय में उत्पन्न होती है। उद्योगों में जिनविधियों और संगठनों द्वारा श्रम जीवियों को भर्ती किया जाता है उनपर व्यवसाय की सफलता तथा विफलता बहुत हद तक निर्भर करती है। यदि कार्य के अनुसार श्रमिक नहीं लगाया जाता है तो उत्पादन पर इसका प्रभाव प्रतिकूल पड़ता है। और उद्योग की उत्पादन क्षमता घट जाती है। चूंकि श्रमिक अपना गांव छोड़कर नगर में आकर काम करने के लिये तैयार नहीं होते है अत: इनकी भर्ती के लिए समय-समय पर सुविधाजनक विधियां अपनायी जाती है। सन् १८९६ की प्लेग तथा १९१८ की इन्फ्लूएन्जा की माहमारी के कारण भी श्रमिकों का अभाव हो गया था। इसके परिणाम यह हुआ कि मालिकों को मजदूर भर्ती करने के लिए अच्छे एवं बूरे सभी प्रकार के तरीकों को अपनाना पड़ा और भर्ती मध्यस्थों तथा ठेकेदारों द्वारा होने लगी। यह प्रणाली आज भी प्रचलित है हालांकि पिछले कुछ वर्षों से मजदूरों की भर्ती सीधी प्रणाली द्वारा भी होने लगी है। इसका कारण यह है कि श्रमिक अब प्रचुर मात्रा में उद्योगों में आने लगे है। भारत में श्रमिकों की भर्ती के लिए अग्रलिखित विधियों का प्रयोग किया गया है :-----

१- मध्यस्थों द्वारा :----

जब किसी भी उद्योग में उद्योगपति स्वयं प्रत्यक्ष रूप से श्रम को कार्य पर न लगा कर किसी मध्यस्थ की सहायता लेता है और इस श्रमिक को काम पर लगाने तथा उसे काम से हटाने का पूर्ण अधिकार उस मध्यस्थ को ही प्राप्त होता है तो इस प्रकार की भर्ती को "मध्यस्थों द्वारा भर्ती" कहा जाता है। भर्ती की इस प्रणाली को भारत वर्ष में बहुत अधिक मान्यता मिली थी किन्तु अब इसके परिणामों ने लोकमत को इसके प्रतिकूल कर दिया है। जिसके कारण यह विधि घृणा युक्त हो गई। भारत में यहविधि संगठित तथा असंगठित दोनों ही प्रकार के उद्योगों में अपनायी गई थी तथा विभिन्न क्षेत्रों में मध्यस्थों को विभिन्न नामों से पुकारा जाता है जैसे-सरदार, मिस्त्री जोवर, टन्डैल, फोरमैन, मुकद्दम, चौधरी, कंगनी, तथा ठेकेदार इत्यादि। बड़े-बड़े उद्योगों में प्रधान मध्यस्थ और नारी मध्यस्थ भी है। जिन्हें नायकिन कहते है। इनके श्रम जीवियों में से ही चुना जाता है। एन उद्योगों में जो विदेशी मालिकों के हाथ में थे, जिन्हें भारतीय भाषा नहीं आती थी वहां ये मध्यस्थ और भी शक्तिशाली बन गये थे।

जहां तक मध्यस्थों द्वारा भर्ती के गुणों का प्रश्न है वह इस प्रकार से है कि कुछ ऐसे उद्योग होते है जिनके लिये श्रम-शक्ति प्राप्त नहीं हो पाती, जिससे उद्योग की कार्यशीलता में बाधा पड़ता है किन्तु मध्यंथों की सहायता से ये उद्योग भी सरलता पूर्वक आवश्यकतानुसार श्रम शक्ति प्राप्त कर लेते है। इस समय भारत में कोयले की खानों में और चाय के बगीचों में श्रमिकों की भर्ती के लिए इन मध्यस्थों का महत्वपूर्ण स्थान है। यद्यपि खानों में श्रमिकों की कमी तो नहीं है परन्तु खान के अन्दर काम करने वाली स्त्रियों को हटाये जाने के कारण श्रमिकों की मांग बढ़ गई है जिसकों मध्यस्थ ग्रामीण क्षेत्रों से श्रमिकों को लाकर पूरा करते है। चाय के बागानो में तो काम करने के लिए श्रमिकों की भर्ती में यदि मध्यस्थों की सहायता न ली जाय तो सम्भवत: कोई भी श्रमिक स्वयं अपनी इच्छा से वहां से कार्य करने के लिए नहीं कहेगा।

इस प्रणाली से द्वितीय महत्वपूर्ण लाभ यह है किमध्यस्थों का ग्रामीण क्षेत्रों से सम्बन्ध होने के कारण श्रकिों की आदतों, व्यवहार, एवं रूचियों से पूर्णत: परिचित होते है जिससे इन श्रमिकों से उनकी आदतों के अनुरूप ही व्यवहार करके उनको प्रसन्न रखकर उद्योगों में स्थायी श्रमिक बनाया जा स सकता है। और इस प्रकार उद्योगपति एक बहुत बड़े बोझ से मुक्त हो जाता है।

इसमें कोई भी संन्देह नहीं है कि आजकल मध्यस्थों को घृणा की दृष्टि से देखा जाता है क्योंकि ये मध्यस्थ श्रमिकों का शोषण करते है, परन्तु यह भी सत्य है कि जिन दिनों ~~फैक्टरी~~ फैक्टरी प्रथा प्रारम्भ हुई थी उस समय श्रमिकों का मिलना भी एक बड़ी समस्या थी। अत: जिस प्रकार गांवों में महाजनों में अनेक दोष बतायेजाते है परन्तु फिर भी हम महाजनों को कृषि में एक महत्वपूर्ण स्थान देते है और उसे समाप्त भी नहीं कर पाते है, ठीक यही बात मध्यस्थों के विषय में भी कहा जाता है।

मध्यस्थों द्वारा भर्ती में जहां इतने ~~महतव~~ महत्वपूर्ण गुण है वहीं दूसरी ओर यह दोषों से भी मुक्त नहीं है जैसे :--

प्रथम यह कि बागानों के लिए यह विधि बड़ी ही महगी सिद्ध हुई है क्योंकि मध्यस्थ दूर - दूर के प्रान्तों में जाकर ग्रामीण क्षेत्रों से श्रमिकों को लाते है जिनके लाने में भारी व्यय का वहन करना पड़ता है और यह बगान मालिकों को ही प्रत्यक्ष रूप से सहन करनापड़ता है और अन्तिम रूप में उपभोक्ता इसे वहन करते है।

द्वितीय, यह कि[1] मध्यस्थ श्रमिकों को विभिन्न प्रकार के प्रलोभन देकर श्रमिकों को, उनको ग्रामों में ही कुछ धनराशि अग्रिम रूप में देकर लाते है, परन्तु बागान मालिकों से ली जाने वाली धनराशि का एक छोटा भाग ही इन श्रमिकों को दियाजाता है और शेष समस्त धनराशि इन मध्यस्थों की जेबों में ही रह जाता है।

तृतीय, यह कि यह मध्यस्थ विशेषत: विवाहित श्रमिकों को ही लाने का प्रयत्न करते है जिससे कि उनके बच्चों तथा स्त्रियों को भी काम पर लगाये जाने में सुविधा हो सके, परन्तु विवाहित श्रमिक न मिलने से वे किसी भीव्यक्ति तथा स्त्री को अनुचित साधनों से ले आते है जो कि एक अनैतिक का द्योतक है।

चतुर्थ, यह कि एक बेरोजगार श्रमिक जो इनकी झूठी प्रलोभनों में फंस कर एक बार काम पर आ जाता है उसे लौटने नहीं दिया जाता है।

पंचम, यह कि संगठित उद्योगों में रोजगार प्राप्ति के लिये श्रमिको को मध्यस्थों को रिश्वत देनी पड़ती है और बिना रिश्वत के उनको रोजगार मिलना असम्भव है।

इनके अतिरिक्त उद्योगों में कुशल श्रमिकों के स्थान परअकुशल श्रमिकों की भर्ती की जाती है। इस प्रकार उद्योगों की उत्पादन क्षमता घट जाती है। जिससे उपभोक्तावर्ग तथा उद्योग पति दोनों को ही हानि उठानी पड़ती है। अपने निजी स्वार्थ की पूर्ति के लिए कभी-कभी मध्यस्थ सेवायोजक तथा श्रमिकों के बीच संघर्ष उत्पन्न करा देते है। एक महत्वपूर्ण दोष यह भी है कि प्राय: चरित्रहीन स्त्रियां ही नैयकिन ।।स्त्री मध्यस्थ।। हुआ करती है जो स्त्री श्रमिकों के अस्तित्व को लूटने में संकोच नहीं करती जिससे चरित्रवान स्त्रियांभी चरित्रहीन होजाती है।

इन मध्यस्थों का चित्रण करते हुए शाही आयोग[2] नें कहा है कि मध्यस्थों का पद अत्यन्त प्रलोभनीय है और मध्यस्थ वर्ग इसका लाभ न उठाये यह आश्चर्यजनक ही बात होगी। समय-समय पर

१- डा० आर० मुकर्जी : इण्डियन वर्किंग क्लास,

२- रिपोर्ट आफ रायल कमीशन आन लेबर, पृ० १२० ।

श्रमिकों को नशीले पेय पदार्थो या अन्य उपहारों द्वारा मध्यस्थों की खुशामद करनी पड़ती है और ऐसा भी सुनने में आता है कि अन्य निरीक्षक गण भी इसमें भाग लेते है ।

इस प्रकार यह विधि लाभों के अपेक्षा दोषपूर्ण अधिक है यही कारण है कि आजकल लोकमत इसकी उपेक्षा करने लगता है इस प्रकार भारत के बगानों में काम करने की स्थिति बड़ी ही दूषित है जिसके फलस्वरूप वहां पर कोई भी श्रमिक स्वयं अपनी इच्छा से काम करने के लिये तैयार नहीं होता है । अत: जब तक इन दोषों को दूर नहीं किया जायेगा श्रमिकों के साथ ये मध्यस्थ अन्याय करते रहेंगे ।

२- मिलों द्वारा सीधी भर्ती :-----

सीधी भर्ती से अर्थ उद्योग में प्रत्यक्ष रूप से भर्ती करना है । इसके अन्तर्गत मध्यस्थों से किसी प्रकार की सहायता नही ली जाती है । कारखाने के गेट पर ही रिक्त स्थानों की सूची टांग दी जाती है और साथ ही भर्ती के लिए एक निश्चित तिथी भी निर्धारित कर दी जाती है । उस दिन श्रमिक स्वयं को उस स्थान पर उपस्थित करता है । और सेवायोजक उन श्रमिकों में से आवश्यकतानुसार भर्ती कर लेता है । इस समय पंजाब, बम्बई, मद्रास तथा प० बंगाल में यह प्रणाली बहुत मान्यता प्राप्त कर चुकी है । बम्बई के ५० प्रतिशत सूती मिलों में, बाटा शू कम्पनी, कलकत्ता, विशाखापट्टनम की सिंधिया शिपयार्ड में बंगाल की जूट मिलों तथा कानपुर की अनेक मिलों में श्रम अधिकारियों द्वारा प्रत्यक्ष भर्ती की जाती है ।

इस प्रणाली द्वारा, मध्यस्थ प्रणाली के समस्त दोषों को दूर किया गया है । इस विधि के अनुसार उपयुक्त श्रमिकों का चुनाव करके उनकी भर्ती की जाती है । जिससे फैक्टरी की उत्पादन क्षमता पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है । और श्रमिकों का शोषण भी कम हो पाता है ।

परन्तु इस प्रणाली का सबसे बड़ा दोष यह है कि यह विधि केवल अकुशल श्रमिकों की भर्ती के लिए ही उपयुक्त है । अर्द्ध कुशल तथा कुशल ।। ट्रेनिंग प्राप्त ।। श्रमिकों की भर्ती के लिए उपयुक्त नहीं है इसके अतिरिक्त कभी-कभी श्रमिकों को रिक्त स्थान की सूचना तक नहीं मिल पाती । उपस्थित होने वाले श्रमिकों में से अधिकतर काम करने वाले श्रमिकों के सम्बन्धी होते है । सबसे बड़ा दोष तो

यह है कि इसमें भर्ती होने वाले श्रमिकों पर सेवायोजकों का प्रत्यक्ष नियंत्रण रहता है। सेवायोजक भर्ती करते समय ही कुछ शर्ते रखाता है जैसे - श्रम संघों में भाग न लेना आदि और श्रमिकों को रोजगार प्राप्त करने के लिए यह शर्त माननी ही पड़ती है। बचन भंग करने पर श्रमिकों की छटनी भी होते देखी गई है।

3- ठेके के अधार पर भर्ती :----

जब कोई कार्य कराने के लिए ठेकेदार को ठेके पर कार्य दिया जाता है तो श्रमिकों की भरती से उद्योगपति का कोई भी सम्बन्ध नहीं रहता है बल्कि ठेकेदार स्वयं ही आवश्यकतानुसार श्रमिकों को कार्य पर लगाता है। ठेका साधारणत: उसी ठेकेदार को दिया जाता है जो न्यूनतम धन लेकर कार्य को पूरा करने का बचन देता है।

इस विधि काप्रयोग आजकल बहुत किया जाता है इस विधि से उद्योगपति को तो यह लाभ होता है कि वह भर्ती के बोझ से मुक्त हो जाता है और फलस्वरूप श्रमकल्याण पर होने वाले व्यय से भी बच जाता है। परन्तु श्रमिक वर्ग के लिए यहविधि बहुत हानि कारक सिद्ध होती है क्योंकि वह श्रम कल्याण सम्बन् धी सुविधाओं को प्राप्त नहीं कर पाता है। साथ ही साथ ठेकेदार, चूंकि कम से कम लेकर ठेका पूराकरने का बचन देता है इसलिए स्वभावत: वहभी श्रमिकों को कम से का मजदूरी देने का सफ ल प्रयत्न करता है। यही नहीं वह अधिक समय तक श्रमिकों से कार्य करानेका भीप्रयत्न करता है। इस विधि के अनुसार श्रमिक स्थायी नहीं बनने पाते जिससे श्रमिक सम्बन्धी किसी भी कानून को व्यवहारिक रूप देने में कठिनाई होती है। जैसे - कारखाना अधिनियम, मजदूरी अधिनियम मातृत्व हित लाभ अधिनियम आदि।

रायल श्रम आयोग ने ठेके के श्रमिको की प्रथा की अत्यन्त कटु आलोचना की है और सिफारिश की है किश्रमिकों की भर्ती उनके काम के घंटों तथा उनके वेतन आदि पर प्रबंधकों का पूरा प्रत्यक्ष नियत्रण होना चाहिए। इसी प्रकार बिहार की श्रम जांच समिति ने भी ठेकेदारों द्वारा भर्ती की प्र प्रथा का खण्डन किया है इसके अतिरिक्त कई औद्योगिक समितियों ने भी इस प्रथा को समाप्त करने के लिए जोरदार सिफारिश की है। यदि यह प्रथाएजिस स्थान पर अधिक आवश्यक समझकर लागू किया जाय जैसे कार्य को शिघ्र समाप्त करने के लिए आदि तब भी श्रमिक सम्बन्धी सभी अधिनियम तो अवश्य ही इन पर लागू होने चाहिए।

४- सेवायोजकों तथा श्रम संघों द्वारा :--------

यह विधि अधिक लाभदायक सिद्ध हो सकती है। इस प्रणाली में रिक्त स्थानों की सूचना श्रम संघों को दे दी जाती है। श्रम संघों के पास बेकार श्रमिकों की भी सूची होती है अत: वे आवश्यकतानुसार बेकार श्रमिकों के नाम फैक्टरी अधिकारियों को सूचित कर देते है तत्पश्चात सेवायोजक स्वयं अपनी इच्छानुसार , भेजे गये नामें में से श्रमिकों को छांट लेते है और उन श्रमिकों को नियुक्ति पत्र भेज दिया जाता है। इस प्रकार इस विधि में श्रमिक तथ सेवायोजक दोनों के हितों की रक्षा हो जाती है।

५- श्रम अधिकारियों द्वारा :------

कुछ उद्योगों में श्रम अधिकारियों की नियुक्ति कर दी जाती है आर उन्हें अन्य कार्यों के अतिरिक्त श्रमिक की भर्ती का कार्य भी सौंप दिया जाता है। ये अधिकारी ग्रामों में जाकर बेकार श्रमिकों से सम्बन्ध स्थापित करके उनको फैक्टरी में ले आते है। ~~जिस-~~ परन्तु, यह अधिकारी इन श्रमिकों के लिए अपरिचित व्यक्ति होते है जिस कारण यह विधि अधिक सफल नहीं हो पाई।

६- संम्बन्धियों की नियुक्ति :-----

सैद्धान्तिक दृष्टि से तो यह विधि भी अधिकहितकारी सिद्ध हो रही है इस विधि में रिक्त स्थानों पर काम करने वाले श्रमिको के पुत्रों तथा उनके अन्य सम्बन्धियों को ही रखा जाता है। अन्य श्रमिकों को कार्य पर नहीं लगाया जाता। इस विधि को अपनाकर उद्योगपति श्रमिकों कासहयोग तथा विश्वास प्राप्त कर सकता है, परन्तु व्यवहारिक रूप में यह विधि अधिक पक्षपात पूर्ण सिद्ध हुई है क्योंकि कुछ कुशल श्रमिकों को इस कारण कार्य पर नहीं लगाया जा सकता है क्योंकि व काम पर लगे श्रमिकों के पुत्र अथवा सम्बन्धी नहीं है बल्कि उनके स्थान परअकुशल श्रमिकों को ही काम पर लगा लिया जाता है जिससे कि उत्पादन क्षमता के घटने की आशंकाअधिक हो जाती है।

७- रोजगार कार्यालय द्वारा भर्ती :-----

रोजगार कार्यालय एक ऐसी संस्था है जो एक ओर विभिन्न प्रकार के बेकार श्रमिकों को उनकी इच्छानुसार तथा योग्यतानुसार काम दिलाती है दूसरी ओर सेवायोजकों

को आवश्यकतानुसार योग्य श्रमिकों की प्राप्ति में सहायक होती है। यह कार्यालय[1] बेकार श्रमिकों तथा सेवायोजकों को शीघ्र ही आपस में मिलाकर दोनों की आवश्यकताओं को पूर्ण करने में सहायक सिद्ध होती है। इतना ही नहीं यह कुछ अन्य महत्वपूर्ण कार्य भी करता है जैसे-विस्थापित व्यक्तियों का लेखा तैयार करने और उन्हें सहायता प्रदान करने मेंसहायक सिद्ध होता है। इस प्रकार रोजगार कार्यालयों की तुलना हम एक बाजार से कर सकते है। परन्तु वस्तु और श्रमिकों में अन्तर है, वस्तु को तो बाजार में ही रख दिया जाता है और क्रेता स्वयं बाजार में जाकर वस्तु खरीदता है, परन्तु श्रमिक को रोजगार केन्द्रों में हर समय उपस्थित नही रखा जा सकता बल्कि उसकी योग्यता को रजिस्टर में अंकित कर लिया जाता है। सेवायोजक को जिस योग्यता के श्रमिक की जितनी संख्या में आवश्यकता होती है उसे इन केन्द्रों के अधिकारियों को सूचित कर दिया जाता है। इसके बाद ये अधिकारी अपनीसूची में से मांग के अनुसार कुशलता वाले श्रमिकों के नाम सेवायोजकों को भेत देता है। एक निश्चित समय पर सेवायोजक तथा श्रमिकों के बीच साक्षात्कार करा दिया जाता है और सेवायो योजक आवश्यकतानुसार श्रमिक का चुनाव कर लेता है। इस प्रका रोजगारके केन्द्रों के द्वारा दोनों ही पक्षों को लाभ पहुंचता है यही कारण है। कि रोजगार सेवा संगठनों के विषय में यह कहा जाता है कि ये उपलब्ध सुअवसरों और उपलब्ध साधनों में सन्तुलन बनाये रखते है।

रोजगार कार्यालय और उनके कार्य तथा महत्व के विषय में अग्रलिखित रूप में विवेचना की जा सकती है:--------

प्रथम, यह कि यह संस्था श्रम-शक्ति की मांग और पूर्ति में साम्य स्थापित करती है प्रश्न यह उठता है कि यह कार्यालय श्रम की मांग और पूर्ति में किस प्रकार से साम्य स्थापित करता है। देश में कुछ स्थान औद्योगिक दृष्टि से अधिक विकसितहोते है अत: वहां श्रम शक्ति की मांग भी अधिक होती है परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि उसी क्षेत्र में श्रम शक्ति भी मांग के अनुसार उपलब्ध हो, वह कम भी हो सकती है अथवा अधिक भी। इस प्रकार कुछ क्षेत्रों में इसके विपरित दशा भी हो सकती है। दोनों ही दशाओं में श्रम शक्ति की मांग और पूर्ति में असन्तुलन बना रहता है। रोजगार केन्द्रों ने इस कठिनाई को दूर कर दिया है।सेवायोजक को श्रमिक की तलाश में इधर-उधर भटकना नहीं पड़ता है,बल्कि वह अपने ही क्षेत्र में स्थित अथवा अन्य क्षेत्र में स्थित रोजगार केन्द्रों को अपनी मांग सूचित करके आवश्यकतानुसार श्रम शक्ति सरलता पूर्वक प्राप्त कर लेता है इस प्रकार श्रमिकों को

रोजगार शीघ्र ही मिल जाता है तथ सेवायोजकों को भी इच्छानुसार तथा आवश्यकतानुसार श्रमिक भी मिल जाते है ।

द्वितीय, यह कि सरकार के लिए यह जानना अत्यधिक आवश्यक हुआ करता है कि देश में बेकारी का आकार कितना बड़ा है रोजगार के केन्द्रों में इन बेकार श्रमिकों के नाम अंकित होते है इनके आधार पर देश की कुल बेकार श्रम शक्ति का अनुमान लगाना सरल हो जाता है । इन कार्यालयों को बेकार श्रमिकों के आकड़े एकत्रित करने ही पड़ते है जिससे सरकार बेकार श्रमशक्ति के आकार का अनुमान सरलता से लगा लेती है ।

तृतीय, यह कि रोजगार कार्यालय की सहायता से सेवायोजकों को उपयुक्त योग्यता के श्रमिक प्र प्राप्त करना तथा श्रमिक को अपनी योग्यतानुसार रोजगार मिलना सरल हो जाता है ।

चतुर्थ यह कि रोजगार कार्यालय श्रमिकों तथा सेवायोजकों दोनों को ही नि:शुल्क सेवा प्रदान करते है श्रमिक को रोजगार के मिल जाने पर इन कार्यालय को किसी प्रकार की रिश्वत नहीं देनी पड़ती तथा सेवायोजकों को भी जो मध्यस्थों को भारी रकम देनी पड़ती है, उससे मुक्ति मिल जाती है ।

पंचम, रोजगार कार्यालयों की स्थापना से रिक्त स्थानों पर श्रमिकों के पहुंचने में भी कम समय लगता है तथा इनके अभाव में उद्योग पतियों को श्रम शक्ति के खोजने में जो काफी समय लगा करता था उसकी भी बचत हो जाती है । साथ ही यह कार्यालय बेकार अकुशल श्रमिकों को प्रशिक्षण की सुविधा भी प्रदान करके उनकों कुशल श्रमिक बनाने में सहायक सिद्ध हो रहे है ।

राष्ट्रीय लाभांशबढ़ाने में भी रोजगार कार्यालय सहायक सिद्ध हुए है राष्ट्रीय लाभांश का आकार देश में उपलब्ध रोजगार की सुविधाओं पर ही निर्भर करता है । जब देश में बेकारी अधिक होती है, तो मानव शक्ति का प्रयोग उत्पादन-कार्य में न हो सकने से उनका अपव्यय होता है तथा उत्पादन की मात्रा में कोई वृद्धि नहीं होने पाती अत: रोजगार कार्यालय मानव शक्ति के प्रयोग में सहायता प्रदान करता है, फलस्वरूप उत्पादन ।।राष्ट्रीय ।। में वृद्धि होती है ।

भारतीय रोजगार कार्यालयों की कार्य-प्रणालियों में बहुत त्रुटियां भी है जिन्हें शीघ्र ही दूर करने की आवश्यकता है। इसके लिए निम्नलिखित सुझाव दिये जा सकते है :------

प्रथम, यह कि भारत की आवश्यकता को देखते हुए रोजगार कार्यालयों की संख्या अल्प है अत: इनकी संख्या में वृद्धि की जानी आवश्यक है।

द्वितीय, रोजगार कार्यालयों को तकनीकी शिक्षा तथा ट्रेनिंग पर अधिक बल देना चाहिए। इससे दो लाभ होंगे, एक ओर बेरोजगार श्रमिकों को रोजगार शीघ्र मिलेगा तथा दूसरी ओर प्रशिक्षित श्रमिकों के पूर्ति से राष्ट्रीय उत्पादन में वृद्धि होगी।

तृतीय, यह कि बेकार श्रमिकों के लिए अपना नाम रोजगार कार्यालयों में अंकित करना अनिवार्य कर दिया जाय।

चतुर्थ, रोजगार कार्यालयों का कार्य क्षेत्र बढ़ा दिया जाय।

पंचम, यह कि निर्धन श्रमिकों की आवश्यकता पड़ने पर आर्थिक सहायता की भी इन रोजगार कार्यालय के माध्यम से व्यवस्था की जाय तथा रोजगार के मील जाने पर यह धन उनसे वापस भी लिया जा सकता है।

अत: यह नि:संदेह कहा जा सकता है कि रोजगार कार्यालयों ने भर्ती की अन्य समस्त विधियों के दोषों को दूर कर दिया है।

रोजगार कार्यालय द्वारा रोजगार की उपलब्धता

बेरोजगारी से सम्बन्धित एक सरकारी महत्वपूर्ण एजेन्सी चलायी जाती है उसे रोजगार कार्यालय कहते है। जब नियोक्ताओं को उनके चुनाव के अनुसार श्रम उपलब्ध नहीं हो पाता था और न ही श्रमिकों को ही उनकी योग्यता के अनुसार रिक्त स्थानों की जानकारी हो पाती थी तब रोजगार कार्यालय के स्थापना हेतु विचार प्रकट हुए। अधिकतर विकासशील देश व्यवस्थित श्रम-शक्ति की भर्ती

की समस्या का सामना करते है। इस समस्या के समाधान हेतु प्रथम बार १९१९ के वाशिंगटन अन्तर्राष्ट्रीय लेबर कान्फ्रेंस में रोजगार कार्यालय के महत्वका उल्लेख किया गया सम्मेलन में यह स्वी किया गया कि" प्रत्येक सदस्य राष्ट्र केन्द्रीय प्रभुत्व के नियंत्रण के अन्तर्गत मुफ्त सार्वजनिक रोजगार कार्यालय की स्थापना करेगा[1]।"

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का सदस्य होने के नाते भारत सरकार ने सन् १९२१ में देश में सेवायोजन कार्यालयों कीस्थापना सम्बन्धी प्रस्ताव कासमर्थन कर सेवायोजन सेवा काआरम्भ सर्व-प्रथम द्वितीय महायुद्ध के पश्चात सेना से विमुक्त कर्मिकों एवं सैनिकों को नागरिक जीवन में व्यवस्थित ढ्ग से नियोजित करने के विचार से किया गया। अतएवं जुलाई, १९४५ में पुर्वास एवं रोजगार महानिदेशालय की स्थापना केन्द्रीय स्तर पर की गयी और देश के विभिन्न भागों में सेवायोजन कार्यालय खोले गये प्रारम्भ में सेवायोजन कार्यालय कीसुविधाऐ सैन्य वियोजित कर्मिकों कर्मिकों एवं युद्ध कार्य से मुक्त व्यक्तियों को उपलब्ध करायीगयी थी। परन्तु सन् १९४७ में देश के स्वतन्त्र होने के उपरान्त भारत वर्ष के विभाजन के फलस्वरूप विस्थापितों के पुनर्वास की समस्या प्रारम्भ हुई, जिसके सामाधान का भार सेवायोजन कार्यालयों को सौंपा गया। भारत वर्ष में सर्व सधारण की सुविधा के लिए वर्ष १९४८ में सेवायोजन कार्यालय के द्वार खोल दिये गये, परन्तु सेवायोजन से प्राप्त सुविधाओं को सर्व सधारण को उपलब्ध कराने तथ देश की आर्थिक सामाजिक एवं प्रशासनिकविकास में गतिशिलता लाने के उद्देश्य से वर्ष १९५२ में संसद सदस्य श्री शिवाराम की अध्यक्षता में, "प्रशिक्षण एवं सेवायोजन सेवा संगठन समिति" का गठन किया गया जिसे शिवाराम कमेटी के नाम से जाना जाता है। इस कमेटी की संस्तुति के अधार पर १ नवम्बर १९५६ में सेवा योजन कार्यालयों का दैनिक प्रशासन भारत सरकार से राज्य सरकार को हस्तान्तरित कर दिया गया सेवायोजन कार्यालयों की कार्य प्रणाली को सुचारू रूप से चलाने के लिए वर्ष १९५९ में सेवायोजन कार्यालय ।। रिक्तयों का अनिवार्य अधिसूचना अधिनियम १९५९ ।। पारित किया गया, जिसे १ मई, १९६० से देश में प्रभावी किया गया। वर्ष १९६० में पुर्नवास एवं रोजगार महानिदेशालय का नाम "सेवायोजन एवं प्रशिक्षण महानिदेशालय" रख दिया गया।

१- उदीन, हसन, "रोल आफ इम्प्लाइमेन्ट एक्सचेंज इन इंडिया," योजना, एनुअल, जनवरी १९७९ पृ० ७३।

उत्तर-प्रदेश में नवम्बर, १९५९ में सेवायोजन कार्यालयों की संख्या मात्र २४ थी। यह संख्या, तदुन्तर इसकी उपयोगिता को ध्यान में रखकर वर्ष १९५९-६० में बढ़ाकर ४२ की गई जो वर्ष १९६०-६१ में बढ़कर ५७ हो गई। वर्ष १९६६ में यह संख्या ६४ तथा वर्ष १९७१ में ५७ थी। इस समय, १९८२ तक ८४ सेवायोजन कार्यालय प्रदेश में कार्यरत है। इनमें १३ क्षेत्रीय सेवायोजन कार्यालय ४३ जिला सेवायोजन कार्यालय, १४ नगर सेवायोजन कार्यालय, १० विश्वविद्यालय सेवायोजन सूचना एवं मंत्रणा केन्द्र, एक विशिष्ट सेवायोजन कार्यालय ।। विकलांग ।।, एक विशिष्ट सेवायोजन कार्यालय, ।। अनुसूचित जाति तथा जनजाति ।। तथा एक व्यवसायिक एवं प्रबन्धकीय सेवायोजन कार्यालय सम्मिलित है। इसके रोजगार विकास इकाइयो, सेवायोजन कार्य प्रणाली के विकास एवं गतिशीलता लाने के उद्देश्य से स्थापित की गई, जो शोध कार्य एवं सर्वेक्षण कार्य में व्यस्त है। आगरा जनपद में चालू वित्तीय वर्ष में एक चल सेवायोजन कार्यालय की स्थापना भी की जा चुकी है।

प्रदेश में, भारत सरकार के द्वारा निदेशक, प्रशिक्षण एवं सेवायोजन, उ०प्र० के देख-रेख एवं समन्वय से कानपुर में १९७० में एक अध्यापन एवं मार्ग दर्शन केन्द्र ।। कोचिंग का गाइडेन्स सेन्टर ।।, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के अभ्यर्थियों के लिए कार्यरत है। उ० प्र० सरकार द्वारा अनुसूचित जाति और जनजाति तथा पिछड़े वर्ग के अभ्यर्थियों के अध्यापन एवं मार्ग दर्शन हेतु ५ कोचिंग-कम-गइडेन्स सेन्टर भी स्थापित किये गये है।

बेरोजगारी की समस्या के अध्ययन तथा सामाधान हेतु रोजगार सूचना कार्यक्रम, व्यावसायिक सूचना एवं मंत्रणा कार्यक्रम, रोजगार विकास कार्यक्रम शोध एवं सर्वेक्षण कार्यक्रम चलाये जाते है १५ अगस्त, १९७८ से निदेशालय द्वारा एक मासिक "उ०प्र० रोजगार पत्रिका" का प्रकाशन भी किया जा रहा है, जो बेरोजगार व्यक्तियों अभिभावकों तथा पाठकों को स्वतः रोजगार प्रमुख समाचार, रोजगार प्रशिक्षण एवं शिशिक्षु सुविधाऐं, सामान्य ज्ञान, लघु एवं कुटीर उद्योग-धन्धों को अपनाने तथा से सेवायोजन कार्यालय की कार्य प्रणाली, अधिसूचित रिक्तियां आदि की सूचनाओं से यथा सम्भव ग्रामीण अंचलों को भी अवगत कराती है। सितम्बर १९७८ में प्रशिक्षण एवं सेवायोजन निदेशालय के मुख्यालय पर एक स्वतः रोजगार कक्ष की स्थापना की गई, जो क्षेत्र के जिला सेवायोजन अधिकारियों को स्वतः रोजगार के लिए ऋण, संयन्त्र, तैयार माल की बिक्री आदि की सुविधाओं से परिचित कराता है ताकि वे उन्हें स्वतः रोजगार के इच्छुक व्यक्तियों तक पहुंचा सके एवं उनका भली प्रकार मार्ग दर्शन कर सकें।

सेवायोजन कार्यालय का मुख्य कार्य बेरोजगार अभ्यर्थियों का पंजीयन करके निःशुल्क एवं निष्पक्ष सेवायोजन सहायता प्रदान करना है। साथ ही प्रदेश के सेवायोजकों को उनके अधिष्ठान में रिक्त हुए पदों की अधिसूचना के अनुरूप कुशल एवं सुयोग्य कर्मचारी उपलब्ध कराना है।

उ०प्र० में सेवायोजन सहायता कार्यक्रम के अन्तर्गत जो विभिन्न सुविधाएं उपलब्ध करायी गयी, उनका विवरण निम्न तालिका में दर्शाया गया है[१] :——

तालिका न० : १

क्रमसंख्या विवरण	१९८०	१९८१	१९८२
१- पंजीकृत अभ्यर्थी	७९११४७	८२९४००	८६०५७९
२- अधिसूचित रिक्त स्थान	६३०३२	६७६४६	६६१३३५
३- रोजगार पर लगाये गये अभ्यर्थी	३७१५२	४०६३७	३६८७३
४- वर्ष के अन्त में सजीव पंजिका पर अभ्यर्थी	१३६४०८९	१५०५५६३	१६१४९५६

१९८० वर्ष की तुलना में १९८१ वर्ष में पंजीयन, कामपर लगाये गये अभ्यार्थियों तथा अधिसूचित रिक्तियों एवं सजीव पंजिका पर उपलब्ध अभ्यर्थियों की संख्या में वृद्धि हुई है। इस वृद्धि का प्रमुख कारण उ०प्र० सरकार द्वारा विकास की नयी योजना में प्रारम्भ करना तथा जिला स्तर पर नये-नये उद्यम तथा छोटे-छोटे उद्योगों को स्थापित करने की दिशा में व्यापक कार्यक्रम चलाकर रोजगार के नये अवसरों में वृद्धि करना ही दृष्टिगोचर होता है। १९८१ वर्ष की तुलना में आलोच्य वर्ष १९८२ के पंजियन तथा सजीव पंजिका पर उपलब्ध अभ्यर्थियों की संख्या में वृद्धि हुई, जबकि सेवायोजन कार्यालयों को अधिसूचित रिक्त स्थानों तथा रोजगार पर लगाये गय अभ्यर्थियों की संख्या में कमी हुई है। इसका प्रमुख कारण केन्द्रीय सरकार तथा राज्य सरकार के नियोजकों द्वारा गत वर्ष की अपेक्षा में कम संख्या में रिक्तियों की अधिसूचित करना है।

१- स्रोत्र - शिक्षण एवं सेवायोजन निदेशालय, उ०प्र०।

स्वत: रोजगार कार्यक्रम :----------

सवेतन रोजगार के क्षेत्र में रोजगार के नए अवसरों की सीमितताओं तथा प्रदेश में हुए आर्थिक एवं औद्योगिक विकास के फलस्वरूप स्वत: रोजगार के क्षेत्र में उपलब्ध नये-नये व्यवसायों की रोजगार क्षमता को ध्यान में रखते हुए इस बात की आवश्यकता प्रतीत की गई कि सेवायोजन कार्यालयों में पंजीकृत बेरोजगार अभ्यर्थियों को स्वतं रोजगार के उपयुक्त व्यवसाय धंधों तथा स्वत: रोजगार अपनाने के इच्छुक उद्यमशील व्यक्तियों को शासन तथा बैंकों आदि की ओर से दी जा रही सुविधाओं तथा स्वत: नियोजन के प्रोन्नयन के लिए बनायी गई विभिन्न योजनाओं की भली भांति जानकारी कराकर तथा प्रभावी ढंग से मार्ग निर्देशन देकर उन्हें स्वत: रोजगार के क्षेत्र में अपना रोजगार धन्धा आरम्भ करने के लिए अनुप्रेरित किया जाय। स्वत: रोजगार में रत उद्यमशील व्यक्ति व्यक्ति न केवल स्वयं रोजगार से लगते है वरन् अपने धन्धे में दूसरे अन्य बेरोजगार व्यक्तियों को रोजगार प्रदान करते है। इस प्रकार रोजगार सृजन में स्वत: रोजगार गुणात्मक प्रभाव उत्पन्न करता है। स्वत: रोजगार का एक महत्वपूर्ण पहलू यह भी है कि इसका क्षेत्र अत्यन्त विशाल है। युवा, वृद्ध एवं बच्चे, पुरुष एवं महिलायें, शिक्षित एवं शिक्षाहीन सभी लोग अपनी योग्यता, अनुभव, क्षमता एवं रूचि के अनुसार स्वत: रोजगार के क्षेत्र में अपना धन्धा आरम्भ कर सकते है। सवेतन रोजगार की भांति इसमें आयु आदि का प्रतिबन्ध भी नहीं है। परन्तु प्रारम्भ से ही सवेतन नौकरी पाने की आशा से शिक्षा प्राप्त कर रहे युवकों एवं युवतियों को स्वत: रोजगार के क्षेत्र की ओर उन्मुख करने के लिए उन्हें व्यापक रूप से व्यावसायिक मार्ग निर्देशन प्रदान करने तथा योजना बद्ध ढंग से अनुप्रेरित किये जाने की अत्यन्त आवश्यकता है, जिसकी पूर्ति सेवायोजन कार्यालयों द्वारा प्रभावी ढंग की की जा सकती है। सेवायोजन कार्यालयों में पंजीकृत अधिकांश बेरोजगार अभ्यर्थी पंजीयन, सम्प्रेषण अथवा व्यवसायिक सूचना आदि प्राप्त करने के लिए व्यवसाय मार्ग निर्देशन कक्ष में प्रशिक्षित एवं अनुभवी रोजगार अधिकारियों के सम्पर्क में बार- बार आते है और इस प्रकार सेवायोजन कार्यालय इस कार्य को भली भांति सम्पन्न कर सकते है।

उपरोक्त पृष्ठ भूमि में तथा उपर्युक्त उद्देश्य की पूर्ति हेतु उ०प्र० शासन द्वारा वर्ष १९७८-७९ के उत्तरार्ध में इस निदेशालय में एक स्वत: नियोजन कोष्ठ की स्थापना की गई:। शासन के विभिन्न विभागों, सरकारी निगमों, एजेंसियों, बैंकों एवं वित्तीय संस्थाओं से स्वत: नियोजन संबंधी विभिन्न योजनाओं तथा स्वत: नियोजन के इच्छुक उद्यमियों को दी जाने वाली सुविधाओं का विवरण एकत्र करके सेवायोजन कार्यालयों तथा औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थाओं के माध्यम से वहां पंजीकृत बेरोजगार अभ्यर्थियों एवं प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे शिल्पकारों को उनकी जानकारी कराना, समुचित मार्ग निर्देशन देकर उन्हें स्वत: रोजगार के लिए अनुप्रेरित करना, स्वत: रोजगार के इच्छुक व्यक्तियों को विभिन्न एजेंसियों,

बैंको आदि से वांछित सहायता, सुविधायें उपलब्ध कराने में सहायता प्रदान करना तथा स्वतः रोजगार कार्यक्रम का व्यापक प्रचार एवं प्रसार करना आदि इसके मुख्य कार्य है। प्रदेश मे स्वतः नियोजन कार्यक्रम प्रभावीढ़ग से कार्यान्वयन तथा उसे वांछित गति प्रदान करने के लिए कोष्ठ द्वारा प्रदेश के सेवायोजन अधिकारियों तथा औद्योगिक प्रशिक्षाणसंस्थानों के प्रधानाचार्यों को समय-समय पर निर्देश भी दिये जाते है।

अन्य दायित्यों की भांति रोजगार अधिकारियों द्वारा इस नए दायित्व का संवहन भी पूरी लगन एवं उत्साह के साथ कियागया। स्वतः नियोजन प्रकोष्ठ की की स्थापना के बाद वर्ष १९७८ के अन्तिम तीन-चार माह में सेवायोजन कार्यालयों द्वारा केवल १६ ~~बेरोज~~ बेरोजगार व्यक्तियों को स्वतः नियोजित कराया गया। इसके उपरान्त वर्षः१९७९ से स्वतः नियोजन के लिए किये गये कार्यों तथा प्राप्त उपलब्धियों में निरन्तर वृद्धि होती गई। इन कार्यालयों की माध्यम से वर्ष १९७९ में ६४६, वर्ष १९८० में२३६८ वर्ष १९८१ में ३७१५ तथा आलोच्य वर्ष १९८२ में ३७०७ बेरोजगार व्यक्तियों को स्वतः रोजगार के क्षेत्र में नियोजित कराया गया। यही नहीं, निदेशालय स्थित स्वतः रोजगार प्रकोष्ठ एवं सेवायोजन कार्यालयों, औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थाओं द्वारा किये गये प्रचार, प्रसार कार्यों तथा आयोजित गोष्ठियों, सामुहिक वार्ताओं आदि के फलस्वरूप स्वतः रोजगार की ओर बेरोजगार अभ्यर्थियों के रूझान में भी पर्याप्त वृद्धि हुई है। वर्ष १९७९ के अन्त में रोजगार कार्यालयों में स्वतः रोजगार पंजी में कुल केवल ५९४६ व्यक्ति पंजीकृत थे। वर्ष १९८० - ८१ तथा आलोच्य वर्ष १९८२ में एसे व्यक्तियोंकी संख्या क्रमशः ११४७६,१८३९८ एवं २४०६४ होई। इस प्रकार गत तीन वर्षों में स्वतः रोजगार की ओर उन्मुख बेरोजगार व्यक्तियों की संख्या में चार गुनी से भी अधिक वृद्धि हुई है।[1]

अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लिए सेवायोजन :------

अनुसूचित जाति एवं जनजाति के अभ्यर्थियों का सेवायोजन सम्बन्धी हितों की ओर प्रदेश सरकार का विशेष ध्यान आकर्षित होता रहा है। समय-समय पर शासन ने इन वर्गों के लिए निर्धारित आरक्षण की पूर्ति राज्य सेवाओं में सुनिश्चित कराने हेतु आदेश जारी किये है। इसी लक्ष्य की पूर्ति की दिशा में तथा उक्तवर्ग के प्रार्थीयों की आपूर्ति निश्चित तथा नियमित करान हेतु एक विशिष्ट सेवायोजन कार्यालय दुद्धी ।। मिर्जापुर ।। की स्थापना वर्ष, १९७९ में की गयी।

१- वार्षिक कार्य विवरण - १९८२, प्रशिक्षण एवं सेवायोजन निदेशालय श्रम विभाग, उ०प्र०, पृ० २७

प्रदेश के सेवायोजन कार्यालय में इस वर्ग के अभ्यर्थियों के लिए पंजियन तथा सम्प्रेषण और मार्ग निर्देशन की विशेष सुविधाएँ प्रदान की जा रही है। वर्ष १९८१ तथा १९८२ में क्रमश: इस वर्ग के लिए १५९७४८ तथा १५२३७१ अभ्यर्थी पंजीकृत किये गये। राज्य के विभिन्न सेवायोजन कार्यालयों द्वारा इस वर्ग के वर्ष १९८१ तथा ८२ में क्रमश: ९४४३ तथा ८५९० प्रार्थियों को रोजगार पर लगायागया। ३१ दिसम्बर १९८२ के अन्त में सेवायोजन कार्यालयों की संजीव पंजिका पर इस वर्ग के अभ्यर्थियों की संख्या २७७३४६ थी[1]।

महिला अभ्यर्थी :------

महिला अभ्यर्थीयों को भी अन्य अभ्यर्थियों के समान योजना वृह सेवायोजन सहायता प्रदान करने के लिए विशेष ध्यान दिया गया है। यद्यपि इस वर्ग के अभ्यर्थियों को राजकीय सेवा में किसी प्रकार की प्राथमिकता तथा वरीयता प्रदान नहीं की गयी है फिर भी यह सुविचारित मत है कि महिलाओं के हित पर प्रथम तथा प्रमुख ध्यान दिया जाता चाहिए। इसी कारणसे महिला अभ्यर्थीयों को विशेष वर्ग के अभ्यर्थियों के समान सेवायोजन कार्यालयों मे पृथक पंजीयन तथा सम्प्रेषण की सुविधा उपलब्ध करायी गयी है। जिससे इस वर्ग के अभ्यार्थियों को भी रोजगार के अवसरों का समुचित रूप से लाभ प्राप्त हो। वर्ष१९८१ तथा १९८२ में क्रमश: ५४०६८ तथा ४८८३१ अभ्यर्थियों का पंजीयन सेवायोजन कार्यालय द्वारा किया गया। इन कार्यालयों द्वारा वर्ष १९८१ तथा ८२ में क्रमश: २२७७ एवं २१०९ महिला अभ्यर्थियों को सेवायोजित कराया गया है। ३१ दिसम्बर, १९८२ को विभिन्न सेवायोजन कार्यालयों में ९४०६२ महिला अभ्यर्थी संजीव पंजिका परउपलब्ध थी।[2]

भूत पूर्व सैनिक :------

केन्द्र सरकार की सेवाओं के लिए भूतपूर्व सैनिकों को सेवा में लगाने के सम्बन्ध में प्राथमिकता प्रदान की गयी है। केन्द्रीय सेवाओं में इस वर्ग के अभ्यर्थियों के लिए तृतीय एवं चतुर्थ श्रेणी के पदों पर आरक्षण की व्यवस्था भी है।

१-वार्षिक कार्य विवरण-१९८२, प्रशिक्षण एवं सेवायोजन निदेशालय श्रम विभाग, उ०प्र०पृ०५।
२- वही, पृ० ५।

इसी प्रकार की सुविधायें उ०प्र० सरकार द्वारा भी प्रदान की गयी है। तृतीय एवं चतुर्थ श्रेणी के पदों के लिए आरक्षण सुविधा उपलब्ध करायी गयी है तथा सेवाओं में आयु सीमा में भी छुट प्रदान की है जिससे भूतपूर्व सैनिकों को राजकीयसेवा में उचित स्थान सुलभ हो सके।

वर्ष १९८० तथा ८१ एवं १९८२ में क्रमश: १२७७२ तथा १२१२६ एवं १००८२ भूतपूर्व सैनिकों की पंजीयन सेवायोजन कार्यालयों द्वारा किया गया। वर्ष १९८१ तथा ८२ में क्रमश: ९३० तथा ९४७ भूतपूर्व सैनिकों को रोजगार में लगाया गया। ३१ दिसम्बर, १९८२ को १५,९०० ऐसे अभ्यर्थी सेवायोजन कार्यालयों की संजीव पंजीका पर उपलब्ध थे।[१]

राष्ट्रीय सेवायोजन सेवा के कार्यकारी दल की पांचवीं संगोष्ठी में किये गये निर्णय के अनुसार उच्च शिक्षा प्राप्त अभ्यर्थियों के सेवायुक्तीकरण हेतु से व्यवसायिक एवं प्रबन्धकीय सेवायोजन कार्यालय की स्थापना प्रशिक्षण एवं सेवा नियोजन निदेशालय में वर्ष १९६३ में पंजीयन कर उन्हें सेवायोजन सम्बन्धी सहायत प्रदान कर रहा है एवं प्रदेश के सेवायोजन कार्यालयों द्वारा उक्त स्तर के अभ्यर्थियों के लिए अधिसूचित रिक्तियों में इन अभ्यर्थियों को सम्प्रेषित कर उन्हें सेवायोजित कराया जाता है।

आलोच्य वर्ष में प्रभावी आदेशों में संशोधन कर ऐसी व्यवस्था कीगयी है कि विज्ञान, कृषि, सांख्यकीय तथा गणित स्नातकोत्तर अभ्यर्थियों के पंजीयन प्रदेश के उन सेवायोजन कार्यालय में किये जाय जिनके कार्य क्षेत्र में वे निवास करते है परन्तु इस वर्ग के अभ्यर्थियों की व्यावसायिकएवं प्रबन्धकीय सेवायोजन कार्यालय में उपलब्धी के दृष्टिकोण से इन अभ्यर्थियों के द्वितीय रूप-पत्र व्यवसायिक एवं प्रबन्धकीय सेवायोजन कार्यालय में प्रेषित किया जाना भी अनिवार्य कर दियागया है जिससे उक्त वर्ग के अभ्यर्थियों सेसम्बन्धित व्यवसायिकएवं प्रबन्धकीय स्तर की रिक्तियां प्राप्त होने पर इन अभ्यर्थियों को विचारित किया जाना सम्भव हो सके।

१- वार्षिक कार्य विवरण - १९८२, शिक्षण एवं सेवायोजन निदेशालय, उ० प्र० पृ० ५।

१९८२ में व्यवसायिकएवं प्रबन्धकीय सेवायोजन कार्यालय लखनऊ द्वारा अभ्यर्थियों के सेवायुक्तीकरण के सम्बन्ध में कीगयी कार्यवाही का विवरण निम्नवत है।[१] ------

तालिका न० : २

वर्ष	पंजीकृत अभ्यर्थियों की संख्या	सम्प्रेषित अभ्यर्थी की संख्या	नियुक्त हुए अभ्यर्थियों की संख्या
१९८०	१८७९	४११०	६७
१९८१	२००४	३८७७	७०
१९८२	१०८८	२७७५	५५

विज्ञान के स्नातकोत्तर अभ्यर्थियों कीपंजीयन प्रक्रिया में परिवर्तन के फलस्वरूप १९८२ में अभ्यर्थियों के पंजीयन में गत वर्ष की अपेक्षा ह्रास हुआ है। नियुक्तियों में परिलक्षित ह्रास का मुख्य कारण सेवायोजकों द्वाराचुनाव परिणामों की सूचना प्रेषित न किया जाना है। आलोच्यअवधि में, पंजीकृत १०८८ अभ्यर्थियों में १७१ महिलाये सम्मलित है एवं २७७५ सम्प्रेषित अभ्यर्थियों में २९६ महिलाये स सम्मलित है तथा नियुक्तियों में उनकी संख्या ६ है।

विकलांगों को सेवायोजन :------

शारिरिक रूप से अक्षम व्यक्तियों कोर समुचित एवं योजना बद्ध ढ्ग से सेवायोजन करने के उद्देश्य से भारत सरकार तथा राज्य सरकारों के सहयोग से देश के विभिन्न भागों में १८ विशिष्ट सेवायोजन कार्यालय स्थापित किये गये है। इनमें से एक कार्यालय अप्रैल वर्ष १९६५ में कानपुर में स्थापित किया गया। यह कार्यालय सन् १९६५ से नेत्रहीन, मूक, बधिर तथा अपंग विकलांगों को

१- स्रोत - सेवायोजन कार्यालय, लखनऊ, उत्तर-प्रदेश।

नौकरी सम्बन्धी समस्त प्रकार की सेवायें करता चला आ रहा है। अगस्त १९८२ में भारत सरकार के निर्देशानुसार चौथी श्रेणी जो कुष्ठ रोग के पीड़ित व्यक्ति है उन्हे भी विकलांगों की श्रेणी में मान लिया गया है।

विशिष्ट सेवायोजन कार्यालय, कानपुर में निवास करने वाले समस्त विकलांगों को नौकरी में लगाने हेतु पंजीकृत करता है तथा नियोजकों के यहां उनका साक्षात्कार एवं चयन करता है। और उनको नौकरी में स्थापित करता है। इसके अतिरिक्त विकलांग व्यक्तियों को व्यवसाय निर्देशन देकर शिक्षण, प्रशिक्षण तथा सेवायोजन के अवसारों कीसूचना सुलभ कराने एवं स्वत: नियोजन हेतु मार्ग दर्शन प्रदान करता है। स्वत: नियोजन हेतु विभिन्न बकों से, कम्पोनेन्ट प्लान तथा आई०आर० डी० योजना के अर्न्तगत सस्ते दर पर ऋण उपलब्ध कराता है। विकलांगों को विभिन्न व्यवसायिक प्रशिक्षण हेतु तकनीकी विद्यालयों में तथा शैक्षिक विद्यालायें में भर्ती करता है। शिशिक्षु प्रशिक्षण का लाभ दिलाता है। विशिष्ट स्वास्थ्य प्रकोष्ठ द्वारा नि:शुल्क स्वास्थ्य परिक्षण कराता है। शासन द्वारा प्रदत्त विभिन्न सुविधाओं को उन्हें अवगत कराता है तथा उत्तम विकलांग कर्मचारियों और ऐसे नियोजकों जो विकलांगों को अधिक संख्या में लगाते है। राष्ट्रीय पुरस्कार एवं राज्यपाल पुरस्कारदिलाने हेतु सूचना एवं मन्त्रणा के साथ राष्ट्रीय, प्रादेशिक स्तर का सम्मान एवं पुरस्कार दिलाता है।

विकलांगों के लिए विशिष्ट सेवायोजन कार्यालय, कानपुर के अतिरिक्त उ०प्र० शासन द्वारा वर्ष १९७८ में आगरा, इलाहाबाद, वराणसी, लखनऊ के क्षेत्रीय सेवायोजन कार्यालयों में विकलांगों को विशेष प्रयास करके रोजगार सहायता उपलब्ध कराने हेतु ४ कोष्ठकों की स्थापना की गयी थी।

वर्ष १९८२ में प्रदेश के सेवायोजन कार्यालयों द्वारा विकलांगों को सेवायोजन सहायतार्थ जो कार्य किये गये, उनका विवरण नीचे दिया जा रहा है[१]::-----

---

१- वार्षिक कार्य - विवरण - १९८२, प्रशिक्षण एवं सेवायोजन निदेशालय श्रम विभाग,उत्तर-प्रदेश लखनऊ पृ० ८।

तालिका न० : ३

क्रम सं० विकलांग	पंजीयन	नौकरी पर लगे	वर्ष के अन्त में सजीव पंजीकालपर उपलब्ध अभ्यर्थी
१– नेत्रहीन	४३२	४३	११४७
२– मुक-बधिर	१५६	१९	४६९
३– अपंग	५०२५	३३२	१२२८९
४– कुष्ठ रोग	—	–	—
योग	५७१३	३९४	१३९०५

परियोजना निदेशक के रूप में निदेशक, प्रशिक्षाण एवं सेवायोजन, उ०प्र० के समन्वय से भारत सरकार के श्रम मन्त्रालय के अर्न्तगत रोजगार एवं प्रशिक्षाण, महानिदेशालय के तत्वाधान में प्रदेश के विकलांगों के पुनर्वासिन हेतु एक व्यवसायिक पुनर्वासिन केन्द्र की स्थापना कानपुर ।।सी०टी० आई० परिसर ।। में वर्ष १९७४ में की गयी थी । पूरे देश में इस प्रकार के १३ केन्द्र कार्यरत है । इन केन्द्र कार मुख्य उद्देश्य विकलांगों की सेवायोजकता में वृद्धि करना है जिससे विकलांग व्यक्ति स्वतन्त्र रूप से अपना जीविकोपार्जन कर सकें ।

इसकेकेन्द्र में सम्बन्धित विषयों के विशेषज्ञों कीसेवाऐ उपलब्ध है । व्यवसायिक मूल्यांकन हेतु सिलाई, कटाई, बुनाई, धातु कला काष्ठ कला, पेंटिग, रेडियों – टेलीविजन एवं वाणिज्य व्यवसाय से सम्बन्धित कर्मशालायें भी है । इस कु केन्द्र द्वारा विकलांगों को केन्द्र में मूल्यांकन की अवधि में एकमाह के लिए ७० रू० की छात्र वृत्ति भी प्रदान की जाती है । कार्य करने की आयु १६ वर्ष से ४५ वर्ष के विकलांग किसी भीकार्य दिवस पर आकर कुकेन्द्र में प्रवेश ले सकते है ।

जनसंख्या मेंवृद्धि एवं रोजगार में असन्तुलन :------

जनसंख्या वृद्धि का रोजगार की स्थिति पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। बढ़ती हुई जनसंख्या के साथ प्रतिवर्ष श्रम शक्ति में सम्मलित होने वाले व्यक्तियों में जितनी वृद्धि होती है उतनी वृद्धि रोजगार के अवसरों में नहीं हो पाती जिसके कारण श्रम की मांग व पूर्ति के मध्य असन्तुलन तथा फलस्वरूप बेरोजगारी व अर्द्ध बेरोजगारी की समस्या में वृद्धि होती है देश में प्रतिवर्ष ३.३ मिलियन बेरोजगार व्यक्ति श्रम शक्ति में सम्मलित हो रहे हैं एक अनुमान के अनुसार देश में १९७१-८१ के मध्य जितने नये बेरोजगार होंगे उनकी संख्या ग्रेटब्रिटेन की आबादी की दो गुना होगी।

बेरोजगारी हर क्षेत्र में बढ़ी है चाहे वह कृषि का क्षेत्र है या उद्योग व सेवाओं का। इसी प्रकार ग्रामीण हो अथवा शहरी हर क्षेत्र हर वर्ग में बेरोजगारी की समस्या में वृद्धि होती जा रही है। यद्यपि अनेक कठिनाइयों के कारण देश एवं प्रदेश में बेरोजगारी के पूर्ण अनुमान उपलब्ध नहीं हैं किन्तु विभिन्न जनगणनाओं तथा कुछ कमेटियों के प्रतिवेदनों से देश की एवं प्रदेश की रोजगार स्थिति पर काफी प्रकाश पड़ता है।

जनसंख्या वृद्धि तथा बेरोजगारी जैसी समस्याओं के अधिक जटिल रूप में विद्यमान होने का एक प्रमुख कारणइनसे सम्बन्धित सरकारी नीतियों का काफी हद तक असफल होना है। यद्यपि लगभग प्रत्यके पंचवर्षीय योजनाओं में इन समस्याओं के लिए नीतियां बनाई गयी किन्तु समस्याओं के हल में इनसे कोई विशेष योगदान न मिल सका। प्रथम योजना काल तथा इसके बाद तक का समय आर्थिक दृष्टि से केवल प्रयोगात्मक कहा जा सकता है जिसमें जनसंख्या नियंत्रण तथा रोजगार सृजन जैसे राष्ट्रीय महत्व की समस्याओं पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया गया। अन्य योजनाओं में जनसंख्या समस्या के हल की नीतियों के लिए व्ययमें तो लगातार वृद्धि होती गयी किन्तु इस वृद्धि के अनुपात में लक्ष्यों की प्रति नहीं हो सकी यही दशा रोजगार के क्षेत्र में भी है।

विकासशील एवं विकसित देशों में बेरोजगारी में एक विशेष प्रकार कीभिन्नता पायी जाती है। विकासशील देशों में खुला बेरोजगारी, सुषुप्त बेरोजगारी, मौसमी बेरोजगारी आदि साधनों की न्युनता व कृषि प्रधानता के कारण पायी जाती है। जबकि विकसित देशों में बेरोजगारी प

प्रभावपूर्ण मांग में कमी के कारण उत्पन्न होती है। विकासशील देशों में अन्य उत्पत्ति साधनों के अभ अभाव में अतिरिक्त श्रम को नहीं खपाया जा सकता। इन देशों में ।।उ० प्र० में ।। जनसंख्या में

परिवर्तन से अर्थव्यवस्था पर दो प्रभाव पड़ते है :--------

१- राष्ट्रीय ।। प्रदेश की ।। प्रतिव्यक्ति आय प्रभावित होती है जिसे आय प्रभाव कहते है।

२- पूंजी श्रम अनुपात में परिवर्तन आता है, इसे प्रतिस्थापन प्रभाव कहते है।

तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या उत्तर-प्रदेश की अर्थव्यवस्था को सामूहिक बेरोजगारी तथा अल्प बेरोजगारी में धकेल चुकी है। जब जनसंख्या में वृद्धि होती है तो कुल जनसंख्या में श्रमिकों का अनुपात बढ़ जाता है। परन्तु सम्पूरक साधनों के अभाव में रोजगार के अवसर बढ़ाना सम्भव नहीं होता। प परिणाम यह होता है कि श्रम-शक्ति में वृद्धि होनो पर बेरोजगारी तथा अल्प बेरोजगारी बढ़ जाती है। तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या आय, बचतों तथा विनियोजन को घटा देती है। इस प्रकार पूंजी - निर्माण धीमा पड़ जाता है। और रोजगार के अवसर घट जाते है जिससे अर्थव्यवस्था में बेकारी बढ़ जाती है। फिर ज्यों-ज्यों भूमि-पूंजी तथा अन्य साधनों के अनुपात में श्रम-शक्ति बढ़ती है, त्यों - त्यों प्रति व्यक्ति उपलब्ध परिपूरक साधन कम हो जाते है। परिणामस्वरूप बेकारी और अर्द्ध बेकरी बढ़ जाती है।

केन्द्र सरकार एवं उत्तर-प्रदेश सरकार के प्रयासें द्वारा यद्यपि रोजगार के अवसरों में वृद्धि हुई है लेकिन जनसंख्या वृद्धि की तीव्र दर ने इसे निष्फल बना दिया है। अब भी उत्तर-प्रदेश में शिक्षित एवं अशिक्षित बेकारों की संख्या देश के अन्य राज्यों की तुलना में काफी अधिक है जो इसके आर्थिक विका को सीधे प्रभावितकरती है। स्पष्ट रूप से, उत्तर-प्रदेश में प्रादेशिक संसाधनों के एक उचित भाग का प्रयोग रोजगार के अवसरों को बढ़ाने में किया जाना चाहिए जिससे इस बेकारी की समस्या को हल कि किया जाना न सके।

इसका इलाज केवल यही नहीं है कि चालू और पहले से चले आ रहे बेरोजगारों के लिए रोजगार के अवसर बढ़ाए जायं, बल्कि साथ ही साथ प्रभावपूर्ण परिवार नियोजन कार्यक्रम में माध्यमस से जनसंख्या पर भी नियंत्रण किया जाय।

किसी देश या प्रदेश की आर्थिक प्रगति के लिए मानवीय संसाधन एक महत्वपूर्ण निर्धारक तत्व है, क्यों उत्पत्ति के निष्क्रिय प्राकृतिक संसाधनों को अपने श्रम कौशल द्वारा धनोत्पादन में परिणित कर करने का श्रेय मानवीय संसाधन को ही है। "मानव" उत्पादन का साधन और साध्य अथवा कर्ता और उपभोक्ता दोनों ही है। अत: किसी देश या प्रदेश का आर्थिक विकास जनसंख्या की रचना, अकार, कार्यक्षमता और उसकी विभिन्न समस्याओं से पूर्णत: सम्बद्ध है। लिप्सन के मतानुसार किसी देश का धन मुख्य रूप से उसके निवासियों कीयोग्यता में निहित है।

अन्तिम जनगणना १९८१ के अनुसार उत्तर-प्रदेश की कुल जनसंख्या ११०८५०१९ है, जिसमें ५८,७८०,६४० पुरूष तथा ५२,०७७,३७९ स्त्रियां है। उत्तर-प्रदेश की अबादी सम्पूर्ण भारत की अबादी का १६.७ प्रतिशत है[1]। इसके पूर्व की जनगणना १९७१ के अनुसार उ0प्र0 की जनसंख्या ८८, ८८,३४१,१४४ थी, जिसमें ४७,०१६,४२१ पुरूष तथा ४१३२४७२३ स्त्रियों की संख्या थी। इस प्रकार जबकि १९६१-७१ के बीच जनसंख्यावृद्धि दर १९.७८ प्रतिशत थी लेकिन १९७१-८१ के बीच २५.४९ प्रतिशत हो गई। देश में जनसंख्या वृद्धि दर २४.७५ प्रतिशत है, अर्थात 0.७४ प्रतिशत देश की तुलना में उ0प्र0 में जनसंख्या वृद्धि की दर अधिक है[2]। यदि उ0प्र0 की जनसंख्या की तुलना विश्व की जनसंख्या से की जाय तो १२५ देशों में मात्र पांच देश सोवियत संघ, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, जापान एवं इंडोनेशिया चीन ही इससे बड़े है।[3]

वर्ष १९७१ की जनगणना के अनुसार उ0प्र0 की जनसंख्या का घनत्व ३००प्रतिवर्ग किमी0 था लेकिन १९८१ की जनगणना में यह बढ़कर ३७७ प्रतिवर्ग किमी0 हो गया। जबकि देश की जनसंख्या का घनत्व २२१ प्रतिवर्ग किमी0 ही है। देश की तुलना में उ0प्र0 की जनसंख्या का घनत्वसदैव अधिक रहा है। क्योंकि देश के ९ प्रतिशत क्षेत्रफल में उ0प्र0 कीलगभग १६ प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है।

१- सेन्सस आफ इंडिया, १९८१ उ0प्र0 ऐट ए ग्लान्स, डाइरेक्टर आफ सेंसस आपरेसन्स, यू0 पी0 सिरीज-२२, पेज ११।

२- उत्तर -प्रदेश -१९७८"इन फार्मेशन एण्ड पब्लिक रिलेशन्स-डिपार्टमेंट, उ0 प्र0,लखनऊ, पेज १६।

३- वही, पेज १६।

प्रत्येक जनगणना से मालूम होता है कि प्रदेश में स्त्रियों की तुलना में पुरूषों की संख्या अधिक पायी जाती है। प्रथम पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ मेंअर्थात १९५१ की जनगणना के अनुसार प्रदेश में प्रति एक हजार पुरूषों पर स्त्रियों की संख्या ९१० थी इसी प्रकार १९६१ की जनगणना में भी प्रदेश में प्रति एक हजार पुरूष पर स्त्रियों की संख्या ९०९ थी। वर्ष १९८१ की जनगणना में स्थिति बड़ी तेजी से परिवर्तित हुई अर्थात प्रति १००० पुरूषों पर स्त्रियों की संख्या ८८६ हो गई है[1]। यदि भविष्य में इसी प्रकार स्त्रियों की संख्या घटती रही तो दीर्घकाल में ।।लगभग १०० वर्ष में ।। स्त्रियों की संख्या पुरूषों की तुलना में उनकी आधी हो जायेगी। स्त्रियों की घटती हुई जनसंख्या प्रदेश के लिए एक समस्या है क्योंकि घटने का क्रम इस प्रकार से जारी रहा तो जनसंख्यास सम्बन्धी तथा सामाजिक बुराइयां पैदा होगी।

सन् १९७१ में राज्य में नगरों की संख्या ३३४ थी और इनमें से २२ ऐसे नगर है जिनकी जनसंख्या एकलाख से अधिक है। १९७१ की जनगणना के अनुसार कुल कर्मकरों में से १,५६,९७,८६६ लोग खेती बाड़ी करते है। ५४,५३,८२९ खेतिहर मजदूर है और ६१,८२,७६० लोगों के अन्य पेशे-धन्धे है प्रदेश मे प्रमुख रूप से ६ धर्मो को मानने वाले रहते है।

तालिका न0 :४

उ0प्र0में जनसंख्या एवं दशक वृद्धि[2]

	उत्तर-प्रदेश		भारत वर्ष	
जनगणना वर्ष	जनसंख्या लाख में	प्रतिशत वृद्धि पिछलेदिस वर्ष की तुलना में	जनसंख्या लाख में	प्रतिशत वृद्धि पिछले दस वर्ष की तुलना में
१९२१	४६७	——	२५१२	——
१९३१	४९८	६.६	२७८९	११.१
१९४१	५६५	१३.५	३१८५	१४.२
१९५१	६३२	११.९	३६१०	१३.३
१९६१	७३७	१६.६	४३९१	२१.६
१९७१	८८३	१९.८	५४७९	२४.८
१९८१[3]	११०८	२५.५	६८३८	२४.७५

१- भारत की जनगणना-१९८१, श्रृंखला-१-भारत, जनसंख्या के अन्तिम आंकड़े, पृ0 ६१।

२- स्रोत: ड्राफट, पांचवीय पंचवर्षीय योजना- उत्तर-प्रदेश।

३- भारत की जनगणना, १९८१ श्रृंखला-१, भारत, जनसंख्या के अन्तिम आंकड़े, पृ0 १ एवं ३।

उ0 प्र0 में जनसंख्या एवं दस वर्षीय वृद्धि तालिका न0 ४ से स्पष्ट है कि यद्यपि प्रदेश में १९८१ तक के जनगणना वर्षों में जनसंख्या वृद्धि लगातार रही है। लेकिन प्रतिशत वृद्धि प्रारम्भ में बहुत तेज रही है। १९२१ की तुलना में १९३१ की जनगणना में प्रतिशत वृद्धि ६.६ प्रतिशत रही जो १९४१ में १९३१ की तुलना में १३.५ प्रतिशत हो गई जो १९३१ की वृद्धि से लगभग दुगुनी थी १९५१ की जनगणना में १९ ४१ की तुलना में प्रतिशत वृद्धि घट गयी जबकि कुलजनसंख्या में वृद्धि थी। १९५१ के बाद जनसंख्या में प्रतिशत वृद्धि क्रमशः बढ़ती ही गयी लेकिन उनके बढ़ने की गति बहुत तेज नही थी इसी प्रकार भारत के सन्दर्भ में भी १९४१ के बाद १९५१ की जनगणना में प्रतिशत जनसंख्या वृद्धि १४.२ से १३.३ हो गई १९५१ के बाद भारत की जनसंख्या में प्रतिशत वृद्धि क्रमशः बढ़ती ही रही। जनसंख्या अधिक होने के कारण प्रतिशत में थोड़ी भीवृद्धि होने पर कुल जनसंख्या में तेजी से वृद्धि दिखायी पड़ती है।

तालिका न0 : ५

उत्तर-प्रदेश की क्षेत्रीय जनसंख्या एवं दशक वृद्धि[1]

क्षेत्र	जनसंख्या ॥१००० ॥			मिश्रित वार्षिक वृद्धि दर	
	१९५१	१९६१	१९७१	५१–६१	६१–७१
१-पर्वतीय	२५२२ ॥४.१॥	३१०६ ॥४.२॥	३८२२ ॥४.३॥	२.१	२.१
२-पश्चिमी	२१७१४ ॥३४.३॥	२५६७० ॥३४.८॥	३१३१४ ॥३५.४॥	१.७	२.०
३-केन्द्रीय	११२६५ ॥१७.८॥	१३१८९ ॥१७.९॥	१५७४४ ॥१७.८॥	१.६	१.८
४-पूर्वी	२४८२७ ॥३९.३॥	२८२८२ ॥३८.४॥	३३१७१ ॥३७.६॥	१.३	१.६
५-बुन्देलखण्ड	२८८८ ॥४.६॥	३४९९ ॥४.७॥	४२९१ ॥४.९॥	१.९	२.१
उत्तर-प्रदेश	६३२१६ ॥१००.०॥	७३७४६ ॥१००.०॥	८८३४२ ॥१००.०॥	१.६	१.८

नोट:--कोष्ठक में दिये गये अंक राज्य की कुल जनसंख्या के प्रतिशत है।

१- स्रोत-ड्राफ्ट फिफ्थ फाइव इयर प्लान, उ0प्र0।

पिछली तालिका से स्पष्ट है कि उ0 प्र0में सबसे अधिक जनसंख्या पूर्वी उत्तर-प्रदेश में है जहां प्रदेश की कुल जनसंख्या का लगभग ३८ प्रतिशत भाग निवास करता है। इसके बाद पश्चिमी उत्तर-प्रदेश में जनसंख्या निवास करती है, जिसका कुल जनसंख्या से लगभग ३४ प्रतिशत सम्बन्ध है। सबसे कम जनसंख्या पर्वतीय क्षेत्रों में पायी जाती है जहां प्रदेश की कुल जनसंख्या के लगभग ४.० प्रतिशत निवास करती है। इसी तरह बुन्देलखण्ड क्षेत्र में भी जनसंख्या लगभग ४.६ प्रतिशत निवास करती है। यद्यपि प्रदेश के सभी क्षेत्रों में कुल जनसंख्या में १९५१-१९७१ के बीच वृद्धि होती रही, लेकिन पूर्वी क्षेत्र में राज्य की कुल जनसंख्या से प्रतिशत घटता रहा, जैसाकि पिछली तालिका से स्पष्ट है। १९५१ में यह प्रतिशत ३९.३ था १९६१ में ३८.४ हुआ और १९७१ की जनगणना के समय ३७.६ रह गया। इसका तात्पर्य यह है कि प्रदेश की जनसंख्या पूर्वी क्षेत्र की तुलना में अन्य क्षेत्रों में अधिक बढ़ी है। जनसंख्या की वृद्धि पश्चिमी, पर्वतीय तथा बुन्देलखण्ड में अधिक रही। केन्द्रीय क्षेत्र में जनसंख्या का प्रतिशत राज्य की जनसंख्या से लगभग स्थिर रहा।

तालिका न0 : ६

उत्तर-प्रदेश के आर्थिक क्षेत्रों की जनसंख्या एवं घनत्व[1]

क्र0 संख्या	आर्थिक क्षेत्र	जनसंख्या		घनत्व ।।व्यक्ति प्रति वर्ग कि0मी0।।	
		१९७१	१९८१	१९७१	१९८१
१	२	३	४	५	६
१-	पर्वतीय क्षेत्र	३८२२	४८१५	७५	९४
२-	पश्चिमी क्षेत्र	३१३१४	३९३५७	३८१	४७९
३-	केन्द्रीय क्षेत्र	१५७४३	१९७०३	३४३	४३०
४-	पूर्वी क्षेत्र	३३१७१	४१५७४	३०७	३८४
५-	बुन्देलखण्ड	४२९१	५४३७	१४६	१८५
	उत्तर-प्रदेश	८८३४१	११०८८६	३००	३७७

१- उत्तर-प्रदेश की आर्थिक समीक्षा १९८१-८२ पृ0 सं0 १।

पिछली तालिका से ज्ञात होता है कि १९७१-८१ की अवधि में बुन्देलखण्ड एवं पर्वतीय क्षेत्र की जनसंख्या में क्रमश: २६.७ प्रतिशत व २६.० प्रतिशत की वृद्धि हुई थी, जो राज्य में हुई २५.५ प्रतिशत वृद्धि की तुलना में काफी अधिक रही। केन्द्रीय क्षेत्र की जनसंख्या में यह वृद्धि अन्य आर्थिक क्षेत्रों की तुलना में सबसे कम ।। २५.२ प्रतिशत ।। हुई सघनतम वृद्धि से पूर्वी क्षेत्र की जनसंख्या में १९७१-८१ के दशक में हुई २५.३ प्रतिशत की वृद्धि की तुलना में पश्चिमी क्षेत्र की जनसंख्या में २५.७ प्रतिशत कीवृद्धि हुई। प्रदेश की कुल जनसंख्या में पूर्वी क्षेत्र की जनसंख्या का अंश वर्ष १९७१ के ३७.६ प्रतिशत से घटकर वर्ष १९८१ में ३७.५ प्रतिशत तथा पश्चिमी क्षेत्र की जनसंख्या का अंश वर्ष १९७१ के ३५.४ प्रतिशत से बढ़कर ३५.५ प्रतिशत हो गया। जबकि बुन्देलखण्ड पर्वतीय तथा केन्द्रीय के क्षेत्र की जनसंख्या का अंश प्रदेश की कुल जनसंख्या में वर्ष १९७१ के अंश के अनुरूप ही रही जो वर्ष १९८१ में क्रमश: ४.९ प्रतिशत, ४.३ प्रतिशत तथा १७.८ प्रतिशत था।

वर्ष १९७१-८१ की अवधि में प्रदेश की जनसंख्या के घनत्व में ७७ व्यक्ति प्रतिवर्ग कि०मी० की वृद्धि हुई। इसके समक्ष पर्वतीय एवं बुन्देलखण्ड क्षेत्र में यह वृद्धि केवल क्रमश: १९ तथा ३९ हुई थी और इस प्रकार वर्ष १९८१ में इन क्षेत्रों मेंजनसंख्या का घनत्व क्रमश: ९४ तथा १८५ व्यक्ति हो गया। सघनतर से पूर्वी तथा पश्चिमी क्षेत्र की जनसंख्या के घनत्व में क्रमश: ९७ व ९८ व्यक्तियों की लगभग समान वृद्धि हुई जबकि केन्द्रीय क्षेत्र के घनत्व में ८७ व्यक्तियों कीवृद्धि हुई। इस प्रकार राज्य स्तर पर हुई वृद्धि की तुलना में इन तीनोंआर्थिक क्षेत्रों की जनसंख्या का घनत्व में अधिक वृद्धि रही। परिणामत: वर्ष १९८१ में पूर्वी, पश्चिमी व केन्द्रीय क्षेत्र में जनसंख्या का घनत्व क्रमश: ४८४, ४७९, ४३० रहा और घनत्व की दृष्टि से ये क्षेत्र १९८१ में प्रथम, द्वितीय व तृतीय स्थान पर रहे। इनके अतिरिक्त बुन्देलखण्ड क्षेत्र चतुर्थ व पर्वतीय क्षेत्र पांचवे स्थान पर रहे।

प्रदेश के आर्थिक क्षेत्रों के विभिन्न जनपदों में जनसंख्या के घनत्व को आगे की तालिका में दिखाया गया है :---------

तालिका न० : ७

उत्तर-प्रदेश के जनपदों का घनत्व के अनुसार आर्थिक क्षेत्रवार विवरण

आर्थिक क्षेत्र	राज्य के औसत घनत्व से अधिक घनत्व वाले जन पद	राज्य के औसत घनत्व से कम घनत्व वाले जन पद
१- पर्वतीय	---	८
२- पश्चिमी	१७	२
३- केन्द्रीय	८	१
४- पूर्वी	१३	२
५- बुन्देलखण्ड	-	५
उत्तर-प्रदेश	३८	१८

उपरोक्त तालिका से विदित होता है कि वर्ष १९८१ में प्रदेश के लगभग ६७.९ प्रतिशत जनपदों में जनसंख्या का घनत्व प्रदेश के औसत घनत्व ।। ३७७ व्यक्ति प्रतिवर्ग कि०मी० ।। से अधिक रहा । पश्चिमी, केन्द्रीय एवं पूर्वी क्षेत्रों में ऐसे जनपद क्रमशः ४४.७ प्रतिशत, २१.१ प्रतिशत व ३४.२ प्रतिशत पाये गये । पर्वतीय एवं बुन्देलखण्ड क्षेत्र के सभी जनपदों में जनसंख्या का घनत्व प्रदेश के औसत घनत्व से कम पाया गया। इस क्रम में यह उल्लेखनीय है कि लखनऊ जनपद का घनत्व ७९८ प्रदेश के औसत घनत्व के दूने से भी अधिक लगभग १११.७ प्रतिशत अधिक रहा ।

१- स्रोत : भारतीय जनगणना १९८१ ।। अस्थाई आंकड़े ।।

।।उत्तर-प्रदेश की आर्थिक समीक्षा १९८१-८२ अर्थ एवं संख्या प्रभाग राज्य नियोजन संस्थान, उ० प्र०, लखनऊ, पृ० सं० २ ।

तालिका न० : ८

उ०प्र० की कुल जनसंख्या में नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत[१]

क्र०सं०	आर्थिक क्षेत्र	कुल जन संख्या में नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत		१९७१-८१ में वृद्धि
		१९७१	१९८१	
१	२	३	४	५
१-	पर्वतीय क्षेत्र	१४.७	१८.४	३.७
२-	पश्चिमी क्षेत्र	१८.३	२३.८	५.५
३-	केन्द्रीय क्षेत्र	१७.४	२१.४	४.०
४-	पूर्वी क्षेत्र	८.२	१०.७	२.५
५-	बुन्देलखण्ड	१४.७	१९.९	५.२
	उत्तर-प्रदेश	१४.०	१८.०	४.०

उक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि कुल जनसंख्या में नगरीय जनसंख्या का अंश वर्ष १९७१ के १४.० प्रतिशत से बढ़कर वर्ष १९८१ में १८.० प्रतिशत हो गया १९७१-८१ दशक में कुल जनसंख्या में नगरीय जनसंख्या के शतांश की दृष्टि से पश्चिमी क्षेत्र जो १९७१ में सभी क्षेत्र से आगे था, की कुल जनसंख्या में नगरीय जनसंख्या के शतांश में ५.५ की सर्वाधिक वृद्धि होने के कारण प्रथम स्थान पर तथा पूर्वी क्षेत्र जो १९७१ में सभी आर्थिक क्षेत्रों का अनुगामी था, के इस शतांश में न्यूनतम २.५ की वृद्धि होने के कारण वर्ष १९८१ में भी पांचवे स्थान पर यथावत् बना रहा। कुल जनसंख्या में नगरीय जनसंख्या का अंश पर्वतीय एवं बुन्देलखण्ड क्षेत्र में वर्ष १९७१ में १४.७ प्रतिशत के समान स्तर पर था, किन्तु वर्ष १९८१ में बुन्देलखण्ड क्षेत्र की कुल जनसंख्या में नगरीय जनसंख्या का शतांश १९.९ तथा पर्वतीय क्षेत्र में मात्र १८.४ हो जाने के कारण बुन्देलखण्ड क्षेत्र तृतीय तथा पर्वतीय क्षेत्र चतुर्थ स्थान पर आ गया। केन्द्रीय क्षेत्र वर्ष १९७१ के समान १९८१ में भी द्वितीय स्थान पर बना रहा जहां नगरीय जनसंख्या वर्ष १९७१ में १७.४ प्रतिशत तथा वर्ष १९८१ में २१.४ प्रतिशत थी।

१- स्रोत - भारतीय जनगणना १९७१ व १९८१ ।। अस्थाई० आंकड़े ।। ।

तालिका न० : ९

१९८१ की जनगणना के अनुसार जनसंख्या में मुख्य कर्मकरों का आर्थिक क्षेत्रवार प्रतिशत [1]

क्र०सं०	आर्थिक क्षेत्र	जनसंख्या में कर्मकरों का प्रतिशत अंश				
		पुरूष	स्त्री	कुल	ग्रामीण	नगरीय
१	२	३	४	५	६	७
१-	पर्वतीय क्षेत्र	४६.४	२४.२	३५.४	३६.३	३१.२
२-	पश्चिमी क्षेत्र	५०.१	१.६	२८.०	२८.४	२६.९
३-	केन्द्रीय क्षेत्र	५२.४	४.८	३०.४	३१.३	२७.१
४-	पूर्वी क्षेत्र	४८.०	८.१	२८.६	२८.८	२७.०
५-	बुन्देलखण्ड	५०.२	८.०	३०.७	३१.८	२६.४
	उत्तर-प्रदेश	४९.६	६.०	२९.१	२९.६	२७.२

१९८१ की जनगणना के अन्तर्गत संदर्भित वर्ष में ६ मास से अधिक अवधि में आर्थिक कार्यों में लगे व्यक्तियों को मुख्य कर्मकर, ६ मास से कम अवधि में आर्थिक कार्यों में लगे व्यक्तियों को सीमान्त कर्मकर तथा शेष व्यक्तियों को गैर कर्मकर की श्रेणी में रखा गया है।

उक्त तालिकागत आंकड़े के अनुसार प्रदेश की कुल पुरूष जनसंख्या में ४९.६ प्रतिशत पुरूष कर्मकर रहे जब कि केन्द्रीय क्षेत्र में इनका अंश ५२.४ प्रतिशत अन्य सभी क्षेत्रों की तुलना में अधिक रहा। पर्वतीय एवं पूर्वी क्षेत्रों में कुल पुरूषों के क्रमश: ४६.४ प्रतिशत व ४८.० प्रतिशत पुरूष कर्मकर सम्पूर्ण प्रदेश के औसत ।। ४९.६ प्रतिशत ।। से कम रहें। परन्तु कुल स्त्री जनसंख्या में स्त्री कर्मकरों के अंश का आर्थिक क्षेत्रावार अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि पर्वतीय क्षेत्र में कुल स्त्रियों की २४.२ प्रतिशत स्त्री कर्मकर थी जो अन्य क्षेत्र में सबसे अधिक तथा सम्पूर्ण राज्य में ६.० प्रतिशत स्त्री कर्मकरों की तुलना में चार गुने से भी अधिक रही। परिणाम स्वरूप पर्वतीय क्षेत्र की पुरूष जनसंख्या में पुरूष

१- उत्तर-प्रदेश की आर्थिक समीक्षा- १९८१-८२ अर्थ एवं संख्या प्रभाव, राज्य नियोजन संस्थान, उत्तर-प्रदेश, लखनऊ, पृ० सं० ४।

कर्मकरों के न्यूनतम अंश होने के उपरान्त भी इस क्षेत्र की कुल जनसंख्या में ३५.४ प्रतिशत कर्मकर थे, जो राज्य स्तर के साथ-साथ सभी आर्थिक क्षेत्रों से अधिक रहे। प्रदेश के सभी आर्थिक क्षेत्र की ग्र ग्रमीण जनसंख्या में कर्मकरों का प्रतिशत अंश गनगरीय क्षेत्र की जनसंख्या में कर्मकरों के अंश की अपेक्षा अधिक रहा।

तालिका न० १०

मुख्य कर्मकरों का उद्योगानुसार आर्थिक क्षेत्रवार विवरण[१]

क्र०सं०	आर्थिक क्षेत्र	कृषक	कृषक श्रमिक	कृषि में लगे कुल श्रमिक	घरेलू उद्योग	अन्य	समस्त
१	२	३	४	५	६	७	८
१-	पर्वतीय क्षेत्र	६४.९	५.७	७०.६	२.२	२७.२	१००.०
२-	पश्चिमी क्षेत्र	५३.७	१५.४	६९.१	४.३	२६.६	१००.०
३-	केन्द्रीय क्षेत्र	६३.०	११.८	७४.८	३.७	२१.५	१००.०
४-	पूर्वी क्षेत्र	५८.६	२०.३	७८.९	५.३	१५.८	१००.०
५-	बुन्देलखण्ड	५७.४	२१.१	७८.५	३.५	१८.०	१००.०
	उत्तर - प्रदेश	५८.०	१६.३	७४.३	४.४	२१.३	१००.०

उक्त आंकड़ों से ज्ञात होता है कि प्रदेश में कुल मुख्य कर्मकरों के ५८.० प्रतिशत कृषक तथा १६.३ प्रतिशत कृषि श्रमिक थे। इस प्रकार वर्ष १९८१ में प्रदेश में कुल कर्मकरों के ७४.३ प्रतिशत कर्मकर प्रत्क्ष रूप से कृषि में लगे पाये गये। पूर्वी बुन्देलखण्ड तथा केन्द्रीय क्षेत्र में कुल कर्मकरों के क्रमश: ७८९प्रतिशत ७८.५ प्रतिशत एवं ७४.८ प्रतिशत कृषक एवं कृषि श्रमिक थे जो इस बात का द्योतक है कि इन आर्थिक क्षेत्रों में कृषिपर निर्भरता अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा अधिकरही। यह भी देखा गया कि ४.४ प्रतिशत कर्मकर घरेलू उद्योगों मेंलगेपाये गये पूर्वी क्षेत्र में इनका प्रतिशत अन्य सभी क्षेत्रों में सर्वाधिक ।।५.३ प्रतिशत ।। रहा तथा अन्य सभी आर्थिक क्षेत्र कु के कुल कर्मकरों में घरेलू उद्योगों में लगे कर्मकरों का अंश राज्य के औसत ।।४.४ प्रतिशत ।।से कम रहा।

१- उत्तर-प्रदेश की आर्थिक समीक्षा १९८१-८२ -अर्थ एवं संख्या प्रभाग, राज्य नियोजन, संस्थान, उत्तर-प्रदेश , लखनऊ पृ०४-५ ।

तालिका न० : ११

उत्तर-प्रदेश की जनसंख्या में कर्मकरों का शतांश[1]

	१९७१	१९८१ ।। अस्थाई ।। में कर्मकरों का शतांश		
मद	कर्मकरों का शतांश	मुख्य कर्मकर	सीमान्त कर्मकर	कुल कर्मकर
१	२	३	४	५
पुरुष	५२.२	४९.६	१.९	५१.५
स्त्री	६.७	६.०	३.५	९.५
ग्रामीण	३१.५	२९.६	३.०	३२.६
नगरीय	२७.७	२७.२	१.१	२८.३
उत्तर-प्रदेश	३०.९	२९.१	२.७	३१.८

उपर्युक्त तालिका से ज्ञात होता है कियद्यपि वर्ष १९८१ में पुरुष, स्त्री, ग्रामीण, नगरीय तथा प्रदेश की कुल जनसंख्या में मुख्या कर्मकरों का शतांश वर्ष १९७१ की तुलना में म रहा किन्तु वर्ष १९८१ में मुख्या कर्मकरों की साथ-साथ सीमान्त कमकरों की श्रेणी में रखे गये कर्मकरों को भी सम्मलित करने पर पता चलता है कि वर्ष १९८१ में कुल पुरुषों के ५१.५ प्रतिशत पुरुष कर्मकर वर्ष १९७१ के ५२.२ प्रतिशत पुरुष कर्मकरों की तुलना में कम रहे । जबकि अन्य सभी वर्गों में कर्मकरों का प्रतिशत अंश वर्ष १९८१ में वर्ष १९७१ की अपेक्षा अधिक रहा । इन आंकड़ों से यह भी विदित होता है कि प्रदेश में स्त्री जनसंख्या में स्त्री कर्मकरों के अंश में अन्य वर्गों की जनसंख्या में कर्मकरों के अंश की अपेक्षा अधिक वृद्धि हुई । स्त्री जनसंख्या में स्त्री कर्मकरों के अंश में हुई वृद्धि के कारण ही पुरुष जनसंख्या में पुरुष कर्मकरों के शतांश में गिरावट के उपरान्त भी प्रदेश की कुल जनसंख्या में कुल कर्मकरों के शतांश में वृद्धि हुई । इसके अतिरिक्त वर्ष १९७१ की ही भांति वर्ष १९८१ में भी ग्रामीण जनसंख्या में कर्मकरों का शतांश ३२.६ नगरीय जनसंख्या में कर्मकरों के शतांश २८.३ से अधिक रहा ।

१- उत्तर-प्रदेश की आर्थिक समीक्षा १९८१ - ८२ अर्थ एवं संख्या प्रभाग, राज्य नियोजन संस्थान, उत्तर-प्रदेश लखनऊ पृ०सं० ३५ ।

वर्ष १९७१ के जनगणना के अनुसार प्रदेश की कुल जनसंख्या में श्रम-शक्ति ।। १५-५९ वर्ष की आयु वर्ग ।। का अंश ५१.४ प्रतिशत था । यद्यपि समस्त स्त्री वर्ग में महिला श्रम शक्ति का अंश ५१.९ प्रतिशत पुरूष जनसंख्या में पुरूष श्रम शक्ति ।।५०.९ प्रतिशत ।। की तुलना में अधिकथा, किन्तु स्त्री श्रम शक्ति का केवल १०.७ प्रतिशत भाग ही कर्मकरों की श्रेणी में था । इसी कारण पुरूष श्रम शक्ति के ८६.९ प्रतिशत कर्मकर होने के उपरान्त भी प्रदेश की कुल श्रम शक्ति का केवल ५०.९ प्रतिशत अंश ही कर्मकरोंकी श्रेणी में पाया गया ।

तालिका न० : १२

प्रदेश के उद्योगों ।।संगठित क्षेत्र ।। में सेवायोजन[१]

वर्ष	उद्योगों में लगे श्रमिक हजार	सूचकांक ।।१९७३-७४-१००।।	प्रति लाख जनसंख्या पर श्रमिक संख्या
१	२	३	४
१९७३-७४	३५७	१००.०	३८३
१९७४-७५	४०६	११३.७	४२८
१९७५-७६	४८७	१३६.४	५०४
१९७६-७७	४९१	१३७.५	४९९
१९७७-७८	५३४	१४९.६	५३३
१९७८-७९[0]	५३८	१५०.७	५२७

0 अनन्तिम

उपरोक्त आंकड़ों से ज्ञात होता है कि प्रदेश में संगठित क्षेत्रों के उद्योगों में वर्ष १९७८-७९ में सेवा याजित ५३८ हजार को श्रमिक वर्ष १९७३-७४ की तुलना में ५०.७ प्रतिशत तथा गतवर्ष सेजना की अपेक्षा ०.७ प्रतिशत अधिक रहें । इस प्रकार पंचम पंचवर्षीय योजनावधि में इन उद्योगों के कर्म - चारियों में ५० प्रतिशत वृद्धि हुई । प्रदेश में प्रति लाख जनसंख्या पर औद्योगिक श्रमिको की संख्या वर्ष १९७३-७४ की ३८३ से बढ़कर वर्ष १९७८ -. ७९ में ५२७ हो गई ।

१- उत्तर-प्रदेश की आर्थिक समीक्षा १९८१-८२, अर्थ एवं संख्या प्रभाग राज्यनियोजन संस्थान, उत्तर-प्रदेश, लखनऊ, पृ० ३७ ।

अन्य प्रदेशों के साथ उत्तर-प्रदेश की जनसंख्या के घनत्व की तुलना[1]

क्र०सं०	।।राज्य संघ ।।राज्य क्षेत्र	जनसंख्या का प्रतिवर्ग कि०मी० घनत्व १९८१	१९७१
१-	दिल्ली	४१७८	२७४२
२-	चण्डीगढ़	३९४८	२२५७
३-	लक्षादीप	१२५७	९९४
४-	पाण्डेचेरी	१२२८	९५९
५-	केरल	६५४	५४९
६-	पश्चिम बंगाल	६१४	४९९
७-	बिहार	४०२	३२४
८-	उत्तर-प्रदेश	३७७	३००
९-	तमिलनाडु	३७१	३१७
१०-	पंजाब	३३१	२६९
११-	हरियाणा	२९१	२२७
१२-	गोवा, दमन और दीप	२८४	२२५
१३-	असम	२५४	१८६
१४-	दादरा और नगर हवेली	२११	१५१
१५-	महाराष्ट्र	२०४	१६४
१६-	त्रिपुरा	१९६	१४८
१७-	आंध्र प्रदेश	१९४	१५३
१८-	कर्नाटक	१९३	१५३
१९-	गुजरात	१७३	१३७
२०-	उड़ीसा	१६९	१४१
२१-	मध्य प्रदेश	११८	९४
२२-	राजस्थान	१००	७५

१- भारत की जनगणना, १९८१, श्रृंखला-१, भारत जनसंख्या के अनन्तिम आंकड़े पृ० सं० ३९ ।

क्र०सं०	।।राज्य संघ राज्य क्षेत्र	जनसंख्या का प्रतिवर्ग कि०मी० घनत्व	
		१९८१	१९७१
२३-	हिमाचल प्रदेश	७६	७२
२४-	मणिपुर	६४	४८
२५-	मेघालय	५९	४५
२६-	नागालैण्ड	४७	३१
२७-	सिक्किम	४४	30
२८-	अण्मान और निकोबार द्विप समूह	२३	१४
२९-	मिजोरम	२३	१६
३०-	अरूणाचल प्रदेश	७	६

यहां उत्तर-प्रदेश की जनसंख्या के घनत्व की तुलना दो प्रकार के प्रान्तो के साथ की जा सकती है। एक तो वे जो उद्योग प्रधान है और दूसरे कृषिप्रधान प्रान्त। लेकिन हमारी वास्तविक तुलना कृषि प्रधान प्रान्त से होनी चाहिए क्योंकि उत्तर-प्रदेश एक कृषि प्रधान प्रदेश है।

तालिका न० :१४

उद्योग-प्रधान प्रदेश के साथ उ०प्र० की जनसंख्या के घनत्व की तुलना[1] :

क्र०सं०	प्रदेश	घनत्व प्रतिवर्ग कि०मी०
१-	दिल्ली	४१७८
२-	केरल	६५४
३-	पश्चिम बंगाल	६१४
४-	चण्डीगढ़	३९४८
५-	पाडेचेरी	१२२८
६-	उत्तर-प्रदेश	३७७

जन घनत्व के आंकड़े से भूमि - व्यक्ति अनुपात का पता लगता है। यद्यपि उपरोक्त अंकों से यह पता चलता है कि उत्तर-प्रदेश की स्थिति दिल्ली, पश्चिमबंगाल केरल आदि की तुलना में भूमि व्यक्ति अनुपात ।।जन घनत्व।। में अच्छी है परन्तु यहां यह बात ध्यान रखने की है कि ये प्रदेश उद्योग

१-स्रोत: भारतीय जनगणना १९८१।

प्रधान है। औद्योगिक प्रदेश होने के कारण यहाँ सीमित क्षेत्र में भी अधिक जनसंख्या का निर्वाह हो सकता है। लेकिन उत्तर-प्रदेश एक कृषि प्रधान देश है, अतः इसकी तुलना कृषिप्रधान प्रदेशों से होनी चाहिए।

तालिका न० : १५

कृषि प्रधान प्रदेशों के साथ उ०प्र० की जनसंख्या के घनत्व की तुलना[१]

क्र०सं०	प्रदेश	घनत्व प्रतिवर्ग कि० मी०
१-	मध्य प्रदेश	११८
२-	उड़ीसा	१६९
३-	असम	२५४
४-	पंजाब	३३१
५-	हरियाणा	२९१
६-	उत्तर-प्रदेश	३७७

इस उपरोक्त तालिका देखने से यह पता चलता है कि भारत के अन्य कृषि प्रदेशों की तुलना में उत्तर-प्रदेश में जनसंख्या का घनत्व सबसे अधिक है किन्तु इसका अभिप्राय यह नहीं है कि एकमात्र जनसंख्या के अधिक घनत्व के कारण ही प्रदेश पिछड़ा हुआ है।

उत्तर-प्रदेश में आर्थिक विकास और जनसंख्या वृद्धि :-------

यद्यपि राज्य की जनसंख्या में वृद्धि एक ओर आर्थिक विकास के लिए आवश्यक श्रमशक्ति में वृद्धि करती है, उत्पत्ति के निष्क्रिय साधनों को धनोत्पादन में प परिणित करनेका एक मात्र श्रेय मानव श्रम को ही है। जनसंख्या का दबाव प्रभावपूर्ण मांग और बाजार के विस्तार को बढ़ावा देकर आर्थिक विकास को प्रेरित करता है। लेकिन उत्तर-प्रदेश में भयंकर रूप से बढ़ती हुई जनसंख्या आर्थिक विकास में अभिशाप सिद्ध हुई है, क्योंकि प्रदेश में जिस गति

१- भारतीय जनगणना १९८१।

से जनसंख्या बढ़ी है, पूंजीगत साधनों और तकनीकी ज्ञान के अभाव में उस गति से उत्पादन में वृद्धि नहीं की जा सकी है। फलत: प्रदेश में गरीबी, बेरोजगारी सर्वत्र दिखायी पड़ती है। इसके अतिरिक्त बचत तथा निनियोग का स्तर भी नीचा रहाता है, प्रति व्यक्ति औसत आय कम होती है जनता की कार्यक्षमता कम रहती है तथा लोगों के रहन-सहन का स्तर तो बहुत ही नीचा हो जाता है।

तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या प्रदेश की एक कठिन समस्या है जो प्रदेश की आर्थिक प्रगति में बाधक बनी हुई है। अशोक मेहता कमेटी के अनुसार "जनसंख्या में तीव्र वृद्धि भारतीय दुर्ग में छिपा हुआ एक ऐसा भयंकर शत्रु है जो हमारी समस्त योजनाओं को नष्ट-भ्रष्ट कर रहा है। प्रदेश का क्षेत्रफल सम्पूर्ण भारत के क्षेत्रफल का लगभग ९ प्रतिशत है, जबकि प्रदेश को भारत की १६.७ प्रतिशत जनसंख्या का भार वहन करना पड़ता है। प्रथम पंचवर्षीय योजना के समय उत्तर-प्रदेश की जनसंख्या ६.३२ करोड़ थी जो वर्ष १९६१ में ७.३१ करोड़ वर्ष १९७१ में ८.८३ करोड़ तथा वर्ष १९८१ में बढ़कर ११.०८ करोड़ हो गई। इस प्रकार प्रथम पंचवर्षीय योजना के बाद इस समय जनसंख्या लगभग दुगुनी हो गयी। प्र प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी के अनुसार" जनसंख्या के तेजी से बढ़ते रहने पर योजनाबद्ध विकास करना बहुत कुछ ऐसी भूमि पर मकान बनाने के समान है जिसे बाढ़ का पानी निरन्तर बहा ले जा रहा है।[1] ठीक यही स्थिति उत्तर-प्रदेश की है क्योंकि जिसगति से प्रदेश की जनसंख्या में वृद्धि हुई है उस गति से प्रदेश का आर्थिक विकास नहीं किया जा सका है।

आर्थिक विकास में जनसंख्या वृद्धि से घबड़ाकर पियर्सन आयोग ने अपनी रिपोर्ट में लिखा है कि "विकास की सम्भावना पर और किसी समस्या के काले बादल इतने सघन नहीं है जितने अबादी की तेजी से वृद्धि के काले बादल।[2] जनाधिक्य के कारण ही प्रदेश में लगभग ५०.०९ प्रतिशत व्यक्ति गरीबी रेखा के नीचे जीवन व्यतीत कर रहे है।[3] क्योंकि जो कुछ भी हम विकास करते है वह बढ़ी हुई जनसंख्या में

१- प्रधान मंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी, हिन्दुस्तान टाइम्स, १५ अगस्त, १९७७।

२- रिपोर्ट आफ द कमीशन औन इण्टरनेशनल डेवलपमेंट पार्टनर्स इन डेवलपमेंट, पृ० ३०।

३- सिक्स्थ फाइव ईयर प्लान ।। १९८०-८५ ।। पृ० १६।

समा... "यदि जनसंख्या की संवृद्धि को नियंत्रित करने में सफलता नहीं प्राप्त की जा सकती तो गरीबी ... रोजगारी को कम करने के सभी योजना अनुमान असफल सिद्ध होगें[1]।

जनसंख्या वृद्धि एक सम...ा :---

उत्तर-प्रदेश में जनसंख्या के स्वरूप को स्पष्ट किया जा चुका है और स्पष्ट रूप से जनसंख्या वृद्धि या ...ाधिक्य बात कही गयी है। प्रश्न यह उठता है कि प्रदेश में जनसंख्या वृद्धि तेज क्यों। वैसे जनसंख्या वृद्धि के कारण निम्न है - जैसे ऊँची जन्मदर, जिसके अन्तर्गत बाल-विवाह प्रथा, विवाह की व्यापकता, संयुक्त परिवार प्रथा, सामाजिक और धार्मिक मनोवृत्ति, भाग्यवादिता परिवार नियोजन कार्यक्रम की कम लोक प्रियता आदि आते है। इसके अतिरिक्त प्राकृतिक कारण तथा अशिक्षा एवं रहन-सहन का नीचा स्तर भी जनसंख्या वृद्धि का एक महत्वपूर्ण कारण है। मृत्यु दर के ह्रास के कारण भी जनसंख्या में वृद्धि हुई है। यहां सभी कारणों की विस्तृत व्याख्या का कोई खास औचित्य नहीं है लेकिन इतना आवश्य कहूंगा कि उत्तर-प्रदेश में या भारत में जन्मदर अधिक और मृत्यु दर कम होने के कारण जनसंख्या में वृद्धि अधिक रही। भारत में जन्मदर ऊँची होने में बालविवाह तथा शादी की सर्वजनीनता एक प्रमुख कारण है। इसके अतिरिक्त गरीबी भी निस्संदेह अत्यधिक जन्मदर का एक कारण है। किन्तु हमारे देश में आर्थिक कारणों से अधिक महत्वपूर्ण कारण सामाजिक तथा धार्मिक परिस्थितियां है। डा० ज्ञानचन्द के अनुसार भारत में अत्यधिक जन्मदर सामा... सामाजिक तथा धार्मिक परिस्थितियों का परिणाम है। अतएवं जब तक हमारे देश में सामाजिक एवं नैतिक वातावरण में आमूल परिवर्तन नहीं होगा। तब तक पश्चिमी देशों के तरह हमारे देश में भी जन्मदर में कमी की कोई आशा नहीं की जा सकती है।[2] प्रदेश में आज भी अशिक्षा के कारण भ... भाग्यवादिता या धार्मिक रूढ़िया इतनी जटील है कि वे बच्चे का जन्म ईश्वर की कृपा मानते है, ... इसमें किसी प्रकार का हस्तक्षेप ठीक नहीं समझते हैं। इस देश में अनेक शिक्षित एवं भारतीय स... संस्कृति एवं सभ्यता के प्रभाव से प्रभावित लोग भी कोलिन क्लार्क के इस मत से सहमत है कि "कोई भी राजनैतिक नेता वह कितना ही शक्तिशाली क्यों न हो और कोई भी अर्थशास्त्री वह कितना विद्वान क्यों न हो उसे बच्चे के जन्म में हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं है।[3] इसके अतिरिक्त ...

१- मैलकम, एस० आदिशेषय्या : भारत की छठी पंचवर्षीय योजना - एक विवेचना, "योजना" १६-३० अप्रैल १९८१, पृ० ४।

२- डा० ज्ञानचन्द : इण्डिया टीमिंग मीलियन्स, पृ० १४५।

३- कोलिन क्लार्क : न्यूलाइट आन पापुलेशन, दि लिसनर, २६ मार्च १९५३, पृ० ५०४।

के कारण भी जन्मदर ऊंची रहती है जो कि उत्तर-प्रदेश में व्यापक रूप से विद्यमान है। निर्धन परिवार में अधिक बच्चों को भार नहीं समझते है, वे बच्चे को अतिरिक्त आय का साधन समझते है; उन्हें छोटी अवस्था में ही काम परलगाया जा सकता है। प्रो०गुन्नर मिर्डल के अनुसार "निर्धन समाज में बच्चे परिवार विशेष पर अधिक भार नहीं होते। इसके विपरित प्राय: वे व्यक्ति के लिए सामाजिक सुरक्षा का एक मात्र साधन होते है।[1] जब तक बच्चों के जन्म के सम्बन्ध में इसी प्रकार धारणा लोगों की बनी रही तो जन्मदर को नीचा नहीं किया जा सकता। इसके विपरित स्वास्थ्य मे सुविधाओं में प्रसार तथा बहुत सी महामारियों पर नियंत्रण से मृत्युदर में ह्रास हुआहै। जिसका परिणाम यह हुआ कि प्रदेश में जनसंख्या वृद्धि तेज रही है। इसके अतिरिक्त प्रदेश की गर्म जलवायु भी अधिक जनसंख्या के लिए जिम्मेदार है।

जनसंख्या की समस्या का समाधान : एक सुझाव :-------

अधिक जनसंख्या वृद्धि से गरीबी, बेरोजगारी, खाद्य समस्या, जैसी अनेक सामाजिक बुराइयां उत्पन्न होती है। यदि जनसंख्या को बढ़ने से न रोका गया तो हमारी प्रगति रेत पर लिखने के समान होगी जिसको जनसंख्या की वृद्धि कीलहरें मिटा देगी। जनसंख्या की समस्या से निपटने के लिए विकसित देशों के अनुभव का अन्धानुकरण नहीं करना चाहिए क्योंकि हमारी परिस्थितियों और उनमें बहुत बड़ा अन्तर हो सकता है। इस सम्बन्ध में प्रो० गुन्नार मिर्डल ने लिखा है कि" आज अल्प विकसित देश में जनक्षमता के सम्बन्ध में क्या हो सकता है अथवा वहां किस प्रकार की नीतियां अपनायी जा सकती है, यह निर्णय करने की दृष्टि से विकसित देशों का अनुभव अधिक उपयोगी नहीं हो सकता।[2] उत्तर-प्रदेश आर्थिक रूप से पिछड़ा राज्य है जहां जनाधिक्य की समस्या ही इस जनसंख्या के समाधान की आवश्यकता को सभी लोग स्वीकार करते है। इसके समाधान के लिए बहुत उपाय सुझाव के लिएदिये गये है :-- शिक्षा सुविधाओं का विस्तार, विवाह आयु सम्बन्धी नियम, परिवार कल्याण कार्यक्रम को तेज करना, गर्भपात सुविधाओं में वृद्धि, अविवेकी मातृत्व पर रोक, प्रवास या विदेशों में जाकर बसना , इत्यादि। प्रदेश की जनसंख्या

१- प्रो० गुन्नार मिर्डल : इण्टरनेशनल इकोनामी, पृ० १९५।

२- प्रो० गुन्नार मिर्डल : दि चैलेंज आफ वर्ल्ड पावर्टी, पृ० १५२।

समस्या के समाधान के लिए हम केवल निम्नलिखित तीन पहलू पर विचार करेंगे :----

१- आर्थिक विकास ।

२- शिक्षा का प्रसार ।

३- जनसंख्या पर नियंत्रण ।

१- आर्थिक विकास :----

अन्तत: जनसंख्या की समस्या का उचित हलततभी प्राप्त किया जा सकता है जबकि प्रदेश का आर्थिक विकास तेज किया जाय । ~~मभी~~ आर्थिक विकास के अभाव में जनसंख्या की समस्या का स्थायी हलकभी नहीं प्राप्त हो सकता । आर्थिक विकास के लिए या लोगों के रहन-सहन के स्तर को उन्नत करने के लिए कृषि एवं उद्योगों के विकास द्वारा धनोत्पादन आवश्यक है । लेकिन उत्तर प्रदेश की स्थिति इसके विपरित है प्रदेश में जनसंख्या वृद्धि की तुलना में आर्थिक विकास की दर बहुत नीची है प्रथम, द्वितीय, तृतीय एवं चतुर्थ पंचवर्षीय योजनाओं में विकास की दर क्रमश: १.९, १.८, १.६ एवं २.३ रही और १९७४-७९ में विकास की दर ४.९ रही[1]। जबकि इस अवधि में जनसंख्या वृद्धि की दर बहुत तेज रही । वर्ष १९५१-६१ के बीच जनसंख्या वृद्धि दर १६.६६ प्रतिशत और १९६१-१९७१ के बीच बढ़कर १९.१८ प्रतिशत हो गयी । नयी जनगणना १९८१ के अनुसार वर्ष १९७१-८१ के बीच जनसंख्या की वृद्धि दर २५.४९ पहुंच गयी ।[2] इस प्रकार स्पष्ट है कि प्रदेश में आर्थिक विकास के अपेक्षा जनसंख्या में वृद्धि अधिक रही जिसके कारण प्रदेश जनसंख्या की समस्याओं को हल करने में असफल रहा ~~जैसी गम्भीरस्~~यदि आर्थिक विकास की गति तेज की जाय तो गरीबी और बेरोजगारी जैसी गम्भीर समस्या भी आसानीसे हल की जा सकती है । वस्तुत: यदि हम अपने प्राकृतिक साधनों तथा मानवीय साधनों का पूर्ण उपयोगलकरे तो प्रदेश में गरीबी का प्रश्न नही न उठे । प्रदेश का यदि आर्थिक विकास दर तेज हो तो मृत्यु दर और जन्मदर दोनों में ह्रास होगा, जिससे अन्तत: जनसंख्या की वृद्धि दर कम हो जायेगी प्रधान मंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने वर्ष १९८२ को "उत्पादकता वर्ष" घोषित कियाथा यदि उत्पादकता वर्ष के रूप में यह वर्ष सफल रहा होता तो हमारी बहुत सी जनसंख्या की समस्याओं का हल भी साथम्साथ प्राप्त हो गया होता । लेकिन

१- ड्राफ्ट सिक्स्थ फाइव ईयर प्लान ।।१९८०-८५ ।। रिव्यू, वाल्यूम-१, गवर्नमेंट आफ उ0प्र0, प्लानिंग डिपार्टमेंट, पृ0 ८५ ।

२- भारत की जनगणना १९८१, श्रृंखला - १, पी0पद्मनाभ, भारतीय प्रशासनिक सेवा, भारत के महा पंजीकार और जनगणना आयुक्त, पृ0 ३ ।

"आत्म निर्भरता और ग़रीबी हटाओ" जैसे नारे की तरह यह भी केवल नारा बनकर रह गया जिसेसजनता को निराशा ही हाथ लगी। अन्तत: जनसंख्या सम्बन्धी समस्याओं के हल के लिए कृषि एवं उद्योगों में उत्पादन बढ़ाना आवश्यक है।

२- शिक्षा का प्रसार :------

प्रदेश में शिक्षा का अभाव है यहां की अधिकांश जनसंख्या अशिक्षित है। १९८१ की जनगणना के अनुसार प्रदेश में २७.३८ प्रतिशत व्यक्ति साक्षार है।[1] अर्थात आज भी प्रदेश में ७२.६२ प्रतिशत व्यक्ति अशिक्षित है। बढ़ती हुई जनसंख्या को रोकने के लिए प्रदेश में शिक्षा सुविधाओं का विस्तार किया जाना चाहिए। आधुनिक विद्वानों का जिनमें जे०के० गोलब्रथ का नाम उल्लेखनीय है, का मत है किजनसंख्या नियंत्रणके लिए शिक्षा का प्रसार नितनन्त आवश्यक है जब तक लोग अशिक्षित रहेंगे, उन्हें धार्मिक अंधविश्वासों से मुक्ति नहीं मिलेगी और वे जीवन स्तर में सुधार की दृष्टि से छोटे परिवार की वांछनीयता कोनहीं समझेंगे। वैसे आज किसी धर्म में ।। इस्लाम धर्म को छोड़कर ।। सीमित परिवार रखने की मान्यता काविरोध नहीं है फिर भी लोगों को परिवार की जिम्मेदारी और जनसंख्या समस्या के सम्बन्ध में शिक्षित करना आवश्यक है। इसी प्रकार एस० चन्द्रशेखर ने लिखा है कि भारत में अन्य विकसित देशों की भांति धार्मिक मान्यताओं के आधार पर कहीं भी परिवार नियोजन का विरोध नहीं दिखलाई पड़ता।[2]

यह एक तत्व है किशिक्षित परिवार के सदस्यों की संख्या सीमित होती है। अत: यदि प्रदेश में शिक्षित व्यक्तियों की संख्या बढ़ेगी तो वे स्वत: ही अपने परिवार को सीमित रखेंगे प्रो०जैकब वाइनर ने भी जनसंख्या समस्या के समाधान के लिए आय स्तर ऊंचा होने के लिए साथ शिक्षा के व्यापक प्रसार पर बल दिया है। प्रो०जैकब वाइनर के अनुसार, "यह बहुत हतोत्साहित होने वाली बात है कि जनाधिक्य की समस्या के सामाधान के लिए कोई सुप्रभाविक एवं विश्वसनीय उपचार नहीं है। अनेक समाज शास्त्रीयों की जन्म नियंत्रण में आस्था है और वे केवल इसे ही जनसंख्या की समस्या को हल करने के लिए एक कारगर विधि मानते है। परन्तु यह विधि उसी अवस्था में सफल होती है जब जन साधारण का आय स्तर ऊंचा हो और शिक्षा का व्यापक प्रसार हो।[3]

१-भारत की जनगणना १९८१, श्रृंखला - १, जनसंख्या के अन्तिम आंकड़े पृ०४५।

२- एस० चन्द्रशेखर : पापुलेशन ग्रोथ, सोशियो-इकोनामिक डेवलपमेंट एण्ड लिविंग स्टैण्डर्ड, इण्टरनेशनल रिव्यू, जून १९५४।

३- जैकब वाइनर : दि इकोनामिक्स ऑफ डेवलपमेंट : अग्रवाल और सिंह, दि इकोनामिक्स आफ अण्डर-डेवलपमेंट पृ० ३०।

इसके विपरीत स्कूलों, कालेजों के पाठ्यक्रमों में जनसंख्या सम्बन्धी बातों को पढ़ाया जाय जिससे बच्चे प्रारम्भ से ही छोटे परिवार के महत्व को समझें। महिला शिक्षा में वृद्धि होने पर प्रजनन दर में स्वत: कमी आ जाती है। इस प्रकार लड़के और लड़कियों के लिए परिवार नियोजन या जनसंख्या सम्बन्धी शिक्षा की उचित व्यवस्था होनी चाहिए जो निश्चित ही प्रदेश की जनसंख्या वृद्धि रोकने में सहायक होगी।

३- जनसंख्या नियंत्रण :------

जनसंख्या की समस्या के हल के लिए आर्थिक विकास के साथ-साथ जनसंख्या पर नियंत्रण लगाना परम आवश्यक है। जनसंख्या नियंत्रण का अर्थ जन्मदर घटाने से लगाया जा रहा है। नियोजन आयोग के शब्दों में, "राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं के स्तर पर जनसंख्या को स्थिर करने के लिए आवश्यक सीमा तक जन्मदर को घटाना ही जनसंख्या नियंत्रण का एकमात्र उपाय है।" प्रो० गुन्नार मिर्डल ने जो जनसंख्या नियंत्रण के लिए हर सम्भव प्रयासों की व्याख्या की है। प्रो० गुन्नार मिर्डल के अनुसार "भारत जैसे देशों में जनसंख्या वृद्धि दर नीची रखने का एक मात्र उपाय है कि जनन क्षमता पर कार्य किया जाय। इस सम्बन्ध में सन्तोष अथवा ऊँची मृत्युदर को सहन करना, क्योंकि इससे जनसंख्या वृद्धि दर नीची रहती है, अनुचित नहीं है[१]।" तात्पर्य यह है कि जनसंख्या नियंत्रण के लिए जन्मदर नियंत्रण की दिशा में हर सम्भव प्रयत्न किया जाना चाहिए। जनसंख्या नियंत्रण के सम्बन्ध में बहुत सी गोष्ठियों तथा विधियों को लोग सुन चुके हैं। जन्मदर नियंत्रण के लिए परिवार नियोजन के विभिन्न तरीके-निरोधक गोलियां, निरोध, लूप, बन्ध्याकरण, आपरेशन तथा अन्य कृत्रिम साधनों से बहुत लोग परिचित है। यहां जनसंख्या -नियंत्रण के सन्दर्भ में कुछ प्रमुख निम्नलिखित सुझाव दिये जा रहे हैं :-------

।।क।। प्रजनन अन्तराल :----

यदि अन्य सभी परिस्थितियों को सामान्य रखा जाय और अपने परिवार नियोजन के साधनों का प्रयोग करके बच्चों के जन्म में पांच वर्ष का अन्तराल आवश्यक रूप से पैदा कर लिया जाय तो जनसंख्या वृद्धि को लगभग ६ से १० प्रतिशत कम किया जा सकता है। औरतों में प्रजनन क्षमता १६ से ३० वर्ष के बीच मानी जाती है यदि इस प्रकार का अन्तराल रखा जाय तो जनसंख्या नियंत्रण के साथ-साथ औरतों का स्वास्थ्य अच्छा रहेगा तथा बच्चे भी स्वस्थ पैदा होंगे।

१- गुन्नार मिर्डल : दि चैलेंज आफ वर्ल्ड पावर्टी, पृ० १५२।

।।ख।। विवाह आयु निर्धारण :------

यद्यपि सरकार ने लड़के और लड़कियों दोनों के लिए विवाह उम्र क्रमश: २१ वर्ष तथा १८ वर्ष निर्धारित किया है, लेकिन इसका समाज में पालन नहीं किया जा रहा है, विशेषकर पिछड़ी एवं अनुसुचित जातियों में आज भी बाल-विवाह का प्रचलन है जो निश्चित रूप से जनसंख्या वृद्धि में सहायक है। जैसाकि स्पष्ट है कि औरतों में प्र १६ से ४० वर्ष के बीच प प्रजनन शक्ति रहती है, उसमें भी प्रारम्भिक वर्षों में ।।१६ से २० ।। प्रजनन शक्ति बहुत तेज होती है। ऐसे स्थिति में यदि निर्धारित विवाह आयु पर कानूनी रूप से नियंत्रण रखा जाय तो निश्चित ही जनसंख्या वृद्धि को ७ से १२ प्रतिशत तक कम किया जा सकता है।

विवाह आयु ।।२१ व १८ वर्ष ।। नियम का कठोरता से पालन हो या इन नियमों का उ उल्लंघन न किया जा सके, इसके लिए सरकार को कुछ अवैतनिक ।।थोड़ा भत्ता दिया जा सकता है।। अवकाश प्राप्त अधिकारी, समाजसेवी, प्राध्यापक या अन्य उचित अधिकारी की नियुक्ति की जाय तो विाह-उम्र का प्रमाण पत्र दे तभी शादी सम्पन्न की जा सके। बिना प्रमाण पत्र प्राप्त किये कोई व्यक्ति विवाह करता है तो ऐसी कानूनी व्यवस्था होनी चाहिए कि उससे उत्पन्न सन्तानें उसकी सम्पत्ति का उत्तराधिकारी न बन पायें। इसके साथ-साथ इन अधिकारियों का कार्य यह होगा कि वह लोगों को बाल-विवाह की बुराइयों को बतायें तथा उनके दिमाग में प्रभावशाली रूप से बिठायें। अनुसुचितजातियों में में लड़कियों के लिए १८ वर्ष तथा लड़कों के लिए २१ वर्ष में विवाह करने के लिए प्रोत्साहित किया जाय और उन्हें इस उम्र पर विवाह करने पर ५००रूपये से १५००रू तक की आर्थिक सहायता दी जाय। इससे दो लाभ होगा, एक तो विवाह की आयु बढ़ेगी दूसरे उ उनकी आर्थिक दशा सुधरेगी, इसके अतिरिक्त देर से विवाह ।।२५ वर्ष ।। करने वालों को उचित पुरस्कार भी दिया जाना चाहिए। इस प्रकार यदि विवाह उम्र पर उचित कार्यवाही की जाय तो निश्चित ही जन्मदर प्रभावित होगा।

।।ग।। लोक सहमति और लोक जागृति आवश्यक :-----

लोगों को इस बात की पूर्ण जानकारी दी जानी चाहिए कि जनसंख्या वृद्धि से प्रदेश का कल्याण कदापि सम्भव नहीं है। लोगों में चेतना हो कि जनसंख्या के बोझ से कोई विकास नहीं किया जा सकता। हम अपना जीवन स्तर तभी सुधार सकते है जब घर में बच्चों की जनसंख्या कम हो। उनका भरण-पोषण, शिक्षा-दीक्षा एवं स्वास्थ्य आदि सभी उचित रूप में तभी सम्भव है जबकि परिवार नियोजित हो अन्यथा अपना स्तर नीचे गिरा

कर ही कार्य करना पड़ेगा। अब बच्चों का जन्म माँ और पिता दोनों की इच्छा से होना चाहिए ताकि दोनों बच्चे के प्रति अपना दायित्व महसूस कर सके।

।।घ।। परिवार नियोजन :----

जनाधिक्य की समस्या के सामाधान के लिए परिवार नियोजन ।।अब परिवार कल्याण।। एक महत्वूर्ण उपचार है। परिवार नियोजन का अर्थ है स्वेच्छा पूर्वक अपने परिवार के आकार को सीमित करना। परिवार के आकार को सीमित रखने के लिए सन्तति निग्रह ।।बर्थ कन्ट्रोल।। के साधनों का प्रयोग एक उत्तम तरीका है। इसके अर्न्तगत निरोध का प्रयोग, लूप निवेशन, बन्ध्याकरण, गर्भसमापन आदि तरीके आते है। परिवार नियोजन कार्यक्रम के अर्न्तगत सन्तति निग्रह के कृत्रिम साधनों की ग्रामीण स्तर पर सुविधापूर्वक प्रत्येक महीने में मुफ्त वितरित किया जाना चाहिए। ऐसा कहा जाता है कि निर्धन व्यक्तियों के लिए बच्चें पैदा करना और पालन करना सन्तति निग्रह के कृत्रिम साधनों की तुलना में अधिक सस्ता पड़ता है।

पूरे देश में तथा उत्तर-प्रदेश में परिवार नियोजन कार्यक्रम सफल बनाने में बड़ी कठिनाइयों को उत्पन्न कर दी जा रही है। जिससे कार्यक्रम को बहुत सफलता नहीं मिल पा रही है। परिवार नियोजन सम्बन्धी विभागीय कार्यकर्ता जिम्मेदारी के साथ कार्य नहीं करते है। इसके अतिरिक्त राजनैतिक पार्टियों ने भी परिवार नियोजन को अखाड़ा बनाकर अपना काम ठीक करने का प्रयास किया है। डा० बनर्जी के अनुसार," राजनीतिक नेतृत्व की सत्ताधारी वर्गो के मूल्यों के प्रति उदारता, उपनिवेशवादी, नौकर शाही परम्परा, निहित स्वार्थों द्वारा शोषण, और कुछ विदेशी शक्तियों की भारत में यथाशक्ति बनाये रखने में दिलचस्पी ने सामूहिक रूप से परिवार नियोजन कार्यक्रम को भयंकर रूप से विकृत कर दिया। उनके मतानुसार, कलान्तर में जब देश में सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिर्वतन होगें तभी देश के परिवार नियोजन कार्यक्रम में क्रान्तिकारी परिर्वतन होगा और इसके परिणाम स्वरूप जन्मदर नीची हो सकेगी[1]। जनसंख्या नियंत्रण के संदर्भ में परिवार नियोजन केन्द्रों की स्थापना ग्रामीण क्षेत्रों में की जानी चाहिए। उत्तर प्रदेश में शिक्षितों का प्रतिशत बहुत कम है, इसलिए प्रदेश में परिवार नियोजन सफल बनाना सहज नहीं है। एस० चन्द्रशेखर के शब्दों में, "परिवार नियोजन के पक्ष में तर्क देना सहज है परन्तु उसे सफल बनाना कठिन है अर्थव्यवस्था जितनी पिछड़ी होगी जन्म निरोध की आवश्यकता और परिवार नियोजन में उतनी ही अधिक सांस्कृतिक एवं भौतिक बाधाऐं होगी[2]।

१- डी० बनर्जी : स्ट्रेटेजी फार फेमली प्लानिंग - रिट्रोस्पेक्ट- प्रास्पेक्ट, शोशल सांइटिस्ट, जिल्द- १, अंक- १, अगस्त १९७२।

२- एस० चन्द्रशेखर: हंग्री पीपुल एण्ड एम्प्टी लैड्स, पृ० १५।

प्रदेश में इस कार्यक्रम के महत्व एवं उपादेयता से अब सभी लोग भली भांति अवगत हो गये है। इस कार्यक्रम को जनसधारण तक पहुंचाने तथाउनके द्वारा स्वेच्छा से अपनाने के लिए इसे युद्ध स्तर पर किये जाने की आवश्यकता है। परिवार नियोजन की विभिन्न विधियों में दूरबीन विधि द्वारा महिलाओं की नसबन्दी अधिक लोकप्रिय हो रहा है। इसकी लोक प्रियता को दृष्टि में रखते हुए प्रदेश के समस्त जनपदों में कम से कम एक तथा आवश्यकतानुसार अधिक लेप्रोस्कोपों की व्यवस्था की गई है। इस विधि में पर्याप्त संख्या में डाक्टरों को प्रशिक्षित किया जा चुका है तथा भविष्य की मांग को देखते हुए और अधिक संख्या में डाक्टरों को प्रशिक्षित किया जा रहा है।

परिवार नियोजन कार्यक्रम के अन्तर्गत मार्च, १९८२ तक २५.८९ लाख नसबन्दी की गयी। वर्ष १९८२-८३ में ६.२१ लाख नसबन्दी का लक्ष्य रखा गया था, जिसके विपरित ४.३० लाख नसबन्दी की गयी। यद्यपि लक्ष्य की शत-प्रतिशत पूर्ति नही की जा सकी, किन्तु पूर्ति वर्ष १९८१-८२ की तुलना में दुगने से भी, अधिक रही। वर्ष १९८३-८४ में ८,४९,००० नसबन्दी के वार्षिक लक्ष्य के विपरित प फरवरी १९८४ तक ३,३५,२८३ य नसबन्दी की गई। इसके विपरित ४७० हजार लूप निवेशन के लक्ष्य के विपरित जनवरी, १९८४ तक २०३ हजार महिलाओं को लूप लगाये गये। गर्भ निरोधक उपायों तथा गोलियों के २३२ हजार तथा ७५ हजार वार्षिक लक्ष्य के विपरित जनवरी, १९८४ तक क्रमश: ३८८ ह हजार और ३९ हजार गर्भ निरोधक उपायों तथा गोलियों का प्रयोग महिलाओं द्वारा किया गया।[1]

इस प्रकार उत्तर प्रदेश जनसंख्या की समस्या के सामाधान में यदि सफल रहा तो प्रदेश की अधिकांश जनसंख्या की गरीबी रेखा के ऊपर उठाया जा सकता है। और लोगों के जीवन स्तर में सुधार हो गा और यदि विफल रहा तो आर्थिक और सामाजिक अव्यवस्था उत्पन्न होगी, अपराध में वृद्धि होगी, बेरोजगारी चरम सीमा पर पहुंच जायेगी, मनुष्य-मनुष्य को खाने का प्रयास करेगा। इसी प्रकार भारत के सन्दर्भ में डा०जुलियन हक्सले ने इस सम्बन्ध में लिखाहै कि "यदि भारत अपनी जनसंख्या की समस्या के सामाधान में विफल रहा तो एक बड़ी भारी राजनीतिक एवं सामाजिक अव्यवस्था उत्पन्न होजायेगी तथा यदि सफल हुआ तो उसे एशियाका ही नेतृत्व प्राप्त नहीं होगा, वरन सम्पूर्ण विश्व की आशा का केन्द्र बन जायेगा।"

१- प्रगति के सोपान- जनविश्वास के ठोस अधार-20सूत्र-सूचना एवं जन-सम्पर्क विभाग, उत्तर-प्रदेश मार्च १९८४, पृ० १३।

अध्याय पांच

योजना काल में सरकार की नीति और बेकारी

सरकार के प्रयत्न तथा रोजगार की प्रगति

रोजगार में वृद्धि के लिये आरम्भ काल से ही निजी और सार्वजनिक स्तर पर प्रयत्न किये जाते रहे है। आज उसमें अन्तर यह है कि पहले जहां इसके लिए निजी स्तर पर विशेष प्रयत्न किया जाती था वही आज सार्वजनिक तथा सरकारी स्तर पर भी विशेष प्रयत्न किया जा रहा है। शायद इस समस्या से निपटना सरकार अपना दायित्व मानती ह कि बेरोजगारी एक राष्ट्रीय समस्या है और जिस देश में वह जितनी भी मात्रा में है उस देश में उतनी मात्रा में वहां की सरकार उसके लिए दोषी है। दोषमुक्त होने अथवा अपना कर्तव्य समझकर भारत सरकार ने इस दिशा में योजनाबद्ध तरीके से प्रयत्न करना आरम्भ किया है।

प्रथम योजना :-----

प्रथम योजना में बेरोजगारी की स्थिति पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया परन्तु योजना के मध्य में योजना आयोग को बेरोजगारी की समस्या पर ध्यान देना पड़ा। कोरिया की लड़ाई के बाद काम चाहने वालों की संख्या में वृद्धि हुई और दिसम्बर १९५३ में रोजगार कार्यालयों के पास काम चाहने वालों की संख्या करीब ५ लाख १२ हजार तक पहुंच गई। अत: बेरोजगार लोगों को काम देने हेतु योजना में संशोधन किया गया। ऐसी अल्पकालीन योजनाऐं सम्मिलित की गई जिनमें रोजगार के सृजन को प्रोत्साहन मिलें। आरम्भ में प्रथम योजना में कृषि के अलावा अन्य क्षेत्रों में ५५ लाख लोगों को काम उपलब्ध कराने का लक्ष्य था।

योजना की अवधि में एक "दस सूत्री कार्य क्रम" सहित और भी कार्यक्रम शुरू किये गये। उनके फलस्वरूप प्रथम योजना के लिए निर्धारित लक्ष्य लगभग प्राप्त हो गये किन्तु प्रथम में जितने काम करने वालों की संख्या बढ़ी थी उसके हिसाब से यह लक्ष्य भी कम था। बाद में बेरोजगारी की स्थिति बिगड़ी। १९५१ से १९५६ तक रोजगार कार्यालय में बेरोजगारों की संख्या लगभग ७ लाख ५ हजार थी।

द्वितीय योजना :----

द्वितीय योजना के आधार पर आरम्भ में अस्थायी बेकारी को छोड़कर- जिनका होना अपरिहार्य है -२५ लाख बेरोजगारों का अनुमान लगाया गया। कृषि श्रमिक जांच समिति के

अधार पर गांवों में बेरोजगारों की संख्या का अनुमान २८ लाख रुपया लगाया गया रोजगार प्रदान करना द्वितीय योजना के चार मुख्य लक्ष्यों में से था ।

द्वितीय योजना के प्रारम्भ में ५३ लाख व्यक्ति बेरोजगार थे जिनमें से २५ लाख शहरों में तथा २८ लाख गांवों में थे । यह अनुमान था कि दूसरा योजना की अवधि में काम चाहने वालों की संख्या १ करोड़ हो जायेगी । पूर्ण रोजगार देने के लिए लक्ष्य प्रति हेतुद्वितीय पंचवर्षीय योजना की अवधि में १ करोड़ ५० लाख से अधिक लोगों को काम देना आवश्यक था । यह स्वीकार किया गया कि योजना अवधि में बढ़ती हुई बेकारी को रोकने के लिए कम से कम उन लोगों को प्रतिवर्ष काम पाने के लिए तैयार हो जाते है, काम दिलाने का प्रयास करना चाहिए ताकि बेरोजगारी की स्थिति जहां की तहां रोकी जाय । अत: द्वितीय पंचवर्षीय योजना का लक्ष्य करी १ करोड़ लोगों को रोजगार का अवसर प्रदान करने को रखा गया । यह अपेक्षा कीगई थी । कि सिंचाई, सामुदायिक विकास, ग्राम एवं लघु उद्योगों आदि कार्यक्रमों के जरिये अर्द्ध बेरोजगारों को भी कुछ राहत मिल जायेगी । इसके अन्तर्गत शिक्षित बेकारों के लिए कुछ विशेष योजनाऐं बनायी गयी जिसे कार्य-सह-अभिस्थापन केन्द्रों सहकारी भार वाही यातायात, उत्पादन केन्द्रों आदि की स्थापना ।

प्रथम एवं द्वितीय योजना में रोजगार के अवसर आदि अर्जित करने में काफी प्रयत्न के बावजूद भी उसकी समाप्ति पर देश में अनुमात: उस समय करीब ९० लाख लोग बेकार थे जिन्होंने रोजगार पाने की आशा तथा तीसरी योजना की प्रतिक्षा की । इन लोगों को रोजगार देने का कार्य तीसरी योजना और उसकी बाद की योजनाओं पर छोड़ा गया ।

तीसरी योजना :----

तीसरी योजना में रोजगार प्राप्त करने के लिए व्यापक रूप से विवेचन किया गया इसका उद्देश्य का१करोड़ ४० लाख लोगों को गैर कृषि क्षेत्र में और ३५ लाख को कृषि और उनकी सहायक गतिविधियें में । योजना के अन्तिम वर्ष में ग्रामीण निर्माण कार्यक्रमों द्वारा गांवों में योजना के अन्तिम वर्ष तक २५ लाख व्यक्तियों को काम देने की व्यवस्था की गई । परन्तु यह कार्य मुख्यत: अर्द्ध बेरोजगारों का राहत देने के रूप में ही था । ग्रामीण और लघु उद्योगों, उनकी उत्पादक क्षमता का पूर्ण उपयोग ग्रामीण औद्योगिकरण, ग्रामीण विद्युतिकरण, यातायात आदि से सम्बन्धित कार्यक्रमों को रोजगारी के अवसर निर्मित करने की दृष्टि से बहुत महत्व दिया गया ।

तीसरी योजना इतनी संख्या में नौकरियों का सृजन नहीं कर सकी जो जनसंख्या वृद्धि, ग्राम क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों में स्थानान्तरण तथा शिक्षा विकास से उत्पन्न रोजगार के अवसरों की कुल मांग को पूरा करती। योजना के अन्त में ८० लाख बेरोजगार पहले से ही मौजूद थे। अनुमान था कि श्रमशक्ति में वृद्धि होने पर योजना की अवधि के दौरान बेकारों की संख्या २.५ करोड़ होगी। तृतीय योजना १.४ करोड़ नौकरियां नहीं सृजित कर सकती। इस प्रकार वहननये रोजगार चाहने वालों को रोजगार प्रदान करने में असमर्थ रहा।

इस योजना काल में बेरोजगारी की संख्या में वृद्धि हुई यह स्वभाविक ही था। इसमें से अधिकांश लोगों को रोजगार प्रदान किया गया इस योजना में रोजगार की नीति मे निम्नलिखित मुख्य बातों पर बल दिया गया :------

१- ग्रामीण क्षेत्रों में उद्योग-धन्धों का विकास किया जाय जिसके लिए ग्रामीण विद्युतीकरण व ग्रामीण औद्योगिकरण बस्तियों के विकास पर अधिक ध्यान दिया जाय।

२- मेड़बन्दी, मृदा संरक्षण, वनीकरण, सिंचाई, बाढ़ नियंत्रण, भूमि पुनरुद्धार, आदि कार्य हाथ में लेकर व उनमें श्रम गहन पद्धतियों का प्रयोग करके ग्रामीण निर्माणकार्यक्रम संगठित किये जायें जिनसे लगभग २५ लाख लोगों की साल भर में सात्त दिन तक की व्यवस्था करना सम्भव हो सके।

३- रोजगारी का प्रभाव विस्तृत क्षेत्र में फैले तथा सुनिश्चितसंकुचित रहे, इसके लिए स्थानीय स्थितियों के अनुसार बेरोजगारी की समस्या जिला अथवा विकास खण्ड स्तर पर हल हो जाय।

<u>चतुर्थ योजना</u> :-----

इस योजना में पुरानी परिपाटी को समाप्त करके निम्नलिखित कार्यक्रमों द्वारा रोजगार सम्बन्धी अवसरों में वृद्धि पर बल दिया गया है :-----

१- श्रम साधन योजनाओं पर अत्यधिक बल

२- कृषि और गैर कृषि क्षेत्र में तीव्र गति से वृद्धि

३- कृषि आधारित उद्योगों का प्रसार, ग्राम विद्युतीकरण

४- शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवार नियोजन आदि सेवाओं में विस्तार,

५- वाणिज्य व्यपार और वित्तीय क्रिया कलापों के क्षेत्र में विस्तार

६- व्यवस्थित उद्योगों और खनन उद्योगों में वृद्धि।

छठीं योजना :------

छठीं योजना में रोजगार के अवसर १५.१० करोड़ मानक व्यक्तियों से बढ़ाकर १८.५० करोड़ मानक व्यक्तियों तक पहुंचने का लक्ष्य रखा गया ।

छठीं योजना में रोजगार सम्बन्धी कूटनीति में निम्न बातों को ध्यान दिया गया है :------

१- रोजगार प्रधान क्षेत्रीय आयोजन अपनाना ।

२- रोजगार बनाये रखने तथा उसके विस्तार के लिए औद्योगिकीय परिवर्तन विनियमित करना और

३- पूर्ण रोजगार के लिए क्षेत्रीय आयोजन को बढ़ावा देना ।

योजना में निम्नलिखित माध्यमों द्वारा भी रोजगार के अवसर प्रदान करने की व्यवस्था की गई:-

१- आधारभूत और सामाजिक सेवाओं का अर्थात सड़क निर्माण, विद्युतीकरण जल पूर्ति, ग्रामीण स्कूल और सामुदायिक स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार करके

२- गरीबों के उपभोग में अधिक वृद्धि जिससे उपभोग वस्तुओं से अतिरिक्त रोजगार पैदा होगें जिन्हें गहन तकनीक से उत्पादित किया जा सकता है ।

३- पर्याप्त मात्रा में अतिरिक्त रोजगार सिंचित कृषि, डेरी विकास, वन उद्योग तथा मछली उद्योग के विस्तार से पैदा किया जायेगा ।

४- निर्माण सम्बन्धी सिंचाई, विद्युत तथा आवास के विस्तृत कार्यक्रमों से भी रोजगार के अवसरों में और प्रसार होगा ।

चीनी और वस्त्रों के कुछ चुने हुए क्षेत्रों में जहां सम्भव होगा, उत्पादन के पूंजी-गहन ढंगों को प्रोत्साहित किया जायेगा । घरेलू और लघु उद्योगों के उत्पादन में उत्पादन शुल्क विभेदक संरक्षण तथा आरक्षण की नीति अपनायी जायेगी ।

इस योजना के निवेश तथा उत्पादन लक्ष्यों की प्राप्ति होने पर ४९२.९१ लाख श्रम-वर्ष रोजगार के अवसर पैदा होगें । यह योजनावधि में ३०० लाख श्रम-शक्ति के प्रसार को खपा लेगें तथा पहले से चली आ रही बेरोजगारी को भी समाप्त कर लेगें ।

छठवीं पंचवर्षीय योजना में रोजगार के सुझाव दिये गये है। उसके मुख्य आधार निम्न हैं :-

१- अधिकतम वृद्धि दर प्राप्त की जा सके और उसे कायम रखने की नीति।

२- उत्पादन के ढांचे को श्रम प्रधान बनाने की नीति।

३- तकनीकी परिवर्तन को इस प्रकार नियंत्रित करने की नीति जिससे रोजगार में वृद्धि की दर एक सन्तोषजनक स्तर पर कायम हो।

श्रमिकों की दयनीय स्थिति के सन्दर्भ में योजना काल में अनेक कार्य किये गये है। इन श्रमिकों को पारिश्रमिक बहुत ही कम मिलता है। अल्प बेरोजगारी की स्थिति में ये शहर की ओर भागते है और वहां जाकर जनसंख्या में वृद्धि करते है। भारत में शहरी जनसंख्या में प्रति वर्ष दो तिहाई वृद्धि ग्रामीण क्षेत्रों से प्रवजन के कारण होती है। भारतीय अर्थ व्यवस्था में बेरोजगारी एक तार्किक आवश्यकता है। और यह तब तक बनी रहेगी जब तक कि ग्रामीण शहरी वेतनों में अन्तर विद्यमान है। बेरोजगारी समाप्त करने के सन्दर्भ में निश्चित रूप से नियोजित ढंग से विचार होना चाहिए।[१] एक अल्प विकसित देश में जहां पर कृषि पिछड़ी है, वहां पर सरकार का यह कर्तव्य होता है कि वह ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि क्षेत्र में श्रमिकों को रोजगार के अवसर उपलब्ध कराये। इस सन्दर्भ में हमारी सरकार सदैव सचेत रही है। संदर्भित अध्ययन दो रूपों में किया जा सकता है प्रथम अध्ययन हम प्रथम योजना शुरू होने से पंचम पंचवर्षीय योजना के पहले ही १९७८ में समाप्त होने तक करते है द्वितीय अध्ययन १९७७ से प्रारम्भ होता है। प्रथम योजना से लेकर सभी योजनाओं तक कृषि क्षेत्र में रोजगार के बारे में ध्यान दिया गया प्रथम से चतुर्थ योजना के आलेखों में भी ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि सन्दर्भित बेरोजगारी का वर्णन है। पांचवी योजना में इम्प्लायमेंट, मैनपावर एण्ड लेबर वेलफेयर नाम से एक विभाग खोला गया इसमें भी रोजगार पर काफी बल दिया गया है। उचित एवं प्रचुर मात्रा में रोजगार उपलब्ध करने की उपेक्षा नहीं की जा सकती।[2] यह एक स्पष्ट एवं खुला हुआ तर्क है कि भारत की ग्रामीण जनसंख्या में मुख्य रूप से कृषि श्रमिक एवं भूमिहीन मजदूर है गांवों में सम्पन्न लोग तो आज शहरों में मकान बना कर सम्पन्नता का जीवन व्यतीत करने लगे है। ग्रामीण कृषि श्रमिकों की समस्याएँ एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में बदलती रहती है क्योंकि सभी क्षेत्रों की सामाजिक

१- दास, के०वी०: रूरल-अरबन माइग्रेशन एण्ड अनइम्प्लायमेंट, इंडियन जर्नल आफ लेबर इकोनामिक्स अक्टूबर १९८०, पृ० सं० १८२-१९२ ।

२- पंचम पंचवर्षीय योजना का प्रारूप-१९७४ - ७९ भाग दो, पृ० सं० २६७ ।

एवं आर्थिक परिस्थितियों में अन्तर स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। परन्तु कुछ समनताऐं भी दिखायी देती है। कृषि श्रमिकों के पास यदि कुछ खेत भी है तो वह दूर-दूर एवं छिटका हुआ है। भूस्वामित्व की असुरक्षा एवं ऋण सुविधाओं का अभाव है। ये सभी बातें श्रमिकों के विकास में बाधक है तथा देश के सामाजिक एवं आर्थिक विकास में अवरोध उत्पन्न करती है। रोजगार पूरक योजनाओं का मुख्य उद्देश्य कृषि श्रमिकों लघु व सीमान्त किसानों की दशा में सुधार करना है। गरीबी बेरोजगारी मिटाने से नया सामाजिक समीकरण स्थापित होगा।[1] विगत तीस वर्षों में य योजनाऐं शुरू की गई उनसे कुछ अंशों में कृषि क्षेत्र में रोजगार बढ़ा है।[2]

प्रथम पंचवर्षीय योजना में गांवों के श्रमिक वर्ग की समस्या को समाप्त करने के लिए प्रस्ताव रखे गये थे। न्यूनतम मजदूरी अधिनियम १९४८ को कृषि क्षेत्र में लागू करने का प्राविधान था। द्वितीय योजना में केन्द्र सरकार से कृषि श्रम को व्यवस्थित करने का प्रयास किया सन् १९५३ में ग्रामीण क्षेत्र में रोजगारी बढ़ाने के लिए ग्यारह सूत्री कार्यक्रम शुरू किया गया, जिसमें लघु उद्योग, यातायात व शि शिक्षा के विकास के लिए सुझाव दिये गये। दूसरी योजना में यह सूचित किया गया था कि देश के सीमित पूंजी से अधार भूत उद्योगों का विकास करना चाहिए। रोजगार के अवसर प्रदान करने के लिए मेडबन्दी, मृदासंरक्षण, सिंचाई, बाढ़ नियंत्रण, भूमि पुनरूद्धार आदि कार्य हाथ में लेकर व उनमे श्रम गहन पद्धतियों का प्रयोग करके ग्रामीण निर्माण कार्यक्रम संगठित किये गये जिससे कि २५ लाख लो लोगों का साल भर तक काम मिल सके। रोजगारी का प्रभाव विस्तृत में फैला तथा संतुलित रहा। इसके लिए स्थानीय स्थितियों के अनुसार बेरोजगारी की समस्या जिला या विकास खण्ड स्तर पर हल की जाय। ग्रामीण श्रमिकों के हित साधन के लिए पहले की योजनाओं की तुलना में चौथी योजना में कुछ कार्यक्रम शुरू किये गये। ये कार्यक्रम मुख्य रूप से इस प्रकार है। ये कार्यक्रम अतिरिक्त और मौसमी रोजगार प्रदान करने की दृष्टि से शुरू किये गये थे। लघु सिंचाई योजनाऐं, भूमि सुधार से अधि मृदा संरक्षण आदि कार्य है। पशुपालन, मुर्गीपालन, सुअर पालन आदि से अतिरिक्त रोजगार प्राप्त होगें

१- कुरीयन, के०एम०: रूरल डेवलपमेंट एप्रोच एण्ड प्रोग्राम, स्टेट एण्ड सोसायटी, जुलाई - सितम्बर, १९८० पृ० सं०१५।

२- सिनहा, जे०एन०: रूरल इम्प्लायमेंट, प्लानिंग डायमेन्सन्स एण्ड, कान्सन्ट्रेन्ट्स, इकोनामिक एण्ड पोलिटिकल वीकली, वालुम १३, नवम्बर ६-७, एनुअल नम्बर १९७८ पृ०सं० ३०९।

रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने के लिए एम० एफ० ए० एल० एस० एफ० डी० ए०, डी० पी० ए०पी० और सी०एस०आर०डी० आदि प्रमुख कार्यक्रम चलाये गये है जो उपर्युक्त वर्गों हेतु क्रियान्वित है। विभिन्न स्तर के लोगों को रोजगार प्रदान करना इन योजनाओं का उद्देश्य है जो लघु किसानों, सीमान्त किसानों एवं भूमिहीन मजदूरों के हित के लिए क्रियान्वित है। मन्दी के दिनों के लिए इन योजनाओं का महत्व अधिक है। क्योंकि इन दिनों कृषि कार्य मन्द रहते है। उस समय योजना के तहत रोजगार के अवसर प्राप्त होते है। आल इंडिया रूरल क्रेडिट रिव्यू कमेटी छोटी जोतो की समस्यों पर विचार करते हुए इस निर्ष्कष पर पहुंची कि राज्यों के उचित सहयोग से छोटे कृषकों एवं भूमिहीन कृषि श्रमिकों की दशा में सुधार सम्भव है।

एस० एफ०डी०ए० और एम० एफ०ए०एल० :-----

चौथी योजना में ४६ एस० एफ० डी० ए० और ४१ एम० एफ० ए० एल० परियोजनायें ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक सुधार एवं रोजगार के अवसर प्रदान करने के लिए शुरू की गयी। पांचवी योजना में एस०एफ० डी० ए० और एम० एफ० ए०एल० योजनाओं को एक दूसरे में मिला दिया गया। पांचवी योजना में परियोजनाओं की संख्या १६८ तक बढ़ गयी थी। चतुर्थ योजना में पाइलेट प्रोजेक्ट के स्वभाव की ये योजनायें बनायी गयी थी। प्रत्येक नयी एजेन्सी से पचास-हजार लोगों के लाभान्वित होने का प्राविधान था। इन कार्यक्रमों से विभिन्न श्रेणी के लोग लाभ अर्जित करते है छोटे किसानों से आशय उन किसानों से था जिन के पास २.५ से ५ एकड़ जमीन थी सीमनन्त कृषकों के पास असिंचित क्षेत्र में २.५ एकड़ से कम जमीन होनी चाहिए। सिंचित क्षेत्रों में भूमि की मात्रा इनकी आधी होनी चाहिए।

इन ऐजन्सियों के कार्यक्रम केन्द्रीय सरकार द्वारा निर्धारित स्तर के अनुसार चलते है। एजेन्सी कृषि के विकास के साथ-साथ सहायक उद्योग-धन्धों के विकास में भी सहयोग प्रदान करती है भूमि विकास मृदा संरक्षण लघु सिंचाई, फलोद्यान, फसलों की नयी जातियों, का प्रवेशन आदि से योजनाऐं संदर्भित होती है। छोटे कृषकों को २५ प्रतिशत की छूट दी जाती है सीमान्त कृषकों को एवं कृषि मजदूरों को ३३ प्रतिशत की छूट दी जाती है एक व्यक्तिगत लाभान्वित होने वाले व्यक्ति को 3000रू० से अधिक की सब्सिडी नहीं दी जा सकती है। परिगणित जनजाति वालों को ५० प्रतिशत की छूट रहती है। तथा उन्हें ५000 रू० तक की छूट प्राप्त हो सकती है। ये एजेन्सियां कस्टम सर्विस भी करती है। उर्वरक खरीदने, पशु खरीदने में छूट प्राप्त होती है। क्षेत्र में पहले से यदि

कोई कार्यक्रम चल रहा है तो उस कार्यक्रम के सन्दर्भ में भी ऐजेन्सियां सहयोग प्रदान करती है । ऋण किसी बैंक के माध्यम से प्राप्त होता है पशु खरीदने के लिए एजेन्सी या कोई अधिकारी इन कृषकों को पशु खरीदने में सहयोग प्रदान करता है। उस अधिकारी की संस्तुति पर ही पशु खरीदा जा सकता है । वास्तव में इन ऐजेन्सियों से छोटे - छोटे किसानों एवं कृषि श्रमिकों को उतना लाभ नहीं मिल रहा है जितना कि मिलना चाहिए । छोटे किसानों एवं कृषि श्रमिकों के नाम पर बड़े लोग लाभ उठाते है। प्राय: यह देखा जाता है कि बड़े किसानों के यहां कृषि श्रमिक कार्य करते है कृषि श्रमिक मालिक के दबाव में रहता है जिसका परिणाम यह होता है कि श्रमिक के नाम पर सारी सुविधाओं सेका उपभोग मालिक करता है बहुत बार तो यह भी देखने में मिलता है कि कृषि श्रमिक अपने लिए दी गयी सुविधा से परिचित भी नहीं होते है ।

कैश स्कीम फार रूरल डेवलपमेंट :-----

ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबों एवं कृषि श्रमिकों को रोजगार प्रदान करने हेतु योजनाऐं १९७१ में तीन साल के लिये क्रियान्वित की गयी थी । सी० एस० आर० डी० केन्द्र द्वारा निरूपित हुई थी । परन्तु इसके क्रियान्वयन की योजना राज्य सरकारों पर थी । स्कीम की बाते मुख्य रूप से निम्न लिखित है :----------

१- देश के सभी ग्रामीण जिलों में १००० लोगों के लिए १० महीने हेतु रोजगार की व्यवस्था होनी चाहिए ।

२- योजना में सम्मलित कार्यों से जिले का विकास होना चाहिए । इस योजना के अन्दर जो कार्य होगें वे मुख्य रूप से भूमि विकास लघु सिंचाई भूमि कटाव, ग्रामीण सड़क निर्माण से संबंधित होना चाहिए ।

३- उन्ही योजनाओं को क्रियान्वित करना चाहिए जिनसे स्थानीय विकास हो सके तथा कुछ सार्थक निष्कर्ष निकल सके । प्रत्येक जिले में ऐसी योजनाओं का चुनाव होना चाहिए ।

४- योजना में उन लोगों को प्राथमिकता मिलनी चाहिए जो ग्रामीण क्षेत्र के है तथा पूर्ण रूप से बेरोजगार है ।

ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार प्रदान करने के लिए कम से कम ५२५ लाख मानव दिन तथा अधिक से अधिक ८७५ लाख मानव दिन निर्धारित हुए । सन् १९७१-७२ में ७९० लाख मानव दिन, १९७२ में १३८

लाख मानव दिन तथा १९७३ में ६२७ लाख मानवदिन रोजगार का लक्ष्य प्राप्त हुआ ।[१] इसके मूल्यांकन से निम्न लिखित निष्कर्ष प्राप्त होते हैं :------

१- राज्यों में जो श्रमशक्ति थी उसके अनुपात में इन योजनाओं में कार्यशील जनसंख्या को नहीं लिया जा सका ।

२- योजनायें गांवों में औद्योगिकरण के वातावरण को स्थापित करने में सफल नहीं हो सकी ।

३- इन योजनाओं में प्रचलित मजदूरी दर सामान्य मजदूरी दर से कम होती है ।

४- योजनायें कृषि श्रमिकों को अर्थव्यवस्था के दूसरे क्षेत्रों में नहीं लेजा सकी । इन योजनाओं से १९ १९७१-७२ में औसतन प्रति जिला १५०० लोगों को १५० दिन तक कार्य प्राप्त हुआ १९७२ - ७३ में २५०० लोगों को रोजगार प्राप्त हुआ । १९७३-७४ में औसतन २००० लोगों को रोजगार प्राप्त हुआ ।

ग्रामीण युवकों को स्वरोजगार योजना :------

गांवों में रहने वाले लघु कृषक, सीमान्त कृषक, शिल्पकार एवं खेतिहर मजदूर काफी दयनीय जीवन व्यतीत करते है इनके नवयुवक भी रोटी-रोजी की तलाश में दर-दर की ठोकरें खाते है । ये गरीबी रेखा से नीचे का जीवन स्तर व्यतीत करते है । इन नवयुवकों को रोजगार दिलाने हेतु प्र पन्द्रह अगस्त १९७९ से ग्रामीण युवकों को रोजगार के लिए प्रशिक्षित किया गया । इस योजना में इस बात पर बल दिया गया है कि ग्रामीण क्षेत्र में कमजोर वर्ग के युवकों में स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप तकनीकी निपुणता पैदा की जाय जिससे कि उन्हें स्वरोजगार कार्य-क्रमों में लगाया जा सके । इस कार्यक्रम के दौरान प्रशिक्षण हेतु नवयुवकों को १०० रू० प्रतिमाह की छात्रवृत्ति दी जाती है प्रशिक्षण पूरा होने पर रोजगार के सन्दर्भ में सरकार उनकी सहायता करती है। सहायता के सन्दर्भ में उन्हें तीन हजार रूपये तक सब्सिडी दी जाती है और १:२ और १:३ के अनुपात में कर्ज प्रदान किया जाता है । स्वरोजगार में प्रयुक्त होने वाले उपकरणों की भी व्यवस्था की जाती है यही नहीं, कच्चे माल के प्रबन्ध में भी सरकार द्वारा सहयोग प्राप्त होता है । स्वरोजगार योजना के अन्तर्गत तैयार माल की बिक्री के सन्दर्भ में भी सहयोग प्रदान किया जाता है । व्यवस्था इस बात की है कि प्रति वर्ष ५०११ विकास खण्डों में से चुनकर ६०० परिवारों की सहायता की जायेगी तथा उन्हें गरीबी रेखा से ऊपर रखने की व्यवस्था होगी । ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के सन्दर्भ में हमारी सरकार प्रयत्नशील है । काम के बदले अनाज योजना काफी कारगर सिद्ध हो सकती है । काम के

१- रिपोर्ट आन करेन्सी एण्ड फाइनेन्स १९७३-७४, पृ० सं० २३ ।

बदले अनाज योजना के अर्न्तगत सामूहिक आवास स्थलों, पेयजल तथा सिंचाई कुवों के निर्माण से सन्दर्भित कार्यों में प्रत्येक विकास खण्ड में प्रति वर्ष लगभग एक हजार परिवारों को रोजगार दिया जा सकता है। छंठी योजना में इस कार्यक्रम पर २७६० करोड़ रू० खर्च हो गये उनमें आधी सहायता केन्द्र सरकार द्वारा दी जायेगी केन्द्र सरकार द्वारा दी जाने वाली सहाता लगभग १३८० करोड़ रू० है।[1] इस प्रकार से काम के बदले अनाज योजना के अर्न्तगत मौसमी बेरोजगारी में रोजगार मिलता है और इस कृषि श्रमिकों के जीवन स्तर को सुधारने का अवसर प्राप्त होता है।[2]

समान्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम :------

उत्तर-प्रदेश राज्य के सम्बन्ध में सम्वन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम की प्रगति संतोष जनक कही जा सकती है। १९७८-७९ में भारत सरकार ने इस कार्यक्रम का शुभारम्भ किया। जिसके अर्न्तगत ग्रामीण विकास प्रशासन को संगठित करना, सामाजिक न्याय के साथ विकास, लघु एवं सीमान्त कृषकों की सहायता कृषि श्रमिकों को लाभ, ग्रामीण औद्योगिकरण विशेष तौर से पिछड़े हुए इलाकों में ग्रामीण विकास केन्द्रों की स्थापना जैसे कार्यक्रम देश भर में चला जा रहे है देश भर में उपलब्ध विज्ञान एवं तकनीकी ज्ञान को प्राकृतिक एवं मानवियसाधनों के विकास में लगाया जाने लगा है सम्वन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य चुने हुए क्षेत्र में उत्पादक योजनाओं के माध्यम से कमजोर वर्ग जैसे लघु एवं सीमान्त कृषक व कृषि श्रमिकों आदि के जीवन स्तर को ऊपर उठाने से है। देश की जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग गरीबी रेखा के नीचे रहा है। इसकार्यक्रम के अर्न्तगत स्थानीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर उचित योजनाओं के माध्यम से अतिरिक्त रोजगार उत्पन्न किया जा रहा है। ताकि इस कमजोर वर्ग के जीवन स्तर को ऊपर उठाया जा सके।

उ० प्र० में इस कार्यक्रम के अर्न्तगत मुख्यत: कृषि, लघु सिंचाई, पशुपालन, उद्योग सेवा तथा व्यवसाय सम्बन्धी कार्यक्रम चलाये जा रहे है। लाभार्थियों की चयन की प्रक्रिया काफी तेजी से पूरी की जा रही है बहुत सी ~~योजनाओं~~ योजनाओं के अर्न्तगत लाभार्थियों को सुविधायें प्रदान की गयी।

१- वही, पृ०स० २४।

२- इंडिया, १९७८, पृ० सं० २४८।

वर्ष १९८० - ८१ में भारत सरकार ने उ०प्र०को १०२१.८५ लाख रूपये सीधे एवं ३८५.८० लाख रूपये राज्य स सरकार के माध्यम से समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत उपलब्ध कराये जबकि उ०प्र० सरकार ने इस कार्यक्रम को अन्तर्गत १४३६.८५ लाख रूपये उपलब्ध कराये ।[1] वर्ष १९८१-८२ में भारत सरकार ने उ०प्र० को इसकार्यक्रम को २५१३.५८ लाख रूपये उपलब्ध कराये जबकि प्रदेश सरकार द्वारा २५३२.३४ लाख रूपये व्यय किये गये वित्तीय वर्ष १९८३-८४ में इस योजना के अन्तर्गत राज्य सरकार का महत्वपूर्ण योगदान रहा है । १९८३-८४ के माह मार्च १९८४ तक अभिकरणों के पास कुल उपलब्ध धनराशि १०२७३.४० लाख रूपये की अपेक्षा ७५५९, ११ लाख रूपये व्यय हुआ जो उपलब्ध धनराशि का ७३.७ प्रतिशत है । प्राप्त सूचनाओं के अधार पर अनुसूचित जाति एवंजनजाति हेतु ३०८५.७५ लाख रूपये व्यय किये गये जो कुल व्यय का ४०.८ प्रतिशत है । आलोच्य अवधि में १९१९६.८५ लाख रूपये ऋण का वितरणकिया गयाजिसमें ५०६१.०५ लाख रूपये सहकारी बैंकों द्वारा तथा १४१३८.६८ लाख रूपये व्यवसायिक बैंकों द्वारा दिये गये कृषि कार्यक्रमों के अन्तर्गत १०६,६७८ परिवारों को लाभान्वित किया गया जिसमें अनुसूचित एवं जनजाति के ४३६५१ परिवार है । लघु सिंचाई के विभिन्न कार्यक्रमें द्वारा अब तक लाभान्वित हुए परिवारों की कुल शुद्ध संख्या ५४५२६ है आलोच्य अवधि में पशुपालन कार्यक्रमों से १८०३१७ परिवारों को लाभान्वित किया गया जिसमें ४७४६९ अनुसूचित जाति के है । इस कार्यक्रम के अन्तर्गत ३०१७५१ परिवारों ने लाभ प्राप्त किया तथा ३२८७६व्यक्तियों ने अपना निजी कुटीर उद्योग एवं व्यवसाय चलाने का प्रशिक्षण कार्यक्रम पूरा किया ।[2]

वर्ष १९८४-८५ में एकीकृत ग्राम्य विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत उ० प्र० सरकार ने भौतिक लक्ष्य का निर्धारण ६०० लाभार्थी प्रति विकास खण्ड की दर से गत वर्ष की भांति किया है । जिसके अधार पर ५३१००० लाभार्थियों को सहायता पहुंचाने का लक्ष्य रखा गया है ।[3] राज्य सरकार ने वर्तमान वित्तीय वर्ष के सम्बन्ध में लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु जिला ग्राम्य विकास अभिकरणों को व्यापक निर्देश दिये है वर्तमान वित्तीय वर्ष में इस कार्यक्रम के अन्तर्गत लगभग ७०८० लाख रूपये व्यय किये जाने का प्रविधान है ।[4]

१- उत्तर-प्रदेश "विकास अंक" जुलाई, १९८४, सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उत्तर-प्रदेश का प्रकाशन ।

२- वही, पृ० सं०२३ ।

३- वही, पा

४- वही ।

समग्र ग्रामीण विकास कार्यक्रम :------

१४ जनवरी १९८२ को प्रधान मंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने संशोधित २० सूत्री कार्यक्रम की घोषणा की इस कार्यक्रम के माध्यम से देश के बहुमुखी विकास की गति को तीव्र करने का प्रयास किया गया है। इसके लिए ।।१।। कृषि व गैर कृषि क्षेत्रों की उत्पादन वृद्धि, एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम, न्यूनतम मजदूरी कार्यक्रम, भूमिहीनों को भूमि आदि के आर्थिक कार्यक्रम ।।२।। सामाजिक आर्थिक समानता बनाये रखने के लिए भोजन, कपड़ा आवास तथा शिक्षा आदि सुविधाओं को जनसामान्य तक पहुंचाने, ।।३।। सामाजिक स्तर के कार्य क्रम जैसे परिवार नियोजन, वन रोपण, ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों का विकास तथा ।।४।। गैर सामाजिक तत्वों का उन्मूलन, जमा खोरी, तस्करों व कर प्रवंचकों के विरुद्ध कार्यवाही आदि के प्रमुख कार्यक्रम बनाये गये है।

कार्यक्रमों की इस श्रृंखला में एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम एवं राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना मेरुदंड के समान है। जिन पर अन्य बहुत से उद्देश्यों की सफलता टिकी है।

१- राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम :---

यह कार्यक्रम दिसम्बर १९८० से प्रारम्भ किया गया। कार्यक्रम का प्रमुख उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में अतिरिक्त रोजगार के अवसर सृजित करने के साथ-साथ स्थायी परिसम्पत्तियों का निर्माण करना है। योजना के संपूर्ण व्यय में ५० प्रतिशत अंश केन्द्र सरकार का है वर्ष १९८२-८३ में इस कार्यक्रम के अन्तर्गत ७२५७.४९ लाख रूपयों की लागत से ५६५.५४ लाख मानव रोजगार दिवस का सृजन हुआ। वर्ष १९८३-८४ में ४२२.७८ लाख मानव रोजगार दिवस के वार्षिक लक्ष्य के विपरित फरवरी १९८४ तक ३१५.१२ लाख मानव रोजगार दिवस का सृजन कर ७४.५ प्रतिशत उपलब्धि प्राप्त की गयी शासन द्वारा इस कार्यक्रम के लिए ६८८० लाख रूपये का प्राविधान किया गया है।[१]

२- एकीकृत ग्राम्य विकास कार्यक्रम :------

भारत सरकार की ५० प्रतिशत सहायता से एकीकृत ग्राम्य विकास कार्यक्रम २ अक्टूबर, १९८० से प्रदेश के सभी ८८५ विकास खण्डों में कार्यान्वित किया जा रहा है।

१- प्रगति के सोपान - जन विश्वास के ठोस आधार-२० सूत्र, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग उ०प्र० मार्च १९८४, पृ० - ३।

समग्र ग्रामीण विकास कार्यक्रम :------

१४ जनवरी १९८२ को प्रधान मंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने संशोधित २० सूत्री कार्यक्रम की घोषणा की इस कार्यक्रम के माध्यम से देश के बहुमुखी विकास की गति को तीव्र करने का प्रयास किया गया है। इसके लिए ।।१।। कृषि व गैर कृषि क्षेत्रों की उत्पादन वृद्धि, एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम, न्यूनतम मजदूरी कार्यक्रम, भूमिहीनों को भूमि आदि के आर्थिक कार्यक्रम ।।२।। सामाजिक आर्थिक समानाता बनाये रखने के लिए भोजन, कपड़ा आवास तथा शिक्षा आदि सुविधाओं को जनसामान्य तक पहुंचाने, ।।३।। सामाजिक स्तर के कार्य क्रम जैसे परिवार नियोजन, बन रोपण, उर्जा के वैकल्पिक स्रोतों का विकास तथा ।।४।। गैर सामाजिक तत्वों का उन्मूलन, जमा खोरी, तस्करों व कर प्रवंचकों के विरुद्ध कार्यवाही आदि के प्रमुख कार्यक्रम बनाये गये है।

कार्यक्रमों की इस श्रृखला में एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम एवं राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना मेरुदंड के समान है। जिन पर अन्य बहुत से उद्देश्यों की सफलता टिकी है।

१- राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम :---

यह कार्यक्रम दिसम्बर १९८० से प्रारम्भ किया गया। कार्यक्रम का प्रमुख उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में अतिरिक्त रोजगार के अवसर सृजित करने के साथ-साथ स्थायी परिसम्पत्तियों का निर्माण करना है। योजना के संपूर्ण व्यय में ५० प्रतिशत अंश केन्द्र सरकार का है वर्ष १९८२-८३ में इस कार्यक्रम के अर्न्तगत ७२५७.४९ लाख रुपयों की लागत से ५६५.५४ लाख मानव रोजगार दिवस का सृजन हुआ। वर्ष १९८३-८४ में ४२२.७८ लाख मानव रोजगार दिवस के वार्षिक लक्ष्य के विपरित फरवरी १९८४ तक ३१५.१२ लाख मानव रोजगार दिवस का सृजन कर ७४.५ प्रतिशत उपलब्धि प्राप्त की गयी शासन द्वारा इस कार्यक्रम के लिए ६८८० लाख रुपये का प्राविधान किया गया है।[१]

२- एकीकृत ग्राम्य विकास कार्यक्रम :-----

भारत सरकार की ५० प्रतिशत सहायता से एकीकृत ग्राम्य विकास कार्यक्रम २ अक्टूबर, १९८० से प्रदेश के सभी ८८५ विकास खण्डों में कार्यान्वित किया जा रहा है।

१- प्रगति के सोपान - जन विश्वास के ठोस अधार-२० सूत्र, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग उ०प्र० मार्च १९८४, पृ० - ३।

कार्यक्रम का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्र के निर्बल वर्ग, विशेषकर लघु कृषकों, सीमान्त कृषकों, खेतिहर मजदूरों तथा ग्रामीण शिल्पकारों को गरीबी रेखा से ऊपर उठाना है। कार्यक्रम के अन्तर्गत ६०० परिवार प्रति विकास खण्ड लाभान्वित करने का लक्ष्य है। जिसमें से ५० प्रतिशत अनुसूचित जाति एवं जनजाति के होने चाहिए।[1]

वर्ष १९८२-८३ में इस कार्यक्रम से ५.५६ लाख परिवार लाभान्वित हुए जिसमें २.३७ लाख परिवार अनुसूचित जाति एवं जनजाति के थे। इन परिवारों को १६०७६.४८ लाख रूपये वितरीत किये गये और ६५४५.२१ लाख रूपये की धनराशि अनुदान के रूप में दीगयी। वर्ष १९८३-८४ में ५.३१ लाख परिवारों को लाभान्वित करने का लक्ष्य है। इसमेंप फरवरी १९८४ तक ४.६२ लाख परिवारों को लाभान्वित कर ८७ प्रतिशत उपलब्धि प्राप्त की गयी। इसमें २.७० लाख निर्धारितलक्ष्य के विपरित १.९९लाख परिवार अनुसूचित जाति एवं जनजाति के थे।[2]

१९८३-८४ में प्रत्येक विकास खण्ड को अपने क्षेत्र के निर्धनतम परिवारों की सहायता हेतु ८ लाख रूपये का प्राविधान रखा गया है। जिसके अन्तर्गत चुने गये लोगों को डेयरी, मुर्गीपालन, सुअर पालन, मछली पालन, रेशम के कीड़ें पालने, ग्रामीण कुटीर-उद्योग -धन्धों के लिए वर्ज अथवा सरकारी सहायता से खरीदी गया सम्पत्ति का प्रयोग करने की सुविधा दी जायेगी।

छठीं योजना में इस कार्यक्रम द्वारा १.५ करोड़ परिवारों की सहायता का लक्ष्य है तथा ३० अरब रूपये के कर्ज एवं १५ अरब रूपये की आर्थिक सहायता का प्राविधान ह जिसमें केन्द्र एवं राज्य सम समाच रूप से वित्त प्रदान करेंगें।[3] इस योजना द्वारा अनुसूचित जातियों, जनजातियों को अधिकाधिक लाभान्वितकरना, बेरोजगारी तथा अर्द्ध बेरोजगारी दूर करने के लक्ष्य सम्मलित ह। ३५०० रू० वार्षि आय के कम के परिवारों को इसका लाभ मिलेगा। इस श्रेणी में छोटे तथा सीमान्त कृषकों, भूमिहीन, मजदूरों एवं ग्रामीण दस्तकारों को रखा गया है। ५ एकड़ तक की भूमि वालों किसानों

१- प्रगति

१- प्रगति के सोपान - जन विश्वास के ठोस अधार-२०सूत्र, सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ०प्र०, मार्च १९८४, पृ० ३।

२- वही,

३- उत्तर-प्रदेश - जुलाई १९८४-सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग उत्तर-प्रदेश का प्रकाशन "विकास अंक" पृ०-४३।

को २५ प्रतिशत की तथा इससे कम भूमि वाले किसानों को ३३.३ प्रतिशत आर्थिक सहायता दी जायेगी इस योजनानपर १९८०-८१ से १९८२-८३ तक लगभग ९ अरब १५ करोड़ रु० का व्यय हो चुका है। जिसके परिणाम स्वरूप केवल १९८०-८१ में ही ४२.८ करोड़ दिनों का रोजगार उत्पन्न हुआ। १९८१-८२ में ३५.४५ करोड़ रोजगार दिवसों का सृजन हुआ एवं १९८३-८४ के लिए यह लक्ष्य ३२.२२ करोड़ दिनों का है जिसके लिए ४ अरब रु० का प्रावधान है।[1] इसके अतिरिक्त १९८३-८४ में भूमिहीनों के लिए रोजगार गारंटी का कार्यक्रम भी स्वीकार किया गया जिसका उद्देश्य गांव के प्रत्येक भूमिहीन परिवार को कम से कम एक सदस्य को १०० दिनों का रोजगार प्रदान करना है। इस योजना के अन्तर्गत लघु सिंचाई कार्यों, भूमि विकास तथा वन रोपण जैसी लाभकारी योजनाओं को शुरू करने का विचार है जिसके लिए १९८३-८४ में एक अरब तथ १९८४-८५ में पांच अरब रु० का प्रावधान है। जिसका पूरा दायित्व केन्द्र सरकार पर होगा। आशा है इससे १९८३-८४ में ६ करोड़ तथा १९८४-८५ में ३० करोड़ रोजगार दिवसों का सृजन हो सकेगा।[2]

एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम एवं राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना तथा ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रमों द्वारा गांवों की निर्धनता दूर करने में बहुत सहयोग मिलेगा। इन सुविधाओं को कैसे वितरित कियाजाय इस प्रश्न पर भी विचार किया गया ह ताकि कार्यक्रम का लाभ उपयुक्त लोगों तक पहुंचाया जा सके। आपरेशन फ्लड-२ के नाम से प्रसिद्ध राष्ट्रीय डेरी विकास कार्यक्रम द्वारा छठी योजना में १.५ करोड़ परिवारों को लाभान्वित करने का लक्ष्य रखा गया ह।

१९८०-८१ में आई० आर०डी० के अन्तर्गत एस० एफ० डी ० ए० को भी सम्मलित कर लिया गया ह तथा इस योजना को उत्तर-प्रदेश के सभी ८८५ब्लाकों में लागू भी कर दिया गया ह। प्रत्येक ब्लाक के लिए ५ लाख रूपया अथवा कुल ४४२५ लाख रूपये का बजट निर्धारित किया गया जिसका ५० प्रतिशत राज्य सरकार वहन करेगी। इस अवधि तक कुल २९६१.७३ लाख रु० व्यय हुए जिसका लाभ ९.९९लाख परिवारों को मिला।। इसमें एस०एफ०डी० ए० से लाभान्वित परिवार भी सम्मलित है।।

१- उत्तर-प्रदेश - जुलाई १९८४-विकास अंक - सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उत्तर-प्रदेश का प्रकाशन पृ० ४४।

२- वही।

१९८१-८२ के लिए प्रति ब्लाक ६ लाख रु० अथवा कुल ५३१० लाख रु० का निर्धारण किया गया है। जिसमें केन्द्र ने अपने अंशदान से कुछ कम २५०३.५८ लाख रु० का अनुदान दिया। इस वर्ष कुल ४८७३.१२ लाख रु० का व्यय हुआ जिससे ५.४० लाख लोग लाभान्वित हुए। १९८२-८३ के लिए प्रति ब्लाक ८लाख रु० अथवा ७०८०लाख रु० का बजट रखा गाय है। तथा इस बात का भी प्रयासकिया गया कि लाभान्वित में कम से कम ३० प्रतिशत पिछड़ी एवं जनजाति के लोग हो।[१]

आई०आर०डी० का कार्यान्वयन जिला ग्रामीण विकास समितियो द्वारा तथा योजना निर्माण निम्नतम स्तर पर किया गया है। इस बात का भी प्रयास किया कि प्रत्येक ब्लाक तथा जिला अपने वित्तीय व भौतिक लक्ष्यों की पूर्ति कर सके। जिला स्तर पर वार्षिक योजनाऐं खण्डानुसार तैयार व कार्यान्वित की जा रही है। आई० आर० डी० का कार्यान्वयन "अंत्योदय" के आधार पर किया जा रहा है जिसमें निर्धनो में निर्धनतम लोगों को चुना जाता है। क्योंकि प्रदेश में बड़ी संख्या में पिछड़ी जातियों के परिवार निर्धन है अत: कुल व्यय का आधा भाग इनके लिए रखा जायेगा।

प्रदेश में कार्यक्रम के सुचारु संचालन के लिए प्रत्येक लाभान्वित परिवार को एक-एक "विकास-पत्रिका दी गयी है जिसमें न केवल उनको दिये जाने वाले कार्यक्रम का विवरण है वरन् आगामी तीन वर्षो तक परिवार की आय का लेखा-जोखा भी रखा जायेगा। राज्य स्तर पर भी भौतिक व वित्तीय प्रगति भी देखी जायेगी, इसके लिए राज्य स्तर पर सहसम्बन्ध समिति की बैठक हर तीन महीने पर होगी, जो कार्य की प्रगति का जायजा लेगी तथा आवश्यक सुझाव भी देगी। क्योंकि यह कार्यक्रम २० सूत्री आर्थिक का प्रमुख भाग है अत: प्रत्येक मंडल के आयुक्त इसकी प्रगति पर निरन्तर ध्यान रखते है एवं इसके कार्यान्वयन में आने वाली बाधाओं को तत्परता से दूर करते है। किन्तु अभी भी इस बात की आवश्यकता है कि इसके कार्यान्वयन पक्ष को राष्ट्रीय स्तर पर सुदृढ़ किया जाय तथा ग्रामीण जिला विकास समितियों को इनके सफल कार्यान्वयन का निदेश दिये जाये।

जहां तक राष्ट्रीय ग्रामीणरोजगार कार्यक्रम का प्रश्न है सरकार इस ओर भी चिंतित है। इस कार्य के लिए प्रदेश में वर्ष१९८३-८४ के लिए ३५ करोड़ रु० का प्रावधान है और इतनी ही धनराशि

१- उत्तरप्रदेश - जुलाई १९८४-"विकास अंक" -सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ०प्र० का प्रकाशन पृ०- ४४।

केन्द्र से मिलने की आशा है। भारत सरकार के निर्देशानुसार इस व्यय का १० प्रतिशत भाग सामाजिक वानिकी के लिए तथा १० प्रतिशत पिछड़ी जातियों, जनजातियों के लाभ के लिए होगा। १९८३-८४ से समास्त राशि का व्यय जिला ग्रामीण विकास समितियों के माध्यम से हुआ था जिसमें प्रदेश सरका ने सीमान्त कृषकों, पिछड़ी जातियों, जनजातियों की जन संख्या को धन वितरणका अधार बनाया था। जिला ग्रामीण विकास स मितियों को स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप कार्य करने की स्वतन्त्रता दीगयी है।

रोजगार कार्यक्रम से बहुत से सामाजिक लक्ष्यों की पूर्ति भी सम्भव हो सकेगी उदाहरणार्थ-ग्रामीण क्षेत्रों में पीने के पानी की सुविधा, टैंकों के निर्माण कार्य, मत्स्य पालन तथा ग्रामीण क्षेत्रों में बाढ़ आदि रोकने के कार्यों की प्रर्ति। इसके अतिरिक्त पुल निर्माण का कार्य, नालियों आदि बनाने के काम में रोजगार योजना सहायक होगी। इन कार्यो से १९८२-८३ में प्रदेश में ६.२४ करोड़ कार्य दिवसों का सृजन होने का लक्ष्य था। इस प्रकार हम देखते है कि 20 सूत्री कार्यक्रम का यह सूत्र ग्रामीण क्षेत्रों के उत्थान का एक वृहद्कार्यक्रम है जिसके द्वारा प्रदेश की ग्राम प्रधान जनसंख्या के जीवन में आमूल मूल परिवर्तन होने की सम्भावना है। जिसकी सफलता कार्यक्रम के सफल क्रियान्वयन में निहित है।

ऐसा नहीं है कि यह कार्यक्रम पूर्णत: त्रुटीहीन है इतनी वृहद् एवं बहुमुखी योजना एवं समुचित कित प्रबन्ध के बाद भी ग्रामीण क्षेत्रों की प्रगति आशानुरूप नहीं हो पा रही ह इन क्षेत्रों की जनसंख्या का एक बड़ा प्रतिशत अभी भी अशिक्षित ह जिसे इन कार्यक्रमें की जानकारी तक नहीं ह। अथवा विभिन्न कारणों से इसके लाभ नहीं ले पाते। इन कारणों में प्रमुखहै कार्यक्रम की योजनाओं के आरंभिक व्यय को वहन कर सकने में असमर्थता जिसमें सम्बन्धित कार्यालयों तक आने-आने-जाने का मार्ग व्यय, कानूनी सहायता, कहीं-कहीं अन्य व्यय भी। योजना में इस बात का भी ध्यान नहीं र रखा गयाहै कि लाभान्वित व्यक्ति योजना को चलाने में कितने सक्षम है कई मामलों में यह भी पाया गया ह कि लाभान्वित व्यक्ति को बैंक ऋण प्राप्त होने में बहुत कठिनाई होती है क्योंकि वह निर्धन के कारण पर्याप्त जमानत नहीं दे पाता। अत: आवश्यकता इस बात की है कि प्रदेश के विकास तथा ग्रामीणाजनों के उत्थान हेतु कार्यक्रम का ईमानदारी पूर्वक कार्यान्यन किये जाये।

स्पेशल कम्पोनेन्ट प्लान :----- उत्तर-प्रदेश में स्पेशल कम्पोनेन्ट प्लान के अन्तर्गत समाज के निर्बल वर्ग के ऐसे व्यक्तियों को जो गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन कर रहें है और धनाभाव के कारण समिति का सदस्य बनने हेतु उसके अंश नहीं खरीद सकते है, ४० रु० से १०० रु० तक अंश क्रय हेतु व्याज रहित मध्य कालीन ऋण सुलभ कराने की व्यवस्था कीगयी है। इसका मुख्य उद्देश्य तराई तथा पर्वतीय अंचलों में रहने वाले निर्धन व्यक्तियों को भी सहकारिता की परिधि में लाकर वांछित सुविधाऐं उपलब्ध कराना है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए शासन ने वर्ष १९८०-८१ से १९८२-८३ तक ३० लाख रु० तक उपलब्ध कराये। वर्ष १९८३-८४ के लिए शासन ने प्रदेश के मैदानी क्षेत्र के लिए १० लाख रु० तथा पर्वतीय क्षेत्र के लिए तीन लाख रु० आवेटित किये हैं।[1]

प्रदेश में सहकारी क्षेत्र में कम्पोनेन्ट प्लान की नई व्यवस्था प्रारम्भ की गयी है। इस व्यवस्था के अन्तर्गत निर्बल वर्ग के बेरोजगारों युवकों को कृषि, पशुपालन, बढ़ईगीरी, चमड़े का काम, तथा अन्य स्थानीय व्यवसायों हेतु प्रशिक्षण के लिए चयन कर उन्हें कार्यशाला तथा उपकरण उपलब्ध कराने के लिए ५००० रु० से १०००० रु० तक मध्यकालीन ऋण सुविधा प्रदान की गई है। इस योजना से पिछड़े क्षेत्रों के विकास, ग्रामीण उद्योगों को प्रोत्साहन तथा बेरोजगार युवकों को रोजगार उपलब्ध कराने में महत्वपूर्ण योगदान मिलेगा।[2]

छठी पंचवर्षीय योजना काल ।। १९८०-८५ ।। के अन्त तक १५ लाख परिवारों को गरीबी की रेखा से ऊपर उठाने के उद्देश्य से राज्य सरकार द्वारा २ अक्टूबर १९८० से हरिजन कल्याण की स्पेशल कम्पोनेन्ट योजना कार्यान्वित की जा रही है। यह प्रयास किया जा रहा है कि छठी पंचयोजना के अन्त तक अनुसूचित जातियों के शैक्षिक स्तर में व्याप्त अंतर को समाप्त कर दिया जाय। स्पेशल कम्पोनेन्ट प्लान के अन्तर्गत शासन द्वारा गरीबी निवारण के लिए चलाई जा रही योजनाओं, ग्रामीण तथा क्षेत्रीय विकास की योजनाओं तथा न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रमें के अन्तर्गत आयोजनागत परिव्ययों का बड़ा अंश अनुसूचित जातियों पर व्यय के लिए मात्राकृत किया जा रहा है। छठी पंचवर्षीय योजना

१- उत्तर-प्रदेश, जुलाई १९८४-"विकास अंक - सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ०प्र० का प्रकाशन, पृ० - ११।

२- वही, पृ०-१२।

के अर्न्तगत ६२६.४३ करोड़ रु०की धनराशि अनुसूचित जातियों के विकासार्थ मात्राकृत्र की गयी है वर्ष १९८३-८४ में १२१.२६ करोड़ रु० की धनराशि इस हेतु निर्धारित की गयी।[1]

राज्य सरकार द्वारा अनुसूचित जातियों के लिए जो विकास कार्यक्रम चलाये जा रहे है उनका अन्तर्निहित मूल उद्देश्य यह है कि छठी पंचवर्षीय योजना काल के अन्त तक अनुसूचित जातियों के पन्द्रह लाख परिवारों को आर्थिक विकास की विभिन्न योजनाओं द्वारा गरीबी रेखा से ऊपर उठाया जाये। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए शासन द्वारा कृषि पशुपालन तथा कुटीर एवं लघु उद्योगों से सम्बन्धित योजनाओं के अर्न्तगत लाभार्थियों को ऋण तथा अनुदान की सुविधा दी जा रही है। अनुसूचित जातियों के आर्थिक विकास के लिए शासन के विभिन्न विभागों के माध्यम से विशिष्ट योजनाऐं भी चलाई गयी है। वर्ष १९८३-८४ में ४५०,००० अनुसूचित परिवारों को गरीबी की रेखा से ऊपर उठाने के वार्षिक लक्ष्य के विपरीत फरवरी १९८४ तक ३६२,१८७ परिवार लाभान्वित हुए जो निर्धारित लक्ष्य की ८०.५ प्रतिशत उपलब्धि है। इसमें से १९७,४१५ परिवारों को एकीकृत ग्राम विकास योजना के अर्न्तगत तथा १,६४७७२ को अन्य योजनाओं द्वारा आर्थिक सहायता प्रदान की गयी।[2]

रोजगार में वृद्धि के लिए राज्य सरकार द्वारा प्राथमिकता के आधार पर लघु एवं कुटीर उद्योगों, हथकरघा एवं हस्तशिल्प को बढ़ावा दिया जा रहा है। उद्योग निदेशालय द्वारा उद्योग केन्द्रों के माध्यम से आई० आर० डी०, ट्राइसेम तथा ग्रामीण उद्योग कार्यक्रमों के बीच समन्वय स्थापित किया गया तथा आवश्यक अवस्थापना सुविधाऐं, प्रशिक्षण एवं तकनीकी मार्ग दर्शन प्रदान किया जा रहा है साथ ही विभिन्न ट्रेसिंग प्रयोगशालाओं के माध्यम से उद्योगों को तकनीकी सुविधाऐं उपलब्ध करायी जा रही है। उद्योग विभाग के अर्न्तगत विभिन्न क्रियान्वयन एजेन्सियों में इस प्रकार का समन्वय लाया गया है जिससे तहसील तथा ब्लाक स्तर की छोटी-छोटी औद्योगिक इकाइयों को लाभ पहुंच सके और उनके स्तर में गुणात्मक सुधार हो सके। इस उद्देश्य से प्रत्येक ब्लाक में २००कुटीर उद्योगों तथा २ लाख

१- प्रगति के सोपान-जन विश्वास के ठोस आधार-२० सूत्र-सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, उ०प्र० मार्च १९८४, पृ०- ६।

२- वही, पृ० ६-७।

रूपये की लागत की एक कुटीर उद्योग स्थापित करने का लक्ष्य रखा गया और उन्हें विभिन्न सुविधायें प्रदान करने के साथ ऋण वितरण प्रणाली को सरल बनाया गया है ।[1]

"उद्योग बन्धु" तथा हाई पावर कमेटी के द्वारा उद्यमियों की समस्याओं का निराकरण किया जाता है मण्डल स्तर पर परिक्षेत्रीय संयुक्त उद्योग निदेशालय, 'नोडल अधिकारी' के रूप में कार्य कर रहे ह । जो हर दो मास में क्षेत्रीय स्तर की अधिकारीयों तथा उद्यमियों की बठक आयोजित करते है तथा उनकी समस्याओं को शीघ्रता से हल करते है । शासन द्वारा गरीबजनता के उत्थान के लिए खादी ग्रामोद्योग बोर्ड का पुनर्गठन किया गया है इसके अतिरिक्त कारीगरों की दस्तकारी में उत्थान लाने के लिए कारीगरों को प्रशिक्षण सुविधायें प्रदान की जा रही है। विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण केन्द्र जैसे - मास्टर क्राफ्ट्स मैन, कालीन प्रशिक्षण केन्द्र तथा प्रसार योजना के अर्न्तगत प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित किये गये है । औद्योगिक आस्थानों तथा औद्योगिक क्षेत्रों के अर्न्तगत उद्यमियों को विकसित भूखण्ड तथा शेड उपलब्ध कराये जा रहे है जिससे वे अपने उद्योग लगा सके ।

उ0प्र0 शासन द्वारा लघु तथा कुटीर उद्योगों की उत्पादित वस्तुवों की बिक्री के लिए प्रथमवार विपणन व्यवस्था को सुदृढ़ किया गयाहै । वर्ष १९८३-८४ में १३,००० लघु एवं कुटीर उद्योगों की स्थापना के वार्षिक लक्ष्य के विपरीत जनवरी १९८४ तक ९,७८८ लघु एवं कुटीर उद्योग स्थापित किये गये इन उद्योगों में ८७,९ ४० लोगों को रोजगार मिला । जनवरी १९८४ तक २६३११ दस्तकारी इकाइयों की स्थापना की गयी उपरोक्त अवधि में एकीकृत ग्राम्य विकास योजना के अर्न्तगत ७००५६ ट्राइसेम के प्रशिक्षितों द्वारा ९१५८ तथा अनुसूचित जाति एवं जनजाति के परिवारों द्वारा ९२३२ ग्रामीण एवं लघु उद्योग स्थापित किये गये । अनुसूचित जाति एवं जनजाति द्वारा स्थापित किये गय ग्रामीण एवं लघु उद्योगों में १४०४८ व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त हुआ ।[2]

लघु उद्योग क्षेत्र में अपनायी गयी रणनीति के अनुसार प्रदेश के ९०० विकास खण्डों से प्रत्येक में दो लाख रु0 से अधिक के विनियोजन से का से कम एक उद्योग को प्रोत्साहन दिया जायेगा । इस सम्

१- वही ।

२- वही, पृ0-१९ ।

सम्बन्ध में औद्योगिक आस्थान, औद्योगिक काम्पलेक्स आदि जैसी अवस्थापना सम्बन्धी सुविधाओं पर विशेष बल दिया जा रहा है जिससे भूमि, वर्क शेड्स और अन्य सुविधाओं को प्राथमिकता पर उपलब्ध कराया जा सके।

बीस सूत्री कार्यक्रम के अन्तर्गत निजी कुटीर उद्योग और व्यवसाय स्थापित करने के लिए उ०प्र० में गत दो वर्षों में चार लाख से अधिक व्यक्तियों को आर्थिक सहायता उपलब्ध कराई गयी। शिक्षित बेरोजगारों के लिए जिनकी आयु १८ से ३५ वर्ष के बीच है और जिनकी न्यूनतम शिक्षा हाई स्कूल या उससे अधिक है, उद्योग या निजी व्यवसाय स्थापित करने के लिए बैंकों के माध्यम से २५,००० रूपये ॠण दिये गये। ॠण का २५ प्रतिशत अनुदान के रूप में प्रदान किया जाता है। इस कार्यक्रम में प्रदेश ने काफी उन्नति की है और वर्ष १९८३-८४ के लिए ३७००० लाभार्थियों के लक्ष्य के विरुद्ध ५६,६५३ लाभार्थियों का चयन किया गया है। जिन्हें आर्थिक सहायता प्रदान की जायेगी। कार्य दल संस्तुति के उपरान्त ५०,१०१ आवेदन बैंकों को भेजे गये थे। उनमें से ५३.८३ करोड़ रु० लागत के ३६,८७५ आवेदन पत्र अनुमोदित हुए। ये कदम प्रदेश ग्रामीण औद्योगिकरण को बढ़ावा देगा और ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने में सहायक होगें।[1]

केन्द्रीय खादी और ग्रामोद्योग आयोग उत्तर-प्रदेश के वाराणसी सहित आठ महानगरों में से प्रत्येक नगरों में रिक्शा बनाने की सौ-सौ इकाइयां स्थापित करेगा। ये इकाईयां शिक्षित बेरोजगार को कम ब्याज पर ॠण देकर स्थापित करायी जायेगी प्रत्येक इकाई पर दो लाख रूपये लागत आयेगी। इन बेरोजगार युवकों को पहले प्रबंध कार्य आदि के लिए एक महिने का प्रशिक्षण दिया जायेगा। फिर बढ़ईगीरी तथा लुहार गिरी सम्मिलित इकाई द्वारा रिक्शे बनवाये जाने लगेगे। शुरू में आयोग इन रिक्शों को पांच रूपये प्रतिदिन पर रिक्शा चालकों को किराये पर देगा। एक वर्ष के बाद इन पर उन्हीं का स्वामित्व हो जायेगा। आयोग ने शिक्षित बेरोजगारों को रोजगार देने तथा ग्रामोद्योगों को बढ़ावा देकर ग्रामीण जीवन स्तर को गरीबी रेखा से ऊपर उठाने के लिए कुछ नयी योजना चलाने का भी निर्णय लिया है। बेरोजगार युवकों को बेकरी लगाने के लिए ॠण तथा ग्रामीण क्षेत्र में एक लाख गोबर गैस संयत्र लगाने तथा माचिस, साबुन, तेल, कागज, बढ़ई तथा लुहार की मौजूदा इकाइयों की संख्या दूनी करने की योजना भी बनायी गयी है।[2]

१-पत्रिका : नये सपने : नये संकल्प-सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ०प्र० लखनऊ, जुलाई १९८४, पृ० १३-१४।

२-"आज" दैनिक समाचार ४ अक्टूबर १९८४।

शिक्षा के क्षेत्र में पंचवर्षीय योजना का संगठन एवं नियमन

शिक्षा समाज और व्यक्तिगत विकास के लिए एक महत्वपूर्ण साधन है। यह केवल मानव जीवन के गुणों में सुधार ही नहीं करता बल्कि राष्ट्र के सामाजिक-सांस्कृतिक वातावरण को भी प प्रभावित करता है। इस प्रकार यह केवल एक सामाजिक सेवा ही नहीं है बल्कि राष्ट्र के विकास के लिए सुविधाऐं प्रदान करती है।

आधुनिक काल की शिक्षा की सबसे विशेष बात है कि इस शिक्षा के प्रचार-प्रसार में स्वयं भारतीयों योने योगदान दिया, स्वयं चन्दे से स्कूल खोले, अंग्रेजी पढ़ी और नये जीवन की ओर पग बढ़ाये।[१]

यदि इस कार्य को अंग्रेजों ने मान्यता दी तो श्रेय उन्हें नहीं, भारतीयों को ही मिलना चाहिए शिक्षा का राष्ट्र की आर्थिक प्रगति से भी गहरा सम्बन्ध होता है।[2]भारत में नये संविधान १९५० के लागू होने से सभी को शिक्षा के समान अवसर उपलब्ध कराने पर बल दिया गया।[3]यह अनुभव किया गया कि राष्ट्र निर्माण का कार्य बिना राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली के सम्भव नहीं है। देश में योजना आयोग के गठन से पंचवर्षीय योजनाओं के अर्न्तगत शिक्षा की प्रगति पर विशेष ध्यान दिया गया। देश में शिक्षा प्रान्तीय सरकारों की जिम्मेदारी के अर्न्तगत आता है एवं केन्द्रीय सरकार उसको सहायता प्रदान करती है।[४]

प्रदेश में शिक्षा :------ विकास के अन्य क्षेत्रों की भांति शिक्षा के क्षेत्र में भी इस प्रदेश में पंचवर्षीय योजनाओं के अधीन प्रगति कार्य तीव्रगति से हो रहा था। शिक्षा के विकास पर आयोजनाओं के अधीन कितना ध्यान दिया गया ह, इसका अनुभव इस बात से लगाया जा सकता है कि पहली पंचवर्षीय योजना में शिक्षा के विकास के लिए १७.८६ करोड़ रु० की व्यवस्था थी

१- प्रोग्रेस आफ एजुकेशन इन फ्री इंडिया, जे० सी०अग्रवाल, पृ० ८।

२- एजुकेशन एण्ड दि इकोनामी, कामर्स, वी० सान्यारन, दि० १९६६, पृ० ३८।

३- एजेकेशन इन इंडिया, टूडे एण्ड टूमारों, एस० एन० मुखर्जी, पृ० १६।

४- प्रोग्रेस आफ एजुकेशन इनफ्री इंडिया, जे० सी०अग्रवाल, पृ० ३५।

जो कि आयोजना की कुल राशि का १७ प्रतिशत था ।[1] इसमें से १०.४६ करोड़ रु० का प्राविधान ग्रामीण क्षेत्रों में राजकीय प्राथमिक बेसिक स्कूल खोलने का था । इस योजना के अधीन पहली योजना के अन्त तक १२,२७६ स्कूल खोले गये एवं ६ से ११ वर्ष की आयु के स्कूल जाने वाले छात्रों की संख्या २८.०५ लाख थी ।[2] लड़कियों के शिक्षा कार्यक्रम के अधीन विशेष प्रगति हुई । १९५०-५१ में बालिका विद्यालयों की संख्या जहां २५२० थी, १९५५-५६ तक २६९६ हो गयी ।[3] इसी प्रकार ६ से ११ वर्ष की आयु वर्ग की स्कूल जाने वाली लड़कियों की संख्या में भी वृद्धि हुई । शहरी क्षेत्रों में बालक एवं बालिकाओं की अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा योजना क्रमश: ९५ और १० नगर पालिकाओं में कार्यान्वितकी गयी ।[4] उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों की संख्या वर्ष १९५५-५६ में १४७४ हो गयी ।[5] अनेक गैर सरकारी स्कूलों का उन्नयन किया गया और उनमें नये वैज्ञानिक एवं रचनात्मक विषयों के अध्यापन की व्यवस्था की गयी । पहली आयोजना में विश्व विद्यालय स्तर की शिक्षा के प्रसार के लिए प्रदेश के पूर्वी अंचल के जिलों में उच्च शिक्षा के लिए गोरखपुर में एक नये विश्व विद्यालय की स्थापना की गयी और इलाहाबाद तथा लखनऊ विश्व विद्यालयों के सहायतार्थ पर्याप्त अनुदान दिया गया ।

दूसरी पंचवर्षीय योजना में शिक्षा विकास के लिए कुल १६,४९०८० लाख रु० की व्यवस्था की गयी थी, जिसमें से १४,३१,२१६ लाख रु० व्ययहुए ।[6] आयोजन के अन्त तक जूनियर बेसिक स्कूल की संख्या प्रथम आयोजन के ३१८९८ से बढ़ कर ४००८३ हो गयी । इस अवधि में खोले गये नये स्कूलों में से ६०७५ स्कूल प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में थे । दूसरी आयोजन के अन्त तक ६-११ वय वर्ग के स्कूली बालकों का प्रतिशत लगभग ६४.८४ और बालिकाओं का १९.३१ था ।[7] इस प्रकार पहली आयोजना के अन्तिम वर्ष

१- सेकेन्ड फाइव ईअर प्लान, यू०पी० पृ० ३७ ।

२- वही, पृ० ३७ ।

३- सेकेन्ड फाइव ईअर प्लान, यूपी० पृ० ३८ ।

४- वही, पृ० ३८ ।

५- यू०पी० १९६२, पृ० -, ९१ । ...पी० एनुअल रिपोर्ट, १९६१-

६- प्रोग्रेस आफ एजेकेशन, यू०पी० एनुअल रिपोर्ट, १९६१-६२, पृ०१ ।

७- वही, पृ०१ ।

की तुलना में दूसरी आयोजना के अन्त तक स्कूल जाने वाले बालक बालिकाओं की संख्या में ४२.९ प्रतिशत की वृद्धि हुई ।[1] दूसरी पंचवर्षीय योजना में प्रत्येक जूनियर बेसिक स्कूल को दस्तकारी सम्बन्धी सामग्री चार्ट, पुस्तकें आदि की खरीद के लिए १०० रु० वार्षिक आवर्तक अनुदान दिया गया । स्कूल भवनों में सुधार के लिए, इसके सहायतार्थ अनुदान दिये गये । प्राथमिक शिक्षा के विस्तार के फलस्वरूप प्रशिक्षित शिक्षकों की संख्या में भी पर्याप्त वृद्धि की आवश्यकता पड़ी । आयोजना के अन्त तक ११० प्रशिक्षण स्कूल थे, जिनमें ५८५० शिक्षकों को प्रशिक्षित करने की व्यवस्था थी । प्रदेश में सीनियर बेसिक स्कूलों की संख्या वर्ष १९५५-५६ में ३,५४० से बढ़कर वर्ष १९६०-६१ में ४,३३५ हो गयी । प्रदेश में ११-१४ वयवर्ग के स्कूल जाने वाले छात्रों का प्रतिशत १९५५-५६ में १४.०१ से बढ़कर १९६०-६१ में १७.८४ प्रतिशत हो गया ।[2] दूसरी आयोजना में अतिरिक्त विषयों के अध्यापन, पुस्तकालयों के सुधार करने की भी व्यवथा की गयी ।

दूसरी आयोजना के अन्त तक प्रदेश में कुल १,७७१ माध्यमिक स्कूल थे । छात्र एवं छात्राओं की संख्या क्रमश: ४.५ लाख तथा ०.५६ लाख थी ।[3] माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में दूसरी आयोजना के अन्त तक उपलब्धियां थी, ३१० नये स्कूलों को सहायतार्थ अनुदान की नियमित सूची में लाया जाना, ५७५ स्कूलों के भवनों तथा पुस्तकालयों, का सुधार तथा २५ स्कूलों में खेलों के मैदान की व्यवस्था ।[4]

दूसरी आयोजना में वाराणसी संस्कृत विश्व विद्यालय तथा इलाहाबाद, लखनऊ, आगरा और गोरखपुर विश्व विद्यालयों को सहायतार्थ अनुदान दिये गये । पुस्तकालयों, प्रयोगशालाओं तथा होस्टल आदि के विस्तार के लिये महाविद्यालयों को अतिरिक्त अनुदान दिया गया । नैनीताल, ज्ञानपुर तथा रामपुर के राजकीय महाविद्यालयों में अतिरिक्त अध्यापकों, उपकरणों तथा भवनों की व्यवस्था करके

१- एनुअल रिपोर्ट, यू०पी०, १८६२,पृ० ९२ ।

२- वही, पृ० ९२ ।

३- यू०पी० एनुअल रिपोर्ट आनादि प्रोग्रेस आफ एजुकेशन १९६१-६२ पृ० १ ।

४- एनुअल रिपोर्ट आफ प्रोग्रेस आफ एजुकेशन, १९६१-६२, पृ० २ ।

उनका पुनर्गठन किया गया । तकनीकी शिक्षा के उचितप प्रसार की व्यवस्था की गयी । वर्ष १९६० तक प्रदेश में १०९ महाविद्यालय थे । इस प्रकार हम देखते है कि पहली तथा दूसरी पंचवर्षीय आयोजनाओं के अधीन शिक्षा के विकास के लिये भरसक प्रयास किये गये । यह उल्लेखनीय है कि वर्ष १९६०-६१ में महाराष्ट्र के बाद अन्य राज्यों की तुलना में उ0प्र0 को शिक्षा बजट सबसेअधिक था । वर्ष १९५१-५२ में जहां प्रतिव्यक्ति शिक्षा सम्बन्धी व्यय केवल १.२७ रु0 था, वहां वर्ष १९६० -६१ में ४.४१ रु0 हो गया । इस प्रकार वर्ष १९६१ में जहां देश में साक्षरता २४.०२ प्रतिशत थी प्रदेश में २१.६४ प्रतिशत थी ।[1]

तीसरी पंचवर्षीय योजना में शिक्षा के लिए पिछली दो पंचवर्षीय योजनाओं के अधीन शिक्षा प्रसार-कार्यक्रमें की सफलताओं से प्रोत्साहित होकर और व्यापक कार्यक्रम बनाया गया और शिक्षा कार्यक्रमें के लिए कुल ४६.३८ करोड़ रु0 की व्यवस्था की गयी ।[2]तृतीय योजना काल में निर्धारित ४६ ४६.८१ करोड़ रु0 की धनराशि में से ४५.६० करोड़ रु0 का ही व्यय हुआ । राज्य में तृतीय योजना के अन्तर्गत प्राथमिक शिक्षा को द्रुतगति से विस्तार हुआ प्रत्येक वर्ष पाठशाला जाने वाले बच्चों की संख्या में होने वाली वृद्धि को ध्यान में रखते हुए अतिरिक्त व्यय की व्यवस्था भी १९६६-६९ के वर्षो में की गयी । मार्च १९६९ तक प्राथमिक पाठशालाओं में जाने वाले बच्चों की संख्या ९९.३५ लाख । ।। जिन में ३६.४५ लाखलड़कियां थी ।। हो गयी ।[3]

समस्त स्थितियों पर पुनर्विचार के बाद और शिक्षा की न्यूनतम आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए चतुर्थ पंचवर्षीय योजना में ५२.९५ करोड़ रु0 की धनराशि की व्यवस्था की गयी १९७३-७४ तक प्रतिव्यक्ति, प्रतिवर्ष शिक्षा व्यय ९.०८ रु0 हो गयी जो १९६५-६६ के स्तर से लगभग दो गुनी है ।[4]चौथी योजना का लक्ष्य शिक्षा के प्रत्येक स्तर को विस्तृत करना, ग्रामीण और अर्धविकसित क्षेत्रों को अधिकम महत्वप प्रदान करना तथा कन्याओं की शिक्षा में प्रसार और सुधार, शिक्षण, प्रशिक्षण कार्यक्रम में तीव्रता लाना, अपव्यय को घटाना एवं शिक्षा की श्रेणी में उन्नति करना था ।

१- सांख्यिकीय डायरी १९६८, पृ0 ११६-११७ ।

२- वही ।

३- चौथी पंचवर्षीय योजना, उ0प्र0 १९६९, पृ0 २४४ ।

४- चौथी पंचवर्षीय योजना उ0प्र0 १९६९, पृ0 २४४ ।

चौथी पंचवर्षीय योजना में २,३७४नये प्राथमिक स्कूल खोलने तथा वर्तमान पाठशालाओं में ४४ ४४८६४ अतिरिक्त शिक्षक नियुक्त करने का प्रस्ताव था वहीं पांचवी पंचवर्षीय योजना में ६७,३३९ नये प्राथमिक स्कूल खोलने एवं उनमें बड़ी संख्या में अध्यापकों की नियुक्ति का प्रस्ताव था। पांचवी योजना के प्रथम वर्ष १९७४-७५ में२३७६ नये जूनियर बेसिक स्कूल खोले गये जिनमें १३३७ कन्या जूनियर बेसिक स्कूलों की संख्या भी सम्मलित है।[1] इसी वर्ष १९७४-७५ में बालकों के लिए २२ तथा बालिकाओं के लिए दो राजकीय हाई स्कूल खोले गये। बालकों के चार तथा बालिकाओं के लिए तीन राजकीय हाई स्कूल इण्टर तक बढ़ाया गया।[2]

प्राथमिक शिक्षा :----- प्राथमिक शिक्षा सम्पूर्ण शिक्षा प्रणाली की महत्व पूर्ण अधार शिला है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात शिक्षा विकास के कार्यक्रमों को तीन शीर्षकों में विभक्त किया गया - विस्तार, पुनर्गठन तथा शिक्षकों की सेवा की दशाओं एवं उनके प्रशिक्षण में सुधार। राज्य में निरक्षरता दूर करने के लिए दशवर्षीय पाठ्यक्रम की रचना की गयी जो अन्तत: पंचवर्षीय कार्यक्रम में परिणत हो गया।[3]

राज्य में अनिवार्य शिक्षा १९४८-४९ में ४६नगर पालिका क्षेत्रों में आरम्भ की गयी।[4] प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्त तक ऐसी नगर पालिकाओं की संख्या १२० हो गयी थी परन्तु नवनिर्मित उप नगर पालिकाओं में अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा कार्यान्वित नहीं हुई।[5] वस्तुत: शिक्षा के सम्बन्ध में तो न तो सत्तारूढ़ कांग्रेस पार्टी और न विरोधी दलों ने ही मुख्य समस्या की गम्भीरता का अनुभव किया। शिक्षा की उत्तमता के लिए यह आवश्यक है कि अच्छे शिक्षक उपलब्ध हो जैसे कि जे० पी० नाइक कामत है "हमें अच्छे ज्ञानी, उपयुक्त दक्ष तथा कर्तव्यनिष्ठ शिक्षकों के दल की आवश्यकता है। हमें ऐसी स्थिति पैदा करनी होगी कि अगली पीढ़ी अपेक्षाकृत अधिक अच्छी हो।[6]

१- उत्तर-प्रदेश वार्षिक प्रतिवेदन, लखनऊ, १९७५, पृ० १६३।

२- शिक्षा की प्रगति उ०प्र० १९७६-७६, पृ० १०।

३- सम्पूर्णानन्द : उ०प्र० विधान सभा की कार्यवाहियां १९४७, पृ० २८८।

४- जनरल रिपोर्ट आन एजूकेशन इन उ०प्र०, ३१ मार्च १९४८, पृ० १३।

५- प्रोग्रेस रिव्यू आफ उ०प्र० फर्स्ट फाइव इयर प्लान १९५१ - ५६ पृ० ९५।

६- जे० पी० नाइक : एजूकेशनल प्लानिंग इन इंडिया, १९६५, पृ० ३७।

प्राथमिक शिक्षा के लिए प्रथम योजना में १९.५७ करोड रु० के परिव्यय की व्यवस्था की गयी द्वितीय योजना काल में १६.४९ करोड़ रु० की ही व्यवस्था थी जिसमें १४.३१ करोड रु० का व्यय किया गया योजना के अन्त में जूनियर बेसिक स्कूलों की संख्या बढ़कर ४०,०८३ हो गयी जिसमें लड़कों का नामांकन ३२.२५ लाख तथा लड़कियों का लगभग ८.७ लाख हो गया। तृतीय योजना काल में निर्धारित ४६.८१ करोड़ रु० की धनराशि में से ८५.६० करोड़ रु० का ही व्यय हुआ राज्य में तृतीय योजना के अन्तर्गत प्राथमिक शिक्षा का द्रुतगति से विस्तार हुआ। प्रत्येक वर्ष पाठशाला जाने वाले बच्चोंकी संख्या में होने वाली वृद्धि को ध्यान में रखते हुए अतिरिक्त व्यय की व्यवस्था भी १९६६-६९ वर्ष में की गयी। मार्च १९६९ तक प्राथमिक पाठशालाओं में जाने वाले बच्चों की संख्या ९९.३५ लाख जिनमें ३६.४५ लाख लड़कियां भी थी, हो गयी।

भारतीय संविधान के नीति निर्धारक सिद्धान्तों में १४ वर्ष तक की आयु के सभी बालकों एवं बालिकाओं को नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा सुलभ करने पर बल दिया गया है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु देश एवं प्रदेश में विशेषकर प्रथम प्राथमिक शिक्षा सुविधाओं के तीव्र प्रसार के अनवरत प्रयास किये जा रहे है। पांचवी योजना काल के अन्त तक प्रदेश में प्राथमिक विद्यालयों की संख्या ६९२४४ थी जो लगभग २.४ प्रतिशत की वृद्धि के साथ वर्ष १९८०-८१में ७०९३१ हो गई यह वर्ष १९७९-८० के ७०२९२ विद्यालयों की तुलनामें ०.९ प्रतिशत अधिक थी। इन प्राथमिक शिक्षण संस्थाओं में हुई वृद्धि के साथ ही इनमें कार्यरत अध्यापकों की संख्या में भीवृद्धि हुई वर्ष १९८०-८१ में इन संस्थाओं में २४४७१ अध्यापक कार्यरत थे जिनकी संख्या वर्ष १९७८-७९ ।। २४१२९८ ।। और वर्ष १९७९-८० में ।। २ ।। २४३९८५ ।।की तुलना में क्रमश: लगभग १.४ प्रतिशत तथा ०.३ प्रतिशत अधिक थी। प्राथमिक शिक्षा संस्थाओं तथा अध्यापकों की संख्या में वृद्धि के विपरित वर्ष १९८० - ८१ में प्राथमिक शिक्षा संस्थाओं में अध्ययनरत ९४.३७ लाख विद्यार्थी वर्ष १९७८-७९ के ११८.७५ लाख विद्यार्थियों की तुलना में २०.५ प्रतिशत कम थे, किन्तु वर्ष १९७९-८० में ।।९३.११ लाख।। की अपेक्षा वर्ष १९८०-८१ कमें छात्रों की संख्या में १.४ प्रतिशत की वृद्धि हुई। परिणामत: प्रति विद्यालय छात्र संख्या जो वर्ष १९७८-७९ में १७१ थी वह वर्ष १९७८-८० में १३२ तथा वर्ष १९८०-८१ में १३३ ही रह गयी थी। अध्यापकों की संख्या में वृद्धि होने के फलस्वरूप अध्यापक छात्र अनुपात वर्ष १९७८-७९ के १:४९ अपेक्षा वर्ष १९८०-८१ में १:३९ हो गया। ग्रामीण क्षेत्रों तथा निर्बल वर्ग के छात्रों की संख्या में अपेक्षित वृद्धि करने हेतु ग्रामीण क्षेत्रों में प्राथमिक स्तर के छात्रों के प्रोत्साहन हेतु बालिकाओं तथा निर्बल वर्ग के बालकों को भी पाठ्य पुस्तकों के वितरणार्थ प्रोत्साहन अनुदान स्वीकृत किये गये तथा वर्ष १९७८-७९

से प्रति वर्ष निर्बल वर्ग के ४0000 बच्चों को पौष्टिक वितरण के आदेश भी प्रसारित किये जाते रहें। ह्रास एवं अवरोध को दूर करने हेतु अब कक्षा १, २ व ३ को अलग-अलग न रख कर समन्वित शिक्षा कार्यक्रम के अन्तर्गत संचालित किया जा रहा है।[1]

१९८४-८५ में ४०५ प्राथमिक ।। ३३० मैदानी और ७५ पर्वतीय ।। और १२८ मिडिल स्कूल ।। ११३मैदानी और १५ पर्वतीय ।। ग्रामीण क्षेत्रों में खोलने को प्रस्तावित किया गया ।[2] नामांकन का प्रतिशत ।। १९८१ के सेंसस के प्रोजेक्टेट के अधार पर।। ६-११वर्ष की आयु वर्ग में ७० प्रतिशत ।। ९२ प्रतिशत लड़के और ४७ प्रतिशत लड़कियों ।। और ११-१४ वर्ष के आयु-वर्ग में यह ४२ प्रतिशत ।। ५९ प्रतिशत लड़के और ३४ प्रतिशत लड़कियों ।। के होने की उम्मीद है। इस प्रकार स्पष्ट है कि स्कूल के भवन निर्माण खर्च बढ़ने के कारण छठी पंचवर्षीय योजना में ६६९७ प्राथमिक स्कूल खोलने के उद्देश्य को पूरा करना सम्भव नहीं है।

राज्य के सातवीं पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत २८000 प्राथमिक और ४000मिडिल केन्द्र खोलने का पुर्वानुमान लगाया गया है। इसके अतिरिक्त भारत सरकार ने ३२00 प्राथमिक केन्द्र लड़कियों के लिए खोलने हेतु ९0:१0 के अनुपात में आर्थिक सहायता देने हेतु मंजूरी दे दी है। राज्य प्रत्येक जिलों में सातवीं योजना के अन्तर्गत १७९५0नये प्राइमरी स्कूल और २000नये मिडिल केन्द्र खोलने का प्रस्ताव राज्य के कुल ४५९५0 प्राइमरी और ६000 मिडल स्तर के केन्द्रों के साथ है।

६-१४ वर्ष के आयु-वर्ग के बच्चों के लिए, जहां पर ३00 से अधिक जनसंख्या निवासकरती है और मैदानी क्षेत्र में १ किमी0 की दूरी पर तथा पर्वतीय क्षेत्र में १.५ किमी0 की दूरी पर नये प्राइमरी स्कूल खोलने का उद्देश्य है।[3]

१- उ0प्र0 की आर्थिक समीक्षा १९८१-८१ अर्थ एवं संख्या प्रभाग, राज्य नियोजन संस्थान, उ0प्र0।

२- ड्राफ्ट एनुअल प्लान १९८४ - ८५, वाल्यूम-१, यू0पी0, पृ0 ३0२।

३- वही, पृ0 २९९।

तालिका न० : १

योजना क्रम में प्रायमिक शिक्षा में नामांकन और जनसंख्या में वृद्धि¹

वर्ष	जनसंख्या ।। लाख में ।।		नामांकन ।। लाख में ।।		प्रतिशत	
	कुल	लड़कियां	कु कुल	लड़कियां	कुल	लड़कियां
१	२	३	४	५	६	७
कक्षा I से V ६-११ आयु-वर्ग						
१९५०-५१	७९.०२	३७.८३	२८.१८	४.०८	३६	११
१९५५-५६	८३.८५	४०.१४	२८.०५	५.४४	३३	१३
११९६०-६१	९१.५३	४४.६३	४०.९५	८.६८	४५	१९
१९६५-६६	१०७.९०	५१.९६	९०.१८	३१.३९	८३	६०
१९७७-७८	१३२.५५	६३.६८	८७.२५	२६.७२	६६	४२
१९७९-८०	१४२.७८	६८.५०	९३.१७	२९.४५	६५	४३
१९८४-८५	१५६.३९	७५.१२	११५.२४	३६.९०	७४	४९
कक्षा VI से VII ११-१४ आयु वर्ग						
१९५०-५१	४२.८०	२०.१५	५.०२	०.४२	१२	२
१९५५-५६	४५.५१	२१.१५	६.३६	०.६८	१४	३
१९६०-६१	४९.६३	२३.३७	८.२४	१.२२	१७	५
१९६५-६६	५५.१२	२८.८३	१५.१४	२.५६	२७	१०
१९७७-७८	७३.६०	३४.४९	२६.७५	६.३५	३६	१८
१९७९-८०	७९.२७	३७.१५	२७.९२	६.७२	३५	१८
१९८४-८५	८६.६३	४०.६९	३७.२३	८.९५	४३	२२

१- ड्राफ्ट सेवेन्थ फाइव एअर प्लान एण्ड एनुअल प्लान १९८५-८६, वाल्यूम-१, उ०प्र० पृ० ४१८ ।

माध्यमिक शिक्षा :------- स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात हमारे देश के नेताओं का ध्यान माध्यमिक शिक्षा के संगठन के तरफ गया इसे संगठित और सुसंगठित स्वरूप प्रदान करने के लिए हमारी सरकार ने विभिन्न आयोगों की नियुक्तियां की । केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार सम्मेलन १९४८, तारा चन्द समिति १९४८, माध्यमिक शिक्षा आयोग १९५२-५३ एवं भारत शिक्षा आयोग १९६४-६५ में माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में प्रगति के लिए महत्वपूर्ण सुझाव दिये ।[१]

प्रदेश में माध्यमिक स्तर की शिक्षा के अन्तर्गत पूर्व माध्यमिक स्कूल, जिन्हें मिडिल स्कूल के नाम से भी जाना जाता है, एवं उच्चतर माध्यमिक स्कूल है । मिडिल स्कूलों की अन्तिम कक्षा ८ की परिक्षा स्थानीय जिला बोर्ड द्वारा संचालित होती है । उच्चतर माध्यमिक स्तर में हाई स्कूल एवं इण्टरमीडियट बोर्ड, इलाहाबाद द्वारा संचालित होती है । उच्चतर माध्यमिक स्कूलों के अन्तर्गत कक्षा ८ की परीक्षा स्कूलों के माध्यम से ही संचालित होती है । स्कूलों में विज्ञान की पढ़ाई का भी उचित प्रबन्ध है । इस तरह प्रदेश माध्यमिक स्तर की शिक्षा के अन्तर्गत छात्रों को उनकी रुची के अनुसार उच्च शिक्षा या यान्त्रिक शिक्षा के अध्ययन के लिए तैयार किया जाता है । माध्यमिक स्कूल निजी संस्थाओं, स्थानीय निकायों या सरकार के प्रबन्ध में रहें ।[2] ग्रामीण क्षेत्रों में अधिकतर सीनियर बेसिक स्कूल जिला परिषदों या निजी संस्थाओं द्वारा चलाये गये । कुछ को जिला परिषदों ने सहायता दी । नगर क्षेत्रों में कुछ सीनियर बेसिक स्कूल थे जो नगर पालिकाये या निजी संस्थायें चलाती रहीं, किन्तु उस आवश्यकता की पूर्ति नगर क्षेत्रों में अधिकतर उच्चतर माध्यमिक स्कूलों द्वारा होती रही, जिसमें सीनियर बेसिक स्कूल कक्षायें थी ।[3]

१९४८ में नियुक्त तारा चन्द समिति ने सुझाव दिया था कि माध्यामिक स्कूल बहुमुखी होने चाहिए । इसी समय १९४८-४९ में विश्व विद्यालय शिक्षा आयोग ने भी कहा था कि शिक्षा की सम्पूर्ण संरचना में माध्यामिक शिक्षा निर्बल कड़ी है । वस्तुत: उ०प्र० सरकार ने शिक्षा सम्बन्धी

१- हिस्ट्री आफ इण्डियन एजुकेशन, पी० एल० रावत, पृ० २८४ ।

२- यू०पी० एनुअल रिपोर्ट आफ एजुकेशन, १९६१-६२, पृ० २३ ।

३- उ०प्र० राज्य वार्षिक रिपोर्ट, १९६१-६२ पृ० ५० ।

योजनाओं के पुर्नपरीक्षण के लिए १९५२ में आचार्य नरेन्द्र देव की अध्यक्षता में एक समिति नियुक्त की। इस समिति के संस्तुतियों के आधार पर १९५६ में पाठ्य क्रम आरम्भ किये गये। जिसमें चार वर्षों के लिए हिन्दी अनिवार्य विषय बनायी गयी। इसके साथ संस्कृत भी अनिवार्य थी। इन दोनों विषयों में उत्तीर्ण होना आवश्यक था।[1]

इतना सब होते हुए भी उत्तर-प्रदेश माध्यमिक शिक्षा में अनेक दोष विद्यमान रहे। पाठ्य-क्रम में रचनात्मक तथा ललित कला वर्गों को शिक्षा का विशेष अवयव समझा गया। फलतः १९६६ में भारत सरकार द्वारा नियुक्त कोठारी कमीशन ने समान शैक्षिक अवसर प्रदान करने हेतु यह सुझाव दिया कि कम से कम ऐसे १५ प्रतिशत छात्रों को छात्रवृत्ति प्रदान की जाय जो योग्य हो और अच्छे अंक प्राप्त करते हो। माध्यमिक शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए कि विद्यार्थियों को इतनी उ शिक्षा प्रदान की जाय कि वे माध्यमिक शिक्षा समाप्त कर के अपना जीविकोपार्जन कर सकें।[2] शिक्षा के क्षेत्र में जितने भी कमीशन बने सभी ने इस बात पर बल दिया कि माध्यमिक शिक्षा में व्यवसायिक विषयों की समुचित शिक्षा दी जाय। माध्यमिक शिक्षा का पूर्ण दायित्व सरकार ग्रहण करे, ऐसा होने पर माध्यमिक शिक्षा का विकास सम्न्वित रूप से हो सकेगा।

प्रदेश में छात्रों एवं छात्राओं के सम्पूर्ण उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों का प्रशासन एवं अशासकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों का निरिक्षण एवं अनुदान प्रदान करने का उत्तरदायित्व माध्यमिक शिक्षा परिषद के अधीन निदेशक का है। निदेशक माध्यमिक शिक्षा परिषद का पदेन सभापति होता है। माध्यमिक शिक्षा के प्रभावी संचालन हेतु प्रदेश ११ प्रशासकीय सम्भागों में विभाजित है जो मेरठ, आगरा, इलाहाबाद, झांसी, वाराणसी, गोरखपुर, फैजाबाद, लखनऊ, नैनीताल, पौड़ी एवं गढ़वाल मण्डलों के नाम से प्रसिद्ध है। सम्भागीय स्तर पर मण्डलीय उप-शिक्षा निदेशक तथा मण्डलीय बालिका निरिक्षिकायें होती है। जिला स्तर पर जिला विद्यालय निरिक्षक होते है।[3]

१- रिपोर्ट आफ द सेकेन्ड्री एजुकेशन दि आर्गनाइजेशन कमेटी, पृ० १४-१५।

२- सीताराम : तुलनात्मक शिक्षा १९७०, पृ० ११३।

३- कार्य पूर्ति दिग्दर्शक, शिक्षा विभाग, उ०प्र० १९७७-७८, पृ० २।

राष्ट्रीय शैक्षिक प्रशिक्षण एवं अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित ।।१०+२+३ ।। वर्षीय पाठ्यक्रम को राज्य स्तर पर राज्य सरकार द्वारा सिद्धान्त रूप में स्वीकार कर लिया गया है किन्तु इसके कार्यान्वियन में आर्थिक एवं प्रशिक्षित अध्यापकों की विकट समस्याएँ सामने है । प्रदेश के समस्त उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में ४१ प्रतिशत विद्यालय हाई स्कूल स्तर तक विज्ञान विषय में मान्यता प्राप्त है । जबकि उपर्युक्त पाठ्यक्रम के अर्न्तगत विज्ञान अनिवार्य विषय हो जायेगा ।[1]प

१० वर्षीय पाठ्य क्रम में हाई स्कूल में विज्ञान अनिवार्य विषय के रूप में हो गया है इस लिए जो संस्थाएँ विज्ञान मान्यता प्राप्त नहीं है उन्हें विज्ञान की पढ़ाई करने के लिए आवश्यक पर्याप्त अनुदान दिया जा रहा है ।

पीछड़े क्षेत्रों में लड़कियों में शिक्षा को प्रोत्सहित करने के हेतु, उन व्यवस्थापकों को अनुदान की स्कीमें दी जा रही है जो इण्टरमीडिएट बोर्ड से मान्यत प्राप्त करने की दशा में नहीं है ताकि वे लड़कियों के स्कूल खोलनें में समर्थ हो सके । इसी तरह, उन ग्रामीण माध्यमिक स्कूलों में जहाँ लड़कों के स्कूलों में लड़कियाँ भी पढ़ती है उन के मानसिक स्वस्थता और पानी पीने की अलग सुविधाों हेतु अनुदान प्रदान किया जायेगा ।

राज्य में छठी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक ५७०० मान्यता प्राप्त उच्च माध्यमिक संस्थाएँ होने का अनुमान है । इसमें से ५६५० संस्थाएँ १९८३-८४ तक थी, ४८१८ लड़कों के लिए लिए और ८३२ लड़कियों के लिए । इन संस्थाओं में २५.५८ लाख छात्र ।।१९.९३ लाख लड़के और ५.६५ लाख लड़किया अध्ययन कर रहें है । इसके अतिरिक्त सातवीं योजना में लगभग १५ लाख अतिरिक्त छात्रों को जो कि जूनियर हाई स्कूल उत्तीर्ण करके आयेगें उन्हें माध्यमिक शिक्षा में सुविधाएँ प्रदान करनी पड़ेगी । सातवीं योजना में ऐसे तहसील मुख्यालय में जहाँ लड़कियों की शिक्षा की सुविधा नहीं है वहाँ पर १०० सरकारि गर्ल्स हायर सैकेन्डरी स्कूल खोलने का प्रस्ताव है । ऐसे ही लड़कों के लिए ५० सरकारी हायर सैकेन्डरी स्कूल पीछड़े क्षेत्रों और नये विकसीत कालोनियों में खोले जायेंगे जहाँ पर माध्यमिक शिक्षा की सुविधाएं नही है ।[2]

१- वार्षिक प्रतिवेदन उ० प्र० १९७६, पृ० १९४ ।

२- ड्राफ्ट सेवेन्थ फाइव एअर एण्ड एनुअल प्लान १९८५-८६, वाल्यूम- १, उ०प्र० पृ० ४२५ ।

उच्च शिक्षा :------- माध्यमिक शिक्षा की भाँति उच्च शिक्षा का प्रसार भी तीव्र गति से हुआ है विश्व विद्यालय स्तर की शिक्षा की माँग का प्रमुख कारण यह है कि भारतीय लोकतांत्री शासन के अन्तर्गत प्रत्येक व्यक्ति को यह स्वतन्त्रता प्राप्त है कि वह अपनी इच्छा के अनुरूप शिक्षा प्राप्त कर सके। फलत: विश्वविद्यालय में प्रवेश प्राप्त करने से किसी व्यक्ति को रोका नहीं जा सकता स्वतन्त्रता पूर्व भारत में विश्व विद्यालय शिक्षा उपेक्षा का विषय था।[1] स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद उ० प्र० में उच्च शिक्षा के क्षेत्र में संख्यात्मक वृद्धि का युग प्रारम्भ हुआ।

स्वाधीनता के बाद हुई उच्च शिक्षा की संख्यात्मक वृद्धि को देखते हुए ४ नवम्बर १९४८ को डा० एस० राधाकृष्णन् की अध्यक्षता में एक शिक्षा आयोग की नियुक्ति हुई। इसका ध्येय उच्च शिक्षा के समस्त क्षेत्र का निरीक्षण कर उपयुक्त सुझाव देना था। १९४९ में अपना विवरण प्रस्तुत करते हुए आयोग ने महत्वपूर्ण सुझाव दिये। उनमें से कुछ निम्नवत् है :--------

१- देश की ग्रामीण आवश्यकता की पूर्ति हेतु जहाँ तक सम्भव हो कृषि विश्व विद्यालय ग्रामीण क्षेत्रों में स्थापित किये जायें।

२- अंग्रेजी भाषा का स्थान एक भारतीय भाषा द्वारा लिया जाना चाहिए।

३- एक शिक्षा अनुदान आयोग स्थापित किया जाना चाहिए।

४- युवा पुरुषों तथा स्त्रियों को उच्च शिक्षा एवं शोध छात्रवृत्तियाँ दी जानी चाहिए।

५- विश्व विद्यालयों में शिक्षकों का वेतन क्रम बढ़ाया जाना चाहिए और सारे देश में एक रूपता लायी जानी चाहिए।

६- प्रशासनिक सेवाओं के लिए विश्व विद्यालय उपाधि आवश्यक नहीं समझनी चाहिए।

७- परीक्षा का स्तर ऊँचा कर, सारे विश्व विद्यालयों में एक समान रखना चाहिए तथा विश्व विद्यालयों को समवर्ती सूची में रखना चाहिए।[2]

भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद ने आयोग के कार्यों की सराहना करते हुए कहा था कि विश्व विद्यालय आयोग के प्रतिवेदन का महत्व अधिकांश रूप में इस बात में है कि वह

१- रिव्यू आफ एजूकेशन इन इण्डिया ।। १९४७-१९६७ एन० सी० ई० आर० टी०, पृ० ८०७।

२- दि रिपोर्ट आफ द यूनिवर्सिटी एजूकेशन कमीशन, वाल्यूम -२, पृ० १३५५-१३५६।

इस देश की वर्तमान शिक्षा प्रणाली में अधार भूत परिर्वतन की आवश्यकता का अनुभव करता है, और इस अधार पर उसकी शिक्षा सम्बन्धी समस्याओं की विवेचना करता है साथ ही प्रतिवेदन का एक गुण यह भी है कि वह अतीत से पूर्ण सम्बन्ध विच्छेद नहीं करना चाहता है, अपितु उसमें प्राप्त सर्वोत्तम बातों को सुरक्षित रखना चाहता है।[1]

उत्तरप्रदेश के विश्व विद्यालयों की कुछ दूसरी ही समस्याएँ रही अत: उत्तर-प्रदेश सरकार ने डा0 हृदयानाथ कुंजरू की अध्यक्षता में एक विश्व विद्यालय अनुदान समिति की रचना की। १९४७-४८ में समिति ने आगरा, इलाहाबाद तथा लखनऊ विश्वविद्यालयों की समस्याओं का अध्ययन किया। इस समिति समिति ने विश्वविद्यालयों तथा महाविद्यालयों में शिक्षकों का वेतन क्रम बढ़ाने यथेष्ट आवास सम्बन्धी व्यवस्था तथा स्त्रियों की शिक्षा के विस्तार के लिए एक वैज्ञानिक एवं तकनीकी विषयों में शिक्षा के लिए संस्तुति दी। वस्तुत: इस समय उत्तर-प्रदेश में तीन प्रकार के विश्व विद्यालय है क्रमश: सम्बद्धक विश्व विद्यालय, सम्बद्धक एवं शिक्षण विश्व विद्यालय सावास तथा शिक्षण विश्वविद्यालय। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व प्रदेश में ५ विश्व विद्यालय थे १९५०-५१ में इनकी संख्या बढ़कर ६ हो गयी। वर्तमान समय में राज्य में २१ विश्वविद्यालय है। राज्य में ४८ सरकारी कालेजों को सम्मलित करते हुए ४०१ अफफिलूऐटेड कालेज थे। दिसम्बर १९८३ के अन्त तक, 30 से भी अधिक नीजी अफफिलूऐटेड ऐसे कालेज थे जो कि राज्य सरकार द्वारा अनुदान प्राप्त नहीं थे।

विश्वविद्यालयों तथा डिग्री कालेजों सेसम्बन्धित उत्तर-प्रदेश राज्य विश्वविद्यालय विधेयक विधान सभा द्वारा मई १९७३ में पारित किया गया। तत्पश्चात विधेयक को उ0प्र0 राज्य विश्वविद्यालय अध्यादेश १९७३ के रूप में १२ जून १९७३ को लागू किया गया। विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालय की कार्य प्रणाली में सुधार लाने एवं उच्च शिक्षा में सुधार हेतु उ0प्र0 विश्वविद्यालय।। पुन: अधिनिय एवं संशोधन अधियन १९७४ बनाया गया। इस अधिनियम द्वारा उत्तर-प्रदेश राज्य विश्वविद्यालय अधिनियम १९७३ तथा उत्तर-प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय अधिनियम १९५८ में व्याप्त कतिपय दोषों को दूर करने का प्रयास किया गया।[2]

१- राष्ट्रपति डा0राजेन्द्र प्रसाद का भाषण, पब्लिकेशन डिवीजन १९५५, पृ0 ५।

२- उत्तर-प्रदेश वार्षिक प्रतिवेदन १९७४, पृ0 १८२।

सरकार ने विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा संस्तुत नवीन वेतन मान पहली जनवरी १९७३ से समस्त प्रदेश में लागू कर दिया । साथ ही विश्वविद्यालयों में हिन्दी के माध्यम से अध्यापन के लिए जनता की मांग को देखते हुए विश्वविद्यालय स्तर की पाठ्य पुस्तकों की रचना हेतु चतुर्थ योजना के प्रथम वर्ष १९६९-७० में उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी की स्थापना की गयी ।

उच्च शिक्षा के विकास की रूप रेखा पर विचार करते समय विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग का कथन भी जान लेना आवश्यक है । आयोग के शब्दों में "सार्वजनिक धन का प्रति वर्ष महान अपव्यय हो रहा है , परन्तु इससे भी अधिक दुख की बात यह है कि सार्वजनिक धन की गम्भीरता हानि के प्रति उतनी ही उदासीनता ह जितनी कि छात्रों एवं अभिभावकों पर भयंकर निराशा तुषारापात के प्रति।[1]

उच्च शिक्षा के सम्बन्ध में कोठारी कमीशन का विचार था कि उच्च शिक्षा में सबसे महत्वपूर्ण सुधार वरिष्ठ विश्वविद्यालयों का विकास करना ह जहां सर्वोत्तम प्रकार स्नातकोत्तर एवं अनुसंधान कार्य किया जा सके । और जो विश्व के किसी भी भाग में स्थित सर्वोत्तम विद्यालयों के कार्य की तुलना में निम्नतर सिद्ध न हों ।

सातवीं योजना में उच्च शिक्षा के लिए निम्न प्रकार का विचार किया गयाहै:[2]-----

१- प्रान्त में स्नातक स्तर पर , राष्ट्र के तथा अन्य प्रान्तों के विश्वविद्यालयों तथा कोठारी कमीशन के सुझे सुझाव के अनुसार तीन-वर्षीय पाठ्य क्रम शुरू किया जायेगा । उत्तर-प्रदेश में १० २ की पद्धति वाला ग्रुप जून १९८६ में समाप्त हो जायेगा । इसलिए यह आवश्यक हो जायेगा कि प्रान्त में तीन वर्षीय कोर्स शुरू किया जाय । १९८३ में लखनऊ में उत्तर-प्रदेश के विश्वविद्यालयों के कुल पतियों की सम्मेलन में शिक्षा की नयी नीति को ग्रहण करने की सिफारिश किया गया ।

२- कानूनके पाठ्यक्रम पांच वर्ष करने और अलग कानून कालेज की स्थापना करने की वार कौन्सील आफ इंडिया की सिफारिस को सभी प्रान्त और विश्व विद्यालय स्वीकार किये है । उत्तर-प्रदेश भी इस बार कौन्सील आफ इंडिया के सिफारिश को अन्य प्रान्तों के भांति सातवीं योजना में लागू करेगा ।

१-रिपोर्ट आफ दि यूनिवर्सिटी एजूकेशन कमीशन, पृ० ८६ ।

२- ड्राफ्ट सेवेन्थ फाइव एअर एण्ड अनुअल प्लान १९८५-८६, वाल्यूम-१, पृ० ४२५ ।

३- बहुत से सरकारी कालेज ऐसे हैं जिनका अपना नीजि भूमि नहीं है और लगभग दो तिहाई ऐसे कालेज है जिनकी अपनी नीजि कालेज भवन नहीं है। ऐसे कालेजों को सातवीं योजना के अन्त तक भूमि और भवन की व्यवस्था की लिए प्रयास किया जायेगा।

४- विश्वविद्यालयों के साधनों और क्षेत्रिय आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए विशेषीकरण पर रोक लगाने को महसूस किया गया इस लिए उच्च शिक्षा सलाहकार कमेटी की नियुक्ती होगी जो विभिन्न क्षेत्रीय आवश्यकता और साधनों और विभिन्न प्रकार की विश्वविद्यालयों के विकास योजनाओं की समीक्षा करेगी और तब सरकार को सलाह देगी कि कौन सी स्कीम की अनुमति दी जाय।

५- उच्च शिक्षा संघटन और गुणात्मक सुधार पर अधिक बल देगी। नयी संस्था के खुलने पर कड़ा प्रतिबन्ध है और ये केवल पीछड़े क्षेत्रों में ही खोली जयेगी।

<u>वैज्ञानिक तथा तकनीकी शिक्षा</u> :——उत्तर-प्रदेश आर्थिक दृष्टि से एक पिछड़ा हुआ राज्य है अत: राज्य को पिछड़ेपन से मुक्त करने के लिए औद्योगिकविकास अवश्यम्भावी है। प्राविधिक शिक्षा पर निर्मित किये गये श्वेत पत्र से ज्ञात होता कि १९५६ तक प्राविधिक शिक्षा के क्षेत्र में हम लोगों ने कुछ नहीं किया था। १९५९ में क्रोथर आख्या में कहा गया कि प्राविधिक महाविद्यालयों में जो अशंकारिक शिक्षा हो रही है उसका स्तर सन्तोषजनक नहीं है।[1] वैज्ञानिक तथा औद्योगिक प्राविधियों समाज की रक्षा के लिए प्रतिभावान स्त्री पुरुषों, वैज्ञानिकों, व्यावसायिक विशेषज्ञों, प्रशासकों, संयोजकों, प्रबन्धकों, प्रविधिज्ञों एवं उप व्यवसायियों की बड़ी संख्या में आवश्यकता है।

राज्य सरकार ने १९४७-४८ के बीच डा० के० एस० कृष्णन् की अध्यक्षता में एक वैज्ञानिक शोध समिति की स्थापना की थी। १९५०-५१ में वैज्ञानिक अनुसन्धान समिति की सिफारिशों पर राज्यो ने इलाहाबाद, लखनऊ, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय तथा आगरा विश्वविद्यालयों से सम्बद्ध उपाधि महाविद्यालयों को १,२७,४४० रु० की अनुदान प्रदान की।[2]

१-क्रोथर आख्या उद्धृत, आब्वे, शिक्षा और समाज, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, लखनऊ, १९७२।

२- जनरल रिपोर्ट आन एजुकेशन इन द उत्तर-प्रदेश, मार्च १९४८, पृ० २०।

प्रथम पंचवर्षीय योजनावधि में प्राइवेट संस्था के रूप में इंजीनियरिंग कालेज दयालबाग आगरा की
स्थापना की गयी तथा रुड़की विश्वविद्यालय की प्रवेश क्षमता में वृद्धि की गयी द्वितीय पंचवर्षीय
योजनावधि में कोई इंजीनियरिंग कालेज नहीं खोला गया । तृतीय पंचवर्षीय याजनावधि में मोतीलाल
नैहरू रिजनल इंजीनियरिंग कालेज इलाहाबाद तथा मदनमोहन मालवीय इंजीनियरिंग कालेज गोरखपुर
की स्थापना की गयी । तत्पश्चात १९६६-६७ में पंत कालेज आफ टैक्नोलजी, पंतनगर, नैनीताल की
स्थापना की गयी । स्वीडिस सरकार की सहायता से स्कूल आफ पेपर टैक्नोलजी की स्थापना १९६७
में सहारनपुर में की गयी । छात्राओं को तकनीकी शिक्षा प्रदान करने हेतु लखनऊ में एक महिला
बहु धंधी संस्था की स्थापना की गयी । मिर्जापुर, फैजाबाद, कानपुर, बस्ती और आजमगढ़ में नयी
बहु धंधी संस्थाएँ स्थापित की गयी तथा आजमगढ़, बरेली, गोण्डा, मिर्जापुर मरादाबाद, लखनऊ,
फैजाबाद, और गोरखपुर में आठ नये माध्यमिक तकनीकी विद्यालय स्थापित किये गये ।

इस प्रकार चौथी योजना प्रारम्भ होने के समय प्राविधिक शिक्षा विभाग के अन्तर्गत ६ डिग्री
स्तर की संस्थाएँ, १३ राजकीय बहु धंधी संस्थाएँ, १५ सहायक प्रकप्त बहु धंधी संस्थाएँ, १३ माध्यमिक
राजकीय प्राविधिक विद्यालय तथा ८ विशिष्ट प्रशिक्षण देने वाली संस्थाएँ थी । चतुर्थ पंचवर्षीय योज
में कोई नया डिग्री स्तर की संस्था नहीं खोली गयी । पांचवी योजना के प्रारम्भ में प्राविधिक शिक्षा
के पाठ्य क्रमों में समयानुकुल परिवर्तन करके उद्योग आधारित तथा व्यवसायोन्मुख बनाया गया ।[१]

वर्ष १९५०-५१ में राज्य में डिप्लोमा प्रदान करने वाली ११ संस्थाएँ थी दूसरी पंचवर्षीय यो
में बरेली, झांसी, और खुर्जा में एक-एक पालीटैकनिक की स्थापना की गयी। चंदौली, हंडिया,
नैनीताल, हाथरस, में सिविल इंजीनियरिंग के स्कूल खोले गये । केन्द्रीय सरकार द्वारा प्रारम्भ की गयी
एक नयी योजना में मिर्जापुर, फैजाबाद, और कानपुर में एक-एक पालीटैकनिक खाला गया ।

तीसरी पंचवर्षीय योजना में शासन द्वारा पांच नये पालिटैकनिक स्वीकृत किये गये । चमड़ा
उद्योग को प्रोत्साहन देने के लिए आगरा में एक लैदर इस्टीट्यूट की स्थापना की गयी ।

१- उत्तरप्रदेश शिक्षा की प्रगति, १९७५, पृ० ६० ।

चौथी पंचवर्षीय याजना में उद्योगों की आवश्यकतानुसार आटोमोबाइल इंजीनियरिंग तथा रेफ्रीजरेशन एवं एयर कंडिशनिंग इलेक्ट्रानिक्स एवं एग्रीकल्चरल इंजीनियरिंग आदि केविविधता उत्पन्न करने वाले डिप्लोमा पाठ्य क्रम चालाये गये।

इसके आलावा विशिष्ट प्रकार की प्राविधिक संस्थाओं में – राजकीय केन्द्रीय वस्त्र संस्थान कानपुर, एन० आर० इंस्ट्रीट्यूटआफ प्रिंटिंग टेक्नोलजी, इलाहाबाद, राजकीय चर्म संस्थान आगरा, राजकीय बालिका बहु धंधी संस्थान लखनऊ राजकीय चर्म स्थान कानपुर, स्कूल आफ पेपर टेक्नालजी, सहारनपुर ।।सहायत प्राप्त ।। इत्योदि है।

पांचवीं योजना के अन्त तक, राज्य में रुड़की विश्वविद्यालय को सम्मलित करते हुए ७ डिग्री स्तर की संस्थाएँ थी। पांचवी याजना में, कमला नेहरू इन्स्टीट्यूट आफ साइंस एण्ड टेकनालजी की स्थापना सुलतानपुर में हुई।[1] १९८१–८२ में सेन्ट्रल टेक्सटाइल्स इन्स्टीट्यूट, कानपुर का टेक्सटाइल्स टेक्नोलोजी, टेक्सटाइल केमेस्ट्री और मैनमेड फीब्रा टैक्नालोजी के प्रत्येक पाठ्य क्रमें में ५ सीटों का विस्तार किया गया।

छंठी पंचवर्षीय योजना में दो नये इंजीनियरिंग कालेज खोले गये।[2] नीचे की सारणी में पंच-वर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत प्रदेश में डिग्री और डिप्लोमा स्तर की संस्थाओं की संख्या और उनकी इनटेक क्षमता को देख सकते है।[3]:—

तालिका न० : २

संस्थाओं की संख्या और इनटेक क्षमता

योजना काल	डिग्री स्तर		डिप्लोमा स्तर	
	संस्थाओ की संख्या	इनटेक	संस्थाओं की संख्या	इनटेक
१	२	३	४	५
तृतीय पंचवर्षीय योजना	६	१०५०	३४	५०९०
चतुर्थ पंचवर्षीय योजना	७	९८०	३५	६२४०
पांचवीं पंचवर्षीय योजना	८	१२२०	४२	७७९०
छंठी पंचवर्षीय योजना	१०	१५१०	६९	९०००

१– ड्राफ्ट एनुअल प्लान १९८४–८५, वाल्यूम–१, उ०प्र०, पृ० ३१०.
२– ड्राफ्ट सैवेन्थ फाइव एअर प्लान एण्ड एनुअल प्लान १९८५–८६, वाल्यूम–१,उ०प्र०, पृ० ४३३।
३– वही, पृ० ४३३।

स्त्री शिक्षा :------ किसी समाज के राजनीतिक, आर्थिक एवं समाजिक प्रगति की दृष्टि से नारी शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है। राधाकृष्णन् कमीशन ने स्त्री शिक्षा पर बल देते हुए लिखा - शिक्षित स्त्रीयों के बिना शिक्षित व्यक्ति नहीं हो सकते हैं। यदि सामान्य शिक्षा पुरुषों एवं स्त्रियों तक सीमित रखी जाती है तो स्त्रियों को भी शिक्षा प्राप्त करने का अवसर दिया जाता चाहिए क्योंकि ऐसी दशा में शिक्षा को अन्य पीढ़ी तक हस्तान्तरित किया जा सकेगा।

१९४७ के पश्चात स्त्री शिक्षा का श्लाघनीयविकास हुआ। केन्द्रीय सरकार ने श्रीमती दुर्गा बाई देशमुख की अध्यक्षता में मई १९५८ में स्त्री शिक्षा की राष्ट्रीय समिति की नियुक्ति की। जनवरी १९५९ में समिति ने अपनी रिपोर्ट सरकार के समक्ष प्रस्तुत की, इसमें कई महत्वपूर्ण उपयोगी सुझाव दिये गये।

इस प्रकार उत्तर-प्रदेश शिक्षा में प्रगति कर रहा ह किन्तु इतना अवश्य कहा जा सकता है कि उचित व पर्याप्त दिशा में नियोजन का अभाव है और प्रशासन की शिथिलता है। ज्यों-ज्यों शिक्षा का आकार बढ़ रहा उसका स्तर गिरता जा रहा है। शिक्षा में विभिन्न स्तरों के समान विकास पर भी जोर नहीं दिया जा रहा है। उदाहरणार्थ :- पूर्व प्राथमिक या नर्सरी शिक्षा के लिए प्रदेश में कोई भी सराहनीय प्रयास नहीं किये गये है, जबकि रूस, इंग्लैण्ड, और अमेरिका जैसे देशों में पूर्व प्राथमिक स्तर पर सरकारें बहुत व्यय करती है। हमारे देश में इधर कोई ध्यान ही नहीं दिया गया है। जो कुछ प्रयास हुए भी है। वहां शिक्षा इतनी मंहगी है कि सामान्यत: प्रत्येक वर्ग के बालकों के लिए प्रवेश पाना भी असम्भव है। प्राथमिक शिक्षा का स्तर भी इतना गिरता जा रहा है कि उन स्कूलों में सामान्यत: मध्यम वर्ग के लोग अपने बच्चों को नहीं भेजते है। बेसिक शिक्षा के नाम पर मानदण्ड के गिरने की समस्या ता माध्यमिक व विश्वविद्यालय स्तर पर भी वैसे ही है। सम्भवत: प्रदेश में शिक्षा का प्रसार हो रहा है तो कुछ सीमा तक मानदण्ड गिर जाना स्वाभविक भी है, किन्तु इसका अभिप्राय यह नहीं है कि उसको उठाने के प्रयास न किये जाय किन्तु आशा है कि कि भविष्य में अवश्य ही इस दिशा में प्रयास किये जायेंगे। इधर पंचवर्षीय योजनाओं के अर्न्तगत अन्य राज्यों की भांति उ०प्र० में भी सामूहिक विकास योजनाओं के साथ सामाजिक तथा प्रारम्भिक

१- रिपोर्ट आफ दि यूनिवर्सिटी एजुकेशन कमीशन, पृ० ३९३।

शिक्षा के प्रसार के यत्न किये जा रहे है। जूनियर हाई स्कूल तथा माध्यमिक शिक्षा के स्तर पर कृषि के शिक्षा की पुर्नव्यवस्था के महान परीक्षण की सफलता की ओर विशेष भारत प्रेरणा के लिए देख रहा है। माध्यमिक स्तर पर पाठ्य क्रम का वर्गीकरण साहित्यक, वैज्ञानिक, रचनात्मक, तथा कलात्मक वर्गों के रूप में एक नूतन योजना है। स्त्री शिक्षा की दृष्टि से उत्तर-प्रदेश, बंगाल, मद्रास, महाराष्ट्र तथा केरल राज्यों की तुलना में अपेक्षाकृत पिछड़ा हुआ है। प्राविधिक शिक्षा के क्षेत्र में प्रदेश में आशातीत प्रगति हुई। बढ़ते हुए स्नातक एवं डिप्लोमा स्तर के यान्त्रिकों की बेरोजगारी से केन्द्रीय सरकार ने प्राविधि शिक्षण संस्थाओं में प्रवेश क्षमता कम करने की राज्य सरकार को सलाह दी है।

<u>प्रौढ़ शिक्षा</u> :---- प्रदेश में काफी अधिक संख्या में ।। लगभग ७२.६ प्रतिशत ।। व्यक्ति निरक्षरों की श्रेणी में आते है अतः प्रदेश में साक्षरता के तीव्र प्रसार हेतु अन्य उपायों के साथ-साथ वय-वर्ग ६-११ वर्ष के बच्चों की अनौपचारिक शिक्षा हेतु ५६00 तथा वय - वर्ग ११-१४ वर्ष के बच्चों की अनौपचारिक शिक्षा हेतु १७00 केन्द्र स्थापित किये गये है जहां अंश कालिक शिक्षा दिये जाने का प्रबन्ध किया जाता है। साथ ही उ0प्र0 से निरक्षता उन्मूलन की दिशा में प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम की ओर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। छठी योजनावधि ।। १९८०-८५ ।। में १५-३५ वर्ष आयु वर्ग के १.१७ करोड़ व्यक्तियों को साक्षर बनाने हेतु ३.८१ लाख प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र स्थापित करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। केन्द्र द्वारा पुरोनिधानित योजना के अन्तर्गत वर्ष १९८०-८१ में ३२ जनपदों में 300 केन्द्रों वाली ३२ परियोजनाये प्रारम्भ की गयी। इनके अतिरिक्त राज्य सरकार द्वारा भी 300-300 केन्द्रों वाली दो परियोजनायें दो मैदानी जनपदों में तथा १०० केन्द्र वाली एक परियोजना एक पर्वतीय जनपद में प्रारम्भ की गई।

उ0प्र0 में प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम की शुरूआत १९७८-७९ के वर्ष में हुई। नीचे की तालिका में छठी पंचवर्षीय योजना के प्राप्ति तथा सातवीं योजना का प्रस्तावित उद्देश्य दिया गया है [1]:---

---

१- ड्राफ्ट सेवेन्थ फाइव एअर एण्ड एनुअल प्लान १९८५-८६, वाल्यूम -१, उ0प्र0, ।

तालिका न0 : ३

	।।लाख में संख्या।।
१- अशिक्षित पौढ़ों की संख्या १५-३५ आयु वर्ग में ।।१९७१ का सेंसस ।।	१८0
२- अशिक्षित पौढ़ों की संख्या १५-३५ आयु वर्ग में ।।१९८१ का सेंसस ।।	२0३
३- छठी योजना।।१९८0-८५ ।। का उद्देश्य	३२.0७
४- प्राप्ति १९८0-८१ से १९८२-८३ तक	९.१७
५- प्रत्याशित प्राप्ति १९८३-८४ से १९८४-८५ तक	१३.३१
६- संतुलित अशिक्षित पौढ़ों को सातवीं योजना में प्रबन्ध करना ।।१९८५-९0 ।।	१८0.५२

सातवीं योजना में १८0.५२ लाख पौढ़ों को शिक्षित करने के लिए ५१४४00 पौढ़ शिक्षा केन्द्रों की स्थापना की जायेगी । सरकारी एजेन्सी अकेले ही इसको निश्चित समय में नहीं कर पायेगी स्वैच्छिक संगठन डिग्री कालेज, विश्वविद्यालयों, और नेहरू युवक केन्द्र इसमें सक्रीय भाग ले और इस कार्यक्रम जनआन्दोलन के रूप में संचालित करें ।

शिक्षण सुविधाओं के प्रसार के फलस्वरूप प्रदेश में साक्षरता का स्तर जो वर्ष १९७१ में २१. प्रतिशत था, बढ़कर वर्ष १९८१ में २१.४ प्रतिशत हो गया । इसके विपरित अखिल भारतीय स्तर पर वर्ष १९७१ - ८१ की अवधि में साक्षरता प्रतिशत २९.४ से बढ़कर ३६.२ हुआ अतः यद्यपि साक्षरता के क्षेत्र में वृद्धि प्रदेश में अपेक्षाकृत कुछ अधिक ही रही फिर भी इस दृष्टि से यह प्रदेश अखिल भारतीय स्तर पर ।। ३४.३ ।। प्रतिशत से काफी पीछे तो है ही राजस्थान ।।२४.0 प्रतिशत ।। एवं बिहार ।।२६.0 प्रतिशत ।। को छोड़ कर अन्य सभी राज्यों का अनुगामी रहा ।

तालिका नं० : ४

आर्थिक क्षेत्र में १९७१-८१ के दशक में साक्षारता का प्रसार[१]

क्रम सं०	आर्थिक क्षेत्र	१९७१	१९८१	साक्षारता प्रतिशत में वृद्धि
१	२	३	४	४
१-	पर्वतीय क्षेत्र	३१.०	३९.४	८.४
२-	पश्चिमी क्षेत्र	२२.३	२८.२	५.९
३-	केन्द्रीय क्षेत्र	२२.९	२८.५	५.६
४-	पूर्वी क्षेत्र	१९.४	२४.६	५.२
५-	बुन्देलखण्ड	२२.५	२८.७	६.२
	उ० प्र०	२१.७	२७.४	५.७

उपरोक्त आकड़ों से स्पष्ट होता है कि शिक्षा की दृष्टि से अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा पूर्वी क्षेत्र पिछड़ा हुआ है। वर्ष १९७१ की ही भांति वर्ष १९८१ में भी पूर्वी क्षेत्र में साक्षारता का स्तर सबसे नीचे रहा और अन्य सभी आर्थिक क्षेत्रों में साक्षारता का स्तर प्रदेश के औसत साक्षारता स्तर २७.४ प्रतिशत से अधिक रहा। पर्वतीय क्षेत्र ३९.४ प्रतिशत साक्षारता स्तर के साथ सभी आर्थिक क्षेत्र में अग्रणी रहा। १९७१-८१ के दशक में जहां केन्द्रीय क्षेत्र के साक्षारता प्रतिशत में प्रदेश के लगभग समतुल्य ५.६ की वृद्धि हुई वहीं बुन्देलखण्ड क्षेत्र में यह वृद्धि ६.२ की रही और साक्षारता की दृष्टि से बुन्देलखण्ड क्षेत्र जो वर्ष १९७१ में तृतीय स्थान पर था, २८.७ प्रतिशत साक्षारता स्तर के साथ वर्ष १९८१ में द्वितीय स्थान पर आ गया। इसके अतिरिक्त वर्ष १९८१ में केन्द्रीय, पश्चिमी तथा पूर्वी क्षेत्र में साक्षारता का स्तर क्रमशः २८.५ प्रतिशत, २८.२ प्रतिशत तथा २४.६ प्रतिशत रहा और ये क्षेत्र क्रमशः तृतीय, चतुर्थ तथा पांचवें स्थान पर हैं।

0-अस्थाई,

१- स्रोत - भारतीय जनगणना १९७१ व १९८१।

अध्याय छः

पंचवर्षीय योजना का आदा-प्रदा विश्लेषण

अदा - प्रदा का विश्लेषण

अर्थशास्त्र एक परिवर्तनशील विज्ञान है। समय और परिस्थितियों में परिवर्तन के साथ इसके अ अध्ययन प्रणालियों में भी परिवर्तनहोता रहता है। जैसे-जैसे अर्थशास्त्र के विकास की ओर अर्थशास्त्री का ध्यान केन्द्रित होता गया, इसी के अनुरूप नवीन आर्थिक प्रणालियों के माध्यम से अर्थव्यवस्थाओं के मूल ढंगें में परिवर्तन होना आरम्भ हुआ और ये अर्थव्यवस्थाएँ विकास के मार्ग पर अग्रसर हुई। अर्थव्यवस्थाओं के विकास के साथ-साथ क्रमश धीरे-धीरे स्वयं पूर्ण उत्पादन के ढंग से, विशेषीकरण एवं विनिमय युक्त अधिकाधिक फैली हुई प्रक्रिया में भी परिवर्तन होना प्रारम्भ हुआ। इस विकास रूपी परिवर्तन के फलस्वरूप आर्थिक अन्तर निर्भरता के अध्ययन की आवश्यकता महसूस होने लगी और अर्थशास्त्रियों के लिए यह एक चर्चा व खोज का विषय बन गया। समय चक्र के अनुसार धीरे-धीरे अर्थव्यवस्थाओं के अन्तर्गत आर्थिक अन्तर निर्भरता सम्बन्धी ज्ञान की आवश्यकता सैद्धान्तिक एवं व्यवहारिक दोनों दृष्टिकोणों से अत्यधिक महत्वपूर्ण हो गयी।

चूंकि आर्थिक विकास तभी सम्भव है जबकि वस्तुओं का अन्तर क्षेत्रीय प्रवाह अधिकाधिक हो अर्थात जितना अधिक अन्तर क्षेत्रीय प्रवाह प्रोत्साहित होगा उतना अधिक विकास की प्रक्रिया तीव्र होती जायेगी। अत: अर्थव्यवस्था के विकास के लिए यह आवश्यक है कि किसी ऐसी आर्थिक प्रणाली अथवा आधुनिक तकनीकी का प्रयोग किया जाय जो अन्तर-क्षेत्रीय सम्बन्धों का अध्ययन प्रस्तुत करती हो तथा जिसके माध्यम से अन्तर क्षेत्रीय सम्बन्धों एवं अन्तर क्षेत्रीय प्रवाहों।। को अत्यधिक प्रोत्साहित किया जा सके। इन्हीं अन्तर क्षेत्रीय सम्बन्धों की समस्याओं के सामाधान के लिए तथा अर्थव्यवस्थाओं में आधुनिकता लाने के लिये विकासशील, अर्द्धविकसित, तथा पिछड़े राष्टों की समस्याओं को सुलझाने के इसनयी तकनीक "इनपुट-आउटपुट विश्लेषण" को इजाद किया गया। वास्तव में इनपुट- आउटपुट विश्लेषण हमारा ध्यान उस अर्थव्यवस्था की ओर केन्द्रित करता है जो सन्तुलन की स्थिति में कार्य कर रही है।

इस तकनीक को प्रकाश में लानेका श्रेय प्रकृतिवादी सम्प्रदाय के प्रवर्तक डा० क्वैने को है अत: इस अधार पर हम कह सकते है कि इनपुट-आउटपुट तकनीक का इतिहास आज से लगभग दो सौ वर्ष पूर्व प्रकृतिवादी सम्प्रदाय से प्रारम्भ होता है। सर्वप्रथम डा० क्वैने ने आर्थिक अन्तर निर्भरता सम्बन्धी

अध्ययन को प्रस्तुत किया परन्तु इसका अध्ययन केवल सैद्धान्तिक दृष्टिकोण से ही सफल रहा । व्यवहारिक दृष्टिकोण से सफलता नहीं मिल पाई और यह विश्लेषण वहीपर सुसुप्तावस्था में पड़ा रह गया । डा० कैने के पश्चात प्रो० वालरा का ध्यान फिर इस तकनी की ओर आकर्षित हुआ तथा उन्होंने इस आर्थिक अन्तर निर्भरता सम्बन्धी अध्ययन पर अपना विचार प्रस्तुत किया, परन्तु दुर्भाग्य वश प्रोफेसर वालरा का यह विश्लेषण भी केवल सैद्धान्तिक पहलू को हल करने में सफल रहा व्यवहारिक पहलू पर इसे भी सफलता नहीं मिल पाई। अतः यह विश्लेषण वही पर वालरा तक ही सीमित रह गया ।

प्रोफेसर वालरा के विश्लेषण के पश्चात हार्वर्ड विश्वविद्यालय के प्रसिद्ध अर्थशास्त्री प्रोफेसर वैसिली डब्ल्यू लियान्तिफ ने डा० कैने व प्रोफेसर वालरा के प्रयासों को श्रेणीबद्ध करके आगे बढ़ाया और अपने अनुसंधान परिणामों को प्रकाशित कर अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत आर्थिक अन्तर निर्भरता सम्बन्धी विश्लेषण को व्यवहारिक, सुव्यवस्थित एवं वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान किया । प्रोफेसर लियान्तिफ ने बताया कि अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत प्रत्येक आर्थिक क्षेत्र तथा प्रत्येक उद्योग एक दूसरे पर निर्भर हैं तथा साथ ही साथ एक दूसरे से सम्बन्धित है । अर्थव्यवस्था के इस आर्थिक अन्तर निर्भरता सम्बन्धी अध्ययन को उपयुक्त सरलीकरण द्वारा व्यवहारिक रूप से व्यवस्थित करना ही प्रोफेसर लियान्तिफ का मुख्य उद् देश्य था ।

आर्थिक अन्तर निर्भरता सम्बन्धी यह आधुनिक विश्लेषण जिसे इनपुट-आउटपुट कीसंज्ञा प्रदान की गयी, अर्थशास्त्रीयों के लिये, अत्यधिक महत्वपूर्ण उपकरण सिद्ध हुई । इस उपकरण की सहायता से अर्थशास्त्रीयों को अर्थव्यवस्था के किसी विशिष्ट भाग की तुलना में सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था के अध्ययन में अत्यधिक सहायता मिलती है । इस तकनीक ने अर्थशास्त्रीयों को इस योग्य बना दिया है कि वे अपने विश्लेषण में अधिक व एक साथ होने वाले परिवर्तनों का समावेश कर सके । वर्तमान समय में अर्थ-व्यवस्था का कोई ऐसा क्षेत्र बाकी न होगा जहाँ कि इस आधुनिक तकनीक का प्रयोग न किया जाता हो । वास्तव में इस तकनीक का अध्ययन वर्तमान समय में, अर्थव्यवस्थाओं के विकास के लिये अत्यन्त आवश्यक है ।

अर्थ एवं परिचय :-------- इनपुट-आउटपुट तकनीक का पूर्ण एवं स्पष्ट अध्ययन के लिए यह आवश्यक है कि "इनपुट" और "आउटपुट" शब्द का अर्थ अच्छी प्रकार से समझ लिया जाय। हिन्दी भाषा के अन्तर्गत "इनपुट" तथा "आउटपुट" का अर्थ "आदा-प्रदा" अथवा "आगत-निर्गत" होता है। साधारण भाषा अथवा व्यवहारिक प्रयोग में उसका अर्थ "लेन-देन" से लिया जाता है। अर्थात किसी वस्तु को प्रयोग में लेना अथवा ग्रहण करना और प्रतिफल के रूप में प्राप्त करना। अदा-प्रदा शब्द का प्रयोग जब हम अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत करते है तो इसका अर्थ होता है कि कोई भी उद्योग अपने उत्पादन कार्य के लिए जिन वस्तुओं को ग्रहण करता है उसे हम अदा ।। इनपुट ।। तथा जिनको वह उत्पादन के रूप में देता है अथवा जिन्हें बेचता है उसे हम प्रदा कहते है। यहाँ पर एक बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि एक उद्योग की प्रदा ।। आउटपुट ।। किसी दूसरे उद्योग में या उसी उद्योग में अदा का कार्य कर सकती है और अधिक स्पष्ट रूप से हम इस प्रकार भी कह सकते है कि अर्थव्यवस्था की प्रत्येक शाखा अपने उत्पादन कार्य में प्रयोग करने के लिये अन्य शाखाओं से जो माल ग्रहण करती है उसे अदा के रूप में स्वीकार किया जाता है तथा जो माल तैयार करते है उसे प्रदा। "अदा-प्रदा" के अर्थ को स्पष्ट करते हुए प्रोफेसर जे० आर० हिक्स ने लिखा है कि "अदा" वह वस्तु है जिसे उद्यम के लिये खरीदा जाता है तथा प्रदा ।। आउटपुट ।। वह है जिसे उद्यम बेचता है।[1] वास्तव में एक अदा ।। इनपुट ।। प्राप्त होती है जबकि प्रदा ।। आउटपुट ।। का उत्पादन किया जाता है। जहाँ पर अदा की प्रकृति किसी फर्म के खर्च को प्रकट करती है वहीं पर प्रदा ।। आउटपुट ।। उसकी कुल आमदनी को प्रदर्शित करती है। अदाओं के कुल मौद्रिक मूल्यों को योग एक फर्म की कुल लागत होती है और प्रदाओं के मौद्रिक मूल्यों का जोड़ फर्म की कुल आमम ।। आय ।। होती है। अतः यह स्वतः स्पष्ट है कि सभी उत्पादन साधनों ।। श्रम, पूंजी, साहस, भूमि और प्रबन्ध ।। को अदा के रूप में स्वीकार किया जा सकता है क्योंकि किसी वस्तु के उत्पादन में इन उत्पादन साधनों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। चूंकि यह विश्लेषण केवल उसी अर्थव्यवस्था की ओर हमारा ध्यान केन्द्रित करता है जो सन्तुलन की स्थिति में कार्य कर रही हो। अतः इस तकनीक के अन्तर्गत आर्थिक प्रणाली साम्य की स्थिति में उस समय होती है जिस समय विभिन्न शाखायें ठीक उतने ही माल का उत्पादन करती है जितना वे बेच सकती है दूसरे शब्दों आर्थिक प्रणाली के अन्तर्गत साम्य ।। सन्तुलन ।। की स्थिति में अदा और प्रदा एक दूसरे के बराबर होना चाहिए ।।

१- क्वेटेड बाई प्रोफेसर एम० एल० झिंगन : एडवांस इकोनामिक थियूरी १९७४, पृ० ५३३, फर्स्ट एडीसन ।

अदा – प्रदा विश्लेषण गणितीय समीकरणों पर आधारित आर्थिक विश्लेषण का एक ऐसा उपकरण है जिसकी सहायता से सामान्य आर्थिक साम्य अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में पारस्परिक निर्भरता का अध्ययन किया जा सकता है। इस आधुनिक विश्लेषण के द्वारा किसी कार्यक्रम की एकी एकीकृत संगति की जांच कर सकते है तथा साथ ही साथ इस बात का पुर्वानुमान कर सकते है कि किसी विशिष्ट उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए कितनी मात्रा में अदा की आवश्यकता पड़ सकती है। अर्थव्यवस्था की परस्पर निर्भरताओं का अध्ययन करने के लिए तथा अन्त: उद्योग सम्बन्धों का विश्लेषण करने के लिए इस तकनीक का आविष्कार किया गया है। अत: इस प्रकार इस विश्लेषण से माँग और पूर्ति में सन्तुलन बनाये रखने की स्थिति को सरलता पूर्वक समझा जा सकता है।

वर्तमान समय में आर्थिक क्षेत्र का कोई भी भाग ऐसा नहीं बचा है जहां पर अदा-प्रदा तकनीक का प्रयोग न किया जाता हो। यही कारण है कि भिन्न-भिन्न स्थानों पर इसके प्रयोग के अनुसार अर्थशास्त्रीयों ने इसको विभिन्न प्रकार से संकेत किया है। जैसे-अन्तर औद्योगिय प्रवाहों का विश्लेषण ।।एनालिसिस आफ इन्टर-इन्डस्ट्रीयल फ्लोज ।।, बहुक्षेत्रीय सम्बन्धों का विश्लेषण ।।एनालिसिस आफ मल्टी रिजिनल रिलैन्स ।।, औद्योगीय सक्रियता विश्लेषण ।। इन्डस्ट्रीयल एक्टीविटी एनालिसिस ।। आदि। कुछ अर्थशास्त्रीयों ने अदा-प्रदा विश्लेषण को आगत-निर्गत विश्लेषण भी कहा है। इस प्रकार अदा-प्रदा विश्लेषण को विभिन्न प्रकार की संज्ञा प्रदान की गयी है जो इसके कार्य क्षेत्र व विशेषताओं के अनुरूप है।

वास्तव में अदा-प्रदा विश्लेषण यह बताता है कि समस्त आर्थिक व्यवस्था में औद्योगिक अन्तर सम्बन्ध और अन्तर निर्भतायें होती है एक उद्योग की अदा दूसरे उद्योग की प्रदा होती है तथा दूसरे की प्रदा तीसरे की अदा इसी प्रकार का सम्बन्ध अन्त तक बना रहता है जिससे अन्त में उनके आपसी सम्बन्धों के कारणससमस्त अर्थव्यवस्था में माँग की पूर्ति का सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। यद्यपि अ अर्थव्यवस्था में असंख्य उद्योग स्थापित है। अत: अध्ययन की सुविधा के लिये मिलते-जुलते उत्पादनों को एक साथ संग्रहित कर अर्थव्यवस्था को कुछ क्षेत्रों में बाँट दिया जाता है परन्तु इससे परस्पर निर्भरता सम्बन्धों में कोई अन्तर नहीं पड़ता है। यदि अर्थव्यवस्था में केवल कृषि उद्योग और सरकारी क्षेत्र ही हैं तो इनके अदा-प्रदा सम्बन्ध नष्ट नहीं होते है। एक क्षेत्र का अदा-प्रवाह दूसरे क्षेत्र के लिए प्रदा के रूप में प्रयुक्त होता है। अर्थात हम कह सकते है कि इस तकनीक का मूल आधार अर्थव्यवस्था के विभिन्न उद्योगों की पारस्परिक निर्भरता की मान्यता है जो अदा-प्रदा के सम्बन्ध में उदय होती है

जैसे एक महत्वपूर्ण प्रदा स्पात तमाम उद्योगों में अदा के रूप में प्रयोग कंकिया जाता है, परन्तु स्पात स्वयं, स्पात कोयला, भारी रसायनों विद्युत तथा अन्य उद्योगों के प्रदा से बनता है। इसी प्रकार के अदा प्रदा सम्बन्ध लगभग सभी प्रकार के उद्योगों केलिए सत्य है। यदि हम कोयला उद्योग और स्पात उद्योग पर विचार करें तो यह स्पष्ट कि है स्पात उद्योग के लिए कोयला अदा है तथा कोयलाउद्योग के लिए स्पात अदा ।। इनपुट ।। है साथ ही साथ ये अपने अपने उद्योगों की प्रदा ।। आउटपुट ।। भी है। इस तकनीक के अन्तर्गत आर्थिक क्रियाओं का अधिकांश भाग बीच की प्रवस्तुओं के उत्पादन ।। आदाओं ।। के उत्पादन में लगारहता है जिनका प्रयोग अन्तिम वस्तुओं के ।। प्रदाओं ।। उत्पादन मेंफिर किया जाता है विभिन्नन उद्योगों के बीच " भवंर" और प्रतिधराओं के रूप में वस्तुओं के प्रवाह होते है। बीच की वस्तु ओं ।। अदाओं ।। के बड़े अंकि अन्तः उद्योग प्रवाहों से पूर्ति बनती है तथा अन्तिम वस्तुओं से माँग पक्ष। इस आधुनिक तकनीक के माध्यम से अर्थव्यवस्थाओं के अन्तर्गत मुख्य रूप से वस्तुओं के अन्तर क्षेत्रीय प्रवहों को प्रोत्साहित किया जाता है। सारांश के रूप में अदा-प्रदा का अर्थ यह होता है कि सन्तुलन की स्थितिमें समस्त अर्थव्यवस्था की कुल प्रदा का मौद्रिक मूल्य अन्तः उद्योग आदाओं के मौद्रिक मूल्य की राशि तथा वाह्य उपभोग की प्रदा के भौतिक मूल्य के योग के बराबर होता है।

वास्तव में इनपुट-आउटपुट तकनीक की विचार धारा सामान्य सन्तुलन की विचार धारा पर आधारित है। प्रो० वैसिली डब्ल्यू० लियान्तिफ के शब्दों में "इनपुट-आउटपुट तकनीक, अन्तर सम्ब सम्बन्धित आर्थिक क्रियाओं के आर्थिक अन्तर निर्भरता के सम्बन्ध में अध्ययन करने के लिए, नव परम्परावादियों की सामान्य सन्तुलन की विचार धारा पर आधारित है। यह मूल रूप से राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत विभिन्न उत्पादनों हऔर उपभोग के क्षेत्र के मध्य सम्बन्धों की माप और विश्लेषण के लिए विकसित किया गया है। इसके ससाथ ही साथ यह तकनीक एक तरफ जहाँ छोटी सी छोटी आर्थिक प्रणालियों का अध्ययन करने के लिए प्रयोग की जाती है जैसे मैट्रोपोलैटियन क्षेत्र आदि वही पर दूसरी तरफ अन्तरराष्ट्रीय आर्थिक सम्बन्धों के विश्लेषण में इसका प्रयोग किया जाता है ——।[१]

१- प्रोफेर लियान्तिफ : इनपुट-आउटपुट इकोनामिक्स, १९५०, पृ० १३४।

अदा-प्रदा तकनीक अर्थ व्यवस्था की संरचना के क्रिया-कलाप की अध्ययन की एक प्रणाली है। यह तकनीक पूर्णतया अनुभवाश्रित है। इसके सभी अवयव या प्रविष्टियां ।।इन्ट्रीज।। एक दिये हुए समय में सांख्यकीय विधियों द्वारा ज्ञात की गयी होती है। इस प्रकार यह विश्लेषण विधि कुछ मान्यताओं के साथ अर्थव्यवस्था के परिचालन को प्रदर्शित करती है।

परन्तु अर्थव्यवस्था की संरचना निरन्तर परिवर्तनशील है । अर्थव्यवस्था के क्षेत्रों का सापेक्ष महत्व भी निरन्तर बदलता रहता है। ऐसी स्थिति में यदि हम किसी अर्थव्यवस्था की संरचना का अध्ययन दो निश्चित समयों में करें तो हमको इस परिवर्तन की दिशा का ज्ञान यह तकनीक आसानी से बताती है साथ ही साथ इस अध्ययन से हम यह भी जान लेंगे कि अपनी निर्धारित आर्थिक नीतियों के सन्दर्भ में यह परिवर्तन अर्थव्यवस्था के लिए लाभप्रद है अथवा हानिकारक। एक विकासशील अर्थव्यवस्था के लिये यह बरोड़ों के बारे-न्यारे वाला प्रश्न है तथा उसके द्वारा अध्ययन से हम अपने आर्थिक विकास कार्यक्रम की सफलता का अनुमान लगाय सकते है। इसप्रकार हम कह सकते है कि इनपुट-आउटपुट तकनीक सांख्यकीय सूचनाओं पर आधारित आर्थिक अन्तरनिर्भरता सम्बन्धी अध्ययन की एक ऐसी प्रणाली है जिसके माध्यम से हम अर्थव्यवस्था की संरचना एवं सापेक्ष महत्व में होने वाले परिवर्तन का जानकारी करते है।

यह तकनीक आर्थिक विकास कार्यक्रम में निर्धारित लक्ष्यों की संगति का परिक्षण करने में भी सहायता पहुंचाती है परन्तु यह परिक्षण अल्पकाल में ही सम्भव है क्योंकि इसतकनीक की मूल अभिधार यह है कि तकनीकीगुणांक स्थिर है जो केवल अल्पकाल में ही यथार्थ है। इस अभिधारणा की उपयोगिता अर्थव्यवस्था में होने वाले तकनीकी विकास कीतीव्रता पर निर्भर करती है। इसके साथ ही साथ इस तकनीक की सफलता अत्यधिक सीमातक अर्थव्यवस्था में उपलब्ध सही तथा समय पर प्राप्त सांख्यकीय आंकड़ों ।।सूचनाओं।। पर निर्भर है। समाजवादी देशों के आर्थिकविकास कार्यक्रम की सफलता में इस तकनीक का अत्यधिक हाथ रहा है।

प्रो० जे० के० मेहता ने इस तकनीक को 'मांग और पूर्ति में सन्तुलन' का विश्लेषण कहा है। संक्षेप में इनपुट - आउटपुट विश्लेषण पूर्णरूप से सांख्यकीय सूचनाओं तथा गणतीय समीकरणों पर

आधारित आर्थिक विश्लेषण का एक ऐसा उपकरण है जिसकी सहायता से हम ।।१।। सामान्य आर्थिक साम्य के अध्ययन में अर्थव्यवस्था की विभिन्न शाखाओं के सम्बन्ध में उनकी परस्पर आर्थिक अन्तर निर्भरता सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करते है । ।।२।। किसी भी अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत किसी भी प्रकार के प्रोग्राम की एकीकृत सामंजस्यता की जाँच करते है । ।।३।। इस बात का पूर्वानुमान कर सकते है कि किसी विशिष्ट उद्देश्य की प्राप्ति के लिये अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में कुल कितनी मात्रा में अदा की आवश्यकता पड़ सकती है । वास्तव में इस तकनीक की खोज अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत विभिन्न क्षेत्रों के पारस्परिक सम्बन्धों का पता लगाने के लिए किया गया है । इसके साथ ही साथ इस तकनीक के अन्तर्गत उत्पादन के अनुभव जन्य विश्लेषण के भीतर ही सामान्य साम्य की घटना का विचार किया जाता है ।

<u>इनपुट-आउटपुट तकनीक की विशेषतायें</u> :------इनपुट-आउटपुट तकनीक की अपनी कुछ अलग विशेषतायें हैं जिसके अन्तर्गत ही यह कार्य करती है । इन्ही विशेषताओं के कारण ही यह तकनीक विकासशील देशों के विकास में अत्यधिक उपयोगी सिद्ध हुई है । यह विशेषतायें इस प्रकार से है ।

इस तकनीक की पहली विशेषता यह है कि यह सामन्य साम्य अर्थव्यवस्था पर विशेष ध्यान देती है । यहां पर केवल "साम्य" शब्द का प्रयोग किया जाय तो यह तकनीक शायद सत्यता से दूर रह जाय क्योंकि यह सम्भव है कि इस विश्लेषण से प्राप्त आउटपुट के मान बजार को साम्य शर्तों का पालन बिलकुल न करें । अतः इसी लिए इस तकनीक के अर्न्तगत "सामान्य साम्य अर्थव्यवस्था" शब्द इस लिए रखा गया है कि क्योंकि इस विश्लेषण में अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में परस्पर निर्भर। निर्भरता का विचार किया जाता है । यदि और अधिक स्पष्ट शब्दों में कहा जाय तो, यह तकनीक बिना साम्य के भी सामान्य है, की विशेषता रखती है । [१]

इस विशेषता को ध्यान में रखकर यदि हम इनपुट - आउटपुट तकनीक पर ध्यान केन्द्रित करते है तो हमें ज्ञात होता है कि चूंकि इनपुट-आउटपुट तकनीक के अर्न्तगत अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों

१- इकोनामिक थियूरी एण्ड ऑपरेशन्स एनालिसिस : डब्ल्यू० जे० ब्यूमल, १९६३, पृ० ३०० ।

के बीच सम्बन्धों पर विचार किया जाता है। इसलिये विश्लेषण में अनेक उद्योगों की इकाई विधियों और उत्पादन योजनाओं पर भी विचार किया जाता है। इस प्रकार विभिन्न उद्योगों का आपस में सम्बन्धित होना इसलिये भी आवश्यक है कि कभी-कभी एक उद्योग दूसरे औद्योगिक संस्थान द्वारा प्राप्त आउटपुट को अपने लिये कच्चा माल या इनपुट के रूप में प्रयोग करता है इस प्रकार इस फर्म की प्रदा ।।आउटपुट।। रूप से किसी दूसरे फर्म या उद्योग के लिए इनपुट का कार्य करती है। साथ ही साथ यह भी सम्भव है कि यह दूसरी फर्म उनमें से ही हो जिनसे पहली फर्म के लिए कुछ संघटक प्रदान किये हो। उदाहरण के लिए मान लिया कि टाटा आयरन कारखाने से प्राप्त स्पात से एक फर्म मालगाड़ी के डिब्बे बनाने कार्य करती है और इस प्रकार के डिब्बे पुन: टाटा आयरन के कारखाने में फौलाद ढोने का काम करते है। स्पष्ट है कि अर्थव्यवस्था की प्रत्येक शाखा अपने उत्पादन में प्रयोग के लिये अन्य शाखाओं सेजो माल ग्रहण करती है वह उसकी इनपुट तथा जो माल उत्पादन के रूप में तैयार करती है वह उसका आउटपुट कहलाता है। प्रत्येक शाखा की प्रदा ।।आउटपुट।। दूसरी शाखाओं की अदा ।।इनपुट।। हो सकती है और इस प्रकार अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत विभिन्न शाखायें एक दूसरे से सम्बन्धित हो जाती है। इस दृष्टि से आर्थिक प्रणाली में साम्य की स्थिति वह होगीजबकि विभिन्न उद्योग या फर्मे ठीक उतना ही माल उत्पन्न करें जितना कि वह बेच सकती है अर्थात साम्य की स्थिति में किसी भी उद्योग की इनपुट की मात्रा आउटपुट की मात्रा के बराबर होना चाहिए।

इस स्थिति को और अधिक स्पष्ट रूप से समझने के लिये मान लिया कि फर्म गावों से रूई एकत्र करने का कार्य करती है तथा उसके द्वारा विभिन्न प्रकार के धागे तैयार करती है एक दूसरी फर्म इन धागों से विभिन्न प्रकार के कपड़े तैयार करने का कार्य करती है। अत: स्पष्ट है कि इसमें पहली फर्म की प्रदा ।।आउटपुट।। ही दूसरी फर्म के अन्तर्गत इनपुट का कार्य कर रही है। इस प्रकार दोनों फर्मे परस्पर सम्बन्धित कही जा सकती है। इसी प्रकार कोयले की खान से कोयला स्पात बनाने में एक कारखाना उपयोग करता है दूसरी तरफ इस स्पात से ट्रालियां बनती है जो पुन: प्रथम फर्म यानी कोयले की खादान से कोयला के ढोने में प्रयुक्त की जाती है। इस प्रकार सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था की विभिन्न शाखाओं में परस्पर निर्भरता का सम्बन्ध होता है। अत: यदि हम यह जानना चाहते है कि किसी एक नये परिवर्तन का अर्थव्यवस्था पर क्या प्रभाव पड़ता है तो हमारे लिये यह आवश्यक है कि अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत विभिन्न शाखाओं के सम्बन्धों का अध्ययन करें। इस प्रकार अध्ययन इनपुट-आउटपुट तकनीक द्वारा सरलता पूर्वक किया जा सकता है।

२- इनपुट-आउटपुट तकनीक की दूसरी प्रमुख विशेषता यह है कि पूर्ण तकनीकी विश्लेषण है और यदि प्राप्त साधनों की मात्रा और तकनीकी स्थितिका ज्ञान हो तो इस विश्लेषण के द्वारा यह पता लगाया जा सकता है कि किस वस्तु का उत्पादन किया जाना चाहिए और उत्पादन विधि के बीच में उपयोग किये जाने वाले संघटकों की कितनी मात्रा में प्रयुक्त किया जाय। इस सम्बन्ध में यह यहि निर्णय अर्थव्यवस्था में बहुत ही महत्व के है क्योंकि इनके द्वारा किसी अर्थव्यवस्था में किसी भी निश्चित उद्देश्यों को पाने के लिए ।। जो नीचे लिखी में से कोई भी हो सकते ।।, कुल कितनी म मात्रा में आउटपुट की आवश्यकता पड़ेगी, पूर्व ही अनुमान लगाया जा सकता है। इन उद्देश्यों में निम्न में से कोई भी उद्देश्य अर्थव्यवस्था का हो सकता है। १- राष्ट्रीय आय की दर में अधिकतम वृद्धि २- अधिकतम बचत ३- उचित और अधिकतम रोजगार ४- अधिकतम लाभ ५- अधिकतम उत्पादन ६- समान वितरण ७-अधिकतम विकास की गति।

३-इनुपुट-आउटपुट तकनीक की तीसरी विशेषता यह है कि यह विश्लेषण पूर्णतः अनुभव जन्य निण निर्णयों और खोज बीनों पर अधारित है और इसी कारण से यह सामान्य साम्य सिद्धान्तवादियों और वालरस के कार्य से भिन्न समझा जाता है या यह कहा जा सकता है कि यही एक बात इस तकनीक को वालरस के कार्य से अलग करने में सहायक है। इनपुट-आउथपुट तकनीक में, ऐसे माडल पर विचार किया जाता है कि जो बहुत ही सरलीकृत और विस्तृत है और जो अधिक से अधिक घटनाओं का एक साथ समावेश अपने में कर सकता है।

४-यह तकनीक पूर्णतः नव परम्परावादियों की सामान्य सन्तुलन की विचार धारा पर अधारित है।[1]

५- यह तकनीक पूर्ण रूप से सांख्यकीय सूचनाओं ।। आंकड़ों तथा गणितीय समीकरणों ।। पर अधारित ह है सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था का अध्ययन इस तकनीक द्वारा तभी सम्भव है जबकि पर्याप्त सांख्यकीय आंकड़े उपलब्ध हो तथा गणित का अच्छा ज्ञान हो।

६- इस तकनीक की यह विशेषता है कि यह हमारा ध्यान सदैव एक ऐसी अर्थव्यवस्था की ओर केन्द्रि करती है जो सन्तुलन में कार्य कर रही हो असन्तुलित अर्थव्यवस्था में यह तकनीक कारगर नहीं होती

१- वैसिली, डब्ल्यू लियान्तिफ : इनपुट-आउटपुट इकोनामिक्स : पृ० १३५ ।

७- इनपुट - आउटपुट तकनीक पूर्णरूपेण कोआपरेशन के सिद्धान्तों पर निर्भर है। इसके अन्तर्गत एक क्षेत्र दूसरे क्षेत्र का यथासम्भव सहयोग करते है।

८- यह तकनीक 'वस्तु के द्वारा वस्तु का उत्पादन' के सिद्धान्त पर अधारित है अर्थात इस तकनीक के मुख्य रूप से एक वस्तु के उत्पादन में अधिकांशत: अन्य वस्तुवों का सहारा लिया जाता है कहने का तात्पर्य यह है कि इस तकनीक के माध्यम से वस्तुओं के उत्पादन में वस्तुओं की ही अधिक भूमिका रहती है।

९- यह तकनीकी पूर्णत: भौतिक नियोजन पर अधारित है। वित्तीय नियोजन इस तकनीक में पूरक के रूप में प्रवेश करता है। सम्पूर्ण तकनीक में केवल भौतिक नियोजन ही भाग लेता है।[१]

१०- यहतकनीक बहुक्षेत्रीय अर्थव्यवस्था से सम्बन्धित है जो विभिन्न प्रकार के क्षेत्रों में विभाजित है साथ ही साथ इस तकनीक के द्वारा एक से अधिक घटनाओं का एक साथ अध्ययन किया जा सकता है।

११- इस तकनीक के अन्तर्गत एक वस्तु के उत्पादन की एक ही प्रक्रिया है अर्थात किसी भी वस्तु का उत्पादन केवल एक प्रक्रिया के अधार पर किया जा सकता है।

१२- इस तकनीक के अन्तर्गत संयुक्त उत्पादन की कोई व्यवस्था नही है।

१३- इस तकनीक की एक प्रमुख विशेषता यह है कि इसके अन्तर्गत प्रत्येक उद्योग केवल एक समान वस्तु की समान इकाई का उत्पादन करता है। यदि कोई उद्योग दो या दो से अधिक वस्तुएं एक निश्चित अनुपात में उत्पादित करता है तो उनका विश्लेषण कर इस तकनीक में एक समान मान लिया जाता है।

१४- यह तकनीक विश्लेषण के समय यह मान कर चलती है कि पैमाने के प्रतिफल स्थिर है।

इन विशेषताओं के अधार पर अर्थव्यवस्था के प्रत्येक क्षेत्र का अलग-अलग सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है अपनी कुछ अलग और निश्चित विशेषताओं के करण यह तकनीक अर्थशास्त्र के विकास में एक योग के रूप में है। प्रो० हुसविज के शब्दों में अर्थशास्त्र के विकास में इस प्रणाली का महत्व बहुत है और यह स्वाभाविक ही है कि इसकी अध्ययन प्रणाली के कुछ पहलुओं के सम्बन्ध तथा इसकी उपयोगिता के क्षेत्र में कुछ वादविवाद है।[२]

१- पी० सराफा : प्रोडक्सन आफ कमाडिटीज वाई मीन्स आफ कमाडिटीज, पृ० ४।

२- कोटेड वाई प्रो० जे० के० मेहता: लेक्चर्स आन मार्डन इकोनामिकथियूरी, पृ०१९७।

पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत आय

जिस प्रकार कुल उत्पादन को धन के रूप में मापने का साधन राष्ट्रीय आय है उसी प्रकार राज्य की अर्थव्यवस्था की सर्वतोमुखी सम्मृद्धि तथा विकास की दशा के अभिज्ञान के लिए राज्य आय एक महत्वपूर्ण मापदण्ड है। आयसूचकांकों से विकास कार्यक्रमों के सामूहिक परिणाम परिलक्षित होते है राज्य आय तथा प्रति व्यक्ति आय के अधार पर ही हम यहां के लोगों की जीवन स्तर तथा उनके कल्याण के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकते है। देश की विभिन्न अराज्यों से तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है, अर्थव्यवस्था में हुए परिवर्तनों का पता लगाया जा सकता है, और विभिन्न सरकारी नीति बनाने का अधार बनाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त राज्य आय सेहम यह पता लगा सकते है कि प्रदेश में भावी प्रवृत्ति किस प्रकार की होगी और वह किस दिशा में बढ़ेगी।

विभिन्न देशों में राष्ट्रीय आय को विभिन्न प्रकार से परिभाषित किया गया है। इसलिए सभी देशों के राष्ट्रीय आय के आंकड़ेंपरस्पर तुलनीय नहीं है। "राष्ट्रीय आय समिति" के अनुसार भारत में राष्ट्रीय आय का अनुमान लगाने में एक निर्धारित अवधि जो एकवर्ष की है में उत्पादित समस्त वस्तुओं और सेवाओं को सम्मिलित किया जाता है। साथ ही इस बात का ध्यान रखा जाता है कि राष्ट्रीय आय के अनुमान में किसी भी वस्तु अथवा सेवा के मूल्य की गणना दो या अधिक बार न हो।[1] राष्ट्रीय आय की यही परिभाषा लगभग सभी पाश्चात्य देशों में मान्य है। सामाजवादी देशों में राष्ट्रीय आय में केवल शुद्ध भौतिक उत्पादन को सम्मलित किया जाता है। अतः राष्ट्रीय आय के सम्बन्ध में भारतीय दृष्टिकोण समाजवादी देशों में मान्य मार्क्सवादी दृष्टिकोण से भिन्न है[2] भारत की राष्ट्रीय आय की तुलना गैर समाजवादी पाश्चात्य देशों और समाजवादी देशों की राष्ट्रीय आय के साथ करतें समय परिभाषा सम्बन्धी अन्तरों को ध्यान में रखना आवश्यक है। राष्ट्रीय आय के सन्दर्भ में यह उल्लेखनीय है कि समग्रराष्ट्रीय आय कोई समरूप तत्त्व नहीं होती इसमें अनेक प्रकार की वस्तुऐं और सेवाऐं सम्मलित होती है। जिनका उत्पादन विभिन्न क्षेत्र में होता है। भारत की शुद्ध

१- भारत सरकार, फर्स्ट रिपोर्ट आफ दी नेशनल इनकम कमेटी अप्रैल १९५१।

२- वी० कुद्रोव : आन मेथड्स आफ कम्पेयरिंग नेशनल इनकम्स आफ दि यू० एस० एस० आर० एण्ड दी यू० एस० ए० इंटरनेशनल सोसलिस्ट मिसलैनी, संख्या १, १९६१, पृ० ६०।

राष्ट्रीय आय के उत्पादन में कृषि क्षेत्र का योगदान सर्वाधिक है। परन्तु उसका सापेक्षिक महत्व कम होता है। अनेक विद्वानों का मत है कि राष्ट्रीय आय में कृषि क्षेत्र की तुलना में औद्योगिक क्षेत्र का योगदान जितना अधिक होता है, आर्थिक विकास का स्तर उतना ही ऊँचा होता है।[1]

यद्यपि योजनाकाल में राष्ट्रीय आय तथा प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि हुई किन्तु यह सन्तोष जनक नहीं रही। देश की अर्थव्यवस्था को को समझने के लिए यह आवश्यक है कि यह जाँच की जाय कि राष्ट्रीय आय में जो वृद्धि हुई उसका लाभ किस वर्ग को हुआ और इससे आय के वितरण में असमानतायें कम हुई अथवा नहीं। आय के वितरण में असमानतायें अधिक होना इस बात का प्रमाण है कि श्रम जीवी वर्ग को उसके श्रम का न्यायोचित प्रतिफल नहीं मिलता। शोषण की स्थिति में श्रमिक को कार्य करने के लिए प्रेरणा नहीं मिलती और उसकी उत्पादकता भी कम रहती है। जिसका आर्थिक विकास पर प्रतिकुल प्रभाव पड़ना स्वभाविक है। डब्ल्यू० आर्थर ल्यूइस के शब्दों में, "जनसाधारण में उत्साह आर्थिक नियोजन को चिकना करने वाला तेल और आर्थिक विकास के लिए पेट्रौल है। वस्तुत: यह वह प्रावैगिक शक्ति है जो सभी कुछ सम्भव बना देती है।[2]

उ०प्र० की राज्य एवं प्रतिव्यक्ति आय :—— राज्य एवं प्रतिव्यक्ति आय के अनुमानों से प्रदेश की सम्पन्नता का अन्दाजा लगाया जा सकता है। १९४८-४९ के स्थिर भाव पर १९५०-५१ से १९६०-६१ के बीच राज्य एवं प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि की प्रवृत्ति निम्नलिखित तालिका के अनुसार रही :[3]——

१- सुरेन्द्र जे पटेल : मैन फीचर्स आफ इकोनामिक ग्रोथ ओवर लास्ट सेन्चुरी, इंडियन इकानामिक जर्नल, अक्टूबर-दिसम्बर, १९६३ ई०।

२- डब्ल्यू ए० लूइस : प्रिंसिपुल्स आफ इकोनामिक प्लैनिंग पृ० १२८।

३- इकोनामिक डेवलपमेंट आफ उ०प्र० ।। कृपाशंकर ।। पृ० १६ -१७।

तालिका न० :- १

राज्य एवं प्रतिव्यक्ति आय ॥ १९४८-४९ के स्थिर मूल्य पर ॥

वर्ष	राज्य आय ॥ करोड़ रू० ॥	प्रतिव्यक्ति आय ॥ रूपये ॥
१९५०-५१	१६३२	२५९.६२
१९५५-५६	१७९७	२६५.९५
१९५६-५७	१७७४	२५८.५३
१९५७-५८	१७३८	२४९.२८
१९५८-५९	१८५७	२६२.१०
१९५९-६०	१८६४	२५८.७८
१९६०-६१	१९६८	२६८.७१

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि १९५०-५१ से १९६०-६१ के बीच स्थिर भाव पर राज्य आय में वृद्धि हुई। १९६०-६१ में राज्य आय बढ़कर १९६८ करोड़ रू० हो गयी जबकि १९५०-५१ में १६३२ करोड़ रू० ही थी। इस अवधि के बीच राज्य आय में २०.६ की वृद्धि हुई दूसरे शब्दों में २प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि हुई जो वार्षिक जनसंख्या वृद्धि से थोड़ा अधिक है। इसी अवधि में प्रति व्यक्ति आय जो १९५०-५१ में २५९.६२ रू० थी। १९६०-६१ में बढ़कर २६८.७१ रू० हो गई। प्रति व्यक्ति आय की वार्षिक वृद्धि दर १९५०-५१ और १९६०-६१ के बीच केवल ०.२५ प्रतिशत रही।

इसी अवधि में राष्ट्रीय आय में ४४ प्रतिशत की वृद्धि हुई। ॥ १९४८-४९ के लिए स्थिर भाव पर ॥ और प्रतिव्यक्ति आय में लगभग १८ प्रतिशत की वृद्धि हुई जबकि उ०प्र० के राज्य आय में लगभग २१ प्रतिशत तथा प्रतिव्यक्ति आय में लगभग ३.५ प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार प्रथम दो पंच-वर्षीय योजनाओं में उ०प्र० की तुलना में राष्ट्रीय आय में लगभग दुगुनी की वृद्धि हुई और प्रति-व्यक्ति आय में लगभग ५ गुनी वृद्धि हुई।

तालिका न० : २

उ०प्र० तथा भारत की कुल आय ।। १९६०–६१ के भावों पर ।।

वर्ष	कुल आय करोड़ रु० में		प्रतिशत गत वर्ष की तुलना में वृद्धि		कुल आय सूचकांक १९६०–६१ १००	
	उ०प्र०	भारत	उ०प्र०	भारत	उ०प्र०	भारत
०	१	२	३	४	४	६
१९६०–६१	१९०४	१३२६७	—	—	१००.००	१००.०
१९६१–६२	१९४८	१३७३२	२.३	३.५	१०२.३	१०३.५
१९६२–६३	१९२५	१३९९४	–१.१	१.९	१०१.१	१०५.५
१९६३–६४	१८९३	१४७६९	–१.७	५.५	९९.४	१११.३
१९६४–६५	२१७०	१५८८४	१४.६	७.५	११४.०	११९.७
१९६५–६६	२१०५	१५०८१	–३.०	५.१	११०.६	११३.७
१९६६–६७	१९३०	१५२५७	–८.३	१.२	१०१.४	११५.०
१९६७–६८	२११९	१६६१६	९.८	८.४	१११.३	१२५.२
१९६८–६९	२१३१	१७१८०	०.६	३.४	१११.९	१२९.५
१९७०–७१	२३६८	१९०३५	४.८	४.९	१२९.६	१४३.५
१९७१–७२	२३६८	१९२९९	–४.१	१.४	१२४.४	१४५.५
१९७२–७३	२५०६	१९१३०	५.९	–०.९	१३१.६	१४४.२
१९७३–७४	२३११[0]	२०१४३[0]	–२.५	५.०	१२५.४	१५४.९
१९७४–७५[0]	२३९२[0]	२०९८३	३.५	०.२	१२९.८	१५२.२
१९७५–७६	२५७०[00]	२१९५२[00]	७.५	६.६	१३९.५	१६५.५

संकेत :— 0 अनान्तिम । 00 त्वरित अनुमान ।

स्रोत :— उ०प्र० की आर्थिक समीक्षा, १९७५–७६, पृ० ११, एवं उ०प्र० की आर्थिक समीक्षा १९७६–७७

जनसंख्या में निरन्तर वृद्धि तीव्र गति से होने के कारण प्रतिव्यक्ति आय में देश तथा प्रदेश की उस सीमा तक वृद्धि नहीं हो पाती जिस सीमा तक कुल आय में वृद्धि होती है देश तथा प्रदेश की आय प्रधानत: कृषि पर आधारित होने के कारण यह तो नहीं कहा जा सकता कि वह निरन्तर बढ़ती रहेगी, किन्तु यह अवश्य कहा जा सकता है कि किसी अवधि विशेष में जिस उच्चतम सीमा तक वह पहुंच गयी, अनुकुल परिस्थिति में उससे अधिक भी आगे बढ़ सकती है। प्रदेश की कुल आय वर्ष १९७२-७३ में २५०६ करोड़ रु०तक पहुंच गयी थी और वर्ष १९६०-६१ में वह केवल १९०४ करोड़ रु० थी। इस प्रकार राज्य आय के स्तर में ३२ प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि उक्त अवधि में प्रतिव्यक्ति आय स्तर में ६प्रतिशत से अधिक वृद्धि नहीं हुई। १९७३-७४ में प्रतिकुल परिस्थितियों के कारण कृषि उत्पादन तथा विद्युत संकट से उत्पन्न औद्योगिकउत्पादन में ह्रास के कारण राज्य आय पर अहितकर प्रभाव पड़ा जिसके कारण वर्ष १८७२-७३ की राज्य आय की तुलना में वर्ष १९७३-७४ में लगभग ३ प्रतिशत की कमी हो गई। वर्ष १९७४-७५ में अन्तरिक्प्र तिकुल परिस्थितियों के कारण मुद्रा स्फीति की स्थिति उत्पन्न हो गयी जिसके कारण देश तथा प्रदेश की अर्थव्यवस्था पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा।

इस प्रकार तृतीय पंचवर्षीय योजना काल ।।१९६१-६२ से १९६५-६६ ।। में राज्य आय में ८ प्रतिशत की वृद्धि हुई अर्थात वार्षिक वृद्धि पर केवल १६ प्रतिशत रही। इस अवधि में जनसंख्या के बढ़ने की दर थोड़ी अधिक थी इसलिए इस काल में प्रतिव्यक्ति आय में कमी आयी।

उ०प्र० तथा भारत की प्रतिव्यक्ति आय ।।१९६०-६१ के भावों पर ।।आगे की तालिका से स्पष्ट हो रहा है [1]:-------

---

१- उत्तर-प्रदेश की आर्थिक समीक्षा १९७६-७७।

तालिका न० : 3

उ०प्र० तथा भारत की प्रति व्यक्ति आय ।। १९६०—६१ के भावों पर ।।

वर्ष	प्रति व्यक्ति आय ।। रू० ।।		अन्तराल	स्तंम्भ ।। २ ।। १००
	उ०प्र०	भारत		स्तंम्भ ।। ३ ।।
१	२	३	४	५
१९६०—६१	२५२	३०६	५४	८२.४
१९६१—६२	२५२	३०९	५७	८१.६
१९६२—६३	२४४	३०८	६४	७९.२
१९६३—६४	२३५	३१८	८३	७३.९
१९६४—६५	२६६	३३५	६९	७९.४
१९६५—६६	२५२	३११	५९	८१.०
१९६६—६७	२२७	३०७	८०	७३.९
१९६७—६८	२४३	३२५	८२	७४.८
१९६८—६९	२४१	३२७	८६	७३.७
१९६९—७०	२६३	३४१	७८	७७.१
१९७०—७१	२६९	३५३ ^{0}	८४	७६.२
१९७१—७२	२५२	३४९ ^{0}	९७	७२.२
१९७२—७३	२६१	३३७ ^{0}	७६	७७.४
१९७३—७४	२५० ^{0}	३४९ ^{0}	९९	७१.६
१९७४—७५	२५४ ^{0}	३४३ ^{0}	८९	७४.१
१९७५—७६	२६८ ^{00}	३६६ ^{00}	९८	७३.२

संकेत :—— 0 अनन्तिम अनुमान, 0.0 त्वरित अनुमान ।

पिछली तालिका से स्पष्ट है कि उत्तरप्रदेश की प्रतिव्यक्ति आय भारत की प्रतिव्यक्ति आय की अपेक्षा सदैव कम रही । वर्ष १९६०-६१ में प्रदेश की प्रतिव्यक्ति आय भारत की प्रतिव्यक्ति आय की ८२.४ प्रतिशत थी । उ०प्र० तथा भारत की आय का यह अन्तर कम न होकर अधिक ही हुआ और सबसे अधिक अन्तर वर्ष १९७३-७४ में था, जब प्रदेश की प्रतिव्यक्ति आय देश की प्रतिव्यक्ति आय की ७१.६ प्रतिशत रही । १९६०-७६ की अवधि में प्रदेश की प्रतिव्यक्ति आय २३५ रू० और २६९ रू० के बीच घटती-बढ़ती रही । उक्त अवधि में देश की न्यूनतम अधिकतम प्रतिव्यक्ति आय ३०६ रू० तथा ३६६ रू० रही और इस प्रकार न्यूनतम प्रतिव्यक्ति आय से अधिकतम प्रतिव्यक्ति आय केवल लगभग २० प्रतिशत अधिक रही, जबकि प्रदेश में यह प्रतिशत १५.० था । तृतिय पंचवर्षीय योजना के अन्त में उस समय ।।१९६५-६६ ।। के मूल्यों के अधार पर उ०प्र० की प्रतिव्यक्ति आय ३६५ रू० पायी गयी थी, जबकि प्रतिव्यक्ति राष्ट्रीय आय उस समय ।।१९६५-६६ ।। में ४११ रू० थी।[1] इस प्रकार तृतीय योजना के समय उस समय के भावों के अधार पर प्रतिव्यक्ति राष्ट्रीय आय उ०प्र० की प्रतिव्यक्ति आय से ५४ रू० अधिक थी ।

इस प्रकार यह दिखायी पड़ता है कि उ०प्र० आर्थिक दौड़ में पीछे छूटता चला जा रहा है और इस समय देश में इसकी गति सबसे मन्द है, जबकि पंचवर्षीय योजनाओं के प्रारम्भ होने के पूर्व प्रतिव्यक्ति आय के क्षेत्र में उ०-प्र० का पांचवा स्थान था । और अब यह उड़ीसा, राजस्थान, बिहार, और जम्मू-कश्मीर को छोड़कर सबसे नीचे है ।[2]

आगे की तालिका में प्रदेश एवं भारत की प्रति व्यक्ति आय ।।१९७०-७१ के भावों पर ।। स्पष्ट होता है :-------

---

१- इकोनामिक सर्वे, १९६८-६९,

२- इकोनामिक डेवलपमेंट आफ उ० प्र० ।। कृपाशंकर ।। पृ० १९ ।

तालिका न० : ४

उ०प्र० एवं भारत की प्रतिव्यक्ति आय ।। १९७०-७१ के भावों पर ।।[१]

वर्ष	उत्तर-प्रदेश		भारत		
	प्रतिव्यक्ति आय ।। रु० ।।	सूचकांक ।। १९७०-७१ =१००.० ।।	प्रतिव्यक्ति आय ।। रु० ।।	सूचकांक ।। १९७०-७१ =१००.० ।।	भारत की अपेक्षा प्रदेश की प्रति-व्यक्ति आय में न्यूनता ।। प्रतिशत ।।
१	२	३	४	५	५
१९७०-७१	४८६	१००.०	६३३	१००.०	२३.२
१९७३-७४	४३९	९०.३	६२१	९८.१	२९.३
१९७८-७९ ।। अ ।।	५३०	१०९.१	७१५	११३.०	२५.९
१९७९-८० ।। अ ।।	४३६	८९.७	६६१	१०४.४	३४.०
१९८०-८१ ।। ख ।।	५२६	१०८.२	६९६	११०.०	२४.४

अ-अनन्तिम अनुमान, ख त्वरित अनुमान ,

उपरोक्त तालिका से विदित है कि वर्ष १९७०-७१ में राज्य की प्रति व्यक्ति आय ।। ४८६ रु० ।। उस वर्ष राष्ट्रीय प्रतिव्यक्ति आय ।। ६३३रु० ।। की अपेक्षा २३.२ प्रतिशत कम थी । चौथी योजना के अन्तिम वर्ष ।। १९७३-७४ ।। में १९७०-७१ की तुलना में प्रतिव्यक्ति राज्य आय में ९.७ प्रतिशत की गिरावट के समक्ष प्रतिव्यक्ति राष्ट्रीय आय में मात्र १.९ प्रतिशत की गिरावट रही । परिणामतः वर्ष १९७३-७४ में प्रतिव्यक्ति राज्य आय ।। ४३९ ।। प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय आय की तुलना में २९.३ प्रतिशत कम हो गई । पांचवी योजनावधि में राज्य की अर्थव्यवस्था में अपेक्षाकृत अधिक प्रगति के फलस्वरूप वर्ष १९७८-७९ की प्रतिव्यक्ति राज्य आय ।। ५३० रु० ।। जो वर्ष १९७३ - ७४ में प्रति - व्यक्ति राष्ट्रीय आय की अपेक्षा २९.३ प्रतिशत कम थी वह वर्ष १९७८-७९ में २५.९ प्रतिशत कम रही

१- स्रोत : अर्थ एवं संख्या प्रभाग एवं केन्द्रीय सांख्यकीय संगठन भारत सरकार

वर्ष १९७९-८० में अभूतपूर्व सूखे के कारण प्रदेश की अर्थव्यवस्था पर काफी विपरीत प्रभाव पड़ा और इस वर्ष प्रतिव्यक्ति राज्य आय घटकर ४३६ रु० के निम्नतम स्तर पर पहुंच गई, जो वर्ष १९७८-७९ की तुलना में १७.७ प्रतिशत कम रही जबकि सम्बादी अवधि में प्रतिव्यक्ति राष्ट्रीय आय में केवल ७.६ प्रतिशत की गिरावट आई परिणामत: वर्ष १९७९-८० में प्रतिव्यक्ति राज्य आय प्रतिव्यक्ति राष्ट्रीय आय की अपेक्षा ३४.० प्रतिशत हो गई वर्ष १९८०-८१ में परिस्थितियों के कुछ अनुकूल होने के कारण प्रतिव्यक्ति अनुमानित राज्य आय ।।५२६ रु०।। गत वर्ष की अपेक्षा २०.६ प्रतिशत अधिक रही किन्तु १९७८-७९ की तुलना में ०.८ प्रतिशत कम रही इसके विपरीत राष्ट्रीय प्रतिव्यक्ति आय वर्ष १९८०-८१ में ६९६ रु० रही जो वर्ष १९७९-८० की तुलना में ५.३ प्रतिशत अधिक रही परन्तु वर्ष १९७८-७९ की तुलना में २.७ प्रतिशत कम रही ।

तालिका न०: ५

उ०प्र० तथा भारत की कुल आय के अनुमान ।।१९७०-७१ के भावों पर ।।[1]

वर्ष	उत्तर प्रदेश		भारत		राष्ट्रीय आय में राज्य आय का शतांश
	कुल आय ।।करोड़ रु०।।	सूचकांक ।।१९७०-७१ -१००।।	कुल आय ।।करोड़ रु०।।	सूचकांक ।।१९७०-७१ -१००।।	
१	२	३	४	५	६
१९७०-७१	४२५६	१००.०	३४२३५	१००.०	१२.४
१९७३-७४	४०५६	९५.४	३५९६७	१०५.१	११.३
१९७८-७९।।अ।।	५३७२	१२६.२	४६३०६	१३५.३	११.६
१९७९-८०।।अ।।	४४९८	१०५.७	४३८२२	१२८.०	१०.३
१९८०-८१।।त्व।।	५५२३	१२९.८	४७२११	१३७.९	११.७

अ- अनन्तिम अनुमान, त्व - त्वरित अनुमान ।

१- स्रोत - अर्थ एवं संख्या प्रभाग एवं केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन भारत सरकार

उ०प्र० की आर्थिक समीक्षा १९८१-८२ पृ० ५ ।

पिछली तालिका के अनुसार प्रदेश की कुल राज्य आय ।।१९७०-७१ ।। के भावों पर जो कि वर्ष १९७०-७१ में ४२५६ करोड़ रु० थी चौथी योजना के अन्तिम वर्ष में ४.६ प्रतिशत घटकर ४०५९ करोड़ रु० हो गयी । जबकि इसी अवधि में राष्ट्रीय आय में ५.१ प्रतिशत की वृद्धि हुई, परिणामत: १९७३-७४ में राष्ट्रीय आय में प्रदेश का योगदान वर्ष० १९७०-७१ के १२.४ प्रतिशत से घटकर ११.३ प्रतिशत रह गया पांचवीं योजनावधि में प्रदेश के आर्थिक विकास की गति राष्ट्रीय औसत की तुलना में कुछ अधिक रही जिस कारण पांचवी योजनावधि के अन्तिम वर्ष ।।१९७८-७९ ।। में भारत की कुल आय में राज्य आय का कुल योगदान वर्ष १९७३-७४ के ११.३ प्रतिशत से बढ़कर ११.६ प्रतिशत हो गया । यद्यपि वर्ष १९७९-८० में सम्पूर्ण भारत में सूखे का प्रभाव पड़ा किन्तु सम्पूर्ण देश की अपेक्षा प्रदेश में सूखे का अधिक प्रभाव पड़ा । इसके फलस्वरूप वर्ष १९७९-८० में गत वर्ष की अपेक्षा जहां राष्ट्रीय आय में केवल लगभग ५.४ प्रतिशत की गिरावट आयी वहीं राज्य आय में १६.३ प्रतिशत की गिरावट आई और वर्ष १९७९-८० की कुल राष्ट्रीय आय में राज्य आय का अंश ११.६ प्रतिशत से घटकर १०.३ प्रतिशत रह गया । वर्ष १९८०-८१ के लिए उपलब्ध त्वरित अनुमानों के अनुसार प्रदेश की कुल राज्य आय ५५२३ करोड़ रु० पूर्वगामी वर्ष की अपेक्षा लगभग २२.८ प्रतिशत तथा वर्ष १९७८-७९ की कुल राज्य आय की तुलना में २.८ प्रतिशत अधिक रही, जबकि राष्ट्रीय आय में सम्वादी अवधि में वृद्धि क्रमश: ७.७ प्रतिशत तथा २.० प्रतिशत ही रही ।

नीचे की तालिका में उत्तर-प्रदेश में औद्योगिक स्रोतानुसार राज्य आय का प्रतिशत विवरण दिखाया गया है [1]:-

---

१- सांख्यिकीय डायरी, उत्तर-प्रदेश, १९८३, अर्थ एवं संख्या प्रभाग, राज्य नियोजन संस्थान, उत्तर-प्रदेश, पृ० ५० ।

तालिका नं०: ६

आद्योगिक स्रोतानुसार राज्य आय का प्रतिशत विवरण [१]

।। १९७०-७१ के भावों पर ।।

वर्ष	कृषि एवं पुशु पालन	समस्त प्राथमिक उपखण्ड	विनिर्माण	समस्त माध्यमिक उपखण्ड	अन्य उपखण्ड
१	२	३	४	५	६
१९७०-७१	५८.४	६०.२	८.९	१४.९	२४.९
१९७३-७४	५४.६	५६.५	९.२	१६.५	२७.०
१९७४-७५	५६.५	५८.२	८.८	१५.१	२६.७
१९७५-७६	५७.०	५८.५	९.३	१५.४	२६.१
१९७६-७७	५६.०	५७.४	९.६	१६.१	२६.५
१९७७-७८	५६.१	५७.५	१०.१	१६.८	२५.८
१९७८-७९	५४.५	५५.८	११.०	१७.८	२६.४
१९७९-८०	४६.७	४८.३	१२.३	२१.४	३०.३
१९८०-८१ +	५३.३	५४.७	१०.९	१९.०	२६.३
१९८१-८२ +	५१.७	५३.१	११.६	२०.१	२६.८
१९८२-८३ ++	५१.०	५२.४	१२.२	२०.७	२६.९

+ अनन्तिम अनुमान, ++ त्वरित अनुमान

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि आय के विभिन्न खण्डों में बहुत उतार-चढ़ाव है। राज्य आय के कृषि तथा पशु पालन से लगभग ५५ प्रतिशत आय होती है जो १९७०-७१ से १९८२-८३ के बीच ५८.४ से ५१.० प्रतिशत के मध्य कम अधिक होती रही। कृषि एवं पुशु पालन से आय इस बात पर निर्भर करती है कि मौसम कृषि के अनुरूप रहा या नहीं क्योंकि प्रदेशीय कृषि पूर्णरूप से प्रकृति पर निर्भर करती है। प्रदेश में कृषि एवं तत्सम्बन्धी उद्योगों से कुल आय में गिरावट आ रही है और बिनिर्माण

१- सांख्यिकीय डायरी, उ०प्र०, १९८३, अर्थ एवं संख्या प्रभाग, राज्य नियोजन संस्थान, उ०प्र०, पृ० ५०।

तथा समस्त माध्यमिक उपखण्ड तथा अन्य उपखण्डों की आय में क्रमिक थोड़ी वृद्धि हो रही है। इसी प्रकार प्रचलित भावों पर राज्य आय का प्रतिशत विवरण निम्नवत् है :------

तालिका न० : ७

औद्योगिक स्रोतानुसार राज्य आय का प्रतिशत विवरण [१]

।। प्रचलित भावों पर ।।

वर्ष	कृषि एवं पशु पालन	समस्त प्राथमिक उपखण्ड	विनिर्माण	समस्त माध्यमिक उपखण्ड	अन्य उपखण्ड
१	२	३	४	५	६
१९७०-७१	५८.४	६०.२	८.९	१४.६	२४.९
१९७३-७४	६०.९	६२.७	८.४	१४.१	२३.२
१९७४-७५	५८.५	६०.०	८.७	१४.१	२५.९
१९७५-७६	५२.४	५४.०	९.७	१६.३	२९.७
१९७६-७७	५३.१	५४.५	९.३	१५.७	२९.८
१९७७-७८	५१.५	५३.०	९.९	१६.१	३०.९
१९७८-७९	४८.५	५०.२	११.२	१८.०	३१.८
१९७९-८०	४३.६	४५.२	१२.४	२०.४	३४.४
१९८०-८१ +	४९.१	५०.६	११.८	१८.८	३०.६
१९८१-८२ +	४३.२	४५.२	१२.७	२०.०	३४.८
१९८२-८३ ++	४२.८	४४.९	१२.५	१९.५	३५.६

+ अनन्तिम अनुमान, ++ त्वरित अनुमान।

१- सांख्यिकीय डायरी उ०प्र० १९८३- अर्थ एवं संख्या प्रभाग, राज्य नियोजन संस्थान, उ०प्र०, पृ० सं० ५१।

तालिका न० : ८

भारत के विभिन्न राज्यों में प्रतिव्यक्ति अनुमानित आय[१]

॥ प्रचलित भावों पर ॥

॥ रुपया ॥

राज्य	१९७८-७९	१९८०-८१	१९८१-८२
१	२	३	४
१- आन्ध्र प्रदेश	१०८३	१३१३ [0]	१५३६ [0]
२- आसाम	१००७ [0]	१२२१ [0]	१३८० ‡
३- बिहार	७७३	९२७ [0]	९९५ ⊦
४- गुजरात	१५५६ [0]	१८६६ [0]	२२११ ⊦
५- हिमाचल प्रदेश	१२९५ [0]	१५२३ [0]	१६५६ ‡
६- हरियाणा	१८९५	२३३५ [0]	१५७५ ‡
७- कर्नाटक	११३६	१३१४ [ए]	१४५८ ⊦
८- केरल	१०९५	१३८२ [0]	१४४८ ⊦
९- मध्य प्रदेश	८९८	११३४ [0]	१२१७ ⊦
१०-महाराष्ट्र	१८०० [0]	२२९४ [0]	२५११ ⊦
११-उड़ीसा	८६७ [0]	११४७ ⊦	0 0
१२-पंजाब	२३५१	२७६८ [0]	३१२१ ‡
१३-राजस्थान	११५० [0]	१२७७ [0]	१४१७ ‡
१४-तमिलनाडु	१०७० [0]	११९७ ⊦	१३७३ ‡
१५-उत्तर-प्रदेश	९३५	१२८० [0]	१३१३ [0]
१६-पश्चिम बंगाल	१३०४ [0]	१५५३ [ए]	१५९५ ‡
भारत	१२५० [0]	१५५९ [0]	१७५८ [0]

⊦ प्रारम्भिक अनुमान, ‡ त्वरित अनुमान, 0 अन्तिम अनुमान, ए आंशिक संशोधन, 00 अप्राप्त ।

१- स्रोत- सम्बंधित राज्यों के सांख्यिकीय संगठन,

सांख्यिकीय डायरी, उ०प्र० १९८३, अर्थ एवं संख्या प्रभाग, राज्य नियोजन संस्थान उ०प्र० पृ० ६१-६२ ।

पिछले तालिका के अनुसार वर्ष १९८१-८२ के आधार पर गुजरात, महाराष्ट्र, पंजाब की प्रतिव्यक्ति आय राष्ट्रीय प्रतिव्यक्ति आय से अधिक है। इसके अतिरिक्त अन्य राज्यों की प्रतिव्यक्ति आय राष्ट्रीय प्रतिव्यक्ति आय से कम है। यद्यपि उ0प्र0 की प्रति व्यक्ति आय बिहार मध्य-प्रदेश राज्यों से अधिक है, किन्तु जनाधिक्य के कारण यदि वृद्धि दर तेज न की गयी तो लोगों की जीवन स्तर अच्छा नहीं बनाया जा सकता।

<u>उ0प्र0 में राज्य एवं प्रतिव्यक्ति आय का भविष्य</u> :---- वर्ष १९८१-८२ के आधार पर उ0प्र0 में प्रतिव्यक्ति आय १३१३ रू0 अनुमानित की गयी, जबकि सम्पूर्ण भारत की औसत प्रतिव्यक्ति आय १७५८ रू0 आंकी गयी है। इस प्रकार आधार वर्ष १९८१-८२ में राज्य एवं राष्ट्रीय आय में ४४५ रू0 का अन्तर था। छठी पंचवर्षीय योजना के अन्त में ।।१९८०-८५।। राष्ट्रीय आय विकास की दर का लक्ष्य ५ प्रतिशत रखा गया है। प्रतिव्यक्ति आय के इस स्तर तक पहुंचने के लिए राज्य में विकास की दर १० प्रतिशत रखनी होगी। प्लानिंग कमीशन के निर्देशानुसार यह स्पष्ट होता है कि सातवीं पंचवर्षीय योजना में राष्ट्रीय विकास की दर ६ प्रतिशत हो सकेगी। इस विकास की दर के साथ वर्ष १९८९-९० के अन्त तक राष्ट्रीय प्रतिव्यक्ति आय १९७४ रू0 हो जायेगी इस प्रकार वर्ष १९८९-९० के अन्त तक इस प्रतिव्यक्ति आय के स्तर तक पहुंचने के लिए उ0प्र0 की अर्थव्यवस्था में छठी एवं सातवीं पंचवर्षीय योजना में विकास की दर ८ प्रतिशत रखनी होगी। देखना यह है कि क्या यह सम्भव हो पाता है या नहीं।

उ0प्र0 में प्रतिव्यक्ति आय राष्ट्रीय प्रतिव्यक्ति आय के समकक्ष लाने के लिए १९८०-८५ के बीच कृषि, सिंचाई, औद्योगिक तथा अन्य क्षेत्र में ६ प्रतिशत की दर से वृद्धि करना होगा इस प्रकार यदि राज्य विकास दर ६प्रतिशत तथा राष्ट्रीय विकास की दर ५ प्रतिशत रही तो छठी पंचवर्षीय योजना के अन्त में राज्य प्रतिव्यक्ति तथा राष्ट्रीय प्रतिव्यक्ति आय में २९३ रू0 का अन्तर रह जायेगा अर्थात राज्य प्रतिव्यक्ति आय ।।-१८.२।। प्रतिशत से पीछे रहेगी, जैसा कि आगे की तालिका से स्पष्ट है :[1]------

---

१- स्रोत :- सिक्स्थ फाइव ईयर प्लान ।।१९८०-८५।। रिव्यू वाल्यूम - १ । गवर्नमेंट आफ उ0 प्र0, प्लानिंग डिपार्टमेंट, पृ0 ८८।

तालिका नः- ९ः

मद	उ0प्र0		भारत	
	१९७९-८0	१९८४-८५	१९७९-८0	१९८४-८५
१- कुल आय ।। करोड़ रू0 ।।	११000	१४७२0	९0११७	११५0१६
२- प्रतिव्यक्ति आय ।। रू0।।	१0७0	१३१३	१३८0	१६0६
३- राज्य प्रतिव्यक्ति और राष्ट्रीय प्रतिव्यक्ति आय में अन्तर --	३१0	२९३	--	--
४- प्रतिशत अन्तर --	२२.५	-१८.२	--	--

उपभोक्ता व्यय :---- राज्य सरकार द्वारा किये गये प्रतीक सर्वेक्षणों पर आधारित अनुमानों के अनुसार वर्ष १९७0-७१ में राज्य के ग्रामीण क्षेत्र में प्रतिव्यक्ति प्रतिमास औसत व्यय ३५.00 रू0 के लगभग था । उसी वर्ष नगरीय क्षेत्र में उपभोक्ता व्यय लगभग ४४.00 रू0 था । स्पष्ट है कि यह ग्रामीण क्षेत्र की तुलना में अधिक था । ग्रामीण तथा नगरीय क्षेत्रों में उपभोक्ता व्यय में अन्तर उत्तरोत्तर कम होता जा रहा है । यह धारणा इस तत्व पर आश्रित है कि वर्ष १९५६-५७ में राज्य के ग्रामीण क्षेत्र में प्रतिव्यक्ति उपभोक्ता व्यय नगरीय क्षेत्र के उपभोक्ता व्यय का केवल ६0 प्रतिशत था जो वर्ष १९६४-६५ में बढ़कर ८८ प्रतिशत हो गया तथा वर्ष १९६४-७१ की अवधि में इस प्रतिशत में ८0 और ८८ के बीच उतार चढ़ाव होता रहा ।

राज्य व्यय :---- प्रदेश की वार्षिक योजना १९८२-८३ हेतु स्वीकृत परिव्यय १२0२ करोड़ रू0 गत वर्ष के योजना परिव्यय ।। १0८५ करोड़ रू0 ।। से १0.८ प्रतिशत अधिक था । वर्ष १९८१-८२ में स्वीकृत परिव्यय १0८५ करोड़ रू0 के विपरित योजना व्यय १११८.२0 करोड़ रू0 रहा जबकि वर्ष १९८२-८३ में योजना व्यय १२१२.१५ करोड़ रू0 होने का अनुमान है । इस प्रकार १९८२-८३ का संभावित योजना व्यय गत वर्ष की अपेक्षा केवल ८.४ प्रतिशत ही अधिक होगा ।

१- उत्तर-प्रदेश, सूचना एवं जनसंपर्क विभाग, उत्तर-प्रदेश ।

वर्ष १९८२-८३ में भी प्रदेश की कृषिगत अर्थव्यवस्था के संतुलित विकास के साथ-साथ जनसाधारण के जीवन-स्तर को सुधारने के प्रयास किये जा रहे है। वर्ष १९८१-८२ हुके हुल स्वीकृत योजना परिव्यय के १५.६ प्रतिशत अंश के विपरीत इस वर्ष की कुलयोजना व्यय का १६.७ प्रतिशत अंश कृषि एवं संवर्गीय सेवाओं पर व्यय हुआ। वर्ष १९८२-८३ में इन सेवाओं को और अधिक महत्त्व प्रदान करते हुए कुल स्वीकृत परिव्यय के १९.१ प्रतिशत व्यय होने का अनुमान है। इसी प्रकार जन साधारण को अपेक्षाकृत अच्छे स्तर की अधिक सामाजिक सेवाये सुलभकराने के प्रयासों के परिणाम स्वरूप वर्ष १९८१-८२ के कुल योजना व्यय का १६.४ प्रतिशत अंशइन सेवाओं पर व्यय किया गया योजना व्यय में वार्ष १९८२-८३ कुल संभावित योजना व्यय में सामाजिक सेवाओं का अंश बढ़कर १६.८ प्रतिशत रहने की आशा है। वर्ष १९८२-८३ में परिवहन एवं संचार सेवा पर योजना के कुल संभावित व्यय का ९.३ प्रतिशत भाग व्यय किये जाने की आशा है। यह प्रतिशत अंश सम्पूर्ण छठी योजना के लिए निर्धारित अंश ८.९ प्रतिशत से तो अधिक रहेगा, किन्तु गत वर्ष के योजना व्यय ।।९.५ प्रतिशत ।। से कम रहेगा वर्ष १९८२-८३ के कुल सम्भावित व्यय का क्रमशः ४८.१ प्रतिशत जल एवं विद्युत, ५.२ प्रतिशत उद्योग एवं खनिकर्म मद पर व्यय होने की आशा है। इन मदों पर उक्त प्रतिशत व्यय इनमदों पर गत वर्ष के कुल योजना व्यय के क्रमशः ४९.७ प्रतिशत व ६.३ प्रतिशत तक साथ-साथ सम्पूर्ण छठी योजना के लिए निर्धारित क्रमशः ५३.८ प्रतिशत व ५.८ प्रतिशत स्वीकृत परिव्यय से भी कम रहने की आशा है

तालिका नं०: १०

उ०प्र० में स्वीकृत योजना परिव्यय एवं संभावित व्यय का मदवार प्रतिशत[१]

	छठी योजना १९८०-८५	१९८१-८२		१९८२-८३	
	स्वीकृत परिव्यय	स्वीकृत परिव्यय	व्यय	स्वीकृत परिव्यय	संभावित व्यय
१- कृषि एवं सम्वर्गीय	१६.६	१५.६	१६.७	१९.१	१९.३
२- सहकारिता	०.९	१.०	१.१	०.८	०.८
३- जल एवं विद्युत	५३.८	५०.९	४९.७	४८.५	४८.१
४- उद्योग एवं खनिकर्म	५.४	५.८	६.३	४.९	५.२
५- परिवहन एवं संचार	८.९	९.९	९.५	९.४	९.३
६- सामाजिक एवं सामुदायिक सेवाये	१४.१	१६.२	१६.४	१५.५	१६.८
७- अन्य	०.३	०.६	०.३	०.४	०.५
समस्त	१००.०	१००.०	१००.०	१००.०	१००.०
	(६२००.०)	(१०८५.०)	(१११८.२०)	(१२०२.०)	(१२१२.१५)

नोट -कोष्ठ में दी गई सूचना करोड़ रु०में है।

१- स्रोत-नियोजन विभाग, उ०प्र०।।उ०प्र० की आर्थिक समीक्षा, १९८२-८३।

वर्ष १९८२-८३ में प्रदेश में प्रथम बार नियोजन प्रक्रिया में विकेन्द्रीकरण का सूत्रपात किया गया। इसके अन्तर्गत प्रदेश के योजना परिव्यय का ३० प्रतिशत अंश जिला सेक्टर हेतु आवंटित किया गया। जनपद की जनसंख्या, अनुसूचित जाति एवं जनजाति की जनसंख्या, कृषि, उद्योग, सड़क, ग्रामीण विद्युतीकरण, अस्पताल में शैयाओं की संख्या जैसे मानकों के आधार पर विभिन्न जनपदों हेतु आंवटन निर्धारित किया गया। जनपद स्तर पर स्थानीय आवश्यकतानुसार उपयोगी योजनायें निर्मित एवं कार्यान्वित की जाती है। इस क्रम में यह उल्लेखनीय है कि जिला सेक्टर अंश ।।वित्तीय।। पर राज्य स्तरीय संबंधित विभागों का हस्तक्षेप नहीं होता है। इस प्रक्रिया के अन्तर्गत प्रदेश सरकार द्वारा उठाया गया यह कदम जनपदों की विशिष्ट समस्याओं के समाधान, उपलब्ध संसाधनों के विवेक पूर्ण एवं अधिकतम उपयोग तथा क्षेत्रीय असन्तुलन को कम करने में सहायक सिद्ध होगा।

सर्वसाधारण को न्यूनतम स्तर की शिक्षा, चिकित्सा, स्वास्थ्य, जल संपूर्ति जैसी कतिपय सेवायें सुलभ कराने के साथ-साथ ग्रामीण अंचल में संतुलित एवं एकीकृत विकास सुनिश्चित करने के उद्देश्य से न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम चलाया जा रहा है। छठीं योजना के कुल स्वीकृत परिव्यय का लगभग १३.३ प्रतिशत अंश ।।८२६.२५ करोड़ रु०।। न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रमों हेतु निर्धारित किया गया है। वर्ष १९८२-८३ में इस कार्यक्रम के कार्यान्वयन हेतु १६३.२६ करोड़ रु० की स्वीकृति परिव्यय के विपरित १६५.८८ करोड़ रु० व्यय होने की सम्भावना है। जो गत वर्ष के व्यय होने के अपेक्षा लगभग २९.४ प्रतिशत अधिक है। इसपरिव्यय से ८८४ ग्रामों एवं ८०७ हरिजन-बस्तियों का विद्युतीकरण, ३५३७ निजी नलकूपों का उर्जीकरण, १७८५ कि०मी० ग्रामीण मार्गों के निर्माण की आशा है। इसके अतिरिक्त समाज के कमजोर वर्ग के विद्यार्थियों हेतु निःशुल्क पाठ्य-पुस्तकों के वितरण, यूनिफार्म, स्टाई पेन्ड, छात्रवृत्ति, मध्याह्न के या भोजन की व्यवस्था द्वारा वर्ष १९८२-८३ में ६-११ वर्ष की आयु वर्ग ।।कक्षा१-५तक।। १०५ लाख विद्यार्थियों तथा ११-१४ आयु वर्ग के ।।कक्षा६से ८ में।। ३२.७६ लाख विद्यार्थियों की नियमित उपस्थिति को बनाये रखने का भी प्रयास जारी है। ६.५१ लाख प्रौढ़ों को शिक्षित बनाये जाने की सम्भावना है। पेय जल की व्यवस्था हेतु ४२०० कुओं, ७८० हेण्डपम्पों, ४०० डिग्गियों के निर्माण किये जाने की सम्भावना है।[1]

१- उ०प्र०की आर्थिक समीक्षा, १९८२-८३, अर्थ एवं संख्या प्रभाग, राज्य नियोजन संस्थान, उ०प्र०, लखनऊ, पृ० - ८।

अध्याय सात

आर्थिक विकास एवं रोजगार की सम्भावनाऐं

आर्थिक विकास एवं रोजगार

रोजगार तथा आर्थिक वृद्धि के मध्य सामन्जस्य अथवा विरोधाभास की स्थिति का अध्ययन काफी महत्व का है। यदि आर्थिक वृद्धि का रोजगार से कोई विरोधाभास नहीं है तब तो बिना किसी संशय के आर्थिक वृद्धि के साथ-साथ उच्च रोजगार को प्राथमिकता दी जा सकती है। किन्तु इन दोनों के मध्य किसी प्रकार से विरोधाभास होने की स्थिति में अतिरिक्त रोजगार प्राप्त करने के उद्देश्य की पूर्ति के लिए कुछ सीमा तक आर्थिक विकास के उद्देश्यों का त्याग करना पड़ेगा। यह बात ध्यान देने योग्य है कि अतिरिक्त रोजगार को प्राप्त करने के लिए आर्थिक वृद्धि का त्याग एक निश्चित सीमा के अन्दर ही किया जा सकता है क्योंकि आर्थिक वृद्धि की कम से कम उतनी मात्रा तो आवश्यक है जिससे जनसंख्या वृद्धि तथा निर्धनता को नियंत्रित रखा जा सके। नियोजन के आरम्भिक वर्षों में रोजगार वृद्धि के उपायों पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया। काफी समय तो रोजगार सृजन को आर्थिक विकास के परिणाम स्वरूप माना जाता रहा अर्थात यह विश्वास होता रहा कि आर्थिक विकास के परिणाम स्वरूप रोजगार में स्वतः वृद्धि होगी।[1] इसी प्रकार द्वितीय योजना जिसमें लाभदायक रोजगार अवसरों के सृजन पर अपेक्षाकृत अधिक ध्यान दिया गया था। इसमें भी इस बात का उल्लेख है कि विशेषकर हमारे जैसे अर्द्ध विकसित देशों में बेरोजगारी की समस्या को गहन विकास के उपरान्त ही दूर किया जा सकता है[2] तृतीय योजना में भी पिछली योजनाओं जैसी धारणा थी।[3] चौथी तथा पांचवीं एवं बाद की योजनाओं में भी उद्देश्यों में अस्पष्टता होने के कारण समस्याओं पर पर्याप्त ध्यान हीनहीं दिया गया।

यद्यपि यह सत्य है कि आर्थिक विकास के फलस्वरूप रोजगार के अवसरों में वृद्धि होगी किन्तु इस वृद्धि में वर्तमान तथा भविष्य के समस्त बेरोजगारों को नहीं खपाया जा सकता है। आयोजनों की एक त्रुटि परियोजनाओं के चयन से सम्बन्धित है। कुछ विशेष उद्योगों को छोड़ कर जहां पूंजी प्रधान तकनीकी को अपनाए बिना काम नहीं चल सकता था, अन्य अनेक उद्योगों के सम्बन्ध में वैकल्पिक उत्पादन-तकनीकों की चयन पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया। विदेशी नकल कर कुछ ऐसी उत्पादन

१- गवर्नमेंट आफ इंडिया, प्लानिंग कमीशन: द फर्स्ट फाइव ईयर प्लान, १९५२, पृ० २५।

२- गवर्नमेंट आफ इंडिया, प्लानिंग कमीशन: द सेकन्ड फाइव ईयर प्लान, १९५६, पृ० १०९।

३- 'फुल यूटिलाइजेशन आफ मैनपावर रिसोर्सेज कैन वी एचिभड् आफटर ए कन्सीडरेबुल पिरियड आफ डेवलपमेंट', थर्ड फाइव ईयर प्लान, १९६२, चेपट्र, पृ० १५४।

विधियों को अधिमान्य दी जाती रही है जो कम श्रम प्रधान थी । इसी प्रकार आरम्भिक चरणों में सामुदायिक विकास कार्यक्रम तथा चौथी योजनाकाल में शुरू किये गये थोड़े से सार्वजनिक निर्माण कार्यों को छोड़कर ग्रामीण क्षेत्रों में अतिरिक्त श्रम परिसम्पत्तियों के निर्माण हेतु कोई ठोस, सुसंगत तथा व्यापक कार्यक्रमों की सहायता नहीं ली गई ।

प्रदेश के आयोजनों में रोजगार की दृष्टि से विभिन्न उत्पादन क्षेत्रों तथा कौशल के सम्बन्ध में जनशक्ति की आवश्यकताओं तथा पूर्तियों में दोषपूर्ण सन्तुलन रहा है । यह पूर्ति कुछ क्षेत्रों में आवश्यकता से अधिक है तो कुछ में आवश्यकता से कम । समुचित जनशक्ति के आयोजनों के द्वारा इस अ असन्तुलन को काफी हद तक दूर किया जा सकता है किन्तु ऐसा नहीं किया गया। एक सफल रोजगार नियोजन के द्वारा आर्थिक वृद्धि में सहायत प्राप्त हो सकती है किन्तु वास्तविक रूप में आर्थिक वृद्धि का स्वप्न तब तक साकार नहीं हो सकता जब तक अर्थव्यवस्था में अनेक कारणों से आर्थिक विपन्नता की समस्या बनी हुई है तथा निर्धनता के कुचक्र में फंसे लोग अपनी मूलभूत न्यूनतम आवश्यकताओं को भी पू पूर्ण करने में असमर्थ है । वर्तमान समय में यद्यपि राष्ट्रीय तथा प्रान्तीय स्तर पर इस समस्या को दूर करने के लिए प्रयास किये जा रहे हैं किन्तु इन प्रयासों के उचित परिणाम अभी तक सामने नहीं आ स सके है । यही कारण है कि आज भी उ0प्र0 में जनसंख्या का एक बड़ा भाग निर्धनता रेखा के नीचे बुरी दशा में अपना जीवन यापन करने के लिए विवश है ।

अतः उत्तर-प्रदेश में आर्थिक विकास की दृष्टि से उपयुक्त रोजगार नीति की नितान्त आवश आवश्यकता है, जिसके द्वारा इन समस्याओं के समाधान में सहायत प्राप्त हो सके । रोजगार की अव अवधारणा अंतरंग रूप से निर्धनता तथा असमानता आदि समस्याओं से सम्बन्धित है । अतः इस दृष्टि से केवल रोजगार अवसरों की अधिक संख्या व अपेक्षाकृत अधिक अच्छे रोजगार अवसरों के सृजन की व्यवस्था करना ही पर्याप्त नहीं है वास्तव में रोजगार के ऐसे अवसरों को उपलब्ध कराने की आ आवश्यकता है जिसेस समाज के कमजोर, पिछड़े व निर्धन वर्ग को कार्य प्राप्त हो तथा उनकी आर्थिक दशा में सुधार आयें, जिससे वे कम से कम अपनी न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति करने में समर्थ हो सके।

आई0 एल0 ओ0 ने विश्व रोजगार कार्यक्रम के अन्तर्गत अधिक उत्पादक तथा आवश्यकतानुसार रोजगार सृजन के उपायो पर प्रकाश डाला है । जिसके अनुसार रोजगार कार्यक्रम के अन्तर्गत ग्रामीण कृषि सुधार ।। भूमि सुधार भी यदि सम्भव हो ।। तथा निवेश परिवर्तन जैसे भौतिक पूंजी के स्थान

पर मानवीय पूंजी, शहरी विकास से ग्रामीण विकास, पूंजी प्रधान से श्रम प्रधान क्रियाओं तथा अनावश्यक उपभोग वस्तुवों के उत्पादन से आवश्यक उपभोग वस्तुओं के उत्पादन, कार्यक्रमों को सम्मलित करना चाहिए ।[१]

अल्प विकसीत राष्ट्रों में लोगों को तभी अधिक रोजगार दिया जा सकता है जबकि राष्ट्र का आर्थिक विकास तेज हो । बेरोजगार तथा अर्द्ध बेरोजगार व्यक्तियों की संख्या में वृद्धि का अर्थ उत्पादन के महत्वपूर्ण साधन की बरबादी है । जैसा कि हर्षमैन ने ठीक ही कहा है कि,"आर्थिक विकास उत्पादन के दिये हुए साधनों और घटकों के अनुकूलतम अनुपात के ज्ञात करने पर उतना निर्भर नहीं है जितना कि छिपे हुए, बिखरे हुए और अर्धयुक्त साधनों और योग्यताओं का विकास कार्यों के लिए हुउपयोग करने पर है ।[2] इस श्रेणी में बेरोजगारअ और अर्द्ध बेरोजगार लोग भी शामिल है । बेरोजगारी की समस्या के सम्बन्ध में प्रो० के० एन० राज ने लिखा है," अल्प विकसीत राष्ट्रों में रोजगार की समस्या स्पष्ट रूप से एक ऐसी समस्या है जो आकार में लगातार बढ़ रही है । क्योंकि आर्थिक विकास के प्रगति के साथ-साथ और तदजनित मानसिक और भौतिक वातावरण में परिवर्तन और समाजिक संगठन के पुराने रूप में परिवर्तन के कारण अधिक श्रम-शक्ति को आर्थिक कार्य के लिए मुक्त और प्रस्तुत किये जाने की सम्भावना है । दूसरे शब्दों में आर्थिक परिवर्तन और विकास का यह प्रमुख लक्षण है कि जनसंख्या समामें वृद्धि के बिना भी रोजगार के लिए प्रस्तुत श्रमिकों की संख्या में लगातार वृद्धि होगी । इस आधार परअधिकांश बेरोजगार व्यक्ति इस प्रकार की प्रक्रिया के प परिणाम है, यह दावा करने का कोई अर्थ नहीं है कि बेरोजगारी की मात्रा में वृद्धि नहीं हुई है । यह तो संक्रमण काल मेंगुजरते समाज में आबादी और रोजगार की समस्या का मूल है ।[3]

१- आई० एल० ओ० वर्ल्ड इम्प्लाइमेन्ट प्रोग्राम ।।जैनेवा १९६९ ।। पृ० ८८ और ८१ एफ०एफ० ।

२- हर्षमैन, ए० ओ०: दि स्ट्रेटेजी आफ इकोनामिक डेवलपमेन्ट, पृ० ५१ ।

३- राज, के० एन०: इम्प्लाइमेन्ट एक्सपेक्ट्स आफ प्लानिंग इन अण्डर - डेवलप्ड इकोनामिक्स, नेशनल बैंक आफ इजिप्ट कैरो १९५७, पृ० ६ ।

उत्तर-प्रदेश में व्यवसाय की प्रकृति

व्यवसायिक क्रियाओं को दो भागों में विभाजित किया जाता है : ------

।।अ। उद्योग सम्बन्धी क्रियाएँ और

।।ब। वाणिज्य सम्बन्धी क्रियाएँ

जो क्रियाएँ, वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन से सम्बन्ध रखती है उन्हें उद्योग सम्बन्धी क्रियाएँ कहते है। इसके विपरित उद्योग द्वारा उपलब्ध करायी गयी वस्तुवों के वितरण सम्बन्ध क्रियाएँ - व्यापार, विज्ञान व प्रचार बैंक, परिवहन तथा बीमा सेवाएँ आदि को वाणिज्य सम्बन्धी क्रियाएँ कहते है। इन्हें निम्न रेखाचित्र द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है : --------

व्यवसायिक क्रियाओं का वर्गीकरण

औद्योगिक क्रियाएँ	वाणिज्य कक्रियाएँ
प्राकृतिक उद्योग	व्यापार
खनन उद्योग	विज्ञापन वप्रचार
निर्माण उद्योग	बैंक
रचनात्मक उद्योग	बीमा
	परिवहन

उद्योग : --- उद्योग व्यवसायिक क्रिया का वह अंग है, जिसमें वस्तुवों का उत्पादन,किया जाता है।

इन उद्योगों द्वारा निर्मित वस्तुवों का उपयोग या तो उपभोक्ता प्रत्यक्ष रूप से स्वयं कर लेता है अथवा अन्य उद्योग अपने उत्पादन में करते है। पहली स्थिति में उन निर्मित वस्तुओं को उपभोक्ता पदार्थ और दूसरी स्थिति में उत्पादक यापूँजीगत पदार्थ कहते है। कुछ उद्योग ऐसे वस्तुओं का उत्पादन करते है, जो न तो उत्पादक पदार्थ है, और न ही उनका उपभोक्ता द्वारा सीधा उपभोग किया जा सकता है। बल्कि उन्हें अन्तिम रूप दूसरे उद्योगों में प्राप्त होता है। इन पदार्थों को मध्यवर्ती पदार्थ कहते है।

उपरोक्त अधार पर कहा जा सकता है कि उत्पादक पदार्थों, उपभोक्ता पदार्थों और मध्यवर्ती पदार्थों के निर्माण में जिन क्रियाओं को किया जाता है उन्हें सामूहिक रूप से उद्योग कहते है। निर्माण करने का अर्थ प्राकृतिक साधनों की उपयोगिता में वृद्धि करने वाली उन समस्त क्रियाओं को सम्पन्न करने से है जिनसे सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके। इस प्रकार प्राकृतिक साधनों में उपयोगिता को वृद्धि करने वाली समस्त क्रियाओं को उद्योग में शामिल किया जाता है।

सामान्य रूप से उद्योग निम्नलिखित चार प्रकार के होते है:---

।।क।। प्राकृतिक उद्योग:--- कृषि, वन और मत्स्य उद्योग आदि इसके अर्न्तगत है। इस वर्ग में म मुख्यत: वे उद्योग आते है जिनमें प्रत्यक्ष रूप से प्राकृतिक साधनों का विद्रोहन करके मु मनुष्य के जीवन के लिए किसी आवश्यक व अधार भूत वस्तु का उत्पादन किया जाता है।

।।ख।। खनन उद्योग:---- समुद्र व भूमि में से पदार्थों का निकालना खनन उद्योग कहलाता है। उद्योग के लिए आवश्यक कच्चे पदार्थ खनन से ही उपलब्ध होते है।

।।ग।। निर्माण उद्योग:------ कच्चे पदार्थ का रूप बदल कर वस्तुओं का निर्माण करना, निर्माण उद्योग के अर्न्तगत आता है। इस वर्ग में जूट, शक्कर, लोहा व इस्पात, कपड़ा इत्यादि उद्योग आते है।

।।घ।। रचनात्मक उद्योग:-----इसके अर्न्तगत पुल, बांध, भवन व सड़कों आदि का निर्माण आता है

औद्योगिक विकास:-----उ0प्र0 में औद्योगिक विकास के लिए अनेक सुविधाऐं उपलब्ध हुँ कुछ महत्वपूर्ण कच्चा माल जो उद्योगों के लिए अधार वन सकता है, यहां सरलता से प्राप्त हो जात है। इनमें तिलहन, गन्ना और जूट का उल्लेख किया जा सकता है। जंगलों में राल, बांस, इमारती लड लकड़ी, जड़ी-बूटियां और घास आदि की बहुतायत है। पर्याप्त मात्रा में मैग्नेसाइट, फायरक्लें, लाइमस्टोन, जिप्सम, क्वार्टज, डोलोमाइट, फेल्सपार आदि खनिज पदार्थ सुलभ है, यद्यपि इनकी खाने दूर-दूर तक छिटकी हुई है। इसी के साथ-साथ वस्तुओं को बनाने तथा संरक्षण से सम्बन्ध उद्योग के लिए राज्य में काफी अच्छा क्षेत्र उपलब्ध है। इसके वावजूद यह प्रदेश काफी पिछड़ा हुआ है।

इन सुविधाओं के बावजूद १९५१ से पहले राज्य में चीनी, कपड़ा और तेल उद्योग ही ऐसे बड़े उद्योग थे जो स्थापित हो पाए थे। इसके बाद सुनियोजित प्रयास से औद्योगिक विकास में तेजी आयी १९७३ में २९८ बड़े और मध्यम आकार के उद्योग स्थापित हो चुके थे, जिनमें १.८१ लाख से भी अधिक लोग को रोजगार मिल था। प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्त में वृहद एवं लघु दोनों ही क्षेत्र में उत्पादित वस्तुओं का मूल्य १७५.९७ करोड़ रु० था जो वर्ष १९७५ में बढ़कर १३४६.५० करोड़ रु० हो गया।

राज्य में उद्योगों की स्थापना को बढ़ावा देने के लिए सरकार ने अनेक प्रकार की सहायता व रियायतें दी है। प्रदेश में बड़े औद्योगिक केन्द्रों का विकास किया जा रहा है, जिससे नये-नये उद्योगों के लिए आधार भूमि तैयार हो सके। कतिपय उद्योग क्षेत्र गाजियाबाद, बरेली, लखनऊ, हरिद्वार, कानपुर, गोरखपुर, नैनी ।।इलाहाबाद।। उन्नाव, संण्डीला ।।हरदोई।। रायबरेली, वाराणसी, और सिकन्दराबाद ।।बुलन्दशहर।। के अतिरिक्त झांसी, मेरठ, मथुरा तथा मोहान ।।अल्मोड़ा। में भी औद्योगिक क्षेत्र, आस्थान विकसीत किये गये है।

बस्ती तथा मुज्जफरनगर जनपद में नये औद्योगिक क्षेत्र विकसीत किये जा रहे ह तथा फैजाबाद जनपद में भी औद्योगिक क्षेत्र विकसीत करने का प्रस्ताव है। इन औद्योगिक क्षेत्र में उद्यमियों को ६०० वर्ग गज के तथा इससे अधिक क्षेत्र के विभिन्न आकार के भू - खण्ड न्यूनतम मूल्य पर उपलब्ध कराये जात है कुछ औद्योगिक क्षेत्रों/स्थानों में लघु स्तरीय इकाइयों के सुविधा व समय की बचत हेतु उ० प्र० राज्य औद्योगिक विकास निगम द्वारा छोटे-छोटे शेड भी बनाये जाते है। शेडों तथा भूमि की लागत ८ से १० किश्तों में ली जाती है। इस निगम द्वारा फील्ड हास्टल तथा सामान्य सुविधा भवनों की भी व्यवस्था की गई है उद्यमियों की सुविधा के लिए चुने हुए क्षेत्रों में श्रमिकों के लिए मकानों की व्यवस्था भी की जा रही है। यात्री परिवहन, बैंक, डाकखाने, चिकित्सालय स्कूल तथा टेलीफोन आदि सुविधाओं की व्यवस्था के लिए अन्य विभागों से सम्पर्क एवं समन्वय स्थापित किया जा रहा है।

राज्य में आर्थिक सहायता के विकेन्द्रीकरण के उद्देश्य से लघु उद्योगों के लिए, ऋण के ब्याज पर सब्सिडी देने की योजना क्रियान्वित की गई है। इस योजना के अन्तर्गत बैंकों, उ०प्र० वित्तीय निगम द्वारा ऋण के ब्याज पर अधिकतम ४ प्रतिशत तक सब्सिडी दी जाती है।

पिछड़े क्षेत्रों जिलों तथा पर्वतीय जिलों में मध्यम एवं लघु उद्योगों के लिए विशेष सुविधायें उपलब्ध हैं तकनीकी उद्योग कर्मियों को भी विशेष सुविधायें प्रदान की जाती है आलोच्य अवधि में पिछड़े जिलों में ६० इकाइयों को ३६१.२९ लाख रूपये के ऋण स्वीकृत कयि किये गये । सरकारी खरीद में प्रदेश की लघु उद्योग इकाइयों को १५ प्रतिशत तथा वृहद उद्योगों को अन्य प्रदेशों में स्थित वृहद उद्योगों की अपेक्षा ५ प्रतिशत मूल्य वरीयता प्रदान की जाती है ।

उत्तर-प्रदेश लघु उद्योग निगम, अपने कानपुर नैनी ।।इलाहाबाद ।। वाराणसी, मेरठ, आगरा बरेली, गाजियाबाद, गोरखपुर, मुरादाबाद, मदोही, रानी खेत, लखनऊ आदि केन्द्रों द्वारा नियंत्रित मूल्य पर कच्चा माल सुलभ करता है । किराया क्रय पद्धति के अधार पर यह निगम लघु-उद्योगों को मशीनों को भी सुलभ करता है ।लाइसेंस प्राप्त उत्पादकों की ओर से विदेशों से भी कच्चा माल आयात करता है । सरकारी खरीद में लघु उद्योग इकाइयों को १५ प्रतिशत मूल्य वरीयता प्रदान की जाती है ।

निगम द्वारा पैकेज सहायता योजना के अन्तर्गत एच०ए० एल० लखनऊ में अनुपूरक अस्थान तथा व बाराबंकी के कैमिकल कम्पलेक्स, उन्नाव में लैदर कम्पलेक्स एवं मथुरा में बिल्डिंग मैटेरियल कम्प्लेक्स का विकास किया जा रहा है जिसके लिए निगम उद्यमियों का चयन कर रहा है और उन्हें भूमि भवन विद्युत शक्ति तथा अन्य अवस्थापना ।।इंफ्रास्ट्रक्चर ।। सुविधायें उपलब्ध करना में सहायता प्रदान कर रहा है

प्रदेश निर्यात निगम निर्यात सम्भावनाओं के केन्द्रों पर आपूर्ति अधार को सुदृढ़ बनाकर प्रदेश की परम्परागत तथा अपरम्परागत वस्तुओंका निर्यात बढ़ाने हेतु निर्यातक इकाइयों को निर्यात सम्बन्धी जानकारी तथा वित्तीय सहायता प्रदान कर निर्यात आदेशों की पूर्ति कराता है । निगम द्वारा उच्च श्रेणी के कालीनों के निर्यात हेतु आगरा में एक नई कारपेट प्रशाखा खोली गयी है । निगम निर्यात लेख पत्रों के अधार पर अग्रिमधन राशि की भी व्यवस्था करता है । यह प्रधान नगरों तथा दिल्ली हैदराबाद, कलकत्ता, भोपाल, नागपुर, आगरा, लखनऊ तथा इलाहाबाद में स्थिति हस्त-शिल्प प्रदर्शन कक्षों को भी चला रहा है ।

उद्योग निदेशालय की विकास शाखा, इलेक्ट्रानिक, मैकेनिकल, ग्लास तथा सिरामिक उद्योगों के क्षेत्र में कार्य करने वाले उद्यमियों को प्राविधिक सहायता प्रदान की जाती है । निदेशालय ने चुने हुए उद्योगों की स्थापना के सम्बन्ध में बहुत अध्ययन किये है । तथा ४०० से अधिक योजनाऐं भी तैयार की है ।

सार्वजनिक क्षेत्र : ------ तीसरी पंचवर्षीय योजनावधि में केन्द्रीय सरकार में पहली बार उत्तर-प्रदेश में कुछ कारखाने खोले। ऋषि केश ।।देहरादून ।। में एक ऐण्टीबायोटिक्स देवाओं का कारखाना, रानीपुर ।।हरिद्वार ।। में एकभारी बिजली के समान का कारखाना , टूंडला ।।आगरा। में एक एक्सीरेटेड फ्रीज ड्राइगमीट प्लान और गोरखपुर में एक उर्वरक कारखाना स्थापित किया गया रेलवे विभाग द्वारा वाराणसी के पास एक डीजल इंजन बनाने का कारखाना स्थापित किया गया। नेशनल कोल डेवलपमेंट कारपोरेशन आफ इंडिया द्वारा सिंगरौली ।।मिर्जापुर ।। में कोल फील्ड्स का विकास भी किया गया। तदर्थ योजना के अन्तर्गत एच०ए० एल० कानपुर की स्थापना की गयी।

चतुर्थ योजना काल में पांच केन्द्रीय परियोजनाएँ ।।१ ।। त्रिवेणी स्ट्रक्चरल्स, लिमिटेड नैनी ।।इलाहाबाद ।। मॉडर्न बेकरी प्लान्ट, कानपुर, ट्रांसमिशन इक्विपमेंट प्रोजेक्ट, नैनी ।।इलाहाबाद भारत पम्प्स एण्ड कम्प्रेसर्स लिमिटेड नैनी ।। इलाहाबाद ।। तथा हिन्दुस्तान एरोनाटिक्स लिमिटेड लखनऊ केन्द्रीय परियोजनाओं की स्थापना की गयी।

पांचवीं योजनावधि में अगस्त १९७७ तक टेलीफोन एण्ड एलाइड इक्विपमेंट प्रोजेक्ट, नैनी, आरटीफिशियल लिम्ब्स फैक्ट्री, कानपुर, सेन्ट्रल इलेक्ट्रनिक्स लिमिटेड साहिबाबाद ।।गाजियाबाद।। भारत इलेक्ट्रानिक्स लिमिटेड, गाजियाबाद तथा स्कूटर्स इंडिया लिमिटेड लखनऊ में उत्पादन प्रारम्भ हो गया है।

सार्वजनिक क्षेत्र के अन्तर्गत राज्य सरकार की राजकीय सूक्ष्म सयंत्र निर्माणशाला, लखनऊ ।।यू०पी० इन्स्ट्रूमेन्टस लिमिटेड के साथ मिलाई गई ।। तथा राजकीय सीमेन्ट फैक्ट्री, चुर्क एवं डाला ।।मिर्जापुर ।। कार्यरत है। पांचवी योजनावधि में सीमेन्ट निगम के संयुक्त क्षेत्र के अन्तर्गत मोहनलाल गंज ।।लखनऊ ।। में एक एस्बेस्टस सीमेन्ट प्रोडक्टस् बनाने का कारखाना स्थापित किया गया है। भारत सरकार ने इस निगम को १६.८ लाख टन ब्लास्ट फरनेस स्टेप सीमेंट प्रोडक्टस् ।।जिसका निर्माण चुनार स्पिलिट लोकेशन प्लान्ट में होगा ।। तथा ८ लाख टन क्लिंकर ।।जिसका निर्माण डाला प्लान्ट में होगा ।। के निर्माण हेतु औद्योगिक लाइसेंस प्रदान किया गया है।

उत्तर-प्रदेश औद्योगिक विकास निगम ने बागेश्वर ।।अल्मोड़ा ।। में डेडबर्नन्ट मैग्नेसाइट बनाने का एक कारखाना स्थापित किया है। उत्तर-प्रदेश इलेक्ट्रानिक्स कारपोरेशन लिमिटेड द्वारा इलाहाबा

में एक टेलीविजन रिसीवर सेट बनाने का कारखाना स्थापित किया गया है इसके अतिरिक्त निगम द्वारा अनेक परियोजनायें स्थापित की जा रही है।

कपड़ा उद्योग के विकासार्थ उत्तर-प्रदेश निगम लिमिटेड, कानपुर तथा उत्तर-प्रदेश हैण्डलूम एण्ड पावरलूम फाइनेन्स एण्ड डेवलपमेंट कारपोरेशन, कानपुर, की स्थापना की जा चुकी है उ0प्र0 वस्त्र निगम नयागांव, झांसी, संडीला ।। हरदोई ।। अकबरपुर ।। फैजाबाद ।। रायबरेली, मऊनाथभंजन ।। आजमगढ़।। तथा काशीपुर ।। नैनिताल ।। में 25000 स्पिण्डिल क्षमता वाली स्पिनिंग मिलों की स्थापना का कार्य प्रगति पर है। इसी प्रकार उत्तर-प्रदेश चीनी निगमों भी प्रदेश के पिछड़े जनपदों मथुरा, बिजनौर, गाजीपुर तथा रायबरेली में एक-एक मिल की स्थापना की।

राज्य के सघन औद्योगिक नीति के अनुसार, शासन ने विभिन्न निगम स्थापित किये है जैसे उत्तर-प्रदेश फाइनेन्सियल कारपोरेशन, उत्तर-प्रदेश स्माल इन्डस्ट्रीज कारपोरेशन, उत्तर-प्रदेश एक्सपोर्ट कारपोरेशन, उत्तर-प्रदेश ब्रासवेयर कारपोरेशन, उत्तर-प्रदेश पूर्वांचल विकास निगम, उत्तर-प्रदेश बुन्देलखण्ड विकास निगम प्रदेशीय इन्डस्ट्रियल एण्ड इन्वेस्ट मेन्ट कारपोरेशन आफ यू0पी0, लिमिटेड, लेदर डेवलपमेन्ट कारपोरेशन एवं उत्तर-प्रदेश इन्डस्ट्रियल कन्सलटेन्ट्स लिमिटेड।

सहकारी क्षेत्र :---इस क्षेत्र के अन्तर्गत फर्टिलाइजर प्रोजेक्ट फूलपुर ।। इलाहाबाद ।।, 8 सूती मिलों व 20 चीनी मिलों की स्थापना हुई है।

निजी क्षेत्र :--- राज्य में औद्योगीकरण के पक्ष में वातावरण तैयार किया जा चुका है। निजी क्षेत्र में इण्डियन एक्सप्लोसिव ।। कानपुर ।।, जे0के0 इलेक्ट्रानिक्स ।। कानपुर ।। यूनिवर्सल टायर्स ।। इलाहाबाद ।। मोदी रबर ।। मोदीपुरम् ।। त्रिवेणी इंजीनियरिंग वर्क्स नैनी ।। इलाहाबाद ।। जीप फ्लैश लाइट इण्डस्ट्रीज इलाहाबाद, सोमैया आरगेनिक्स ।। बाराबंकी ।। हिन्द लैम्प्स ।। शिकोहाबाद ।। हिन्दुस्तान एल्युमिनियम कारपोरेशन ।। रेणुकूट-मिर्जापुर ।। मोदी-मोदीपोन ।। मोदीनगर ।।, जे0के0 सातोह टैक्टर्स ।। कानपुर ।।, जे0के0 सेन्थेटिक्स ।। कानपुर ।। स्वदेशी स्पिनिंग मिल्स नैनी, मऊनाथभंजन एवं रायबरेली, स्वदेशी पालटैक्स ।। गाजियाबाद ।। टेलीट्यूब इलेक्ट्रानिक्स, गाजियाबाद तथा बिलाई इण्डिया लिमिटेड, सिकन्दराबाद ।। बुलन्दशहर ।। आदि महत्वपूर्ण कारखानों ने अपने कार्य प्रारम्भ कर दिये है।

ग्रामीण एवं लघु उद्योग :----- हथकरघा उद्योग, कृषि के पश्चात राज्य का सबसे बड़ा उद्योग है। इसके माध्यम से लगभग १५ लाख व्यक्तियों को रोजगार मिला है। तथा राज्य की कुल वस्त्र सम्बन्धी मांग की एक तिहाई की पूर्ति होती है। मार्च १९७४के अन्त में ५०९४ लाख करघे थे। प्रथम पंचवर्षीय योजनामेंकुल ६६७.८८ लाख मीटर, द्वितीय योजनावधि में ३९१४.१५ लाख मीटर तृतीय योजनावधि में ५८१९.८२ लाख मीटर, तीन तदर्थ वार्षिक योजनाओं में ४२३४.४७ लाख मीटर तथा चतुर्थ योजनावधि में ८३८८.२२ लाख मीटर कपड़ों को उत्पादन हुआ पांचवीं योजना के अर्न्तगत वर्ष १९७४-७५ में १८७३.३६ लाख मीटर, वर्ष १९७५-७६ में १९९१.३० लाख मीटर, वर्ष १९७६-७७ में २५२०.०७ लाख मीटर तथा अगस्त १९७७ तक १०४१.२० लाख मीटर हथकरघा वस्त्र का उत्पादन किया गया।[१]

प्रदेश में हथकरघा एवं शक्ति चालित करघा उद्योग के बुनकरों की समस्याओं के निराकरण हेतु वर्ष १९७३ में स्थापित उत्तरप्रदेश राज्य हथकरघा निगम लि० कानपुर सस्तीप्र दरों पर कच्चा माल उपलब्ध कराता है। निगम अच्छी किस्म के आधुनिक डिजाइनों के वस्त्रों के उत्पादन हेतु नीजी इकाइ की स्थापना तथा वास्तविक उपभोक्ताओं एवं बुनकरों का सीधे ।।बिचौलियां के बिना ।। हथकरघा वस्त्रों के विपरण की व्यवस्था करता है।

बुनकरों को नई-नई डिजाइनों से अवगत कराने हेतु मार्च १९७५ तक पांच डिजाइन केन्द्र स्थापित थे। इनकेन्द्रों में से चार को डिजाइन-कम-प्रोडक्सन केन्द्रों में परिवर्ति कर दिया गया। बन्द सहकार समितियों का जीर्णद्धार करके आर्थिक दृष्टि से सुदृढ़ समितियों का गठन कराने तथा बेकार समितियों का पंजीकरण निरस्त करने पर विचार किया गया। बुनकरों के कल्याण हेतु १०,००० रु० से एक बुनकर "बहुबुद्धी फण्ड" की स्थापना की गई तथा प्रदेश के सात स्थानों पर बैंक स्थापित किये गये।

लघु उद्योग :-----राज्य के कतिपय प्रमुख उद्योग है, चमड़ा, और चमड़े से बनी वस्तुवों का उद्योग, मशी के पुर्जे और कृषि उपकरणों का उद्योग, अलौह वस्तुवों का उद्योग, प्रकीर्ण इंजिनियरिंग का सामान जैसे लोहे की ढलाई और फाउन्ड्री, साइकिल एवंसाइकिल के पुर्जे, शीशे की चुडियां, ऊन और रंगाई एवं छपाई का उद्योग १९७३ में फैक्ट्रीएक्ट के अर्न्तगत रजिस्टर्ड लघु उद्योगों की ३८७३इकाइयों ने कुल ३१२ करोड़ रु०की मूल्य की वस्तुएँ तैयार की तथा १२८४३५ व्यक्तियों को रोजगार दिया।

१- उत्तर-प्रदेश १९७७ पृ० १५४।

जबकि १९५६ में १०६० इकाइयों ने कुल २४.४६ करोड़ रु० का माल उत्पादित किया तथा २७,५५० लोगों को रोजगार दिया । १९७४-७५ में उद्योग निदेशालय में ३३८३१ लघु स्तरीय इकाइयां पंजीकृत थी जिनमें अनुमानतः दो लाख व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त हुआ ।

ग्रामीण उद्योग परियोजना : ----- आर्थिक असमानता को दूर करने तथा ग्रामीण क्षेत्र में औद्योगिक विकास हेतु तृतिय पंचवर्षीय योजना काल में ग्रामीण उद्योग परियोजना पांच जनपदों में प्रारम्भ की गयी थी । ये परियोजनाऐं, उन ग्रामीण क्षेत्रों में स्थापित की गयी, जिनकी जन संख्या १५००० से अधिक नहीं थी । इस योजना के अर्न्तगत साहसियों को ॠण अनुदान, प्राविधिक प्रशिक्षण तथा अन्य सहायता दी जाती है । मार्च १९७५ इन परियोजनाओं ।। अल्मोड़ा, गाजीपुर, सहारनपुर, झांसी, बलिया, रायबरेली, मथुरा, उन्नाव, मुरादाबाद, तथा देवरिया ।। के अर्न्तगत ४८२२ नयी औद्योगिक इकाइयों की स्थापना हुई तथा लगभग १६२०० व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त हुआ । इस योजना के अर्न्तगत उद्यमियों को सस्ते दर पर ॠण कच्चा माल और प्राविधिक सहायता स्थानीय रूप में उपलब्ध करायी जाती है । इस योजना के अर्न्तगत अगस्त १९७७ तक ८६३५ नई औद्योगिक इकाइयों की स्थापना हुई तथा लगभग ४६०२७ व्यक्तियों को रोजगार प्रदान किया गया । मार्च १९७७ तक १९०.९१ लाख रुपये के ॠण आर०आई० पी० विधि से वितरित किये गये ।[1] १९५० के पूर्व राज्य के अधिकांश उद्योग कृषि, वनों एवं चारगाहों से उपलब्ध कच्चे माल पर अधारित थे । सार्वजनिक क्षेत्र में कोई प्रतिष्ठान नहीं था । प्रथम योजना में इसी कमी की पूर्ति सीमेन्ट फैक्ट्री ।। चुर्क मिर्जापुर ।। और सूक्ष्म -यंत्र निर्माणशाला लखनऊ की स्थापना करके की गयी ।

१९५८ में उत्तर-प्रदेश में ५९० उद्योगशालाऐं थी जिनमें १०८ कानपुर में, ८६ आगरा में, ६७ मेरठ में, ३३ बनारस्सी में, २७ लखनऊ में एवं १८ अलीगढ़ में थीं । शेष १५१ विद्युत एवं प्राद्योगिकीय प्रतिष्ठान, ९८ चीनी उद्योग, ६७ बनस्पति तेल उद्योग एवं २७ सूती मिले थी ।

प्रदेश की चीनी मिलें तराई एवं पश्चिमी भागों में थी । देवरिया में अकेले ही १४ चीनी मिले थी । प्रदेश के दक्षिण - उपरी भाग में मिर्जापुर ही एक ऐसा जिला है जहां बड़े उद्योगों का भविष्य

१- उत्तर-प्रदेश १९७७, पृ० १५८-१५९ ।

उज्जवल है। कुटीर एवं लघु उद्योग, जिनपर आज अधिक बल दिया जा रहा है बहुत प्राचीन समय से ही प्रदेश के आर्थिक ढांचे को प्रभावित करते रहे हैं ये हा ऐसे क्षेत्र हैं जिनमें प्रदेश के लाखों लोग जीवन यापन कर रहे हैं। हाथ के बने कपड़े, चटाई, साबुन, चमड़ा, ताला, खेल के समान, बीड़ी आदि सम्पूर्ण प्रदेश में फैले हैं। हैन्डलूम उद्योग अधिकांशतया गोरखपुर के क्षेत्र में हैं। १९५१ में ५०लाख व्यक्ति सूती वस्त्र उद्योग में कार्यरतथे, जबकि १७७६२० व्यक्ति फैक्टरी उद्योग में लगे थे।

द्वितीय योजना में सार्वजनिक क्षेत्र में कोई नया उद्योग नहीं स्थापित किया गया। बल्कि राजकीय सीमेन्ट फैक्टरी चुर्क और राजकीय सूक्ष्म यंत्र निर्माणशाला लखनऊ के विस्तार पर ही बल दिया गया। साथ ही उपभोक्ता सामग्री जैसे चीनी, वस्त्र, मद्यसार, शीशे के समान, वनस्पति, तेल, दूध से बनी वस्तुओं, कागज, लुगदी, साइकिल, बिजली के समान आदि सम्बन्धी उद्योगों का विकास किया गया।

तृतीय योजना में ४बड़े, ५ मध्यम, ८ लघु व २३ ग्रामीण औद्योगिक स्थानों की स्थापना करना निश्चित किया गया। १९६१ का वर्ष सच्चे अर्थों में राज्य के लिए औद्योगिक वर्ष कहाजाय सकता है क्योंकि इस वर्ष ११० करोड़ लागत की ५ औद्योगिक योजनाओं को राज्य में स्थापित करने की घोषणा भारत सरकार द्वारा की गयी। चतुर्थ योजना काल में ७ औद्योगिक अस्थान पनकी, रनिया ।।कानपुर।। आगरा, मथुरा, लखनऊ, नैनी ।।इलाहाबाद।। तथा रायबरेली ।।पिकप को स्थानान्तरित ।। विकसीत तथा विस्तारित किये गये। और ५० लाख के विपरित ४८ लाख रु०व्यय किये गये। पांचवी योजनावधि में १५० लाख परिव्यय के अर्न्तगत वर्ष १९७६-७७ तक ५०.४९ लाख रुपये मैदानी क्षेत्र में तथा १६.०३ लाख रुपये पर्वतीय क्षेत्र में व्यय किये गये।[१]

औद्योगिकरण के क्षेत्र में राज्य को कई समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। प्रथम तो इस प्रदेश में खनिज पदार्थों का अभाव है जैसे - लोहा, मैगनीज, अभ्रक, टंगस्टन, जस्ता, क्रोमाइट, वाक्साइट आदि यहां नगण्य है। इस राज्य का शक्ति के उत्पादन की दृष्टि से भी विशेष स्थान

१- उत्तर-प्रदेश - १९७७, पृ० १५६।

नहीं है। कोयला, मिर्जापुर को छोड़कर अन्य किसी जिले में नहीं मिलता, खनिज तेल की भी उपलब्धि इस प्रदेश में नहीं है। जलविद्युत शक्ति भी राज्य की आवश्यकता से बहुत कम है। यह कृषि के क्षेत्र के लिए भी पर्याप्त नहीं है।

इन प्रमुख औद्योगिक असुविधाओं के होते हुए भी इस प्रदेश में सूती, ऊनी, चीनी, कांच और कागज जैसे वृहद् उद्योगों का विकास हो सका है। इसका प्रमुख कारण प्रदेश में अत्यधिक जनसंख्या होने के कारण इन वस्तुओं की वृहद् मांग होती है। व अन्य प्रदेशों की तुलना में सस्ते श्रम शक्ति की उप उपलब्धि आदि सुविधाऐं प्राप्त होने के कारण, प्रदेश के औद्योगिक विकास में सहायता मिला है।

राज्य सरकार, प्रदेश के औद्योगिक विकास के लिए सराहनीय प्रयास कर रही है, लेकिन इसे और तीव्र करने की आवश्यकता है। औद्योगिक क्षेत्र की आय में, तीसरी योजना में ५.३ प्रतिशत की वृद्धि हुई जबकि तीन वार्षिक योजनाओं में प्रदेश में इस क्षेत्र की आय में १.२ प्रतिशत की कमी हुई। चतुर्थ योजना के प्रथम दो वर्षों में विकास की दर बढ़कर ७.८ प्रतिशत हो गयी, लेकिन इस वृद्धि दर को योजना के अगले वर्षों में जारी नहीं रखा जा सका इसका कारण गन्ने की उपज में अत्यधिक कमी थी।

उत्तर-प्रदेश का भारत के औद्योगिक मानचित्र में ऐसा स्थान है जिससे अन्य राज्यों को ईर्ष्या नहीं हो सकती। क्षेत्रफल एवं मानवीय साधनों का बाहुल्य होते हुए भी उत्तर-प्रदेश का औद्योगिक विकास के सन्दर्भ में देश में पांचवा स्थान है। लघु उद्योगों के क्षेत्र में इसका तीसरा स्थान है, प्रथम एवं द्वितीय स्थान क्रमशः पंजाब एवं महाराष्ट्र हैं। प्रदेश की बढ़ती हुई जनसंख्या को दृष्टिगत रखते हुए यहां औद्योगीकरण बहुत आवश्यक है।

उत्तर-प्रदेश के ३८ जिलों को पिछड़े घोषित किया गया है जो सूची सम्भागीय दृष्टि से निम्नलिखित है:[१]-----

---

१- वार्षिक योजना, उत्तर-प्रदेश, १९७५-७६ पृ० १५६।

उत्तर-प्रदेश में औद्योगिक दृष्टि से पिछड़े जिले

१- पूर्वी क्षेत्र :----	१- आजमगढ़	२- बहराइच	३- बलिया	४- गाजीपुर
	५- जौनपुर	६- प्रतापगढ़	७- सुलतानपुर	८- बस्ती
	९- फैजाबाद	१०-गोण्डा	११-देवरिया ।	
२- पर्वतीय क्षेत्र :-----	१- अल्मोड़ा	२- गढ़वाल	३- टेहरी गढ़वाल	
	४- चमोली	५- पिथौरागढ़	६- उत्तरकाशी ।	
३- बुन्देलखण्ड क्षेत्र:----	१- बांदा	२- हमीरपुर	३- जालौन	
	४- झांसी	५- ललितपुर ।		
४- केन्द्रीय क्षेत्र : ----	१- फतेहपुर	२- हरदोई	३- रायबरेली	
	४- उन्नाव	५- बाराबंकी	६- सीतापुर	
५- पश्चिमी क्षेत्र : --	१- बदायूं	२- मैनपुरी	३- बुलन्दशहर	४- एटा
	५- इटावा	६- मथुरा	७- फर्रुखाबाद	८- मुरादाबाद
	९- शाहजहांपुर	१०-पीलीभीत ।		

राज्य के अन्य जिलों की तुलना में इन सम्भागों का अपेक्षाकृत पिछड़ा हुआमाना जाने का अधार, इन क्षेत्र में जनसंख्या का घनत्त्व व भूगर्भीय स्थिति आदि है ।

अप्रैल १९६३ में प्रो० डब्ल्यू रोस्टोव ने आर्थिक विकास संस्था नई दिल्ली में स्फूर्ति विकास काल का राष्ट्रीय करण पर भाषण देते हुए यह विचार प्रकट किया था कि कृषि उत्पादन औद्योगिकरण के लिए मूलभूत चालू पूंजी है - चालू पूंजी प्रत्यक्ष अर्थों में, उद्योगों के लिए कच्चे माल के रूप में तथा वृहत् अर्थ में, चालू पूंजी या तो निर्यात के बढ़ाने में सहायता के रूप में या खाद्यान्न या अन्य कृषि - उत्पादन के आयात में सीमित विदेशी मुद्रा के सामान्य होने से बचाने के रूप में । उन्नतिशील देशों में

कृषि के विकास के लिए समुचित विनियोजन न करने के कारण ही वे स्वयं – स्फूर्ति विकास की परिस्थिति में अपने को नहीं लापा रहे है । ऐसे देश में स्वयं – स्फूर्ति के राष्ट्रीकरण के अन्तर्गत वह प्रक्रिया आती है जिसके द्वारा देश के सीमित क्षेत्रों में आधुनिक टेक्नोलोजी के प्रभाव – पूर्ण अन्तर्लयन को देश भर में वितरित किया जा सके ।

कृषि उत्पादकता में वृद्धि करना औद्योगीकरण के लिए एक अत्यन्त ठोस साधन है । वास्तव में जब तक कि कृषि का समुचित आधुनिकरण नहीं होता है, अधिकांश विकासशील देशों में औद्योगिक प्रगति की गति धीमी होगी क्योंकि अधिकांशव्यक्तियों के पास आवश्यक क्रय-शक्ति न होने से बाजार की कमी होगी। दूसरी ओर कृषि का विकास अधिक नहीं होगा जब तक कि औद्योगिक विकास न हुआ हो जो कि अतिरिक्त जनशक्ति को अपने में ले सके । तथा आधुनिक कृषिको आवश्यक उपकरण तथा सेवायें प्रदान करने के लिये ठोस टेक्नीकल अधार प्रदान कर सके ।[१]

विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न समय पर क्षेत्रीय विकास पर बल देने कारण अथवा छोटे पैमाने के उद्योगों की महत्ता बढ़ जाने पर उद्योगों का विकास सम्भव है तथापि केन्द्री प्रणाली के कारण या तो पुराने औद्योगिक नगरों में नए-नए उद्योगों की स्थापना होती है या नए औद्योगिक नगर ही बसाये जाते है इस प्रकार औद्योगिकरण का यह प्रभाव होता है कि कुछ औद्योगिक नगरों में जनसंख्या के केन्द्रीयकरण की समस्या को जन्म देता है । इसका समाज पर गहन प्रभाव पड़ता है । तथा क्षेत्रीय असमानता बढ़ती है । विकसीत क्षेत्र तो और विकसीत होजायेंगे और अल्पविकसित अथवा अविकसीत क्षेत्रों में प्राय:: कोई भी विकास होने से रह सकता है ।

ग्रामीण क्षेत्रों पर तो औद्योगिकरण का प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है । परन्तु नगरों पर इसका प्रत्यक्ष सामाजिक प्रभाव पड़ता है । नगरों में कारखानों में काम करने वाले श्रमिकों का केन्द्रीयकरण ही वहां की सामाजिक समस्याओं का प्रमुख कारण है । इससे अति-भीड़, गन्दी बस्तीयों, गन्दगी अथवा मलिनता, बेरोजगारी, अत्याचार, तथा अपराध स्वास्थ्य हानि आदि फैलती है । नगरों में यह ह्रास इसलिए होता है कि तकनीकी परिवर्तनों तथा सामाजिक परिवर्तनों में सामजस्य स्थापित

१- प्रो० यूजीन स्टेले, द फ्यूचर आफ अन्डर डेवलप कन्ट्रीज, पृ० ३९४-

नहीं हो पाता तथा नए रीति-रिवाज, संगठन, नयी आदतें, तथा जीवन के रहन-सहन के नवीन ढंग पनप नहीं पाते । इस समस्या के निवारण के लिए सामाजिक विधानों द्वारा सामाजिक संगठन के नए रूप को संवारना होगा, जो कि समाज में श्रमिकों की पद स्थिति को सुनिश्चित करे । साथ ही साथ सामाजिक सेवाओं व शैक्षिक सुविधाओं का प्रसार करना होगा ।

संक्रमण काल में जबकि पूर्व औद्योगिक कुटुम्ब तथा सामाजिक संरचना का विघटन हो रहा हो, सरकार का इस सम्बन्ध में विशेष उत्तरदायित्व हो गा । इस बात को ध्यान में रखना होगा कि यदि यदि अधिकतम सामाजिक कल्याण के लक्ष्य को प्राप्त करना है तो उस दशा में किसी उपयुक्त संस्थाओं का सृजन करना होगा जिससे सामाजिक संक्रमण काल पर काबू किया जा सके । औद्योगिकरण की प्रक्रिया के लिए यह उतना ही आवश्यक है जितना कि औद्योगिक उपक्रमों की स्थापना करना है ।

<u>बेरोजगारी पर सामाजिक रीति रिवाजों का प्रभाव</u>: ---- आज के नवीन परिस्थिति में जाति - व्यवस्था भारत की प्रगति में बाधक हो रही है तथा जातिय व्यवस्था के अर्न्तगत अपने जातिय व्यवसाय को ही करने के लिए बाध्य करती है । इसलिए भारत के भूतपूर्व प्रधानमंत्री स्वर्गीय प० जवाहरलाल नेहरू जातिव्यवस्था के सम्बन्ध में अपना विचार व्यक्त करते हुए कहे थे कि जाति व्यवस्था भूतकाल में दया का पात्र रही हो, लेकिन आज इसे दया का पात्र नहीं बनाया जा सकता है क्योंकि नवीन भारत की रचना में यह पग-पग पर बाधक हो रही है जाति व्यवस्था के कारण आर्थिक विकास में बाधा पड़ती है कृषि की प्रगति रुक जाती है, बेरोजगारी में वृद्धि होती है, समाज में अनेक प्रकार के आर्थिक एवं सामाजिक दोष उत्पन्न हो जाते हैं । इसके साथ ही साथ धार्मिक सांस्कृतिक और राजनैतिक दोष जाति व्यवस्था के ही कारण उत्पन्न होते हैं

व्यवसाय के मार्ग में जाति व्यवस्था एक कठोर अवरोधक के रूप में उपस्थित है क्योंकि लोग अपनी जाति एवं वंश परम्परा के अनुसार ही कार्य करने में ही अपने को महान समझते है । भारतीय जाति व्यवस्था चार वर्णों में विभाजित रही है और इसके कार्य भी विभाजित कर दिये गये ह । ब्राह्मण का कार्य वेदों का पढ़ना, पढ़ाना तथा यज्ञ करना और करना था, क्षत्रिय का कार्य देश की लड़ाई आदि से रक्षा करना, वैश्य का कार्य व्यपार करना और शुद्र का कार्य सेवाकरना माना गया ।

सामाजिक निर्माण के अन्तर्गत प्रत्येक जाति के लिए कार्य निश्चित थे तथा विवाह आदि भी जाति के अन्तर्गत ही होता है। यदि कोई व्यक्ति इसके विपरित कार्य करता था तो उसे समाज जाति से बाहर कर देता था। सामाजिक जाति-व्यवस्था मुख्य रूप से कुछ नियम जैसे भोजन, विवाह, परस्पर मेल जोल आदि से विशेष सम्बन्धित है। प्रत्येक उपजाति स्वयं की एक पंचायत रखती है और उसकी अपनी एक जातीय सभा होती है पंचायतों द्वारा उन लोगों का वहिष्कार कर दिया जाता है जो अन्य किसी जातियों के लोगों के साथ-पानी पीते है या भोजन करते है।[१]

<u>बेरोजगारी के कारण</u> : -------- प्रदेश में बेरोजगारी के बहुत से कारण है, जिनमें से कुछ प्रमुख निम्नलिखित है : -----

१- प्रदेश में बेरोजगारी में तीव्र गति से वृद्धि का मुख्य एवं महत्वपूर्ण कारण बढ़ती हुई जनसंख्या है जो २.५ प्रतिशत वार्षिक दर से बढ़ रही है। जबकि प्रदेश का आर्थिक विकास जनसंख्या की वृद्धि की तुलना में धीमी गति से हो पा रहा है। इस स्थिति में बेरोजगारी की समस्या का उत्पन्न होना स्वाभाविक है।

२- प्रदेश में पूंजी निर्माण की गति बहुत धीमी एवं निम्न रही है।, जिसके कारण उद्योगों, व्यवसायों व सेवाओं का विस्तार भी धीमी गति से हुआ है। पूर्वी उत्तर-प्रदेश तो उद्योग के नाम पर लगभग शून्य है जिससे बेरोजगारी में वृद्धि हुई है।

३- हमारे यहां शिक्षा प्रणाली में भी बहुत दोष है। यहां के शिक्षित लोगों में नौकरी चाहने की इच्छा सबसे प्रबल होता है वे स्वयं कोई उत्पादक कार्य प्रारम्भ करना नहीं चाहते है। हमारी शिक्षा व्यवहारिक कार्य करने के योग्य व्यक्तियों का निर्माण करने मेंसहायकनहीं है।

४- ब्रिटिश सरकार की स्वार्थमयी व्यपारिक नीति के फलस्वरूप प्रदेश के हस्त शिल्प एवं लघु उद्योगों का पतन हो गया। इससे हस्तशिल्प एवं लघु उद्योगों के श्रमिकों को भी अन्य कार्य खोजने के लिए विवश होना पड़ा जिससे बेरोजगारी में वृद्धि हुई है।

प्रदेश में बेरोजगारी के उपर्युक्त प्रमुख कारण बतायेजाते है, लेकिन इसके अतिरिक्त भी बहुत से कारण है जिससे प्रदेश में बेरोजगारी में वृद्धि हुई है। कुछ कारण इस प्रकार है: -----

१- प्रदेश में श्रम गतिशीलता का अभाव पाया जाता है।

२- कृषि भूमि पर जनसंख्या का अत्यधिक दबाव है।

३- प्रदेश में प्रशिक्षण सुविधाओं का अभाव बना है।

४- प्राकृतिक विपत्तियों से आकास्मिक बेरोजगारी उत्पन्न हो जाती है।

५- कृषि के यंत्रीकरण एवं उद्योगों के अभिनवीकरण से भी बेरोजगारी बढ़ी है।

६- प्रदेश में प्रभाव पूर्ण रोजगार नीति का अभाव है।

७- स्वैच्छिक एवं सामाजिक कारण भी कुछ सीमा तक बेरोजगारी के लिए जिम्मेदार है इत्यादि।

८- रिक्तियों को भरने के लिए समाचार पत्रों या अन्य माध्यमों से सूचनाएँ प्रसारित की जाती है, किन्तु उन रिक्तियों के लिए आवेदन करने हेतु निर्धारित शुल्क लगा होता है जिसके कारण बेरोजगार युवकों को आवेदन करने में कठिनाइयां होती है और अन्तत:- पैसे के अभाव में वे आवेदन पत्र भरने से वंचित हो जाते है और बेरोजगारी के शिकार बने रहते है।

<u>उत्तर-प्रदेश में रोजगार की सम्भावनाएँ</u> :- योजना काल में उत्तर-प्रदेश में रोजगार वृद्धि की दिशा में काफी प्रगति हुई। किन्तु पूर्ण रोजगार की स्थिति की दिशा में बहुत कुछ करना बाकी है। पूर्ण रोजगार की स्थिति का तात्पर्य उस स्थिति से है जिसमें काम के योग्य सभी लोगों को प्रचलित मजदूरी की दर पर रोजगार मिले। ऐसी स्थिति के लिए सरकार को एक ठोस नीति अपनाकर उसे सक्रियता के साथ कार्यान्वित करना पड़ता है। इस नीति में मुख्यत तथा निम्नांकित बातों पर ध्यान दिया जाता है:-

१- श्रम की मांग श्रम की पूर्ति से अधिक रखने की कोशिश की जानी चाहिए।

२- श्रम के मांग की वृद्धि उचित दिशा में होनी चाहिए।

३- श्रम की मांग व पूर्ति में ऐसे परिवर्तन होने चाहिए जिससे उनमें बहुत असन्तुलन उत्पन्न न हो।

४- अर्द्ध बेरोजगारी की स्थिति समाप्त करने की दिशा में प्रयत्न करना चाहिए।

भारत में पूर्ण रोजगार की स्थिति प्राप्त करना तथा उसे बनाये रखना कठिन है। क्योंकि जनसंख्या व श्रमशक्ति की तीव्र गति की वृद्धि की तुलना में देश के आर्थिक विकास की दर तथा रोजगार बढ़ाने की गति काफी मन्द है। लोकतांत्रिक मार्ग अपनाने के कारण साम्यवादी देशों की तुलना में भारत में आर्थिक विकास व रोजगार वृद्धि की गति स्वभावत:- धीमी है। किन्तु यह सौभाग्य की

बात है कि भारत में प्राकृतिक साधन सम्पत्ति विपुल है । इस सम्पत्ति का उचित उपयोग जितनी शीघ्रता से किया जायेगा उतनी ही शीघ्रता से हम रोजगारी बढ़ाने में सफल होगें रोजगारी बढ़ाने के लिए तथा स्थायी रूप से बेरोजगारी की समस्याहल करने के लिए हमें निम्नांकित उपाय अपनाने चाहिए :-------

१- स्वालम्बी अथवा अपने द्वारा किया गया उपाय, और

२- सरकार द्वारा किया गया उपाय ।

वर्तमान समय में रोजगार के प्रमुख साधन कृषि, उद्योग, लघु एवं कुटीर उद्योग, सामाजिक सेवाओं का विकास तथा अन्य विविध सेवायें है । इस प्रकार इन विभिन्न सेसेवाओं के माध्यम से रोजगार के अवसर प्रदान किये जाते है । विभिन्न योजनाओं में रोजगार के अवसर प्रदान करने के लिए निम्न - लिखित अवसरों मेंवृद्धि की जाती है :---------

१- श्रम प्रधान कार्यों - जैसे सड़क, लघु सिंचाई योजना, सहकारिता, बाढ़ नियंत्रण कार्य पर जोर दिया जाना ।

२- कृषि विकास की बढ़ती हुई गति ।

३- गैर कृषि रोजगार में वृद्धि ।

४- खनिज तथा निर्माण उद्योगों पर बल ।

५- ग्रामीण क्षेत्रों में विद्युतीकरण ।

६- शिक्षा, स्वास्थ्य तथा परिवार नियोजन जैसी सेवाओं का विस्तार ।

७- उद्योगों का विकेन्द्रीयकरण ।

८- व्यपार, वाणिज्य तथा वित्तीय क्रियाओं के क्षेत्र का विस्तार ।

उत्तर-प्रदेश में रोजगार की सम्भावनाऐं विशेष तौर से ग्रामीण लघु एवं कुटीर उद्योगों में अधिक पायी जाती है क्योंकि ग्रामीण रोजगार की एक व्यापक विशेषता उसकी मौसमी प्रकृति है रोजगार की तीव्रता मौसमें के अनुसार बदलती रहती है । कृषि के अधिक व्यस्त समय में अनेक क्षेत्रों

में श्रमिकों की कमी बहुतायत से अनुभव की जाती है। शिथिल मौसम में भारी मात्रा में श्रमिक बेकार या अर्द्ध बेकार रहते है रोजगार के मौसमी प्रकृति का प्रभाव मजदूरी पर काम करने वाले एवं स्व-नियोजित दोनों प्रकार के व्यक्तियों पर पड़ता है। अपनी योग्यतानुसार कार्य करते है। ग्रामीण क्षेत्र में बेकारी और अर्द्ध बेकारी दोनों ही समस्याऐं मिश्रित रूप में होती है इनमें से कोई भी ऐच्छिक या अनैच्छिक हो सकती है। स्वतन्त्रता के बाद के वर्षों में ग्रामीण क्षेत्रों की प्रगति के कारण अधिक काम के रूप में उन्हें कुछ सहायता प्राप्त हुई है।

ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार के अनुमान का प्रयास नैशनल सैम्पुल सर्वे ।।एन० एस० एस० ।। ने अपने १९ वें चक्र में जुलाई १९६४ से जून १९६५ के मध्य किया। इसकी रिपोर्ट १९७० में प्रकाशित हुई। इस रिपोर्ट के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में श्रम-शक्ति कुल जनसंख्या की ४०.१५ प्रतिशत थी जिसमें से ३८.४० प्रतिशत लाभप्रद नियोजन ।।गेनफुल इम्प्लाइमेंट ।। में थे, जबकि बेकार किन्तु रोजगार के लिए उपलब्ध व्यक्ति १७५ प्रतिशत थे। श्रम-शक्ति का ७७.८ प्रतिशत भाग सप्ताह के सभी दिनों काम पर लगा हुआ था। सप्ताह में चार दिन या उससे कम तथा एक दिन तक काम करने वाले व्यक्तियों का प्रतिशत कुल जनसंख्या का १०.२४ प्रतिशत था। कृषि पशुपालन, जंगलों एवं मछली पकड़ने व शिकार करने में लगे हुए व्यक्तियों का प्रतिशत ८०.०४ था जिसमें पुरूषों एवं महिलाओं का प्रतिशत क्रमश: ७८.५५ तथा ८५.२९ था।

कृषि श्रमिकों के लिए पूर्ण नियोजन की व्यवस्था निरन्तर बढ़ती हुई ग्रामीण श्रम-शक्ति की अर्द्ध बेकारी कम करने की दिशा में एक व्यापक कदम है। अत: श्रम पर राष्ट्रीय आयोग ने ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि उत्पादन में हाल में होने वाली प्रगति और उसके फलस्वरूप होनेवाली मानव शक्ति की आवश्यकताओं को विशेष रूप से दृष्टिगत रखते हुए श्रमिकों को रोजगार की सम्भावनाओं का अनुमान लगाया।[१] आयोग के अनुसार १९६१ और १९७६ के मध्य १५ वर्ष की अवधि में औद्योगिकरण के प्रगति के द्वारा कृषि के बाहर श्रमिकों को रोजगार की दर को मोटे तौर पर दुगुनी करने के बावजूद कृषि पर निर्भर रहने वाले श्रमिकों की संख्या में २२.१ मिलियन की वृद्धि सम्भावित है।

१- रिपोर्ट आफ दि नैशनल कमीशन आन लेबर, पृ० ३९६।

कृषि मौसम के अनुसार श्रमिकों का प्रयोग घटता-बढ़ता रहता है। जब फसल बोने, सिंचाई करने और फसल कटाई का समय होता है उस समय श्रमिकों की मांग अधिक हो जाती है तो बेकार कम रहती है लेकिन इस समय के बाद एक ऐसा मौसम शिथिलता का आता है जिसमें कृषि कार्य कम मिलता है, उस समय श्रमिक बेकार रहते है इस कृषि मौसम के अनुसार कृषि श्रमिकों को वर्ष में कितने समय काम मिलता है उसके ऊपर अनेक प्रकार के विचार प्रकट किये गये है जिनमें से कुछ प्रमुख विचार निम्न प्रकार है:——

१- प्रो० पी० जे० थामस और के० सी० रामकृष्णन के अनुसार वर्ष में कृषि श्रमिकों तीन से पांच महीने तक कार्य मिलता है इसके अलावा गैरकृषि कारणाभी अलग से तीन माह कार्य मिल जाता है।[1]

२- दी बंगाल लैण्ड रैवेन्यू कमीशन के अनुसार कृषि श्रमिकों को ६ माह तक कार्य मिलता है बंगाल के जिस जिले में केवल अमन की खेती है वहां केवल ३ से ४ माह वर्ष में काम मिलता है।[2]

३- श्री जैक के अनुसार बंगाल में जहां जूट की खेती होती है वहां कृषि श्रमिकों को ९ माह वर्ष में काम मिलता है और जहां धान की खेती होती है वहां ७ से ५ माह कार्य मिलता है।[3]

४- डा० मुकर्जी के अनुसार उत्तरीय भारत में कृषि श्रमिकों को २००दिन से अधिक कार्य नहीं मिलता है यदि दो एकड़ धान की खेती की जाती है, आधा एकड़ केवल गन्ने की खेती की जाती है तो इससे वर्ष में २५० दिन काम मिलता है यदि कृषक जौ के साथ कोदों और अरहर की खेती करता है तो औसत रूप से १५० दिन काम मिलता है।[4]

१- साउथ इंडियन विलेजेज, ए रिसर्वे।

२- रिपोर्ट आफ दि बंगाल लैण्ड रैवेन्यू कमीशन, पृ०११।

३- जैक: इकोनोमिक लाइफ आफ बंगाल डिस्ट्रिक्ट, पृ० ३८-३९।

४- मुकर्जी: रूरल इकोनामी आफ इण्डिया।

५- लारेन्सु के अनुसार उत्तर-प्रदेश के गोण्डा, बहराईच और गोरखपुर जिले में कृषि श्रमिकों को ११० दिन पूर्ण रोजगार मिलता है। १८८ दिन पूर्ण रूप से आराम करते है।[1]

६- बोर्ड आफ इकोनामिक इनक्वायरी पंजाब के अनुसार पंजाब में औसत रूप से १५० दिन से अधिक पूर्ण रोजगार प्राप्त होता है होशियापुर में म१० घंटा प्रतिदिन कार्य करके २७८ दिन तक कृषि श्रमिकों को काम मिलता है।[2]

उपरोक्त बातों से स्पष्ट होता है कि भूमि की बनावट, कृषि के स्वरूप और मौसम आदि के अनुसार कृषि श्रमिकों को विभिन्न प्रकार से कार्य के समय प्राप्त होते है और वर्ष में शेष दिनों में वह बेकार रहता है।

अस्थाई पब्लिक टेस्ट वर्क के माध्यम से विकास हो सकता है क्योंकि इससे कार्य आसानी से मिल जाता है उत्तर-प्रदेश सरकार के माध्यम से विभिन्न चरणों में यह कार्य प्रगति पर है इससे अनेक व्यक्ति को रोजगार प्राप्त हो रहा है फिर भी यह सन्तोषजनक नहीं है क्योंकि इससे धन का उपयोग ठीक ढंग से नहीं होता है तथा भ्रष्टाचार को बढ़ावा मिलता है।

कुटीर उद्योगों का विकास: ----- राज्य में ऐसे कुटीर - उद्योग धन्धों का विकास होना चाहिए जिससे कृषि कार्य करने के बाद में जो समय बचता है उसे कुटीर उद्योगों में लगाकर रोजगार को बढ़ा सकें। वर्तमान समय में जिन वस्तुओं का उत्पादन कुटीर उद्योगों के माध्यम से होना चाहिए उनका उत्पादन बड़े-बड़े उद्योगों के माध्यम से होने लगे है। इस कारण कुटीर उ उद्योगों का ह्रास हुआ है। १९ वीं शताब्दी में भारत के कुटीर उद्योग का विश्व में महत्वपूर्ण स्थान था। हमारी कलात्मक वस्तुओं व वस्त्रों की विश्व में अधिक मांग थी किन्तु ब्रिटीश शासन काल में, उसकी विदेशी नीतियों के परिणाम स्वरूप भारतीय कुटीर-उद्योगों कोआघात पहुंचा।

कुटीर-उद्योगों के विकास में निम्नलिखित तर्क दिये जा सकते है: --------

१- कृषि के साथ-साथ कुटीर उद्योगों के विकास से कृषकों के साथ ही साथ अन्य व्यक्तियों की आय में वृद्धि होगी।

१- लारेन्सु: एग्रीकल्चरल लेबर एण्ड मार्केट गार्डनिंग इन अवध, पृ० ११४।

२- बोर्ड आफ इकोनोमिक इनक्वायरी पंजाब, पब्लिकेशन न० १ एण्ड २।

२- सम्पूर्ण भारत में अति जनसंख्या की समस्या है इससे उत्तर-प्रदेश अछूता नहीं है इसलिए कृषि के अलावा अन्य लोगों को कुटीर उद्योगों में रोजगार प्राप्त हो सकता है।

३- बहुत बड़ा जन समूह ऐसा है जिसके पास न तो दोनों समय का भोजन है और न तो मौसम के अनुसार कपड़े और रहने के लिए मकान भी नहीं है कुटीर उद्योगों के माध्यम से इनको काम मिल सकता है जिससे उनका जीवन स्तर ऊँचा उठ सकता है।

४- मौसमी बेकारी के समय में कुटीर उद्योगों में कार्य करके अपनी आय को कृषक बढ़ा सकते है इसके साथ ही साथ बेकारी की समस्या का सामाधान भी हो सकता है।

संगठित क्षेत्र में रोजगार के अवसर अत्यन्त सिमित है सेवायोजन कार्यालय के अनुसार २५.३ लाख व्यक्ति संगठित क्षेत्र में कार्यरत है। इस प्रकार कुल कार्यरत व्यक्तियों के केवल ७ प्रतिशत ही संगठित क्षेत्र में लगे है। स्पष्ट है कि संगठित क्षेत्र में रोजगार के अवसर सीमित है। तथा अन्य क्षेत्र में बेरोजगार व्यक्तियों को रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने हेतु प्रयास करने होगें।

छठीं पंचवर्षीय योजना के अर्न्तगत स्वतः नियोजन पर विशेष बल दिया गया है। छठीं पंचवर्षीय योजना में अपनायी गयी रणनीति के अनुसार ३० मिलियन अतिरिक्त रोजगार के अवसर जो सृजित होगें, उनमें से २३ मिलियन स्वतः रोजगार के क्षेत्र में होगें।[1]

उद्योग विभाग, बैंको तथा श्रम विभाग के अर्न्तगत प्रशिक्षण एवं सेवायोजन निदेशालय द्वारा विशेष रूप से प्रयास किये जा रहे है। सेवायोजन कार्यालयों द्वारा स्वतः नियोजन के क्षेत्र में बेरोजगार व्यक्तियों को स्वतः नियोजन हेतु प्रेरित किया जता है। दूसरी और उद्योग निदेशालय द्वारा कच्चे माल, व्यवसायिक एवं अन्य सुविधायें तथा बैंको द्वारा कर्ज की सुविधायें उपलब्ध कराई जाती है।

नये रोजगार के अवसरों में लघु उद्योगों का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। लघु उद्योगों के द्वारा बेरोजगारी की समस्या का सामाधान काफी हद तक किया जा सकता है। इस समय राज्य में कुल ६१ हजार लघु इकाईयां स्थापित है जिनमें लगभग ७७५,००० व्यक्ति लगे हुए है।[2] लघु उद्योगों के वृद्धि

१- उ०प्र० रोजगार पत्रिका ।। मासिक ।। रविवार १५ अप्रैल १९८४ - सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उत्तर-प्रदेश, पृ०६।

२- वही, ।

के सम्बन्ध में किये गये एक अध्ययन के अनुसार रसायनिक, इलेक्ट्रानिक, इंजीनियरिंग और कृषि पर आधारित उद्योगों में तेजी से विकास हो रहा है। राज्य के लघु उद्योगो में प्रति वर्ष १६०० करोड़ रु०का समान का उत्पादन होता है। इस प्रकार लघु उद्योगों से न केवल बेरोजगार लोगों को रोजगार के अवसर उपलब्ध होते है बल्कि उत्पादन में भी वृद्धि होती है। राज्य सरकार द्वारा लघु उद्यमियों को विशेष तकनीकी एवं वित्तीय सहायता उपलब्ध करायी जा रही है ताकि उक्त उद्योगों की संख्या में अधिक वृद्धि की जा सके।

उत्तर प्रदेश में, बेरोजगारी, अल्प बेरोजगारी की समस्या विस्तृत रूप में पायी जाती है। और यदि विशेष प्रयास और कार्यक्रम द्वारा अतिरिक्त रोजगार के अवसरों में वृद्धि नहीं की जाती है तो यह समस्या और उग्र रूप धारण करती जायेगी। प्रान्त में केन्द्रीय सरकार द्वार गरीबी-निवारण हेतु चलाये गये कार्यक्रम जैसे- इन्टीग्रेटेट रूरल डविल्पमेन्ट प्रोग्राम, स्पेशल कम्पोनेन्ट प्लान और नेशनल रूरल इम्प्लाइमेन्ट प्रोग्राम आगे भविष्य में अतिरिक्त रोजगार के अवसरों का सृजन करेंगे। योजनाओं में सरकार द्वारा कृषि के लिए दिये गये प्रमुखता से, गहन खेती द्वारा कृषि उत्पादन में वृद्धि करने से ग्रामीण क्षेत्रों के आय मेंअतिरिक्त वृद्धि होगी और अल्प रोजगार में कमी आयेगी। विकेन्द्रीकरण योजना भी स्थानीय प्राप्त साधनों और दक्षता का दोहन करके अतिरिक्त रोजगार का सृजन करने में समर्थ होगी।

अतिरिक्त मानव-शक्ति को अनुपूरक व्यवसाय में लगाने का प्रयास किया जा रहा है। प्रदेश के सभी जिलों में नये उद्योगों को लगाने की योजना बनायी गयी है और इन्हें पीछड़े क्षेत्रों में लगाने के लिए प्रबन्धक तथा मार्गदर्शक या अन्वेषक के लिए प्रेरणा दिया जा रहा है। औद्योगिक क्षेत्रों के प्रबन्ध के लिए अच्छी सुविधायें प्रदान की जाती है। व्यक्तिगत औद्योगिक यूनिटों की समस्या के सम सामाधान शीघ्रताशीघ्र उच्चे स्तर के माहवारी बैठकों के द्वारा दूर किया जा रहा है औद्योगिकरण में बढ़ती गति और इसका विस्राव दोनों ही कुछ समय के बाद रोजगार समस्या पर दबाव डालेंगें।

। अधिक रोजगार की सम्भावनायें वाली मध्यम श्रेणी के औद्योगिक यूनिटों की स्थापना हेतु प्रदेश में प्रोत्साहन मिल रहा है। मध्यम तकनीकी जैसे कांच की पट्टी, खड़सारी, चीनी उद्योग प्रोत्साहित हो रहें है। धीरे-धीरे इन मध्यम तकनीकों के तरीकों में सुधार के लिए शोध के लिए प्रोत्साहन तथा प्रान्तीय सरकार द्वारा अनुदान दियो जा रहे।

अभी भी उत्तर-प्रदेश के अर्थव्यवस्था में प्रान्त, केन्द्रीय सरकार तथा नीजी क्षेत्र में लगे यूनिटों में विनियोग की निरन्तर समस्या बनी हुई है। नीजी विनियोग निर्णय और संयुक्त तथा नीजी क्षेत्रों के यूनिटों के अनुज्ञा पत्रों को देने के केन्द्रीय सहायता, का निर्णायक सुधार औद्योगिक अधार पर प्रदेश में अधिक संख्या में नये रोजगार के अवसरों का निर्माण करेगा और इस प्रकार कृषि व्यवसाय का वर्तमान दबाव कम हो जायेगा। नीचे की तालिका में क्षेत्रानुसार रोजगार का अनुमान लगाया गया है:——

तालिका न0 : १

अतिरिक्त सीधे रोजगार का सृजन १९८४-८५[१]

बड़े क्षेत्र का नाम	रचना ।। लाख मानव दिवस में ।।	निरन्तर क्रम ।। मानव-वर्ष ।।
१- कृषीय और सम्बन्धित सेवाऐं	३७८.८६	८३९६
२- सहकारिता	०.७९	१३९७
३- सिंचाई, बाढ़ निर्माण और शक्ति	१४८३.८८	१३८१९
४- औद्योगिक और खनिज पदार्थ	---	३८०४८
५- यतायात और संचार	९७.४५	३४६७
६- समाजिक और जन-समुदाय सेवाऐं	८१.४७	२१३५४
७- आर्थिक सेवाऐं	---	२०५३
८- सामान्य सेवाऐं	---	३००
योग	२०४२.४५	८८८३४

१- कच्चा अनुमान पीछले आंकड़ों के अधार पर।

२- विभागीय उद्देश्य प्रतीक्षा में है।

१- ड्राफ्ट एनुअल प्लान, १९८४-८५, वाल्यूम-१, उ0प्र0, पृ0-८७।

समस्या का समाधान

समस्या का समाधान

बेरोजगारी को दो भागों में बांटा जा सकता है - १- शहरी बेरोजगारी और २-ग्रामीण बेरोजगारी। दोनों बेरोजगारी की समस्याऐं कुछ अलग-अलग है इस लिए दूर करने के उपाय भी भिन्न-भिन्न है लेकिन कुछ अधारभूत सुझाव है जो दोनों प्रकार की बेरोजगारीपर लागू होते है जैसे :- जनसंख्या पर नियंत्रण करके, विनियोग की मात्रा में वृद्धि द्वारा, देश का तीव्र गति से आर्थिक विकास करके रोजगार के अवसर को बढ़ाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त उत्तर-प्रदेश में बेरोजगारी का समस्या के निवारणार्थ अथवा अधिक रोजगार का दशा उत्पन्न करने के लिए निम्न सुझाव दिये जा सकते है :------

१- जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण :---- यदि प्रदेश का जनसंख्या २-२.५ प्रतिशत वार्षिक की वर्तमान दर से बढ़ती रही तो बेरोजगारी की समस्या का कभी भी समाधान नहीं किया जा सकता। जनसंख्या की वार्षिक वृद्धि को एक प्रतिशत से भी नीचे लाना होगा। इसके अतिरिक्त रोजगार के साधनों में तेजी से वृद्धि करनी होगी और जनसंख्या की अनियंत्रित वृद्धि को रोकना होगा तभी इस समस्या को कम किया जा सकता है। जनसंख्या नियंत्रणमें परिवार नियोजन का कार्यक्रम महत्वपूर्ण है। यद्यपि परिवार-नियोजन कारोजगार परदीर्घकाल में ही प्रभाव पड़ सकता है क्योंकि आगामी लगभग २० वर्षों में जिन व्यक्तियों के लिए रोजगार की व्यवस्था करनी है वे पहले ही जन्म ले चुके है। लेकिन इसका तात्पर्य यह नहीं है कि परिवार नियोजन कार्यक्रम महत्वहीन है। इस प्रकार इस समस्या के समाधान के लिए जनसंख्या पर नियंत्रण करना होगा और प्रदेश का आर्थिक विकास तेज करना होगा।

२- विनियोग एवं बचत :----- प्रारम्भिक अर्थव्यवस्था के लिए बचत को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए जिससे विनियोग में वृद्धि होगी और पूंजी निर्माण होगा। नवीन पूंजी विनियोग से औद्योगिक विकास होगा जिससे लोगों को नये-नये रोजगार के अवसर प्राप्त होगें। इस प्रकार अधिक बचत --- पूंजी निर्माण --- विनियोग में वृद्धि --- औद्योगिक विकास --- रोजगार सुविधा में वृद्धि।

३- <u>शिक्षा में परिवर्तन</u> :----- वर्तमान शिक्षा प्रणाली को रोजगार उन्मुख बनाया जाना चाहिए साथ ही साथ शिक्षा प्रणाली में शारिरीक श्रम को भी स्थान दिया जाना चाहिए। जिससे व्यवसायिक शिक्षा का विस्तार किया जा सकता है। और लोगों के रोजगार में वृद्धि हो सकती है।

४- <u>रोजगार मंत्रालय</u> :---- बेरोजगारी की समस्या केवल उत्तर-प्रदेश की ही नहीं, बल्कि पूरे देश की समस्या है। इस लिए इस गम्भीर समस्या के हल के लिए एक अलग मंत्रालय की आवश्यकता है जो इस बात पर ध्यान रखे कि रोजगार के साधन अधिक से अधिक कहां उपलब्ध है, उन पर अति शीघ्र चुनाव कराये जाय। कभी-कभी रिक्तियां रहती है, लेकिन उन पदों पर जल्दी चुनाव नहीं कराये जाते यह मंत्रालय सेवायोजन कार्यालय की क्षमता में भी वृद्धि करने का प्रयत्न करे।

उपरोक्त कुछ सामान्य सुझाव दिये गये है जिससे कुछ सीमा तक बेरोजगारी कम की जा सकती है। लेकिन उत्तर-प्रदेश एक कृषि प्रधान राज्य है। इसकी समस्याऐं अन्य राज्यों से भिन्न है। इस प्रदेश की लगभग ७२ प्रतिशत जनसंख्या गांवोंमें निवास करती है इस लिए ग्रामीण बेरोजगारी ग्रामोधोगों के सहारे किस सीमा तक हल की जा सकती है, इस पर विचार किया जायेगा :-----

<u>बेरोजगारी और ग्रामीण उद्योग</u> :----- उत्तर-प्रदेश एक कृषि प्रधान राज्य है, जहां पूंजी की कमी है और श्रम की अधिकता है। इस लिए पूंजी विनियोग करते समय इस बात पर ध्यान रखना चाहिए कि विनियोग श्रम प्रधान होना चाहिए, पूंजी प्रधान नहीं, तभी अधिक से अधिक लोगों को रोजगार दिया जा सकता है जैसे :---

१- कुटीर एवं लघु उद्योगों का विकास करके।

२- प्राकृतिक साधनों का सर्वेक्षण करके नये उद्योगों को स्थापित करने की संभावनाओं का पता लगा चाहिए।

३- कृषि सहायक धन्धों का विकास किया जाना चाहिए, जैसे :- पशुपालन, मुर्गी पालन, दुग्ध व्यवसाय, मत्स्य पालन इत्यादि।

४- गांवों में बिजली घर की स्थापना की जाय।

५- सड़क निर्माण अधिक से अधिक किया जाय।

६- ग्रामीण मकान बनाने की सुविधाऐं दी जाय।

७- छोटी सिंचाई सुविधाओं का विस्तार किया जाय।

८- सहकारिता का विकास किया जाय।

९- कृषि सेवा केन्द्र स्थापित किये जाय ताकि तकनीकी व्यक्तियों को गांवों में ही रोजगार मिल जाय।

१०-अन्त्योदय कार्यक्रम तेज किया जाय जिससे गरीबों को भी रोजगार के अवसर मिल जाय।

११-ग्रामीण विकास के हर सम्भव प्रयास किये जाय।

१२-लोगों के मनोवृत्ति में परिवर्तन किया जाय, इत्यादि।

इस प्रकार हम देखते है कि गांवों में भी रोजगार देने के बहुत से साधन है, जिसमें अधिक से अधिक लोगों को रोजगार दिया जा सकता है। गांवों में शहरों की तरह हर प्रकार की सुख सुविधा का विस्तार कर देना चाहिए जिसेस ग्रामीण शिक्षित रोजगार बम्बई, कलकत्ता, दिल्ली आदि शहरों की ओर न भागें। गांवों में पक्की सड़के, अस्पताल, मनोरंजन के साधन, पुस्तकालय आदि की व्यवस्था होनी चाहिए इस प्रकार लोगों की मनोवृत्ति में परिवर्तन होगा और लोग अपने व्यवसाय को गांवों में ही रखना पसन्द करेंगे। उत्तर-प्रदेश में ग्रामीण उद्योग-लाखों कार्यशक्ति जनता के जीविका का संबल बन सकता है इस ग्रामीण उद्योगों के सहारे वर्ष १९७७-७८ में कितने लोगों को रोजगार दिया गया था और ग्रामीण बेरोजगारी उन्मूलन में इन ग्राम उद्योगों की कितनी क्षमता है निम्नलिखित तालिका से स्पष्ट है।

<u>तालिका नः १</u>

उद्योग	१९७७-७८ में प्राप्त रोजगार संख्या	रोजगार क्षमता लाखों में अनुमानित
१	२	३
१- अनाज दाल प्रशोधन	२१२३	२.५
२- गुड खांडसारी	११८३१२	४.०
३- ताड़ी उद्योग	३३२२	५.०
४- घानी तेल	३१९४	६.८
५- चर्म उद्योग	८४९६	५.०
६- कुम्हारी उद्योग	५१८५	१.०
७- कागज उद्योग	५३०	३.५
८- अखाद्य तेल एवं साबुन उद्योग	७८२	३.०

१	२	३
९– दियासलाई	७९०	२.५
१०–मधुमक्खी पालन	६१२१	३.०
११–काष्ठ एवं लौह कला	३०००	३.५
१२–रेशा उद्योग	२५४३	४.०
१३–चूना उद्योग	४९२५	३.०
१४–दस्तकारी	३५२५	५.० २
१५–अन्य उद्योग, खादी, ऊन सूत, हथकरघा आदि	७०५२	१०.५
योग	१६९८४०	६२.५

इस प्रकार प्रदेश में बेरोजगारी के हल के लिए ग्रामीण उद्योगों का विकास आवश्यक है। अब भी ग्रामीण उद्योगों में रोजगार देने की क्षमता बहुत अधिक है। लेकिन गांवों में उद्योगों का विकास तभी हो सकता है, जबकि शहरों की सुख-सुविधाओं को गांवों तक पहुंचायाजाय और ग्रामीण उद्योगों को राजकीय संरक्षण प्राप्त हो।

उत्तर-प्रदेश में रोजगार देने केलिए कुछ योजनाऐं है। यदि उन्हें कार्यान्वित किया गया तो बहुत लोगों को रोजगार प्राप्त हो सकेगा। यदि योजना केवल योजना ही रह गयी तो बेरोजगारी का स्वरूप और गम्भीर होगा। पूर्वांचल की औद्योगिक गोष्ठी में घोषणा की गयी है कि १९७९-८० के वर्ष में २८.५० करोड़ रु० के नियोजनद्वारा तीन लाख बेरोजगारों को उत्पादक रोजगार मिलेगा और इस प्रकार की वार्षिक योजनाऐं तब तक चलेगी जब तक सबको रोजगार सुलभ नहीं हो जाता। गोष्ठी में योजना का जो विवरण प्रस्तुत किया गया उसके अनुसार वर्ष १९७९-८० में ३० हजार व्यक्ति को लघु स्तरीय क्षेत्र में रोजगार मिलेगा और इसमें ६ करोड़ रु० व्ययहोंगें। इसके अतिरिक्त हस्तशील उद्योग में १ लाख २० हजार लोगों को खादी तथा ग्रामोद्योग में १० हजार लोगों को, हथकरघा उद्योग में ६० हजार लोगों को काम मिलेगा।

क्रमश: १- प्रगति प्रतिवेदन १९७७-७८-उत्तर-प्रदेश खादी तथा ग्रामोद्योग बोर्ड, कानपुर, पृ०६४-६५।

बेरोजगारी की समस्या को हल करने के लिए सुझाव देने के लिए गठित भगवती समिति ने १७ मई१९७३ को अपनी अन्तिम रिपोर्ट भारत सरकार के समक्ष प्रस्तुत कर दी तथा निम्नलिखित सुझाव दिये गये :[1]------

१- बेरोजगारों को काम की गारन्टी देने के लिए एक राष्ट्रीय कार्यक्रम लागू किया जायेगा।

२- कार्याधिकार योजना सम्पूर्ण०देश में लागू जाये।

३- देहातों के विद्युतीकरण, सड़क निर्माण, ग्रामीण मकानों और लघु सिंचाई योजनाओं को अगामी दो वर्षों में तेजी से लागू किया जाय।

४- काम के घण्टों को सप्ताह में ४८ से घटाकर ४२ किया जाये और फैक्टरियों को सप्ताह में पूरे ७ दिन तक प्रभावी रूप में चालू रखा जाय ताकि रोजगार में वृद्धि हो।

५- रोजगार एवं शक्ति नियोजन पर एक राष्ट्रीय आयोग गठित किया जाय।

६- विवाह आयु लड़कों के लिए २१ वर्ष और लड़कियों के लिए १८ वर्ष कर दी जाय।

पांचवीं योजना में रोजगार की उपर्युक्त नीतियों को स्वीकार करते हुए कुछ अन्य कार्यक्रम भी चलाये गये :[2]----

१- लघु उद्योगों के विस्तार से रोजगार बढ़ेगा लघु उद्योग कृषि पर आधारित होने चाहिए या ऐसे बड़े उद्योगों से सम्बन्ध होना चाहिए जो छोटी इकाइयों के लिए कच्चामाल बनाते या उससे यन्त्र आदिआदि खरीदते।

२- शिक्षा को रोजगारोन्मुखी स्वरूप प्रदान करना है।

३- एक ओर अर्थव्यवस्था को अधिक रोजगार प्रदान करने योग्य बनाने तथा दूसरी ओर जनसंख्या पर प्रभावी नियंत्रण द्वारा बढ़ती श्रमशक्ति की बाढ़ को रोकने से बेरोजगारी की समस्या हल हो सकती है।

४- समाजिक सेवाओं - सड़क निर्माण, भवन निर्माण, जलपूर्ति, सफाई परिवहन, संचार, कृषि उपकरण, मरम्मत, व्यापार बीमा, आदि क्षेत्रों में रोजगार प्रदान करने की अधिक क्षमता हो।

१- द इकोनामिक टाइम्स मई १७-१९७३।

२- योजना, ७ फरवरी ६ सितम्बर १९७६-लेखक ए० के० परीण।

५- कृषि क्षेत्र में किये जा रहे सुधारों जैसे भूमि सुधार, कार्यक्रम,छोटे कृषकों को कम दर पर उपकरण आदि प्रदान करना, वितरण व्यवस्था को गरीब कृषकों के अनुरूप बनाना आदि में तेजी लाकर ओ और औद्योगिक उत्पादन की मांग बढ़ाने से रोजगार बढ़ेंगे।

६- निजी क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों का भरपूर लाभ उठाया जाना चाहिए तथा इस क्षेत्र का रोजगार देने के सामाजिक दायित्व के प्रति जागरूक बनाना चाहिए।

७- औद्योगिक क्षेत्र में लगभग पूर्ण क्षमता तक काम होने से रोजगार बढ़ सकता है।

इस प्रकार उपर्युक्त रोजगार की नई नीतियों को अपना कर रोजगार बढ़ाने की कोशिश की गयी किन्तु राजनितिक मत भेदों के कारण कार्यक्रम केवल कोरे कागज पर ही रहे।

वर्तमान समय में बेरोजगारी तथा साधनों एवं विभिन्न योजनाओं की असफलताओं को देखते हुए कोई महत्वपूर्ण सुधार होने की सम्भावना नहीं है अतः इसके समाधान के लिये चारों ओर से प्रहार करने की आवश्यकता है। इसके लिए निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किये जाते हैं जिनमें परिस्थिति के अनुसार कुछ परिवर्तन किया जा सकता है :------

१- औद्योगिक विकास

२- श्रम की गतिशिलता में वृद्धि।

३- कृषि से सम्बन्धित औद्योगिक विकास

४- रोजगार कार्यालयों की कार्य विधि में सुधार।

५- श्रम के प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन।

६- सही आंकड़ों का प्रकाशन।

७- बेरोजगारी भत्ता दिया जाय।

८- अवकाश ग्रहण करने की आयु में कमी। इत्यादि।

१- औद्योगिक विकास :------ बेरोजगारी की समस्या को दूर करने के लिए देश में तेजी से औद्योगिककरण पर जोर देना चाहिए। भारत जैसे कृषि प्रधान देश के लिए यह तो अ और ही आवश्यक है। जहां के अधिकांश लोग अनावश्यक रूप से कृषि कार्य में लगे रहते है और बेकार

२- <u>श्रम की गतिशीलता में वृद्धि</u> : ----काम मिले या न मिले हम परदेश नहीं जायेंगे, इस बात को अब मन से निकाल देना चाहिए । गावों में केवल कृषि में अनावश्यक रूप से फंसी जनता को नगरों से मिलों तक पहुंचना चाहिए । इसके लिए उन्हें शिक्षा, सूचना और आवश्यकता पड़ने पर आर्थिक सहायता भी मिलनी चाहिए ।

३- <u>कृषि से सम्बन्धित औद्योगिक विकास</u> : ------ कृषि में भी रोजगार के अवसरों में वृद्धि करने के लिए अभी बहुत बड़ा क्षेत्र पड़ा है । इसके लिये खेती की छोटी-छोटी तथा दूर-दूर तक बिखरी हुई इकाइयों को एक किया जाय। सहकारिता पर विशेष बल देना चाहिए ।

३-<u>रोजगार कार्यालय की कार्य विधि में सुधार</u> : ----- रोजगार कार्यालयों की कार्य विधि में सुधार होना चाहिए । इनके यहां भौतिक तत्वों को ध्यान में रखते हुए यांत्रिक तथा व्यवसायिक शिक्षण का भी प्रबन्ध किया जाना चाहिए । सरकार को नियोक्ता पर यह दबाव डालना चाहिए कि वह अपने यहां के लिये कर्मचारियों की भर्ती रोजगार कार्यालय द्वारा ही करें ।

४- <u>दृष्टिकोण में परिवर्तन</u> : ----- शिक्षित वर्ग में शारीरिक श्रम के प्रति उत्साह उत्पन्न कराय जाय ताकि वे किसी भी प्रकार के शारीरिक कार्य में रुचि लेकर कार्य कर सकें और केवल सफेद पोशी के पीछे ही न रह जाये । डिग्री देने से पूर्व एक साल तक कुछ निश्चित भत्ता देकर गांवों में कार्य कराया जाना चाहिए ताकि हमारे नवयुवक वास्तविक भारत वर्ष का दर्शन कर सकें ।

५- <u>सही आकड़ों का प्रकाशन</u> : ----बेकारी सम्बन्धी आंकड़ों की जानकारी के लिए उचित व्यवस्था की जानी चाहिए । मनगढ़न्त तथा भ्रामक आकड़ो को प्रस्तुत नहीं किया जाना चाहिए ।

६- <u>बेरोजगारी भत्ता दिया जाय</u> : --- १७ मार्च , १९७२ को लखनऊ में आयोजित एक अखिल भारतीय छात्र नेता सम्मेलन में यह मांग की गई कि काम करने का अधिकार एक बुनियादी अधिकार माना जाना चाहिए । जिन लोगों को रोजगार न मिल सके

उन्हे बेरोजगारी भत्ता दिया जाना चाहिए । भारत जैसे विशाल बेरोजगार संख्या वाले देश के लिए यह बहुत ही मुश्किल कार्य है, क्योंकि ऐसे कर देने पर कुछ व्यक्तिगत रोजगार में लगे लोग भी इसका लाभ पाने के लिए कोशिश करेंगे । फिर भी कुछ राज्यों में इसे प्रयोग के रूप में लागू किया गया है ।

७- अवकाश ग्रहण करने की आयु में कमी : ------अभी विभिन्न क्षेत्रों में कर्मचारियों द्वारा अवकाश ग्रहण करने की आयु ५५-६० वर्ष है। हमारी सम्मति में जिस कर्मचारियों ने ३० वर्ष की नौकरी या ५० वर्ष की आयु इन दोनों में से जो भी पहले हो, पूरी कर ली हो तो उन्हें अनिवार्य रूप में अवकाश प्रदान किया जाय ताकि इससे निरन्तर बढ़ती हुई कार्य-क्षमता मिल सके और नये कर्मियों को रोजगार भी मिल सके ।

उपर्युक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि बेकारी भारत की पृष्ठि भूमि में अपना बड़ा रूप धारण करती जारही है । आज राष्ट्र के प्रत्येक शुभ-चिन्तक इसका हल ढूँढ़ने का प्रयत्नकर रहें है रोजगार देना र राज्य का अनिवार्य कार्य है । बिना इसकी समस्या को हल किये बिना कल्याणकारी राज्य की स्थापना करना अपनी भूल है । हमें अपने आर्थिक प्रणाली का नियोजन इस प्रकार से करना होगा कि उत्पादन तथा उपभोग में उचित सन्तुलन बना रहे । हमारे प्रदेश में इस समय सर्वांगिक विकास की आवश्यकता है । यदि उचित समय पर इस समस्या का हल हम नहीं निकाल लेतेतो इसका परिणाम ब बहुत भंयकर होगा ।

बेकार व्यक्ति के अन्दर बड़ी भयावह दुर्भावनाये उठती है और इससे वह गलत कार्यों की ओर उन्मुख हुआ करता है हमारी सभ्यता में इस प्रकार के गलत कार्यों की भर्त्सना की गयी है । परन्तु विभुक्षितं किम् न करोति पापम् कहकर कुछ स्वीकृति भी किया गया है । यद्यपि यह नहीं होना चाहि हमारी समझ में इस समस्या का समाधान केवल नारों को लगाने, झूठे आश्वासन देने, समय की अनुकूल भाषण देने । कागज पर लम्बी योजनाओं को बनाने आदि से होने वाला नहीं है । आज आवश्यकता है सही दिशा में सही कदम उठाने की । बेरोजगार लोगों को रोजगार दिलाने का दायित्व सरकार का का है । अतएव उसे इस दायित्व को पूरा करना चाहिए ।

रोजगार अवसरों में वृद्धि करने की सबसे अधिक गुंजाइश अभी ग्रामीण क्षेत्रों में है कृषि तथा इससे सम्बन्धित अधिकांश धन्धों के श्रम प्रधान होने के कारण ग्रामीण रोजगार क्षेत्र की प्रगति के

के द्वारा तमाम अर्द्धबेकारी तथा पूर्ण बेरोजगारों को रोजगारों प्राप्त होने की सम्भावना है। बेरोजगारी तथा अर्द्धबेकारी ग्रामीण अर्थव्यवस्था की एक ऐसी विशेषता है जिसके कारण ग्रामीण निर्धनता व ऋण ग्रस्तता की समस्या अधिक जटील होती जा रही है। अत: ग्रामीण बेरोजगारी तथा अर्द्धबेकारी को उत्पादक क्रियाओं में लगाना एक प्रकार से ग्रामीण तकनीकी सम्बन्धी आन्दोलन है। ग्रामीण विकासीय प्रकार्यक्रमों का एक उद्देश्य कृषि कार्य में लगे हुए व्यक्तियों के लिए गैर कृषि मौसम में पूरक रोजगार की व्यवस्था करना होना चाहिए किन्तु ग्रामीणों की लिए रोजगार की व्यवस्था करते समय दो बातों पर ध्यान रखना उचित है — १- कृषकों को रोजगार प्रदान करते समय उनका इस इच्छा पर ध्यान रखना आवश्यक है कि रोजगार की सुविधाएँ उनकी कृषि भूमि के आस-पास हो ।। यह बात कृषकामजदूरों केलिए भी लागू होता है। २- ऐसे धंधों के विस्तार पर अधिक ध्यान रखना चाहिए जिनमें अधिक श्रमशक्ति तथा संसाधनों की खपत होने के साथसाथ परम्परागत ग्रामीण तकनीकी के माध्यम से ग्रामीण परिवारों को पर्याप्त रोजगार उपलब्ध होने के साथ उनकी आय में भी वृद्धि हो सकती है।

ग्रामीण बेरोजगारी की समस्या को दूर करने में ग्रामीण उद्योगों के विस्तार की योजना आप काफी हद तक सहायक हो सकती है। इसकेद्वारा न केवल रोजगार के अवसरों में वृद्धि होगी बल्कि राष्ट्रीय आर्थिक विकास में भी योगदान मिलेगा। उदाहरण के लिए खादी ग्रामोद्योग के विकास के द्वारा न केवल रोजगार के अवसरों में ही वृद्धि होगी बल्कि इसके द्वारा एक परम्परागत राष्ट्रीय हस्त कला के ह्रास को रोका जा सकता है। इस उद्योग में तीन मिलियन बुनकरों को रोजगार प्राप्त है। ए एक अनुमान के अनुसार इन उद्योगों में एक अतिरिक्त रोजगार के अवसर के लिए केवल ३५० रु० की आवश्यकता होती है। अत रोजगार नीति का लक्ष्य इस उद्योग की अधिकाधिक उन्नति करना होना चाहिए।

ग्रामीण उद्योगों में अनेक ऐसे उद्योग हो सकते है जिनकी प्रगति द्वारा रोजगार के अवसरों में वृद्धि करना सम्भव है। कुल लाभप्रद उद्योगों की सूची निम्नलिखित है :————

१- चर्म सामग्री का उत्पादन।

२- चावल की छटाई ।।छोटी मशीन की सहायता से ।।

३- तेल पेराई।

४- कपास के सूत का उत्पादन ।।छोटी मशीनों की सहायता से ।।

५- बुनाई ।। शक्ति - चालित करघा ।।

६- रस्सी बनाना ।

७- मौजे, निवाड की बुनाई ।

८- जूट के सूत का उत्पादन और टाट की वस्तुओं की बुनाई ।

९- साबुन निर्माण ।

१०-मोमबत्ती का निर्माण ।

११- दियासलाई का निर्माण ।

१२- फल और वानस्पतिक वस्तुओं के डिब्बे और साग तथा मुरब्बे ।

१३- दाल आदि का बनाना ।

१४- अचार आदि बनाना ।

१५-लुहार, बढ़ई सुनार आदि कार्य ।

१६- मधुमक्खी पालन ।

१७- मत्स्य पालन ।

१८- दुग्ध व्यवसाय ।

१९- भेड़ आदिका पालन ।

२०- मुर्गी पालन ।

उपर्युक्त सूची मात्र निर्देशनाय है, पूर्ण नहीं है इसमें सन्देह नहीं कियदि उपरोक्त कार्यों को किया जाय तो विकेन्द्रीयकरण होगा और लोगों को पूर्ण रोजगार के अवसर उपलब्ध होगें । ये उद्योग बड़े उद्योगों के पूरक के रूप में है तथा इनमें पूंजी कम लगती है ।

प्रगति के लिए चुने गये ग्रामीण उद्योगों में पशु पालन, डेयरी फार्म, गोबर गैस प्लान्ट को अधिकाधिक महत्व देने की आवश्यकता है । क्योंकि इनके द्वारा रोजगार के साथ-साथ कई अन्य स समस्याओं के सामाधान होनी की सम्भावनाऐं है । ग्रामीण क्षेत्रों में राष्ट्रीयकृत बैंक तथा सहकारी संस्थाओंको पर्याप्त वित्तीय सहायता प्रदान करके ग्रामीण रोजगार के अवसरों में निश्चित रूप से वृद्धि की जा सकती है । इनके सहयोग से ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि तथा उद्योग दोनो क्षेत्र की पगति सम्भव है ।

शहरी बेरोजगारी की समस्या को दूर करने में कम लागत वाले आवासों केनिर्माण की योजना काफी सहायक हो सकती है। कम लागत के अवासों का निर्माण करना एक सामाजिक आवश्यकता भी है। इसके द्वारा सामाज के कमजोर वर्ग के लिए आवासीय सुविधा में वृद्धि होने के साथ-साथ अनेक बेरोजगारों को ।।0नमें कौशल युक्त तथा बिना कौशल वाले बेरोजगार सम्मलित है ।। रोजगार प्रदान किया जा सकता है।

रोजगार के अन्तर्गत कार्य करने के लिए कई प्रकार के अवसर हो सकते है जैसे :- १- अपने लिए कार्य करनो अथवा स्वयं कोई रोजगार करना। २- दूसरों के लिए मजदूरी पर कार्य करना। ३- दूसरा को मजदूरी पर रोजगार देना। जैसे - जैसे अर्थ व्यवस्था का विकास होता जाता है। तथा इसकी स संरचना में परिवर्त्तन होता जाता है नये तथा पूरक कार्य के अवसरों के अनुपात के मध्य तथा श्रमिकों व मालिकों के साथ-साथ स्वयं रोजगार करने वाले व्यक्तियों के अनुपात में भी परिवर्तन होता जाताहै। अतः विकास व रोजगार नीतियों का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य इन अनुपातों को नियोजित तरीकों से संतुलित करके अर्थ-व्यवस्था को सुदृढ़ बनाना होना चाहिए।[1]

रोजगार समस्या के हल के लिए छोटे तथा बड़े दोनों प्रकार के उद्योगों की प्रगति पर ध्यान देना आवश्यक है। इसी प्रकार वाणिज्य व्यापार, यतायात, शक्ति के साधनों आदि की प्रगति भी अ आवश्यक ह क्योंकि इनके द्वारा संगठित तथा असंगठित क्षेत्रों के मध्य अच्छा सम्बन्ध स्थापित हो सकता है।

मिश्रित परिणामों वाली उत्पादन विधि के द्वारा भी रोजगार वृद्धि की गुजांइश है। दूसरे शब्दों में निश्चित दुलभ साधनों के साथ वस्तुओं के मिश्रित उत्पादन में भी परिवर्तन के द्वारा रोजगार में वृद्धि की सम्भावना है। इस विधि का प्रयोग परस्पर उद्योगों तथा किसी एक उद्योग के विभिन्न स्तरों पर हो सकता है। मिश्रित वस्तओं का उत्पादन रोजगार का प्रामाणिक निर्धारक बन सकता ह।[2] अन्य वस्तुओं की तुलना में कुछ वस्तुओं के उत्पादन में श्रम की अधिक मात्रा लगती है।

१- सिंह तारलोक, इंडियाज डेवलपमेंट एक्सपेरियन्स, द मैकमिलन कम्पनी आफ इंडिया लिमिटेड, १९७४, पृ० ९१-९२।

२- मारवेट, डी०, इम्प्लाइमेन्ट इम्पलीकेसन आफ इंडस्ट्रीयलाइजेशन इन डेवलपींग कन्ट्रीज, इकोनामिक जर्नल, सितम्बर, १९७४, पृ० ४९९-५४२।

उदाहरण के लिए सूती वस्त्र उद्योग, हस्त शिल्प कला तथा इसी प्रकार के अन्य कार्य अधिक श्रम प्रधान उद्योग है। भारत जैसे विकासशील देश में औद्योगिक इकाइयों ।।विशेषकर बड़े उद्योगों।। को तकनीशियन, विपणन विशेषज्ञों तथा इंजिनियरिंग काम में लगे व्यक्तियों को ऐसी कम लागत वाली वस्तुओं व उत्पादनद विधियों की खोज करनी चाहिए जो देश के बहुसंख्यक कमजोर वर्ग की अधिकांश आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकें।

तकनीकी परिवर्तन की दर तथा तरीके के प्रोत्साहन तथा संचालन के द्वारा देश की विकासीय याम योजनाऐं रोजगार पूरक बनायी जा सकती हैं।[१] कुछ परिस्थितियों में यह सम्भव है कि तकनीकी चुनाव अधिक प्रभावी न हो तथा इनमें से किसी विशेष अथवा अनोखी तकनीकी को चुनना पड़े ।।जैसे पेट्रो-केमिकल्स जैसे निरन्तर क्रियाशील उद्योग में।। किन्तु अन्य क्षेत्रों में जहां रोजगार अधिक है और तकनी तकनीकी परिवर्तन के कारण श्रम को अपने स्थान से हटाना पड़ सकता है वहां रोजगार वृद्धि के लिए मिश्रित तकनीकी ।।श्रम व पूंजी प्रधान।। की नीति को अपनाना लाभप्रद है। यह नीति किसी एक तकनीकी का चुनाव करने वाली नीति से भिन्न है जिसे मध्यम तकनीकी अथवा उपयुक्त तकनीकी के रूप में भारत जैसे श्रम की अधिकता वाली अर्थव्यवस्था के लिए प्रयुक्त करने की सलाह दी जा सकती है[2]। भा भारत तथा उ0प्र0 राज्य के कुछ क्षेत्रों में श्रम प्रधान तकनीकों को अधिक विकसित करने तथा श्रम प्रधान की नयी तकनीकियों का विकास करते समय तकनीकी कार्य प्रणाली के सम्बन्ध में भी समस्याऐं उत्पन्न होती है। नयी विधियों की खोज के आधार पर ही नयी तकनीकियों की खोज की उपयोगिता होती है। आर्थिक आवश्यकता तथा क्रियाशील उद्यमों के लिए तकनीकी तथा उत्पादन प्रक्रिया का विशेष स्थान है। तथा दोनों--आर्थिक आवश्यकताओं तथा क्रियाशील उद्यम से तकनीकी तथा उत्पादन की प्रक्रिया निकली हुई है।[3] तकनीकी विकास को वास्तविक उत्पादन में स्वतन्त्र रूप से नहीं देखा जा सकता

राज्य एवं देश में रोजगार -पूरक तकनीकी को विकसित करने की नितांत आवश्यकता है। एक विधि के अन्तर्गत इस पर अनुसंधानों की आवश्यकता है। इस सम्बन्ध में रोजगार पूरक तकनीकी के नये

१- देखें फार आरगोमेन्ट ऑन द ट्रान्सफर आफ टेकनोलाजी फ्राम द रीच एन्ड इन इंडस्ट्रीलाइज्ड कन्ट्रीज, शुमचर ई0 एफ0, स्माल इज ब्यूटीफुल: इकोनामिक्स ऐज इफ पीपुल मैटरड, सी0 हारपर, कोलोफोन, बुक्स, न्यूयार्क, १९७५।

२- देखें कृष्णा राज, एन एनालसीस आफ द अनइम्प्लाइमेंट ड्राप वीट पालीसी इम्पीकेशन, इनटरनेशनल लेबर रीव्यू, जेनेवा, १९७१।

३- फार इवाल्यु [illegible] ... इम्पलाइमेंट ... [illegible]

संस्थानों की स्थापना की सलाह दी जा सकती है। किन्तु औद्योगिक उत्पादन इकाइयों में अनुसंधानों के द्वारा उत्पादन से सम्बन्धित समस्त समस्याओं का अधिक सरलता से हल निकाला जा सकता है। इस दृष्टि से रोजगार पूरक तकनीकी संस्थानों के उद्योग से सम्बन्धित रखना उपयोगी है।

रोजगार पूरक तकनीकी के विकास का दूसरा तरीका यह है कि आधुनिक औद्योगिक देशों में होने वाले अनुसंधानों की परिणाम तथा अपनायी जाने वाली उत्पादन तकनीकी को यदि वह उपयुक्त है तो अपने देश में भी अपना लिया जाय[१]।

रोजगार पूरक विकासीय योजनाओं के अन्तर्गत ग्रामीण कार्य योजनाओं से विशेष लाभ प्राप्त होने की सम्भावना है। अनुमान है कि केवल सिंचाई सुविधाओं के विस्तार के द्वारा प्रतिहैक्टेयर भूमि के अनाज उत्पादन में श्रम की मात्रा में अनुपातिक रूप में ६४ व्यक्ति दिन से ११५ व्यक्ति दिन की वृद्धि अथवा ८० प्रतिशत की वृद्धि की जा सकती है[२]।

अधिक रोजगार पूरक योजनाओं के सम्बन्ध में डडले जैक्सन तथा एच० एच टर्नर ने रोजगार के लिए बजट सृजन की उपयोगी सलाह दी है। इनके अनुसार बजट सृजन के अन्तर्गत बेरोजगारों को पारिश्रमिक प्रदान करने के लिए सरकारी उधार के साथ-साथ वित्तीय आय का उपयोग भी सम्मिलित है। राज्य में उपयुक्त रोजगार प्रदान करने के उद्देश्य से बजट का उपयोग किया जा सकता है। किन्तु बजट का उपयोग तभी करना चाहिए जब कि इसके द्वारा वास्तविक रूप से जरूरत मंद व्यक्तियों को ही रोजगार प्राप्त हो सके। क्योंकि यदि बजट की सहायता से निर्धन तथा जरूरतमंद व्यक्तियों को रोजगार नहीं प्राप्त हो सकता तो इससे अर्थ-व्यवस्था में स्फीतिजनित दुष्परिणामों को प्रोत्साहन मिलने की पूर्ण सम्भावना है।

जहां तक रोजगार अवसरों में वृद्धि करने का प्रश्न है नयी अवधारणा के अनुसार अधिक राष्ट्रीय उत्पादन व आय, अच्छा स्वास्थ्य तथा अन्य विकासीय उद्देश्यों के अतिरिक्त रोजगार को अपने आय में

१-देखें नोरधौश, डब्ल्यू० एच० : इनवेंशन, ग्रोथ एण्ड वेलफेयर, एम०आई० टी० प्रेस, कम्ब्रीज मास, १९६९।

२- राज कृष्णा राज," रूरल अनइम्प्लाइमेंट पोलिसिज फार फीफ्थ प्लान, इकानामिक एण्ड पोलिटिकल विकली वाल्यूम ।।।, न०३, मार्च १९७३ पृ० ४८१।

एक उद्देश्य होना चाहिए। उच्च स्तरीय उत्पादक रोजगार प्राप्त करने के लिए एक अलग आर्थिक तथा सामाजिक दृष्टिकोण की आवश्यकता है। अतः इस उद्देश्य की प्राप्ति तब तक सम्भव नहीं हो सकती जब तक की इसे विकास रणनीति का एक महत्वपूर्ण पृथक उद्देश्य न बना दिया जायें।

अधिकतरआर्थिक प्रगति की के असन्तुलनों से रोजगार की समस्या उत्पन्न होती है। श्रम-शक्ति की वृद्धि दर शहरी जनसंख्या की वृद्धि दर, शिक्षा सुविधाओं के विस्तार तथा सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था की प्रगति के मध्य व्याप्त असंन्तुलन इसके कुछ उदाहरण हैं। इसी प्रकार कार्य के प्रति लोगों के दृष्टि-कोण व उम्मीदों तथा आय व रोजगार के उपलब्ध अवसरों के मध्य भी काफी असन्तुलन की स्थिति पायी जाती है। इस प्रकार असन्तुलन के वर्तमान ढाचें में रोजगार प्रदान करने की सम्भावनायें और अधिक दुष्कर हो सकती हैं। इन असन्तुलनों पर प्रहार करके आय, शिक्षा तथा भूमि के स्वामित्व आदि की असमन्ताओं को समान बनाने में भी सहायता ली जा सकती है।

प्रशिक्षण के अभाव अथवा संसाधनों के लिए पर्याप्त विनियोग के अभाव तथा उपकरणों के प्रयोग की कमी व इनकी अक्षमता आदि के कारण अर्थ-व्यवस्था के सभी क्षेत्रों में श्रमशक्ति का अपर्याप्त शोषण हो रहा है। शिक्षित व्यक्ति अपनी योग्यता व इच्छानुसार कार्य न मिलने से बेरोजगार है तथा निजी रोजगार में लगे व्यक्तियों में भी निर्धनता व निम्न आय की समस्या इस लिए अधिक पायी जाती है क्योंकि वे उत्पादन वृद्धि की कला व विधियों की कम जानकारी रखते हैं अतः रोजगार नीति के लक्ष्यों को निर्धारण करते समय उपरोक्त सभी बातों पर पर्याप्त विचारकरते हुए इन समस्याओं को दूर करने के विभिन्न कार्यक्रमों को बनाने पर समान रूप से ध्यान देना चाहिए।

राज्य एवं राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के ग्रामीण व शहरी क्षेत्र, जनसंख्या, कृषि व गैर कृषि क्षेत्र आधुनिक व परम्परागत क्षेत्र, तथा जीवन की आवश्यकताओं आदि सभी असन्तुलन अथवा असमानता की स्थिति को देखते हुए हर क्षेत्र में रोजगार नीति द्वारा संतुलन स्थापित करने की आवश्यकता है। किन्तु अर्थव्यवस्था की संरचना तथालोगों की आर्थिक दशा को देखते हुए रोजगार कार्यक्रमों का सबसे पहला लाभ उन ग्रामीण व्यक्तियों को प्राप्त होना चाहिए जो निर्धनता रेखा के नीचे रहते हुए अर्द्ध बेकारी

१- ए० सी० सी० फंक्शनल ग्रुप आन इम्प्लाइमेन्ट पोलीसी इन द सेकन्ड डेवलपमेन्ट डीकेड, इम्प्लाइमेंट आई०एल० ओ० जेनेवा, १९७३, पैराग्राफ ४.।। आफसेट ।।

की स्थिति में हैं। इसके उपरान्त समस्त बेरोजगारों को लाभान्वितकरने वाले कार्यक्रमों पर ध्यान देना उचित होगा। यह बात ध्यान रखना अत्यधिक आवश्यक है कि ग्रामीण श्रम शक्ति का अधिक उपयोग होना आर्थिक तथा सामाजिक विकास की कुंजी है।[१]

रोजगार नीति इस प्रकार की होनी चाहिए जिससे एक ओर तो बेरोजगारों की संख्या में कमी हो दूसरी ओर इस नीति का देश की विकास नीति तथा जनसंख्या नीति के साथ-सा- सामंजस्य हो सके। इस अधार पर रोजगार नीति को तीन मुख्य उद्देश्य हो सकते हैं। एक तो यह कि यह नीति बेरोजगारी व गरीबी दूर करे, दूसरे स्थाई परिसम्पत्तियों की निर्माण करके यह विकास में सहायक हो, तीसरे यह रोजगार सृजन तथा जनसंख्या वृद्धि में तालमेल रखने के साथ-साथ व्यक्ति आय में वृद्धि द्वारा जनसंख्या नीति के लिए परिपूरक सिद्ध हो।

बेरोजगारी के सन्दर्भ में कृषि का विकास :------- भारतीय अर्थव्यवस्था के योजनाबद्ध आर्थिक विकास में प्रयत्नशील नियोजकों को यह ध्यान रखना चाहिए कि विकास की किसी भी तर्कसंगत व्यूह रचना में कृषि विकास का केन्द्रिय स्थान है। आधुनिकतम औद्यो औद्योगिक विकास के लिए एक सुदृढ़ ढाचे का एक मात्र अधार है मजबूत अधार शीला पर स्थापित गतिशील एंव कारगर कृषि। इसलिए बिना सुनियोजित कृषि विकास के विकास की किसी भी ऐसी नीति जिसका उद्देश्य लोगों के रहन -सहन को परिवर्तित करके समृद्ध बनाना हो, सभी को रोजगार प्रदान करना हो, की कल्पना नहीं की जा सकती है। इसका परिपुष्ट प्रमाण भारतीय अर्थव्यवस्था है। नियोजन कर्ताओं ने रुसी विकास माडल जो कि कृषि विकास के अपेक्षा बृहद उद्योग विकास पर बल देता है, का अन्धानुकरण करते हुए यहां के आर्थिक विकास के लिए उसको प्रयोग करना उनकी बहुत बड़ी भूल का द्योतक है। इन अर्थशास्त्रीयों ने रुस के विद्वानों के प्रभाव में आकर यह विचार रखा था कि कि बड़े-बड़े एंव मूलभूत उद्योगों के विकास के माध्यम से देश की समृद्धि दर बढ़ा देने से कृषि विकास अपने आप हो जायेगा।

१- देखें गुनार मिर्डल: ~~मिरिस~~ एशियन ड्रामा, एन इनक्वारी इनटू द पावरटी आफ नेशनस।। पैनथियन न्यूयार्क, १९६८, स्पेशली चेप्टर २१ से २६।।

इस प्रकार, स्टील, उर्वरक, सीमेन्ट बड़ी -बड़ी मशीनों और दूसरे बहुत से बड़े-बड़े उद्योगों के संवर्धन में प्रयत्नशील इन आयोजकों ने कृषि विकास की उपेक्षा दूसरी योजना में की थी, जिसका परिणाम हुआ कि लगभग ३३ वर्षों के बाद भी आयोजन ने एक स्थिर, गतिशील एवं स्वंयधारी अर्थव्यवस्था के स्थापना के स्थान पर अर्थव्यवस्था में स्फीतिकारी दबावों ने जीवन की बढ़ती हुई सामाजिक एवं आर्थिक लागतों ने सामाजिक विपन्नता तथा कृषि एवं उद्योग दोनों में ही हीन उत्प उत्पादिता को बढ़ावा दिया है T

विकास की प्रक्रिया को समाज के उपर बलात् लादा नहीं जा सकता है। यह प्रक्रिया संचयी एवं स्वंयधारी जब तक नहीं हो सकती जब तक कि जनसधारण अपने सम्पूर्ण प्रयत्नों को समर्पित करने के लिए तैयार न हो जाय इसलिए विकास की प्रक्रिया को प्रारम्भ करने के पहले उसके अनुकुल वातावरण पैदा करना नितान्त आवश्यक हो जाता है। आयोजन के इतने लम्बे समय के बाद भी हम इसको तैयार नहीं कर पाये हैं। ग्रामीण प्रधान भारतीय अर्थव्यवस्था में ग्रामेतर विकास परिणेजनाऐं स्थायी एवं संतुलित विकास की गति नहं दे सकती हैं, यह हम भलीभांत समझ चुके हैं। भारत जैसे अर्द्धविकसित देश की समृद्धि वहां के कृषि क्षेत्र की उत्पादन योग्यता व ग्रामीण क्षेत्रों में संरचनात्मक परिवर्तन तथा आधारित संरचना पर निर्भर करती है। कृषि क्षेत्र की विशालता को देखते हुए भुमि की उत्पादकता में वृद्धि आर्थिक विकास को द्रुत गति प्रदान करेगी कृषि क्षेत्र में आधुनिक प्रवृत्तियों के समावेश के साथ-साथ इस क्षेत्र में करारोपण एवं बचत को महत्वपूर्ण ढंग से बढ़ावा देना भी अहम भूमिका रखता है।[१]

बढ़ती हुई जनसंख्या की कृषि पदार्थों की मांग और नवीन भूमि के रूप में प्राकृतिक साधनों का नगण्य हो जाना, कृषि क्षेत्र में आयोजन की कई नवीन समस्याओं को उत्पन्न करता है जो देश एवं राज्य के वर्तमान और भावी विकास के निकटतम रूप में सम्बन्धित है। भीषण रूप से बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण कृषि योग्य भूमि पर जनसंख्या का दबाव बढ़ता ही जा रहा है। जो बेरोजगारी अर्द्ध बेरोजगारी, तथा छिपी हुई बेरोजगारी जैसी तमाम गम्भीर समस्याओं को और उग्र बना रहा है। इसके अतिरिक्त कृषि जो इस समय भी अधिकाशतः परम्परागत रूप में विद्यमान है का सम्पूर्ण रूप से आधुनिकरण किया जाना चाहिए क्योंकि इसके राष्ट्रीय आय और रोजगार पर दूरगामी प

१- डा० आर० के० गोविल - मोबिलाइजेशन आफ रीसोर्सेज टू एग्रीकल्चरल टेक्स इन यू०पी०।

परिणाम होंगे। परन्तु यह कार्य सिद्धान्त और योजना ड्राफ्टों के रूप में भले ही सरल दिखायी पड़े परन्तु मार्ग में वास्तविक व्यवहारिक रूप के लिए हम आने वाले सभी अवरोधों को दूर करके व्यवस्थित व्यूह रचना का निर्माण एवं कार्यान्वयन आवश्यक है।[1]

आर्थिक संवृद्धि स्थिरीकरण, एवं आर्थिक न्याय हमारे आयोजन के सर्वमान्य उद्देश्य रहे हैं। इनके परिप्रेक्ष्य में कृषि का विकास किया जाना चाहिए। इसके लिए कृषि क्षेत्र की समस्याओं के इन छुट-पुटसुधारों की सीमितता को समझना होगा तथा आर्थिक नीतियों को दीर्घकालीन सन्दर्भ में निर्माण करना होगा[2]।

कृषि उत्पादिता को बढ़ाने के लिए कृषि क्षेत्र में जहां एक ओर नवीन एवं संशोधित तकनीकी तथा भारी मात्रा में पूंजी निवेश की आवश्यकता है वहीं दूसरी ओर संरचनात्मक परिवर्तन तथा सामाजिक न्याय को ध्यान में रखना नितान्त वांछनीय है। छोटे तथा सीमान्त किसानों तथा बड़े किसानों के बीच निरन्तर बढ़ते हुए अन्तर, विखण्डित एवं छोटे आकार की जोतों आदि की समस्याओं को सुलझाने के लिएतथा कृषि को नवीन तकनीकों के अनुकूल बनाने के कार्यक्रम को पूरा कर लेना चाहिए। इस सम्बन्ध में एक और महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि हम तकनीक का आयात तो कहीं से कर सकते है परन्तु उसका प्रयोग एवं संचालन अपने देश एवं प्रदेश की आवश्यकताओं के अनुरूप किया जाना चाहिए। कृषि क्षेत्र के अन्तर्गत आधुनिक विज्ञान और अविष्कार के प्रयोगों तथा तकनीकी परिवर्तन के लिए निम्न प्रक्रिया को अपनाया जा सकता है: ---१- पारम्परिक ढंगों से आरम्भ करना और शनै: शनै: आधुनिक विज्ञान का प्रयोग। २- उच्च विकसीत तकनीकों से आरम्भ करना और उनको नवीन विकासशील देशों के अनुकुल बनाना। ३- विकासशील देशों की तकनीकी समस्याओं का नवीन उपागम और शोध द्वारा विश्लेषण करना और उत्पादन के नये ढंग निकालना।[3]

कृषि में अवरोधों की स्थिति को देखते हुए भावी आर्थिक विकास की प्रक्रिया में कृषि व औद्योगिक क्रियाओं को सम्मलित करना होगा और कृषि रोजगार की सम्भावना को बढ़ाना होगा।

१- रिपोर्ट आफ द फीफ्थ फाइव एअर प्लान ।। १९७४-७९ ।। पृ० २५ ।

२- तार लोक सिंह - इंडियन डेवलपमेन्ट एक्सपेरियन्स ।

३- पेपर प्रेसेन्टेड एट द मीटिंग आफ वर्किंग ग्रुप हेल्ड जनवरी २-४,१९६४, स्माल इन्डस्ट्री एक्सटेन्सन ट्रेनिंग इन्सटीट्यूट, हैदराबाद, १९६४ ।

औद्योगिक संरचना को गतिशील दिशा देने के लिए ग्रामों का औद्योगिकरण एवं नगरीकरण आवश्यक है। प्रदेश संतुलित और स्थायी रूप से तीव्र विकास की ओर अग्रसर हो इसके लिए ग्रामीण और शहर क्षेत्रों के बीच स्थापित द्विधात्व को समाप्त करना होगा। भारतीय अर्थव्यवस्था तथा उत्तर-प्रदेश की अर्थव्यवस्था के सूक्ष्म विवेचन से ज्ञात होता है कि ग्रामीण क्षेत्र में शिक्षा, यतायात एवं संदेशवाहन, पूं पूंजी और कुशल साहसियों का सर्वथा अभाव है परन्तु यहां पभूमि श्रम और कच्चे माल का बाहुल्य है। दूसरी ओर शहरी क्षेत्र में पहले प्रकार की चीजें तो पर्याप्त मात्रा में विद्यमान है, परन्तु दूसरी श्रेणी की चीजों का सर्वथा अभाव है। इस प्रकार विकास के लिए इन दोनों क्षेत्रों को दूसरे के पूरक के रूप में कार्य करने के लिए इनको निकट करना होगा। आधुनिक व परम्परागत क्षेत्रों की सम्मलित अन्तक्रिया भारतीय तथा उ०प्र० की अर्थव्यवस्था में अत्यन्त अपेक्षित, रोजगार संरचना में सुधार व राष्ट्रीय आय के गठन में परिर्वतनों को सम्भव बनाये गी। विकास की यह नवीन नीति भूमि पर जनसंख्या के दबाव को कम करेगी तथा अर्थव्यवस्था मेंरविविधीकरण को प्रोत्साहित करेगी। दोषपूर्ण आर्थिक आयोजन के परिणाम स्वरूप कृषि क्षेत्र और उसके बाहर रोजगार अवसरों में अपर्याप्त वृद्धि हुई है। योजना आयोग ने अपने प्रकाशन "एप्रौच टू द फिफ्थ प्लान" में लिखा है कि औद्योगिकरण की वर्तमान गति पर कृषि से गैर कृषि में श्रम-शक्ति के स्थानान्तरण का प्रश्न नहीं नहीं उठता। कृषि क्षेत्र में बढ़ने वाली श्रम - शक्ति को कृषि क्षेत्र में ही रोजगार देना होगा। पंजाब और हरियाणा में कृषि क्षेत्र में हुए मशीनीकरण के साथ-साथ कृषि उद्योगों का विकास हुआ है जिसमें बेरोजगारी ब बढ़ने नहीं पायी है।

कृषि क्षेत्र में विचारणीय समस्या व्यवसायिक बदलाव की है जिसके लिए तीव्र आर्थिक विकास एवं पूंजी निर्माण की दर भारतीय कृषि में विचारणीय समस्या व्यवसायिक बदलाव की है जिसके लिए तीव्र आर्थिक विकास एवं पूंजी निर्माण की दर को बढ़ना महत्वपूर्ण है। परन्तु श्रम बहुल्य ग्रामीण एवं कृषि क्षेत्रों में वित्तीय पूंजी की अपेक्षा श्रम पूंजी को प्रधानता दी जानी चाहिए। स सहकारिता, सेवा सहकारिता एवं संयुक्त कृषि प्रणालियों की आदर्श व्यवस्था के द्वारा छोटे-छोटे एवं बिखरे खेतों को आर्थिक कृषि संगठनों के रूप में सगठित करने की आवश्यकता है। जब तक भारत तथा उत्तर -प्रदेश में खेतिहर और उत्पादक इतने बिखरे और असंगठित होंगे जैसे कि वे आज है तो इनके बारे मेंबातचीत निरर्थक है कृषि आयोजन को सम्भव बनाने के लिए सर्वप्रथम कृषि उत्पादकों को

इस प्रकार संगठित करना होगा कि वे और उनका संगठन नियोजन के उद्देश्यों में रुचि लेने लगें ।[1] कृषि कृषि संगठनों में पूंजी, संसाधनों का निर्माण, पशुपालन व कुटीर उद्योगों को पर्याप्त महत्व देना चाहिए । क्योंकि उत्पादक रोजगार, अवसरों की वृद्धि द्रुत विकास और आर्थिक असमनताओं को कम करने के लिए नितान्त आवश्यक है । कृषकों और भूमिहीन श्रमिकों को उचित मात्रा में आगतों की प्राप्ति तथा अधारित मूल्यों को आश्वासन कृषि क्षेत्र विकास योजनाओं की सफलता के लिये आवश्यक है । नीतियों का कार्यान्वयन इस रूप में हो कि कृषि क्षेत्र में दुर्विधिता में कमी हो संसाधनों का संग्रह हो तथा पर्याप्त वित्तीय विनियोग द्वारा गांवों और गांव के पास कस्बों में गैर कृषि कार्यों में रोजगार की सम्भवनाये बढ़े ।

१- डी० आर० गैडगिल - प्लानिंग फार एग्रीकलचरल डेवल्पमेन्ट ।

सारांश

सारांश

उत्तर-प्रदेश भारत का हृदय - प्रदेश है। यह भारत के सीमान्त प्रदेशों में से एक है। इसकी उत्तरी सीमा हिमालय पर्वत-श्रेणी से लगी हुई तिब्बत और नेपाल की सीमाओं को छूती है, पश्चिमी और दक्षिण - पश्चिमी सीमा पर हिमांचल प्रदेश, हरियाणा, दिल्ली और राजस्थान है तथा दक्षिण में मध्य प्रदेश और पूर्वी सीमा बिहार से लगी हुई है। राज्य के तीन स्पष्ट प्राकृतिक भाग है: ---- उत्तर में हिमालय का क्षेत्र, बीच में गंगा का मैदान और दक्षिण में पहाड़ी तथा पठारी भू - भाग। प्रदेश की जलवायु भिन्न-भिन्न स्थानों पर भिन्न-भिन्न है। यद्यपि प्रदेश मुख्य रूप से उष्ण प्रधान शीतोष्ण कटिबन्ध के अन्तर्गत है किन्तु समुद्र तल से विभिन्न स्थानों की अलग-अलग ऊंचाई के कारण जलवायु में बहुत अन्तर आ जाता है। हिमालय का पूरा क्षेत्र, घाटियों को छोड़ कर ठण्डा रहता है। प्रदेश में जाड़ा, गर्मी और वर्षा तीन प्रमुख मौसम होते है। उत्तरी पर्वतीय क्षेत्रों को छोड़कर राज्य के प्रमुख भागों में वार्षिक औसत वर्षा ९४ सैमी० होती है। जल प्रवाह में गंगा और यमुना राज्य की प्रमुख नदियां है।

प्रदेश की मिट्टी को मुख्य रूप से तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है: — वन की और पहाड़ी मिट्टी, कांप मिट्टी और मिश्रित लाल और काली मिट्टी। इसके अतिरिक्त प्राकृतिक सम्पदा में वनों और खनिज पदार्थों की प्रदेश में कमी पायी जाती है। प्रदेश में पाये जाने वाले खनिज पदार्थों में चूना पत्थर, मैग्नेसाइट, खड़िया-पत्थर, बक साइट आदि प्रमुख हैं। खनिज पदार्थ अधिकतर पर्वतीय तथा बुन्देलखण्ड क्षेत्रों में पाये जाते है। मिर्जापुर को छोड़कर पूर्वी क्षेत्रों में खनिज पदार्थों का लगभग अभाव ही है। प्रदेश के क्षेत्रीय असमनताओं का अध्ययन करने के उद्देश्य से उनकी स्थलाकृति, जलवायु, जनसंख्या का घनत्व व उत्पादित फसलों के आधार पर प्रदेश को पांच आर्थिक क्षेत्रों - पर्वतीय, पश्चिमी केन्द्रीय, पूर्वी तथा बुन्देलखण्ड में विभाजित किया गया है। प्रशासन की दृष्टि से उत्तर-प्रदेश में ग्यारह कमिश्नरियां हैं, जिनके अन्तर्गत ५६ जिले आते हैं। इनमें से ३९ जिले उत्तर -प्रदेश सरकार द्वारा पिछड़े जिले घोषित किये गये हैं। प्रदेश सरकार द्वारा पिछड़े जिलों के विकास हेतु विशेष कार्यक्रम चलाये जा रहे है।

भारत के अन्य राज्यों की तुलना में उत्तर-प्रदेश में, जनसंख्या वृद्धि में तेजी होने के कारण, बेरोजगारी अधिक है। जिस गति से प्रदेश की जनसंख्या में वृद्धि होती रही उस अनुपात से औद्योगिक या आर्थिक विकास नहीं हो पा रहा है फलतः प्रदेश में बेरोजगारी में वृद्धि होना स्वभाविक ही है। उत्तर-प्रदेश कृषि प्रधान प्रान्त होने के कारण मौसमी बेरोजगारी पायी जाती है साथ ही साथ अर्थ-व्यवस्था की धीमी गति होने के कारण शिक्षितों में भी बेरोजगारी निरन्तर बढ़ती जा रही है। विश्वसनीय आकड़ो के अभाव में उत्तर - प्रदेश में बेरोजगारों का सही-सही अनुमान लगाना कठिन है क्योंकि अधिकतर व्यक्ति किसी न किसी रोजगार में लगे हुए हैं, फिर भी वे अच्छी नौकरी की लालच में रोजगार कार्यालय में अपना रजिस्ट्रेशन कराये हुये हैं जिससे बेरोजगारों का सही अनुमान लगाना कठिन एवं विषम है।

श्रम शक्ति में कर्मकर तथा बेरोजगार दोनो श्रेणियों के व्यक्ति सम्मलित होते है। यद्यपि विभि विभिन्न जन-गणनाओं में कर्मकरों तथा बेरोजगारों का विभाजन उपलब्ध है, किन्तु इन जनगणनाओं में प्रयुक्त परिभाषाओं एवं संकेतों में एक रूपता न होने के कारण विभिन्न जनगणनाओं की सूचना तुलनीयनहीं है। प्रदेश में रोजगार की दर में हुई वृद्धि श्रम - शक्ति में हुई वृद्धि को अपना सकने में असमर्थ रही और इसी का परिणाम है कि देश एवं प्रदेश बेरोजगारी का अखाड़ा बना हुआ है। कृषि अकृषिय क्षेत्रों में तो यह स्थिति और भी भयानक है। तालिका संख्या ।।१ : १० ।। से उत्तर - प्रदेश में रोजगार प्राप्त व्यक्तियों के प्रतिशत का पता चलता है। केन्द्रीय सरकार एवं राज्य सरकार में रोजगार प्राप्त व्यक्तियों का प्रतिशत क्रमशः घटता हुआ प्राप्त हो ता है। स्थानीय निकायों में रोजगार घट-बढ़ की स्थिति में देखने को मिलता है किन्तु अर्द्ध सरकारी कार्यालयों में यह स्थिति नहीं है इसमें रोजगार प्राप्त व्यक्तियों का प्रतिशत निरन्तर बढ़ता हुआ देखने को मिलता है। महिलाओं का श्रम-शक्ति में भागीदारी प्रारम्भ से ही गौड़ मानी जाती रही है। विभिन्न प्रकार के अध्ययनों से से ज्ञात होता है कि कुल कर्मिकों में महिलाओं का बड़ा भाग कृषि - कार्यों एवं घरेलू व्यवसायों में है फिर भी उन्हें सदैव कर्मकर के रूप में मान्यता नहीं दी जाती है। वर्तमान समय में शिक्षित महिलायें कुछ विशिष्ट कार्यों में विशेष रुचि रखती है जैसे - टंकण, सौन्दर्य प्रसाधन, होटल उद्योग, भोजन - कौशल, आन्तरिक सजावट इत्यादि। इन चुने हुए क्षेत्रों में और अधिक व्यय किया जाय तो इसका

परिणाम महिला रोजगार के लिए अधिक लाभ प्रद होगा । प्रान्त स्तर पर एक ऐसे संगठन को कायम किया जाय जो कि पूरे महिला रोजगार की निगरानी करे और प्रान्त में उनकों इस सम्बन्ध में उ उचित परामर्श दे ।

उत्तर-प्रदेश सरकार द्वारा अनुसुचित जाति और अनुसुचित जन जाति के आर्थिक दशा को सुधारने के लिए विभिन्न प्रकार के प्रोत्साहन जैसे-छात्र वृत्ति, शुल्क मुक्ति, मुफ्त ट्रेनिंग, मुफ्त कोचिंगआदि दिया जा रहा है । अनुसुचित जन जातियों को रोजगार के सुअवसरों की जानकारी हेतु उनके संकेन्द्रण भागों में रोजगार कार्यालय स्थापित करने के साथ ही साथ उनके क्षेत्रों में सी ग्रुप की सेवाओं के विभिन्न श्रेणियों के लिए प्रार्थमिक परिक्षा कोचिंग सेंटर खोला जाना चाहिए । ग्रामीण क्षेत्रों में निर्माण कार्यों का विस्तार करके बहुत से श्रमिकों को लाभ दिया जाना सम्भव है, ऐसे कार्य क्रम से अतिरिक्त रोजगार के लिए स्थायी सम्पत्ति का सृजन ही नही होगा, बल्कि ये पिछड़े क्षेत्रों को खोलेगी परिणाम स्वरूप अर्थव्यवस्था का स्तर ऊंचा उठेगा ।

सातवीं पंचवर्षीय योजना में २०.७७ लाख मानव वर्ष का बकलाग प्रदेश में है जिसमें से १४.२० लाख मानव वर्ष बेरोजगार और ५.८७ लाख मानव वर्ष आंशिक बेरोजगार की तीव्रता का प्रतिनिधित्व करते है । इसके अतिरिक्त ५१.२४ लाख व्यक्ति श्रम-शक्ति में नये रूप में प्रवेश करेगें । इस लिए सातवीं योजना काल में ७२.०१ लाख नये रोजगार के अवसरों की आवश्यकता पड़ेगी । यद्यपि इस योजना में लगभग दुगुने रोजगार के सुअवसरों के सृजन के लिए विचार हो रहा है किन्तु यह स्पष्ट है कि सभी काम चाहने वालों को इस योजना में काम देना सम्भव नहीं है, अत: इसी लिए स्वत: रोजगार के सृजन को महत्व दिया जा रहा है । सीमान्त और लघु कृषकों के आर्थिक समृद्धि के लिए सातवीं योजना में एक व्यूह-रचना काम कर रहा है । और इस की सफलता आई० आर० डी० पी०, एन० आर० ई० पी० और ई०एल० जी०ई०पी० के साथ सम्मलित है, जो ग्रामीण क्षेत्रों के बेरोजगारी को वास्तविक रूप में कम करती है ।

जब किसी समाज या राष्ट्र में काम करने के योग्य ।। शारीरिक और मानसिक दृष्टि से स्वस्थ।। और काम करने के इच्छुक ।। प्रचलित मजदूरी दर पर ।। व्यक्तियों को कोई काम न मिले तो इस प्रकार

की समस्या "बेरोजगारी" की समस्या कहलाती है। उत्तर-प्रदेश की ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण देश के समक्ष बेरोजगारी एक गम्भीर समस्या के रूप में उपस्थित है। पिछले कुछ वर्षों में जनसंख्या में वृद्धि की तीव्र दर की तुलना में रोजगार के नये अवसरों की वृद्धि न होने के कारण यह समस्या प्रतिवर्ष जटिल होती जा रही है।

यहां का प्रमुख व्यवसाय कृषि है। पूंजी के साधन सीमित है। काम करने वालों की संख्या बराबर बढ़ती जा रही है। प्रदेश में कुछ व्यक्तियों को अपनी क्षमता के अनुसार कार्य नहीं मिल पाता है अर्थात कुछ लोग अल्प रोजगार में ही लगे रहते है। प्रदेश में मौसमी बेरोजगारी भी पायी जाती है इस प्रकार की बेरोजगारी मुख्य रूप से कृषि में पायी जाती है। कृषि में जुताई-बुवाई और कटाई के मध्य श्रमिकों को काम नहीं मिलता है। इस बेरोजगारी को मौसमी बेरोजगारी भी कहते हैं। इसके अतिरिक्त प्रदेश में खुली बेरोजगारी पायी जाती है यहां लाखों व्यक्ति ऐसे हैं जो शिक्षित है, तकनीकी योग्यता प्राप्त हैं लेकिन उनको काम करने का अवसर नहीं मिल पा रहा है। जनसंख्या में वृद्धि, कृषि की मौसमगत प्रवृत्ति, सूखे और बाढ़ों की पुनरावृत्ति तथा शहरीकरण के प्रसार के कारण लोग ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों में चले आ रहे है। परन्तु श्रम-शक्ति के वृद्धि के साथ - साथ औद्योगिक क्षेत्र का विस्तार नहीं हो सका जिसके परिणाम स्वरूप औद्योगिक बेरोजगारी बढ़ी है। अधिकांश जनसंख्या ग्रामों में रहती है तथा कृषि तथा अन्य कृषि सम्बन्धित कार्यों में संलग्न रहती है। पिछड़ी हुई कृषि और कृषि संचालकों में मौसमगत बेरोजगारी के कारण खुली तथा प्रच्छन्न बेरोजगारी पायी जाती है। इसी प्रकार प्रदेश में चक्रीय बेरोजगारी, छिपी हुई या अर्द्ध बेरोजगारी अनैच्छिक इत्यादि प्रकार की बेरोजगारी विद्यमान है।

समाज में विभिन्न प्रकार की मानवीय क्रियाओं को सुनिश्चित उद्देश्य की ओर ले जाने, उनमें ताल-मेल बैठाने, व्यक्ति तथा समाज अपना-उत्कर्ष अधिक से अधिक कर सके इसके लिए सिद्धान्तों को प्रतिपादित किया जाता है। सिद्धान्तों के प्रतिपादन में सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक संस्थाओं को स्थिर मान लिया जाता है। परन्तु वस्तु स्थिति निरन्तर परिवर्तनशील रहती है, जिसके फलस्वरूप,एक अच्छा सिद्धान्त भी ऐसी जटिल समस्याओं को उत्पन्न कर देता है जिसका निराकरण करना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य हो जाता है। जिससे नये और पुराने मूल्यों में

निरन्तर परिवर्तनशील रहती है, जिसके फलस्वरूप एक अच्छा सिद्धान्त भी ऐसी जटिल समस्याओं को उत्पन्न कर देता है जिसका निराकरण करना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य हो जाता है। जिससे नये और पुराने मूल्यों में निरन्तर संघर्ष होता रहता है। जब तक विशिष्ट सिद्धान्त के अनुसार मूल्य स्थापित नहीं हो जाते तब तक उनके अधार पर नयी नीतियों का उपयोग ठीक से नहीं हो पाता है। क्लासिकल अर्थशास्त्रियों ने अर्थ-व्यवस्था में सरकार के कार्यों को न्यूनतम सीमा पर निश्चित किया और निजी साहसियों को प्रोत्साहित करने के लिए 'हस्तक्षेप न करने की नीति' स्वतंत्र प्रतियोगिता और पूर्ण प्रतियोगिता को स्वीकार किया। वे तो महान मन्दी के समयभी सरकारी हस्तक्षेप को स्वीकार नहीं करते थे। स्वतन्त्र प्रतियोगिता के अधार पर पूंजीवादी सिद्धान्तों का विकास हुआ। उत्पत्ति राष्ट्रीय अधार पर सुनिश्चित अधारों के अनुसार नहीं की जाती थी, अपितु व्यक्तिगत रूप में की जाती थी। जिसमें अनिश्चितता और हानि की सम्भावना बढ़ जाती थी। इसी कारण पूर्ण प्रतियोगिता का अधार धीरे-धीरे समाप्त होने लगा तथा एकाधिकार की स्थापना होने लगी। श्रमिकों के स्थान पर मशीनों का अधिक उपयोग किया जाने लगा जिससे श्रमिकों की बेरोजगारी सेना बढ़ने लगी और दूसरी ओर उपभोक्ताओं के कल्याणों में भी गिरावट आने लगी। सरकार बहुत समय तक श्रमिकों की दयनीय दशा को देखते हुए उनके कल्याण के लिए श्रमिक संगठनों को वैधानिक मान्यता ही केवल न नहीं प्रदान की बल्कि बेरोजगार, वृद्धावस्था, पंगुता, गन्दगी तथा अभाव से छुटकारा दिलाने के लिए काल्याणकारी समाज की स्थापना करने के लिए निरन्तर प्रयत्न शील रही। प्रत्येक नागरिकों को रोजगार प्राप्त करने का अधिकार है। सरकार ने अपने नीतियों में परिवर्तन किया, जिससे उपभोक्ता के हितों को सुरक्षित किया जा सके। इस प्रकार से सरकार आर्थिक प्रणाली में हस्तक्षेप करने लगी। अत: हस्तक्षेप न करने की नीति का अन्त हो गया। परन्तु उनके अधारों पर बनाये गये सिद्धान्तों का अब भी बोल-बाला बना रहा। अमेरिका ने अपने विकास की प्रक्रिया संरक्षण की अवस्था में ही पूरी की जो कि तुलनात्मक तथा अन्तर्राष्ट्रीय श्रम विभाजन के सिद्धान्त के विपरित है। वर्तमान समय में विकासशील देश भी संरक्षण की नीति को अपना रहे है।

विश्व के समस्त देशों में समाजवादी रूस तथा दूसरी ओर अमेरिका, पश्चिमी यूरोप, इंग्लैण्ड तथा अन्य विकसित पूंजीवादी देशों के सिद्धान्तों के अनुसार विकासकी प्रक्रिया चलारहे हैं और तीसरी

और वह सब देश है जिन्होंने कुछ ही समय पूर्व स्वतन्त्रता प्राप्त की है ऐसे राष्ट्रों में ऐसे सिद्धान्त की आवश्यकता है जो वर्तमान रोजगार, उपभोग तथा विनियोग के स्तर को ही न बढ़ाए अपितु भविष्य में बिना समस्या के आर्थिक विकास में स्थिरता के साथ और प्रगति में सहायक हो सके। इन देशों में भारत का स्थान सभी दृष्टियों में महत्त्वपूर्ण है। जिसकी आर्थिक प्रणाली विकासशील की दशा में है। इस वर्तमान परिवेश में भारत पूँजी वादी सिद्धान्त के माध्यम से या समाजवादी सिद्धान्त के माध्यम से अपनी आर्थिक प्रणाली में सुधार कर सकता है यह प्रश्न भी विचारणीय है। या भारत के लिए मिश्रित अर्थव्यवस्था, जो कि वर्तमान में अपनाये हुए है, का दार्शनिक सिद्धान्त उचित हो सकता है। अत: भारत के लिए एक ऐसे सिद्धान्त को प्राप्त करना है जो रोजगार तथा आर्थिक विकास को सुदृढ़ नींव पर रख सके। सिद्धान्त वही उचित हो सकता है जो अल्प और दीर्घ काल में विकास की शक्तियों को ही प्रोत्साहित न करे अपितु उनमें समन्वय स्थापित करके एक ऐसी गत्यात्मक और प्रगतिशील आर्थिक प्रणाली की स्थापना में सहायक हो जिसमें निरन्तर राष्ट्रीय आय और रोजगार के स्तर को उठाते हुए राष्ट्र के प्रत्येक क्षेत्र में सन्तुलन कायम रख सके।

क्लासिकल अर्थशास्त्रियों के लिए पूर्ण रोजगार सामान्य दशा थी और उसमें किसी भी प्रकार के परिवर्तन असामान्य दशा माने जाते थे। प्रो० "से" के अनुसार सामान्य अति-उत्पादन नहीं हो सकता इसलिए सामान्य बेरोजगारी का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। क्लासीकल विचार था कि किसी भी समय बेरोजगारी नहीं हो सकती अथवा सदैव पूर्ण रोजगार की दशा बनी रहती है। वे यह स्वीकार करने को तैयार नहीं है कि काम चाहने वाले श्रमिकों को काम नहीं मिलता है। क्लासीकल अर्थशास्त्रीय का कहना था कि बेरोजगारी आर्थिक प्रणाली की स्वतन्त्र क्रियाशीलता में हस्तक्षेप करने का ही परिणाम होती है। इस प्रकार के हस्तक्षेप कई प्रकार के हो सकते है: १- मजदूरी की दर को बढ़ाने के लिए ट्रेड यूनियनों के सामूहिक प्रयास, २- मजदूरों को न्यूनतम मजदूरी दिलवाने के लिए सरकार का हस्तक्षेप, ३- बेरोजगारी के विरुद्ध बीमा और ४- सरकारी बेरोजगारी भत्ता। यदि इन सब हस्तक्षेपों को समाप्त कर आर्थिक प्रणाली को स्वतन्त्र रूप में कार्य करने दिया जाय और मजदूरी अपना स्तर स्वयं स्थापित करने के लिए स्वतन्त्र छोड़ दी जाय तो बेरोजगारी निश्चय ही अदृश्य हो जायेगी और प्रत्येक काम चाहने वाला व्यक्ति काम पा सकेगा। कीन्स ने क्लासीकल विचारों की

आलोचना करते हुए अपने सामान्य सिद्धान्त के पृष्ठ ३ पर लिखा है कि क्लासीकल अर्थशास्त्र में जिन विशिष्ट सिद्धान्तों की कल्पना की गयी है, वे हमारे इस आर्थिक समाज के अनुरूप नहीं है जिनमें हम वस्तुत: रह रहे है। परिणाम यह हुआ है कि इसकेसिद्धान्त गलतफहमी प्रदा करते है और यदि हम अनुभव के तत्वों पर उनका प्रयोग करते है तो वे बिना शक भी सिद्ध होते है। प्रो० पीगू के अनुसार स्वतन्त्र प्रतियोगिता के अधीन अर्थव्यवस्था में श्रमिकों को पूर्ण रोजगार देने की प्रवृत्ति पायी जाती है यदि किसी समय श्रम बाजार में बेरोजगारी की स्थिति उत्पन्न हो जाती है तो मजदूरियों में कटौती करने से अर्थव्यवस्था में स्वत: ही पूर्ण रोजगार की स्थिति वापस लौट आयेगी। अत: क्लासिकल सिद्धान्त के अनुसार मजदूरी में कटौती करके पूर्ण रोजगार की स्थिति को प्राप्त किया जा सकता है, लेकिन जे० एम० कीन्स ने पीगू के उपर्युक्त सिद्धान्त को चुनौती दी है। उनका कहना है कि मजदूरी में कटौती करने से अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार को प्राप्त नहीं किया जा सकता है। कीन्स के अनुसार मजदूरी कटौती से किसी विशेष उत्पादन -इकाई में तो रोजगार की मात्रा बढ़ सकती है, लेकिन सामान्य मजदूरी -कटौती से अर्थव्यवस्था में रोजगार की मात्रा को नहीं बढ़ाया जा सकता है। इसका कारण यह है कि सामान्य मजदूरी कटौती से श्रमिकों की क्रय - शक्ति में कमी हो जाती है। परिणा परिणामत: कुल मांग में कमी हो जाती है। रोजगार की मात्रा, कीन्स के अनुसार, मौद्रिक मजदूरी के स्तर पर नहीं, बल्कि अर्थव्यवस्था की प्रभावी मांग पर निर्भर करती हैं।

कीन्स द्वाराप्रतिपादित रोजगार सिद्धान्त को न्यून मांग सिद्धान्त भी कहा जाता है इस सिद्धान्त सिद्धान्त के अनुसार बेरोजगारी प्रभावपूर्ण मांग की कमी अथवा उपभोग एवं निवेश पर किये गये व्यय की कमी के कारण होती है। प्रभाव-पूर्ण मांग-कुल उत्पादन - कुल आय -रोजगार। ये चारों मात्राऐं बराबर होती है। रोजगारकी मात्रा दो मुख्य तत्वों पर निर्भर करती है - १- कुल मांग क्रिया और २- कुल पूर्ति क्रिया चूंकि कान्सीयन अर्थशास्त्र अल्पकालीन है अत: कुल पूर्ति क्रिया को स्थिर मान लिया जाता है यही कारण है कि सम्पूर्ण बल कुल मांग क्रिया पर ही दिया जाता है इस प्रकार यदि यदि किसी देश की अर्थव्यवस्था में बेरोजगारी एवं न्यून-रोजगार की स्थिति पायी जाती है तो उस देश में कुल मांग क्रिया को ऊपर उठाने का प्रयास किया जाना चाहिए। लेकिन इसका अभिप्राय यह नहीं है कि कुल पूर्ति का महत्व ही नहीं है। जब देश में स्फीतिक दशा पायी जाती है और पूर्ण तथा पूर्ण से भी अधिक रोजगार व्याप्त होता है, तब उस समय कुल - पूर्ति क्रिया महत्वपूर्ण बन जाती है। और उसमें आवश्यक परिवर्तन करना आवश्यक हो जाता है।

कीन्स ने ब्रिटेन एवं पश्चिम के विकसित देशों को ही ध्यान में रखकर अपने रोजगार सिद्धान्त का विकास किया था। उनका रोजगार सिद्धान्त चक्रीय बेरोजगारी से ही सम्बन्धित है। चक्रीय बेरोज - गारी, वास्तव में, इन देशों के समक्ष प्रमुख समस्या है। परिणामत: कीन्स का सिद्धान्त पश्चिम के विकसित देशों पर ही लागू होता है, एशिया एवं अफ्रिका के अल्प - विकसित देशों पर नहीं। अल्प-विकसित देशों के सामने यह समस्या है कि वहां पर आर्थिक विकास की गति को त्वरित करने हेतु पर्याप्त मात्रा में पूंजी निर्माण नहीं हो रहा है। पश्चिमी विकसित देशों की भांति अल्प विकसित देशों में कुल प्रभावपूर्ण मांग की अपर्याप्तता की समस्या नहीं है। कीन्स के सिद्धान्त का अभिन्न अंग गुणक है लेकिन अल्प विकसित देशों में गुणक कार्यशील नहीं होता है। यही कारण है जिन मान्यता पर गुणक आधारित है, वे अल्प विकसित देशों में सत्य नहीं उतरती। विकसित अर्थव्यवस्था के सन्दर्भ में बेरोजगारी एवं न्यून-रोजगार की समस्या का समाधान करने हेतु कीन्स ने व्यय-वृद्धि का समर्थन किया था लेकिन यह उपचार अल्प विकसित देशों पर लागू नहीं होता है क्योंकि वहां पर गुप्त बेरोजगारी की समस्यापायी जाती है। यदि अल्प-विकसित देशों में व्यय वृद्धि की जाती है तो वे शीघ्र ही स्फीतिके भंवर में फंस जायेंगे। अल्प विकसित देशों को तो चाहिए कि आर्थिक विकास की गति को त्वरित करने हेतु वे बचतों की दर में वृद्धि करें क्योंकि इन देशों का विकास पर्याप्त पूंजी के अभाव में रुका पड़ा रहता है। इन देशों में की गयी व्यय - वृद्धि उत्पादन को बढ़ाने के बजाय कीमत - स्तर में वृद्धि कर देती है। कीन्स द्वारा प्रतिपादित निवेश - गुणक कतिपय मान्यताओं पर आधारित है। चूंकि ये मान्यतायें अल्पविकसित देशों में सही नही उतरती, अत: इन देशों में निवेश-गुणक कार्य नहीं करता है। कीन्स द्वाराप्रस्तुत विश्लेषण साम्यवादी अर्थव्यवस्था पर भी लागू नहीं होता। क्योंकि साम्यवादी समाज में निजी उपक्रम का उन्मूलन कर दियाजाता है और उत्पादन के स सभी साधनों का स्वामित्व राज्य के हाथों में होता है। परिणामत: साम्यवादी समाज में निवेश की अस्थिरताका प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता क्योंकि इस प्रकार के समाज में निजी उपक्रमी नहीं होते। राज्य ही एक मात्र उपक्रमी होता है और निवेश में अस्थिरता बनाये रखने की स्थिति में होता है। सारांशत: कीन्सीयन विश्लेषण का प्रयोग केवलउन्हीं देशों में किया जा सकता है जो अपेक्षाकृत अधिक विकसित अधिक औद्योगिक तथा अधिक धनी होते है और जिनमें निजीव्यवसाय प्रथा आज भी बड़े पैमाने पर प्रचलित है।

मानव पूंजी का तात्पर्य ऐसे व्यक्ति उपलब्ध करना और उनकी संख्या में वृद्धि करना है जो कुशल शिक्षित तथा अनुभव-सम्पन्न हों, जो कि देश के आर्थिक एवं राजनैतिक विकास के लिए नितान्त आवश्यक है। व्यवहार में पूंजी स्टाक की वृद्धि पर्याप्त सीमा तक मानव - पूंजी - निर्माण पर निर्भर रहती है, जो कि देश के सब लोगों के ज्ञान कुशलता तथा क्षमताएँ बढ़ाने की प्रक्रिया है। मानव पूंजी और आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण सह सम्बन्ध होता है किन्तु यह सह - सम्बन्ध पूर्णतया धनात्मक ही होता है। जनसंख्या विकास का एक घटक है, यह विकास में बाधक व साधक दोनों ही हो सकती है। लेकिन विकसित व विकासशील देशों की पृष्ठ भूमि में जनसंख्या व आर्थिक विकास के सम्बन्ध में पर्याप्त अन्तर हो जाता है। विकसित देशों में जनसंख्या वृद्धि आर्थिक विकास में सहायक होती है क्योंकि जनसंख्या वृद्धि से इन देशों को - उत्पादन के विस्तार और वृद्धि के लिए पर्याप्त श्रम प्राप्त होता है, उत्पादित वस्तुओं के मांग में वृद्धि होने लगती है और बाजार का विस्तार होता है, परोक्ष रूप से पूंजी निर्माण में योगदान प्राप्त होता है। दूसरी तरफ, विश्व के विकासशील देशों में आज जनसंख्या विस्फोटक स्थिति में हो गया है, इन देशों में आर्थिक विकास की गति जनसंख्या में तीव्र दर से बढ़ने के कारण बहुत मन्द होती है। इन देशों में जनसंख्या वृद्धि आर्थिक विकास पर विमन्य प्रभाव डालती है। जनसंख्यावृद्धि के कारण उत्पादन का अधिकांश भाग बढ़ती हुई जनसंख्या की आवश्यकताओं की पू पूर्ति करने में प्रयुक्त हो जाता है विकासशील देशों के पृष्ठ भूमि में, जनसंख्या वृद्धि को आर्थिक विकास के अनुरूप मानना एक बड़ी भूल होगी, इन देशों में एक ओर आर्थिक साधनों की न्यूनता है तो दूसरी ओर सामाजिक दशाए प्रतिकुल है।

उत्तर-प्रदेश में जनसंख्या बाहुल्य होने के कारण श्रम - शक्ति की प्रचुरता है साथ ही निर्भरता का अनुपात बढ़ गया है। कुल कामगरों की संख्या में कमी हुई है, अनुत्पादक जनसंख्या एवं निर्भरता का भार काफी बढ़ गया है। जिससे बचत और विनियोग की क्षमता घट गयी है और सारे साधनों का उपयोग, प्रदेश की बढ़ती हुई जनसंख्या की भरण-पोषण में होताजा रहा है — परिणामत: परिवार एवं राज्य निर्धनता में है। जनसंख्या वृद्धि से भूमि एवं प्राकृतिक साधनों पर दबाव बढ़ा है प्राकृतिक साधनों का ह्रास एवं बचतें तथा पूंजी निर्माण कम हुई है। यदि जनसंख्या में वृद्धि वर्तमान दर से बनी रहेगी तो कुल जनसंख्या में श्रम - शक्ति का अनुपात क्रमश: घटता जायेगा। और निर्भर जनसंख्या का अनुपात ।। १४ वर्ष से कम आयु के बच्चों की जनसंख्या ।। बढ़ेगा। पूंजी - निर्माण में

वृद्धि करने का एक ही रास्ता है कि ।। प्रदेश में ।।, जन्म दर में कमी की जाय, जिससे जनसंख्या को स्थायित्व प्रदान किया जा सके या जनसंख्या की वृद्धि दर बहुत कम कर दी जाय। यदि परिवार के आकार को सीमित नहीं किया गया तो भविष्य में पूंजी निर्माण हेतु बचत करना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य ही हो जायेगा। प्रदेश की बेकारी व अर्द्ध बेकारी की समस्या कम उत्पादकता का ही परिणामहै। गरीबी को दूर करने के लिए जनसंख्या उर्वरता में कमी एवं उत्पादकता बढ़ाने के लिए प्रदेश में विनियोजन का होना अपरिहार्य है। वर्तमान आर्थिक स्तर बनाये रखने के लिए ४ से १२ प्रतिशत बचत करने की आवश्यकता है।

उत्तर-प्रदेश में जनसंख्या वृद्धि का प्रतिव्यक्ति आय पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहाहै क्योंकि भूमि पर जनसंख्या का दबाव बढ़ रहा है, उपभोग की वस्तुओं की लागत बढ़ रही है, उनकी पूर्ति बढ़ाने के लिए सहयोगी साधनों की दुर्लभता है, पूंजी संचय में कमी हो रही है क्योंकि परिवार के सदस्यों के बढ़ जाने से खर्च में वृद्धि होती जा रही है। फलत: यह प्रदेश आर्थिक विकास के क्षेत्र में कितना पीछे है, जो तालिका संख्या ।। ३:१ ।। से ज्ञात होता है। यहां की प्रति व्यक्ति आय, बच्चों की प्रतिशतता की अधिकता, कमाने वाले व्यक्तियों की संख्या कम, के कारण घटती जा रही है। प्रति व्यक्ति आय कम होने से प्रदेश के व्यक्तियों के रहन - सहन के स्तर निम्न है। रहन - सहन के स्तर को आहार, आवास, मनोरंजन, धार्मिक एवं अन्य क्रियाओं पर किये गये बजट के व्ययों के द्वारा समझा जाता है। यदि पारिवारिक बजट में भोजन पर सर्वाधिक खर्च किया जाता है, जैसा कि औसत भारतीय एवं इस प्रदेश के औसत परिवारों में है, जिससे बहुत कम धन व्यक्ति की इन आवश्यकता एवं सामाजिक तथा मनोरंजक क्रियाओं के लिए बच पाता है जिससे यहां निम्न जीवन स्तर है। उचित अहार के अभाव में कुपोषण से इस प्रदेश में शिशु मृत्यु दरें ऊंची है। प्रदेश में आज के साधनों की स्थिति तथा समस्त तकनीकी सम्बन्धी उन्नति को ध्यान में रखकर यह कहा जा सकता है कि गरीबी को दूर करने व प्रतिव्यक्ति जीवन स्तर को बढ़ाने के लिए जनसंख्या वृद्धि को शीघ्र ही रोकना होगा। उन्नति व विकास की किसी भी योजना में जिसमें इस बातों को ध्यान में नहीं रखा जाएगा, वह असफल हो जाएगी। जन्म दर पर नियंत्रण, उपलब्ध सभी साधनों का पूर्ण उपयोग करके उत्पादन में वृद्धि, बचत एवं पूंजी निवेश के प्रोत्साहन, इन तीनों के सम्वन्वय से ही प्रदेश की आर्थिक विकास के पहिए को बढ़ती जनसंख्या के दलदल से निकाला जा सकता है।

रोजगार में श्रमिकों को लगाने के लिए समय - समय पर विभिन्न प्रकार की विधियां प्रयोग में लायी जाती रही है। पहले श्रमिक, मध्यस्थों द्वारा, सेवायोजकों द्वारा, ठेके के माध्यम से, श्रम संघों द्वारा तथा श्रम अधिकारियों के माध्यम से रोजगार प्राप्त करते थे। किन्तु उपरोक्त सभी प्रणालियों में कुछ न कुछ सामाजिक एवं आर्थिक दोष होते थे। इस लिए वर्तमान समय में रोजगार कार्यालय श्रमिकों को रोजगार दिलाने में एक स्वच्छ एवं सशक्त माध्यम है। प्रदेश में नवम्बर १९५९ में सेवायोजन कार्यालयों की संख्या मात्र २४ थी किन्तु इसकी उपयोगिता को ध्यान में रखकर इनकी संख्या में निरन्तर वृद्धि होती रही है और१९८२ तक ८४ सेवायोजन कार्यालय प्रदेश में कार्यरत थे। इनमें बेरोजगारी की समस्या के अध्ययन तथा समाधान हेतु रोजगार सूचना कार्यक्रम, व्यावसायिक सूचना एवं मंत्रणा कार्यक्रम, रोजगार विकास कार्यक्रम एवं सर्वेक्षण कार्यक्रम चलाये जाते है। " उत्तर -प्रदेश रोजगार पत्रिका" का प्रकाशन भी होता है, जो बेरोजगार व्यक्तियों, अभिभावकों तथा पाठकों को स्वत: रोजगार, प्रमुख समाचार, रोजगार प्रशिक्षण, एवं शिशिक्षु सुविधाऐं, सामान्य ज्ञान, लघु एंव कुटीर उद्योग - धन्धों को अपनाने तथा सेवायोजन कार्यालय की कार्य प्रणाली, अधिसूचित रिक्तियां आदि से लोगों को अवगत कराती है।

सेवायोजन कार्यालय रोजगार का सृजन स्वयं ही नहीं करते हैं बल्कि इनका मुख्य कार्य बेरोजगार अभ्यर्थियों का पंजीयन करके नि: शुल्क एवं निष्पक्ष सेसेवायोजन सहायता प्रदान करना है। उत्तर - प्रदेश में सेवायोजन सहायता कार्यक्रम के अन्तर्गत जो विभिन्न सुविधाऐं प्रदान की गयी हैं उसे हम तालिका संख्या ।।४ : १ ।। में देख सकते है । इसके साथ ही साथ यह कार्यालय स्वत: रोजगार हेतु प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाता है। तथा महिलाओं को भी अन्य अभ्यर्थियों की भांति सहायता प्रदान करता है। भूतपूर्व सैनिकों, विकलांगों को उनकी योग्यता अनुसार सेवायोजन सहायता देता है। इस कार्यालय द्वारा विकलांगों को जो सहायता सेवायोजन सम्बन्धी प्रदान की गयी है। वह तालिका संख्या ।।४ : ३।। में ज्ञात होता है।

प्रदेश की तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या यहां की अर्थव्यवस्था को सामूहिक बेरोजगारी तथा अल्प बेरोजगारी में धकेल चुकी है। बे रोजगारी हर क्षेत्र में बढ़ी है कृषि क्षेत्र या उद्योग व सेवाओं

में, ग्रामीण हो या शहरी क्षेत्र हर वर्ग में बेरोजगारी की समस्या में वृद्धि होती जा रही है। शिक्षित बेरोजगारी में भी निरन्तर बढ़ोत्तरी हो रही है। राज्य सरकार भी भारत सरकार के समान शिक्षित जनशक्ति में व्याप्त बेरोजगारी के प्रति जागरूक है। इसी लिए प्रदेश में बेरोजगारी की उन्मूलन हेतु स्वत: रोजगार योजना के अन्तर्गत सुलभ वित्तीय सहायता प्रदान किया जाता रहा है तथा इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र में बेरोजगार शिक्षित एवं अशिक्षितों के लिए रोजगार के अतिरिक्त साधन सृजन किये गये। जिसमें भारत सरकार की "हाफ ए मिलियन जाब्स प्रोग्राम" के अन्तर्गत प्रदेश में लगभग ७० योजनाएँ तैयार की गयी। इस प्रकार प्रदेश सकार एवं केन्द्र सरकार के संयुक्त प्रयासों से यद्यपि उत्तर -प्रदेश में रोजगार के अवसरों में वृद्धि हुई है लेकिन जनसंख्या वृद्धि की तीव्र दर ने इसे निष्क्रिय बना दिया है। अब भी प्रदेश में शिक्षित एवं अशिक्षित बेकारों की संख्या तुलनात्मक रूप में अधिक है। जिससे यह आवश्यक है कि चालू और पहले से चले आ रहे बेरोजगारों के लिए ही रोजगार के अवसर न बढ़ाये जायं, बल्कि साथ ही साथ प्रभावपूर्ण कार्यक्रमों के माध्यम से जनसंख्या पर भी नियंत्रण किया जाय।

प्रदेश में १९७१ की जनगणना के अनुसार जनसंख्या ८८,३४१,१४४ थी और जनसंख्या का घनत्व ३००प्रतिवर्ग किमी० था, किन्तु १९८१ में यह जनसंख्या बढ़कर ११०८५०१९ हो गयी तथा जनसंख्या घनत्व ३७७ प्रतिवर्ग किमी० हो गया। इस प्रकार १९७१-८१ के दशक में जनसंख्या में २५.४९ प्रतिशत की वृद्धि हुई है। जो कि तालिका संख्या ।।४:८ ।। से स्पष्ट हो जाता है।

तालिका संख्या ।।४:९।। प्रदेश के जनसंख्या में मुख्य कर्मकरों का आर्थिक क्षेत्रवार प्रतिशत प्रकट कर रही है। आर्थिक क्षेत्रवार अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि कुल स्त्रियों की २४.२ प्रतिशत स्त्री कर्मकर थी जो अन्य क्षेत्रों में सबसे अधिक तथा सम्पूर्ण राज्य में ६.० प्रतिशत स्त्री कर्मकरों की तुलना में चार गुना से अधिक रही। प्रदेश के सभी आर्थिक क्षेत्रों की ग्रामीण जनसंख्या में कर्मकरों का प्रतिशत अंश नगरीय क्षेत्र की जनसंख्या में कर्मकरों के अंश की अपेक्षा अधिक रहा। जो तालिका संख्या ।।४:१०।। को देखने से मालूम होता है।

बढ़ती हुई जनसंख्या आर्थिक विकास के लिए आवश्यक श्रम - शक्ति में वृद्धि करती है, प्रभावपूर्ण मांग और बाजार के विस्तार को बढ़ावा देकर आर्थिक विकास को प्रेरित करती है। किन्तु तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या प्रदेश की एक कठिन समस्या है जो प्रदेश की आर्थिक प्रगति में बाधक बनी हुई है। यदि जनसंख्या की वृद्धि को नियंत्रित करने में सफलता नहीं प्राप्तकी जा सकती तो गरीबी और बेरोजगारी को कम करने के सभी योजना अनुमान असफल सिद्ध होगें।

ऊंची जन्मदर, बाल-विवाह, विवाह की व्यापकता, संयुक्त परिवार प्रथा, सामाजिक और धार्मिक मनोवृत्ति, भाग्यवादिता, अशिक्षा, मृत्युदर में कमी इत्यादि के कारण जनसंख्या वृद्धि प्रदेश में एक समस्या के रूप में खड़ी है। इसके अतिरिक्त स्वास्थ्य सुविधाओं के प्रसार तथा महामारियों पर नियंत्रण से मृत्युदर में कमी आयी है। साथ ही साथ परिवार नियोजन की कम लोकप्रियता, एवं प्रदेश की गर्म जलवायु भी अधिक जनसंख्या के लिए जिम्मेदार है। प्रदेश का आर्थिक विकास तेज करके, शिक्षा सुविधाओं में विस्तार करके, जन्मदर को कम करके प्रदेश की तीव्र गति से बढ़ती हुई जनसंख्या प पर नियंत्रण लगाया जा सकता है।

बेरोजगारी की समस्या को दूर करने के लिए देश एवं प्रदेश की पंचवर्षिय एवं वार्षिक योजनाओं का सहारा लिया गया। प्रथम पंचवर्षिय योजना में बेकारी के तरफ कोई विशेष ध्यान नहीं दिया गया जिससे योजनावधि के समाप्त होने तक बेरोजगारों की संख्या में अधिक वृद्धि हो गयी। द्वितीय योजना में सिंचाई, सामुदायिक विकास, ग्राम एवं लघु उद्योग, कार्य-सह-अभिस्थापन केन्द्रों, सहकारी भारवाही यतायात, उत्पादन केन्द्रों आदि की स्थापना के माध्यमसे बेरोजगारी को दूर करने का विचार किया गया किन्तु प्रथम एवं द्वितीय योजना के समाप्ति तक बेरोजगारीभयंकर रूप में हो गयी। तीसरी योजना में कृषि और उसकी सहायक गतिविधियों, ग्रामीण निर्माण कार्यक्रमों, ग्रामीण और लघु उद्योगों, उनकी उत्पादक क्षमता का पूर्ण उपयोग, ग्रामीण औद्योगीकरण, ग्रामीण विद्युतीकरण, यतायात आदि से सम्बन्धित कार्यक्रमों को रोजगारी के अवसर निर्मित करने की दृष्टि से बहुत महत्व दिया गया। फिर भी यह योजना इतनी संख्या में नौकरी का सृजन नहीं कर सका जो जनसंख्या वृद्धि, ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों में स्थानान्तरण तथा शिक्षा विकास से उत्पन्न रोजगार के

सुअवसरों की कुल मांग को पूरा करती । छठी पंचवर्षीय योजना में भी समाजिक सेवाओं का विस्तार उपभोग में वृद्धि, डेरी विकास, वन एवं मछली उद्योग के विस्तारकरके तथा निर्माण सम्बन्धी सिंचाई, विद्युत तथा आवास के विस्तृत कार्यक्रमों से रोजगार के अवसरों में वृद्धि करने का प्रयास किया गया है । इस प्रकार हम देखते है कि प्रादेशिक तथा स्थानीय आयोजन के माध्यम से आन्तरिक रोजगार में उत्तरोत्तर वृद्धि करने पर भी नवागन्तुकों की संख्या में आशातीत वृद्धि के कारण बेरोजगारीका अन्तराल बढ़ता गया है ।

बेरोजगारी की समस्या के उन्मूलन हेतु प्रदेश में एम० एफ० डी० ए० और एम० एफ० ए० एल० कैशस्कीम फार रूल डेवल्पमेंट, ग्रामीण युवकों को स्वरोजगार योजना, समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, समग्र ग्रामीण विकास कार्यक्रम, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, एकीकृत ग्राम्य विकास कार्यक्रम, स्पेशल कम्पोनेन्ट प्लान इत्यादि रोजगार पूरक कार्यक्रम सरकार द्वारा समय -समय पर चलाये गये है । जिससे प्रदेश में बहुत हद तक बेरोजगारी की समस्या हल हुई है ।

प्रदेश में आर्थिक प्रगति के साथ-साथ शिक्षण संस्थाओं एवं सुविधाओं में भी वृद्धि रही है । प्रदेश में १४ वर्ष तक की आयु के सभी बालक एवं बालिकाओं को नि : शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा सुलभ कराने पर बल दिया जा रहा है । प्रदेश में पहली योजना के अन्त तक १२२७६ प्राथमिक स्कूल थे जिसमें ६ से ११ वर्ष के बच्चों की संख्या २८.०५ लाख थी जबकि १९८०-८१ में इन प्राथमिक विद्यालयों की संख्या६९२४४ हो गयी, एवं इनमें अध्ययनरत् ९४.३७ लाख विद्यार्थी हो गये । राज्य के सातवी योजना के अन्तर्गत २८००० प्राथमिक और ४००० मिडिल स्कूल खोलने का पूर्वानुमान है । प्रदेश में माध्यमिक स्तर की शिक्षा के अन्तर्गत पूर्व माध्यमिक स्कूल एवं उच्चर माध्यमिक स्कूल है । शिक्षा की सम्पूर्ण संरचना में माध्यमि शिक्षा निर्बल कड़ी है । वस्तुत: उत्तर-प्रदेश सरकार ने शिक्षा सम्बन्धी योजनाओं के पुर्नपरिक्षण के लिए तथा सुझाव देने के लिए विभिन्न समयों पर केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार सम्मेलन १९४८, तारा चन्द्र समिति १९४८, माध्यमिक शिक्षा आयो ग ।।१९५२-५३ ।।, एवं भारत शिक्षा आयोग १९६४-६५ कोठारी कमीशन १९६६, इत्यादि की नियुक्तियां की है । माध्यमिक शिक्षा के प्रभावी संचालन हेतु

प्रदेश ११ प्रशासकीय सम्भागों में विभाजित है । १९८३-८४ तक मान्यता प्राप्त उच्च माध्यमिक स संस्थाऐं ५६५० थी । सातवीं योजना में पीछड़े क्षेत्रों एवं नये विकसित क्लोनियों में १०० सरकारी गर्ल्स हायर सेकेन्डरी स्कूल तथा ५० लड़कों के लिए हायर सेकेन्डरी स्कूल खोलने का प्राविधान है ।

प्रदेश में उच्च शिक्षा का प्रसार भी माध्यमिक शिक्षा के भांति तीव्र गति से हुआ है । स्वतन्त्रा प्राप्ति के बाद उच्च शिक्षा की संख्यात्मक वृद्धि को देखते हुए, उच्च शिक्षा के समस्त क्षेत्र का निरक्षण करके उपयुक्त सुझाव देने हेतु ४ नवम्बर १९४८ में डा०एस० राधाकृष्णन की अध्यक्षता में तथा डा० हृदयानाथ कुंज़रू की अध्यक्षता में एक विश्वविद्यालय अनुदान समिति की रचना की गयी । इस समय प्रदेश में तीन प्रकार के सम्बद्ध विश्वविद्यालय, सम्बद्ध एवं शिक्षण विश्वविद्यालय, सावास तथा शिक्षण विश्वविद्यालय पाये जाते हैं । १९५० -५१ में इनकी संख्या ६ थीजबकि वर्तमान समय में राज्य में २१ विश्वविद्यालय हैं । तक्नीकी शिक्षा मानव शक्ति को उद्योग, आधुनिक कृषि और दूसरे क्रियाओं के मांग के अनुसार कुशल और अर्द्ध कुशल कार्यों के सम्पादन हेतु तैयार करती है । प्रदेश में १९५६ तक प्राविधिक शिक्षा के क्षेत्र में कुछ भी नहीं हुआ था । किन्तु विभिन्न योजनाओं में प्राविधिक शिक्षा का विस्तार होता गया जिसे तालिका संख्या ।।५ : २।। में देखने से स्पष्ट होता है ।

इनपुट- आउटपुट विश्लेषण पूर्ण गणतीय समीकरणों पर आधारित एक ऐसी तक्नीक है जिसके माध्यम से हम अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत सभी प्रकार का आर्थिक समस्याओं का विश्लेषण कर सकते हैं । वास्तव में इस विश्लेषण की खोज अर्थव्यवस्था की विभिन्न शाखाओं के आन्तरिक सम्बन्धों का अध्ययन करने हेतु का गयी है । इस विश्लेषण के माध्यम से किसी कार्यक्रम की एकीकृत संगति की जांच की जा सकती है तथा साथ- साथ इस बात का पूर्वानुमान किया जा सकता है कि किसी विशिष्ट उद उद्देश्य की प्राप्त करने के लिए कितनी मात्रा में इनपुट की आवश्यकता है । मुख्य रूप से इस विश्लेषण का उपयोग अन्तर-निर्भरता का अध्यन करने के लिए किया गया है । अत : इसे अन्तर- क्षेत्रीय प्रवाहों का विश्लेषण भी कहते हैं कुछ स्थानों पर अन्तर औद्योगिय विश्लेषण या बहुक्षेत्रीय विश्लेषण की भी संज्ञा दी गयी है । इसके साथ ही साथ यह भी कहा जा सकता है कि इनपुट-आउटपुट ।।अदा -प्रदा ।। विश्लेषण उत्पादन सम्बन्धी सामान्य सन्तुलन विश्लेषण है । इस प्रकार सभी

उत्पादन साधनों ।। श्रम, पूंजी, साहस, प्रबन्ध, भूमि ।। को इनपुट के रूप में स्वीकार किया जा सकता है। क्योंकि किसी भी वस्तु के उत्पादन में इन उत्पादन साधनों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। चूंकि यहां विश्लेषण्ण केवल उसी अर्थ- व्यवस्था की ओर ध्यान केन्द्रित करती है जो सन्तुलन में कार्य कर रही हो। अत: इस तकनीक के अन्तर्गत आर्थिक प्रणाली साम्य की स्थित में उसी समय होती है जिस समय, विभिन्न शाखायें ठीक उतने ही माल का उत्पादन करती है जितना कि वे बेच सकती हैं। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि सन्तुलन की स्थिति में इनपुट तथा आउटपुट एक दूसरे के बराबर होनी चाहिए।

यह विश्लेषण्ण निम्नलिखित तत्वों पर आधारित है: ————

१- यह विश्लेषण्ण सामान्य साम्य की विचारधारा पर आधारित है यहां पर केवल साम्य शब्द का प्रयोग किया जाय तो यह विश्लेषण्ण सत्यतता से दूर रह जायेगा क्योंकि यह सम्भव है कि इस विश्लेषण से प्राप्त आउटपुट के मान बाजार के साम्य शर्तों का पालन न करें। अत: इस विश्लेषण के अन्तर्गत सामान्य साम्य अर्थव्यवस्था का प्रयोग इस लिये किया गया है। क्योंकि यह विश्लेषण बिना साम्य के भी सामान्य है। इस विश्लेषण को ध्यान में रखकर यदि हम इनपुट-आउटपुट विश्लेषण पर अपना ध्यान केन्द्रित करते है तो ज्ञात होता है कि चूंकि इनपुट-आउटपुट तकनीक के अन्तर्गत अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों के बीच सम्बन्धों पर विचार किया जाता है इस लिये विश्लेषण में अनेक उद्योगों की कार्य विधियों और उत्पादन योजनाओं पर भी विचार किया जाता है। इस प्रकार विभिन्न उद्योगों का आपस में सम्बन्धित होना इस लिए आवश्यक भी है कि कभी-कभी एक उद्योग दूसरे औद्योगिक संस्थान द्वारा प्राप्त आउटपुट को अपने लिए कच्चा माल या इनपुट के रूप में प्रयोग करता है। इस प्रकार इस फर्म की प्रदा ।। आउटपुट ।। क्रम से किसी दूरे फर्म या उद्योग के लिए इनपुट का कार्य करती है। साथ ही साथ यह भी सम्भव है कि यह दूसरी फर्म उसे उनमें से ही हो जिसने पहली फर्म के लिए कुछ संघटक प्रदान किये हो। उदाहरण के लिए मान लिया कि टाटा आयरन कारखाने से प्राप्त स्पात से एक फर्म मालगाड़ी के डिब्बे बनाने का कार्य करती है और इस प्रकार बने डिब्बे पुन: टाटा आयरन कारखाने में फौलाद ढोने का कार्य करते हैं। स्पष्ट है कि अर्थव्यवस्था की प्रत्येक शाखा अपने उत्पादन में प्रयोग के लिए अन्य शाखाओं से

म-जो माल ग्रहण करती है वह उसकी इनपुट तथा जो माल उत्पादन के रूप में तैयार करती है वह उसका आउटपुट कहलाता है। प्रत्येक शाखा की प्रदा ।।आउटपुट।। दूसरी शाखाओं की अदा ।।इनपुट।। हो सकती है और इस प्रकार अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत विभिन्न शाखाये एक दूसरे से सम्बन्धित हो जाती है। इस दृष्टि से आर्थिक प्रणाली में साम्य की स्थिति वह होगी जब कि विभिन्न उद्योग या फर्में ठीक उतना ही माल उत्पन्न करें जितना कि वह बेच सकती है। अर्थात साम्य की स्थिति में किसी भी उद्योग की इनपुट की मात्रा आउटपुट की मात्रा के बराबर होना चाहिए।

२-इनपुट-आउटपुट तकनीक पूर्ण तकनीकी विश्लेषण है, यदि प्राप्त साधनों की मात्रा और तकनीकी स्थिति का ज्ञान हो तो इस विश्लेषण के द्वारा यह पता लगाया जा सकता है कि किस वस्तु का उत्पादन किया जाना चाहिए। और उत्पादन विधि के बीच उपयोग किये जाने वाले संघटकों की कितनी मात्रा में प्रयुक्त किया जाय। इस सम्बन्ध में यह निर्णय अर्थव्यवस्था में बहुत ही महत्व के है क्योंकि इनके द्वारा किसी अर्थव्यवस्था में किसी भी निश्चित उद्देश्यों को पाने के लिये जो नीचे लिखी में से कोई भी हो सकते, कुल कितनी मात्रा में आउटपुट की आवश्यकता पड़ेगी, पूर्व ही अनुमान लगाया जा सकता है। इन उद्देश्यों में निम्न में से कोई भी उद्देश्य अर्थव्यवस्था का हो सकता है:-- राष्ट्रीय आय की दर में अधिकतम वृद्धि, अधिकतम बचत, उचित और अधिकतम रोजगार, अधिकतम लाभ, अधिकतम उत्पादन, समान वितरण, अधिकतम विकास की गति।

३-इनपुट-आउटपुट की तीसरी विशेषता यह है कि यह विश्लेषण पूर्णत: अनुभव जन्य निर्णयों और खोज बातों पर आधारित है और इसी कारण से यह सामान्य साम्य सिद्धान्त सिद्धान्तवादियों और वालारस के कार्य से भिन्न समझा जाता है या यह कहा जा सकता है कि यही एक बात इस तकनीक को बालरस के कार्य से अलग करने में सहायक है। इनपुट-आउटपुट तकनीक में एक ऐसे माडल पर विचार किया जाता है कि जो बहुत ही सरलीकृत और विस्तृत है और जो अधिक से घटनाओं का एक साथ समावेश अपने में कर सकता है।

४-यह तकनीक पूर्णत: नव परम्परावादियों की सामान्य सन्तुलन की विचार धारा पर आधारित है

५-यह तकनीक पूर्ण रूप से सांख्यकीय सूचनाओं ।।आंकड़ो तथा गणितीय समीकरणों पर आधारित है सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था का अध्ययन इस तकनीक द्वारा तभी सम्भव है जबकि पर्याप्त सांख्यकीय आंकड़े उपलब्ध हो तथा गणित का अच्छा ज्ञान हो।

६- इस तकनीक की यह विशेषता है कि यह हमारा ध्यान सदैव एक ऐसी अर्थव्यवस्था की ओर केन्द्रित करती है जो सन्तुलन में कार्य कर रही हो । असन्तुलित अर्थव्यवस्था में यह तकनीक कारगर नहीं होती है ।

७- इनपुट - आउटपुट तकनीक पूर्णरूपेण कोआपरेशन के सिद्धान्तों पर निर्भर है । इसके अन्तर्गत एक क्षेत्र दूसरे क्षेत्र का यथा सम्भव सहयोग करते है ।

८- यह तकनीक "वस्तु के द्वारा वस्तु का उत्पादन" के सिद्धान्त पर आधारित है अर्थात इस तकनीक के अन्तर्गत मुख्य रूप से एक वस्तु के उत्पादन में अधिकांशतः अन्य वस्तुओं का सहारा लिया जाता है कहने का तात्पर्य यह कि इस तकनीक के माध्यम से वस्तुओं के उत्पादन में वस्तुओं की ही अधिक भूमिका रहती है ।

९- यह तकनीक पूर्णतः भौतिक नियोजन पर आधारित है । वित्तीय नियोजन इस तकनीक में पूरक के रूप में प्रवेश करता है । सम्पूर्ण तकनीक में केवल भौतिक नियोजन ही भाग लेता है ।

१०-यह तकनीक बहुक्षेत्रीय अर्थव्यवस्था से सम्बन्धित है जो विभिन्न प्रकार के क्षेत्रों में विभाजित है साथ ही साथ इस तकनीक के द्वारा एक से अधिक घटनाओं का एक साथ अध्ययन किया जा सकता है ।

११- इस तकनीक के अन्तर्गत एक वस्तु के उत्पादन की एक ही प्रक्रिया है, अर्थात किसी भी वस्तु का उत्पादन केवल एक प्रक्रिया के आधार पर किया जा सकता है ।

१२- इस तकनीक के अन्तर्गत संयुक्त उत्पादन की कोई व्यवस्था नहीं है ।

१३- इस तकनीक की एक प्रमुख विशेषता यह है कि इसके अन्तर्गत प्रत्येक उद्योग केवल एक समान वस्तु की समान इकाई का उत्पादन करता है । यदि कोई उद्योग दो या दो से अधिक वस्तुयें एक निश्चित अनुपात में उत्पादित करता है तो उनका विश्लेषण कर इस तकनीक में एक समान मान लिया जात जाता है ।

१४- इस तकनीक में विश्लेषण के समय यह मानकर चलते है कि पैमाने के प्रतिफल स्थिर है । इन विशेषताओं के आधार पर अर्थव्यवस्था के प्रत्येक क्षेत्र का अलग-अलग सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है ।

राज्य की अर्थव्यवस्था की सर्वांगमुखी समृद्धि तथा विकास की दशा के अभिज्ञान के लिए राज्य आय एवं प्रति व्यक्ति आय एक महत्वपूर्ण मापदण्ड है। जिसके अधार पर लोगों के जीवन स्तर एवं कल्याण के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। प्रतिव्यक्ति राज्य आय एवं कुल आय में यद्यपि योजना काल में वृद्धि हुई है, लेकिन प्रदेश में आज भी लगभग ५० प्रतिशत लोग गरीबी रेखा के नीचे जीवन व्यतीत कर रहे हैं अर्थात राज्य आय की की वृद्धि का लाभ गरीब वर्ग को बहुत कम मिल रहा है। इस प्रकार श्रम जीवी वर्ग को उसके श्रम का न्यायोचित प्रतिफल नहीं मिला है। ऐसे स्थिति में श्रमिकों को कार्य करनेकी प्रेरणा नहीं मिली है जिससे उत्पादकता कम रही। उत्तर-प्रदेश में कुल राज्य आय स्थिर मा भाव पर १९५०-५१ में १९५२करोड़ रु० तथा इसी प्रकार प्रतिव्यक्ति आय स्थिर मूल्यों पर १९५०-५१ में २५९.६३ रु० थी १९८२-८३ में बढ़कर ५२९ रु० हो गयी। इस प्रकार हम देखते है कि प्र राज्य आय में निरन्तर वृद्धि होती गयी है।

उत्तर-प्रदेश आर्थिक दौड़ में पूरे देश की तुलना में पीछे छूटता चला जा रहा है। और इस समय देश में इसकी गति सबसे मन्द है, जबकि पंचवर्षीय योजनाओं के प्रारम्भ होने के पूर्व प्रतिव्यक्ति आय के क्षेत्र में उत्तर-प्रदेश का पांचवा स्थान था और इस समय यह उड़ीसा, राजस्थान, बिहार और जम्मू-कश्मीर को छोड़ कर सबसे नीचे है। भविष्य में प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि करके राष्ट्रीय प्रतिव्यक्ति आय के स्तर तक पहुंचने के लिए प्रदेश की अर्थव्यवस्था में सातवीं पंचवर्षीय योजना काल में विकास की दर ८ प्रतिशत से भी अधिक रखनी होगी, लेकिन यह सम्भव नहीं दिखायी पड़ता इसलिए भविष्य में राष्ट्रीय प्रति - व्यक्ति आय तथा राज्य - प्रति - व्यक्ति आय में अन्तर बराबर बना रहेगा।

आर्थिक वृद्धि के फल स्वरूप रोजगार के अवसरों में वृद्धि होती है किन्तु इस वृद्धि में वर्तमान तथा भविष्य के समस्त बेरोजगारों को खपाया नहीं जा सकता है। प्रदेश में आयोजकों में रोजगार की दृष्टि से विभिन्न उत्पादन क्षेत्रों तथा कौशल के सम्बन्ध में जन-शक्ति की आवश्यकताओं तथा पूर्तियों में दो दोषपूर्ण सन्तुलन है। एक सफल रोजगार नियोजन द्वारा उत्तर-प्रदेश के आर्थिक वृद्धि में सहायता प्राप्त हो सकती है। आर्थिक विकास की दृष्टि से प्रदेश में उपयुक्त रोजगार नीति की नितान्त आव आवश्यकता है, जिससे इन समस्याओं के समाधान में सहायता मिल सके।

उत्तर - प्रदेश में औद्योगिक विकास के लिए अनेक सुविधाएँ उपलब्ध है, फिर भी इन सुविधाओं के बावजूद १९७३ में २९८ बड़े और मध्यम प्रकार के उद्योग थे। राज्य में आर्थिक सहायता के के विकेन्द्रीकरण के उद्देश्य से लघु उद्योगों के लिए विभिन्न माध्यमों से आर्थिक सहायता प्रदान की जा रही है। जिससे सार्वजनिक क्षेत्र और निजी क्षेत्र में औद्योगिकरण का वातावरण बनता जा रहा है ग्रामीण एवं लघु में हथकरघा उद्योग, कृषि के पश्चात राज्य का सबसे बड़ा उद्योग है। इसके माध्यम से लगभग १५ लाख व्यक्तियों को रोजगार मिला है। उत्तर-प्रदेश के उन ग्रामीण क्षेत्रों में जहाँ की जनसंख्या १५००० तक है उनमें ग्रामीण उद्योग परियोजना प्रारम्भ की गयी थी। प्रदेश में औद्योगिकरण के क्षेत्र में, कच्चे माल की अपर्याप्तता, शक्ति, इत्यादि के कारण समस्या का सामना करना पड़ रहा है। फिर भी इन असुविधाओं को बावजूद प्रदेश में सूती, ऊनी, चीनी, कागज जैसे वृहद उद्योगों का विकास हो सका है।

तीव्र बढ़ती हुई जनसंख्या, दोषपूर्ण शिक्षा प्रणाली, पूंजी - निर्माण की धीमी गति, हस्त शिल्प एवं लघु उद्योगों का पतन इत्यादि प्रमुख कारण है जिससे प्रदेश में बेरोजगारी वृहद् रूप में विद्यमान है।

श्रम-प्रधान कार्यों, कृषि विकास, गैर कृषि रोजगार में वृद्धि, खनिज तथा निर्माण उद्योगों में विस्तार, ग्रामीण क्षेत्रों में विद्युतीकरण, उद्योगों का विकेन्द्रीकरण, शिक्षा, स्वास्थ्य तथा परिवार नियोजन जैसी सेवाओं का विस्तार एवं व्यापार, वाणिज्य तथा वित्तीय क्रियाओं के क्षेत्र के विस्तार में, प्रदेश में अतिरिक्त अधिक रोजगार प्रदान करने की सम्भावना प्राप्त होती है। प्रदेश में रोजगार की सम्भावनाएँ विशेष तौर से ग्रामीण, लघु एवं कुटीर उद्योगों में अधिक है।

प्रदेश में रोजगार की स्थिति परिवर्तनशील है। उत्पादक रोजगार से उत्पादन बढ़ाने के साथ ही निरन्तर आय भी बढ़ेगी। बुनियादी तौर पर हमारी यह आशा रही है कि अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में विकास के साथ ही रोजगार के अवसर भी बढ़ेंगे, लेकिन हमारे पास अब एक ऐसा

अधार है जिसे लेकर हम ज्याद प्रत्यक्ष रूप से बेरोजगारी की समस्या से निपट सकते है। रोजगार के अधिक से अधिक अवसर पैदा करने के लिए विकास का एक ढांचा तैयार करना चाहिए ।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम आदि कार्यक्रमों के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर बढ़ाने पर अवश्य जोर देना चाहिए। लेकिन इन कार्यक्रमों पर कारगर ढंग से अमल करने के लिए इन पर और अधिक नजर रखी जानी चाहिए और इससे सम्बन्धित योजना तथा संगठन को और सुदृढ़ बनाया जाना भी आवश्यक है।

गैर मुद्रा स्फीतिकारी रोजगार के अवसर बढ़ाने के लिए कृषि उत्पादन को बढ़ावा चाहिए। प्रदेश में अब कृषि क्षेत्र से ही बड़े पैमाने पर रोजगार के अवसर पैदा करने होंगे लेकिन औद्योगिक क्षेत्र की क्षमता को भी कम नहीं आंका जा सकता। [1]अन्तत: गरीबी को समाप्त करना तेज औद्योगिकरण के साथ अनिवार्य रूप से जुड़ा हुआ है। वर्तमान क्षमता के बेहतर उपयोग के द्वारा, तेजी से विकास करने की काफी सम्भावनाएं है।

शिक्षित बेरोजगारों की समस्याओं को दो प्रकार से हल करना होगा। मूल कारण तो यह है कि पिछले दस वर्षों में लगातार जितने लोगों को रोजगार के अवसर मिलते रहे, उससे अधिक संख्या में युवावर्ग शिक्षण संस्थाओं से प्रति वर्ष डिग्रियां लेकर निकलता रहा। इस प्रकार बेकार बैठे लोगों से अधिक संख्या इन नये चेहरों की है। यह स्थिति समानुपातिक नहीं है। इस असमान स्थिति को दूर करने के लिए उन डिग्री प्राप्त लोगों का विशेष अध्ययन करना होगा जिनके सन्दर्भ में बेरोजगारी की दर अन्यों से अधिक है। ऐसे शिक्षित युवकों में कला, विज्ञान, और वाणिज्य के समान्य स्नातक और डिप्लोमा इंजिनियर विशेषत: शामिल है। अत: जरूरी होगा कि शिक्षा प्रणाली में इस

१- योजना १६-३१ जुलाई, १९८४।

तरह का परिवर्तन किया जाय जिससे ऐसे बेरोजगारों की संख्या और न बढ़े। दूसरी ओर अधिक से अधिक युवकों को डिग्री पाने के पहले ही व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त करनी होगी। चूँकि संगठित क्षेत्र में रोजगार के अवसर उतने नहीं बढ़ाये जा सकते है जितने असंगठित क्षेत्र में, इस लिए शिक्षित युवकों को भी अधिक से अधिक स्वरोजगार में ही लगाना होगा।

योजना और विकास परस्पर सम्बन्धित है। चूँकि हमारा देश एवं उत्तर - प्रदेश बहुत बड़ा और विभिन्न, जलवायु, वेशभूषा, खान-पान, रीतिरिवाज वाला है इसलिए कोई एक ही योजना देश एवं प्रदेश के हर भाग के लिए उपयुक्त नहीं है। जरूरी है कि राज्य सरकार अपने प्रदेश की विशेष स्थिति को देखते हुए उस तरह योजना बनाये बल्कि प्रदेश की विषमताओं को देखते हुए अलग-अलग जिलों में विशेष परिस्थितियों की दृष्टि से क्षेत्रीय योजनायें बने और इस काम को सरंजाम देने में जिला या विकास खण्डों को जिस विशेषज्ञान की जरूरत हो, वह राज्य सरकार प्रदान करे।

विकास समन्वित ग्रामीण विकास योजना द्वारा ही सफल हो गा, विकास खण्डों की जो स्थिति है, उसे देखते हुए। कृषि एवं अन्य क्षेत्रों में, जहां रोजगार के बढ़ने के अवसर हों, ध्यान दिया जाये और उसमें लचीलापन रहे।

आधुनिक तकनीक व प्रविधि का प्रयोग करके क्षेत्रीय योजना के निर्माण एवं उसके कार्यान्वयन से विकास व रोजगार सृजन के सन्तुलित प्रक्रिया को गति प्रदान किया जा सकता है।

परिशिष्ट-१

आयु वर्ग १५-५९ वर्ष में कुल जनसंख्या में श्रम-शक्ति का प्रतिशत साप्ताहिक कार्य और प्रतिदिन के कार्य के अधार पर[1]

सभी चक्रों का योग

प्रान्त/केन्द्र शासित क्षेत्र	आयु वर्ग १५-५९ वर्ष में कुल जनसंख्या में श्रम-शक्ति का प्रतिशत							
	साप्ताहिक कार्य के अधार पर				प्रतिदिन कार्य के अधार पर			
	ग्रामीण		नगरीय		ग्रामीण		नगरीय	
	पुरूष	महिला	पुरूष	महिला	पुरूष	महिला	पुरूष	महिला
१	२	३	४	५	६	७	८	९
भारत	९०.४४	३९.३२	८४.७८	२२.१८	८८.२	३४.६७	८३.८३	२०.२४
आन्ध्र प्रदेश	९३.०४	५७.८३	८६.३४	२९.८७	९०.३३	५५.४८	८४.८३	२७.३१
असम	८८.२७	१२.०३	८१.६०	७.७७	८२.३४	१०.३५	७९.१५	७.२८
बिहार	९१.०३	२४.५०	८३.६४	१४.१८	८९.६४	२२.६५	८३.२०	१३.५७
गुजरात	९०.३०	५१.०१	८४.५०	१८.७९	८८.३२	४०.९१	८३.९१	१६.५४
हरियाणा	८९.०८	२६.७९	८४.८८	१७.४०	८७.८२	१८.७१	८४.२५	१४.१३
हिमांचल प्रदेश	८८.९३	६२.०५	८४.३५	२२.९६	८६.०९	४९.३३	८४.०३	२०.६४
जम्बू एवं काश्मीर	९१.३०	२५.२६	८३.१४	१३.१३	९०.०४	१८.९९	८२.८७	११.०९
कर्नाटका	९१.३३	४९.३५	८२.३१	२५.५३	८८.७७	४३.६३	८१.२८	२३.६१
केरला	८२.६६	३९.४८	८२.६१	३०.८०	७८.६९	३२.७२	७९.७४	२५.२६
मध्य प्रदेश	९२.०५	५३.६८	८२.११	१९.६७	९०.०३	४८.७७	८१.३०	१८.६४
महाराष्ट्र	९०.५७	६२.११	८३.८८	२४.५९	८८.११	५६.४४	८३.२९	२२.७०
मेघालय	—	—	७७.०८	२९.८७	—	—	७५.८९	२९.२२
नागालैण्ड	—	—	८५.७१	१९.८३	—	—	८५.७१	१९.८३
उड़ीसा	९१.२७	२९.९६	८३.०९	२०.७३	८८.२२	२६.६३	८२.००	१९.२२
पंजाब	८८.२४	२८.५१	८६.२९	१६.८६	८६.३७	१९.१४	८५.२२	१३.५७
राजस्थान	९१.५३	३.०६	८१.३५	१८.७२	८९.८८	४६.०४	८०.६०	१६.००
तमिलनाडु	९१.२१	५३.५४	८८.९१	३५.३१	८८.१०	४०.७	८७.६०	३२.८६
उत्तर-प्रदेश	८९.६०	२६.३८	८४.१२	१३.२५	८८.०३	२२.८८	८३.०९	११.३७
प० बंगाल	९०.९१	१६.१७	८७.१७	१५.१८	८९.४४	१४.६०	८६.३६	१३.२८
चंडीगढ़	—	—	८०.७४	१७.५७	—	—	८०.७४	१७.५७
दिल्ली	८४.१५	१८.४४	८५.४७	२०.३८	८४.१५	१३.३६	८५.०७	१९.४९
गोआ, दमन और द्वीप	८१.०१	५३.०७	७६.९८	३८.६८	८०.१७	४७.९८	७५.८७	३३.४९
पाण्डेचेरी	८६.३७	३१.०३	८१.६४	१७.०५	८३.२७	२४.३६	८१.०२	१५.९०

१- ड्राफ्ट एनुअल प्लान १९८४-८५, पृ० १६६, प्लानिंग डिपार्टमेन्ट, उत्तर-प्रदेश/कालम-१।

परिशिष्ट-२

आयु वर्ग १५-५९ वर्ष में निश्चित श्रम-शक्ति का प्रान्तों में तुलनात्मक स्वरूप [१]

प्रान्त	जनसंख्या में श्रम-शक्ति का प्रतिशत	जनसंख्या में कर्मकर-शक्ति का प्रतिशत	श्रम-शक्ति में बेरोजगारों का प्रतिशत	कर्मकरों का प्रतिशत	प्रतिव्यक्ति आय प्रचलित मूल्यों पर ७७-७८ में ।। रु०में।।
१	२	३	४	५	६
१- भारत	६२.९४	५९.९०	४.८४	८.५४	११८९
२- आन्ध्र प्रदेश	७२.०३	६७.४०	६.४२	९.०३	१००२
३- असम	५२.४०	५१.४५	१.८२	७.११	एन० ए०
४- बिहार	५६.८५	५४.१०	४.८३	४.०९	७३५
५- गुजरात	६५.७२	६३.५३	३.३३	१०.०३	१४५२
६-हरियाणा	५७.१९	५४.५९	४.५५	९.४६	१६००
७- हिमांचल	७३.०६	७१.९९	१.४६	११.०८	एन० ए०
८-जम्बू एवं कश्मीर	५७.७८	५५.३७	४.१६	७.०६	एन० ए०
९- कर्नाटका	६६.८६	६३.८९	४.४५	१०.३८	११२९
१०-केरला	५८.१७	५०.२८	१३.५७	२२.७७	९८७
११-मध्य प्रदेश	६९.६४	६८.२५	१.९९	५.४७	९०५
१२-महाराष्ट्र	५९.४८	५६.४५	५.११	७.६३	१६३७
१३-उड़ीसा	५९.५८	५६.७८	४.७०	८.६९	७९९
१४-पंजाब	५७.७७	५६.१८	२.९२	१०.०८	१९६२
१५-राजस्थान	६८.५५	६६.९०	२.४०	७.३८	९६४
१६-तमिलनाडु	६९.१९	६४.१७	७.२६	१४.५४	१०३६
१७-उत्तर प्रदेश	५७.५२	५५.९२	२.७७	५.५८	९१६
१८-प० बंगाल	५५.००	५१.५४	६.२९	६.४८	१२६८

१- स्रोत : १- ड्राफ्ट फाइव - एअर प्लान १९८०-८५, वाल्यूम-१ ।

२- ड्राफ्ट एनुअल प्लान १९८२-८३, वाल्यूम - १ ।

परिशिष्ट-३

आयु वर्ग १५-५९ वर्ष में एन० एस० एस० के ३२ वें चक्र के अनुसार १९७७-७८ में अनुमानित कर्मकरों ।। व्यक्ति सप्ताह ।। के प्रतिशत का वितरण[1]

।। प्रतिशत ।।

कर्मकरों के श्रेणी का क्रम सं०	ग्रामीण			नगरीय			योग		
	पुरुष	महिला	योग	पुरुष	महिला	योग	पुरुष	महिला	योग
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
१-बधुआ श्रम	०.१५	०.०५	०.१३	०.०४	०.०००	०.०४	०.१३	०.०४	०.१२
२-स्वरोजगार-कृषि	६४.३८	७३.२५	६६.३६	६.५१	१६.४५	७.६९	५९.८१	६८.९८	५८.५८
अकृषिय	१२.९१	९.४१	१२.१३	४३.४०	४८.२१	४३.९७	१७.४३	१२.२३	१६.३४
योग	७७.२९	८२.६६	७८.४९	४९.९१	६४.६६	५१.६६	७३.२४	८१.३१	७४.९२
३-नियमित। मजदूरी। रोजगार प्राप्त कृषि	२.३३	९.७५	१.९७	०.६४	०.३०	०.६०	२.०८	०.७२	१.७९
अकृषिय	५.६९	१.५६	४.७७	३९.२१	२५.९२	३७.६३	१०.६५	३.३९	९.१३
योग	८.०२	१२.३१	६.७४	३९.८५	२६.२२	३८.२३	१२.७३	४.११	१०.९२
४-सार्वजनिक कार्य में सामयिक श्रम	०.४६	०.१४	०.३९	०.४७	०.३९	०.४६	०.४६	०.१६	०.४०
५-कृषि के अन्य कार्यों में सामयिक श्रम	११.०३	१४.००	११.७०	१.४९	२.३०	१.५९	९.६२	१३.१२	१०.३६
अकृषिय	३.०५	०.८४	२.५५	१८.२४	६.४३	८.०२	३.८२	१.२६	३.२८
योग	१४.०८	१४.८४	१४.२५	१९.७३	८.७३	९.६१	१३.४४	१४.३८	१३.६४
कुल कर्मकर	१००.००	१००.००	१००.००	१००.००	१००.००	१००.००	१००.००	१००.००	१००.००

१- ड्राफ्ट एनुअल प्लान १९८४-८५, वाल्यूम-१, उत्तर-प्रदेश, पृ० ८८ ।

परिशिष्ट-4

उत्तर प्रदेश में क्षेत्रानुसार जोतों की संख्या, क्षेत्र का प्रतिशत कृषि सेन्सस 1976-77 के अनुसार

क्र0	जोत हेक्टेयर में	पूर्वी क्षेत्र		पश्चिमी क्षेत्र		केन्द्रीय क्षेत्र		बुन्देलखण्ड क्षेत्र		पर्वतीय क्षेत्र		प्रान्त	
		जोतों का प्रतिशत	जोत क्षेत्र का प्रतिशत	जोतों का प्रतिशत	जोत क्षेत्र का प्रतिशत	जोतों का प्रतिशत	जोत क्षेत्र का प्रतिशत	जोतों का प्रतिशत	जोत क्षेत्र का प्रतिशत	जोतों का प्रतिशत	जोत क्षेत्र का प्रतिशत	जोतों का प्रतिशत	जोत क्षेत्र का प्रतिशत
1-	0·5 से नीचे	60·24	16·02	40·83	7·42	45·55	11·33	22·72	2·54	53·33	10·16	49·75	10·43
2-	0·5-1·0	18·05	16·56	20·10	11·64	22·79	16·19	18·53	5·86	18·14	13·60	19·55	13·44
3-	1·0-2·0	12·67	22·05	19·84	21·74	18·38	25·10	23·10	14·12	15·61	22·48	16·46	21·58
4-	2·0-3·0	4·37	13·26	8·57	16·34	6·56	15·61	12·14	12·49	6·16	15·37	6·37	14·74
5-	3·0-4·0	1·96	8·40	4·40	11·90	2·84	9·68	6·87	10·24	2·83	9·79	3·12	10·11
6-	4·0-5·0	1·07	6·04	2·56	8·89	1·50	6·57	4·54	8·66	1·52	6·81	1·78	7·45
7-	5·0-10·0	1·33	11·18	3·21	16·43	1·69	10·86	5·07	26·56	2·00	13·63	2·37	14·81
8-	10·00 से ऊपर	0·31	6·89	0·49	5·64	2·29	4·66	3·03	19·53	0·41	8·16	0·51	7·44
	योग	73144 (100)	57514 (100)	48718 (100)	61865 (100)	31638 (100)	31591 (100)	8833 (100)	20551 (100)	7379 (100)	7083 (100)	16971 (100)	17864 (100)

स्रोत- एनुअल प्लान, १९८३-८४, पृ० १८०, उत्तर-प्रदेश।

परिशिष्ट-५

क्षेत्रीय उद्यमों की संख्या और उसमें लगे व्यक्ति, प्रति लाख जनसंख्या[1]

आर्थिक क्षेत्र	जनसंख्या १९८१ सेंसस	आर्थिक सेंसस के अनुसार १९८०		संख्या प्रति लाख जनसंख्या	
		कुल उद्यमों की संख्या	सधारणत: कर्मकरों की संख्या	उद्यम	सधारणत: कर्मकर
१	२	३	४	५	६
१- पर्वतीय	४८१५३२६	१३३७२४	३४०५५४	२७७७	७०७२
२- पश्चिमी	३९३५६८०३	८९९४४१	२३४३५३३	२२८५	५९५५
३- बुन्देलखण्ड	५४३८१८७	११३७६३	१४७१६७	२०९२	४५४५
४- केन्द्रीय	१९७०२६३२	३३६०२२	९३४३५१	१७०५	४७४२
५- पूर्वी	४१५७२९२६	६८७११५	१७६३९४५	१६५३	४२४३
योग	११०८८५८७४	२१७००६५	५६२९५५०	१९५७	५०७७

१- स्रोत :१- सेंसस आफ इंडिया १९८१ : सीरिज २२, उत्तर-प्रदेश पेपर न०-१, १९८१,सप्लीमेंट ।

२-आर्थिक सेंसस १९८०, उत्तर-प्रदेश, प्रोवीजनल रिजल्ट ।

क्षेत्रफल एवं जनसंख्या ।।जिलेवार।। १९८१[1]

क्र०सं०	जिला	क्षेत्रफल वर्ग किमी०	जनसंख्या ।।'००० ।।	घनत्व प्रति-वर्ग किमी०
१	२	३	४	५
१-	उत्तर-प्रदेश	२९४४१३	११०८६२	३७७
१-	देहरादून	३०८८	७६२	२४७
२-	सहारनपुर	५५९१	२६७४	४७८
३-	मुज्जफरनगर	४१७६	२२७५	५४५
४-	मेरठ	३९११	२७६७	७०७
५-	गाजियाबाद	२५९०	१८४३	७१२
६-	बुलन्दशहर	४३५२	२३५८	५४२
७-	अलीगढ़	५०१९	२५७५	५१३
८-	मथुरा	३८११	१५६०	४०९
९-	आगरा	४८०५	२८५३	५९४
१०-	मैनपुरी	४३४३	१७२६	३९७
११-	एटा	४४४६	१८५९	४१८
१२-	बरेली	४१२०	२२७३	५५२
१३-	बिजनौर	४८४९	१९३९	४००
१४-	बदायूं	५१६८	१९७२	३८२
१५-	मुरादाबाद	५९६७	३१४९	५२८
१६-	शाहजहांपुर	४५७५	१६४८	३६०
१७-	पीलीभीत	३४९९	१००८	२८८
१८-	रामपुर	२३६७	११७९	४९८

१- स्रोत : - भारतीय जनगणना १९८१ ।

१ २	३	४	५
१९- फर्रुखाबाद	४२७४	१९४९	४५६
२०- इटावा	४३२६	१७४३	४०६
२१- कानपुर ।।नगर।। २२- कानपुर ।।देहात ।।	६१७६	३७४२	६०६
२३- फतेहपुर	४१५२	१५७२	३७९
२४- इलाहाबाद	७२६१	३७९७	५२३
२५- झांसी	५०२४	११३७	२२६
२६- ललितपुर	५०३९	५७८	११५
२७- जालौन	४५६५	९८६	२१६
२८- हमीरपुर	७१६६	११९४	१६७
२९- बांदा	७६२४	१५३४	२०१
३०- वाराणसी	५०९२	३७०१	७२७
३१- मिर्जापुर	११३१०	२०३९	१८०
३२- जौनपुर	४०३८	२५३३	६२७
३३- गाजीपुर	३३७७	१९४५	५७६
३४- बलिया	३१८९	१९४५	६१०
३५- गोरखपुर	६२७३	३७९६	६०५
३६- देवरिया	५४४५	३४९७	६४२
३७- बस्ती	७२२९	३५७८	४९५
३८- आजमगढ़	५७४०	३५४४	६१७
३९- नैनीताल	६७९४	११३७	१६७
४०- अल्मोडा	५३८२	७५७	१२१
४१- पिथौरागढ़	८८५६	४८९	५५
४२- टेहरी गढ़वाल	४४२१	४९८	११३
४३- उत्तर काशी	८०१६	१९१	२४
४४- चमोली	९१२५	३६४	४०

१	२	३	४	५
४५-	गढ़वाल	५४४०	६३८	११७
४६-	लखनऊ	२५२८	२०१४	७९७
४७-	उन्नाव	४५५८	१८२३	४००
४८-	रायबरेली	४६०९	१८८७	४०९
४९-	सीतापुर	५७४३	२३३७	४०७
५०-	हरदोई	५९८६	२२७५	३८०
५१-	खीरी	७६८०	१९५३	२५४
५२-	फैजाबाद	४५१२	२३८२	५२८
५३-	गोन्डा	७३५२	२८३५	३८६
५४-	बहराइच	६८७७	२२१६	३२३
५५-	सुलतानपुर	४४३६	२०४३	४६१
५६-	प्रतापगढ़	३७१७	१८०१	४८५
५७-	बाराबंकी	४४०१	१९९२	४५३

उ०प्र० की मान्यता प्राप्त शिक्षा संस्थाएँ

संस्था	१९७८-७९	१९८१-८२⁰	१९८२-८३⁰
१	२	३	४
१- विश्वविद्यालय	१९	१९	१९
२- महाविश्वविद्यालय	३५६	३८७	३९७
३- उच्चतर माध्यमिक विद्यालय	४,८६९	५,४१०	५६१०
४- सीनियर बेसिक-स्कूल	१२,०४९	१३,८५२	१४०६९
५- जूनियर बेसिक-स्कूल	६८,१२२	७१,६३७	७२२००
६- नर्सरीस्कूल	६३	८८	८८

⁰अनुमानित, स्रोत : शिक्षा निदेशालय, उत्तर-प्रदेश।

उ०प्र० की मान्यता प्राप्त शिक्षा संस्थाओं में विद्यार्थी

('000)

संस्था	१९७८-७९	१९८१-८२⁰	१९८२-८३⁰
१	२	३	४
१- विश्वविद्यालय	९९	१२१	१२४
२- महाविश्वविद्यालय	३,२१	३७३	३६६
३- उच्चतर माध्यमिक विद्यालय	३१,३६	३५,५६	३७३०
४- सीनियर बेसिक-स्कूल	१४,४०	१६,१०	१८०९
५- जूनियर बेसिक स्कूल	८७,८८	९८,२३	१०४६०
६- नर्सरी स्कूल	१२	३१	३२

⁰अनुमानित, स्रोत : शिक्षा निदेशालय, उत्तर-प्रदेश।

उत्तर-प्रदेश में विद्यार्थियों की भर्ती

॥००० ॥

कक्षा लिंग	१९७८-७९	१९८१-८२°	१९८२-८३°
१	२	३	४
१- बालक	६२,५४	६५,७७	७२७२
२- बालिकायें	२७,३५	३२,८८	३२७५
योग	८९,८९	९८,६५	१०५०३
१- बालक	२०,३९	२२,५६	२४५१
२- बालिकायें	५,५४	८,२२	८२५
योग	२५,९३	३०,७८	३२७६
१- बालक	१४,९६	१६,७४	१७८०
२- बालिकायें	२,८२	३,७८	४४०
योग	१७,७८	२०,५२	२२२०

°अनुमानित, स्रोत : शिक्षा निदेशालय, उत्तर-प्रदेश।

उ०प्र० में विभिन्न प्रकार की शिक्षा पर राजस्व व्यय

॥लाख रु० ॥

मद	१९८०-८१ वास्तविक	१९८१-८२ पुनरीक्षित अनुमान	१९८२-८३ आय-व्ययक अनुमान
१	२	३	४
१- प्राथमिक शिक्षा	१७१८५ ॥४९.३॥	१८३६९ ॥३७.५॥	२१०३७ ॥५०.९॥
२- माध्यमिक शिक्षा	१०९७२ ॥३१.५॥	१२३३३ ॥३२.२॥	१३०३० ॥३१.६॥
३- उच्च शिक्षा	३४३४ ॥९.९॥	३८४९ ॥१०.०॥	४१७९ ॥१०.१॥
४- विशेष शिक्षा	५३१ ॥१.६॥	७०१ ॥१.८॥	७५३ ॥१.८॥
५- अन्य ॥प्राविधिक शिक्षा सहित॥	२६९७ ॥७.७॥	७०९२ ॥१८.५॥	२३०५ ॥५.६॥
योग	३४७८९ ॥१००.०॥	३८३४४ ॥१००.०॥	४१३०४ ॥१००.०॥

नोट :- कोष्ठक में दर्शायें गये आंकड़े प्रतिशत व्यय दर्शाते है।
स्रोत : उ०प्र० आय-व्ययक की रूप रेखा। ॥सांख्यिकीय डायरी १९८२॥

उ०प्र० में साक्षरता १९८१[0]

	प्रति १०० पर साक्षरता		
जिला	व्यक्ति	पुरुष	स्त्री
१	२	३	४
- उत्तर-प्रदेश	२७.४०	३८.९०	१४.४२
१- देहरादून	५०.०२	६०.६९	४१.४१
२- सहारनपुर	२९.४७	३८.९७	१८.०५
३- मुजफ्फरनगर	२९.३९	३९.६७	१७.२१
४- मेरठ	३४.५३	४६.३३	२०.४७
५- गाजियाबाद	३६.७२	४९.२८	२१.७०
६- बुलन्दशहर	२८.९८	४२.७०	१३.४४
७- अलीगढ़	३१.२१	४३.७०	१६.३५
८- मथुरा	२९.७१	४३.९२	१२.२५
९- आगरा	३३.४५	४४.३२	२०.५६
१०-मैनपुरी	३३.०८	४५.१९	१८.५७
११- एटा	२६.१९	३७.०५	१३.०६
१२-बरेली	२१.८२	२९.७५	१२.२८
१३-बिजनौर	२६.८०	३६.८०	१५.२०
१४-बदायूं	१६.०३	२२.९४	७.४९
१५-मुरादाबाद	२०.७४	२८.६३	११.३७
१६-शाहजहांपुर	२१.५६	३०.३०	१०.८१
१७-पीलीभीत	२०.९७	३०.४२	९.८२
१८-रामपुर	१६.३३	२२.५७	८.९४
१९-फर्रुखाबाद	३२.३७	४३.०३	१९.४७
२०-इटावा	३७.४९	४८.६९	२४.०२
२१-कानपुर।।नगर।। } २२-कानपुर।।देहात।।	४३.७३	५२.८९	३२.७३
२३-फतेहपुर	२६.४५	३८.६६	१२.८४

०अन्तिम, स्रोत : भारतीय जनगणना, १९८१ ।

१	२	३	४
२४-इलाहाबाद	२८.६१	४१.९५	१३.६०
२५-झांसी	३६.७१	५०.३३	२१.०२
२६-ललितपुर	२०.८२	३०.६२	९.३९
२७-जालौन	३५.८७	५०.१०	१८.८९
२८-हमीरपुर	२६.२७	३८.९३	११.४८
२९-बांदा	२३.०४	३५.५८	८.५३
३०-वाराणसी	३१.८९	४६.००	१६.३०
३१-मिर्जापुर	२४.१६	३५.१६	११.७७
३२-जौनपुर	२६.३३	४१.८०	११.०१
३३-गाजीपुर	२७.७७	४२.००	१३.४५
३४-बलिया	२८.१५	४१.८७	१४.२५
३५-गोरखपुर	२४.४१	३७.११	१०.९०
३६-देवरिया	२३.१८	३७.००	३.२२
३७-बस्ती	२०.१९	३१.५५	७.२७
३८-आजमगढ़	२४.८६	३७.७२	१२.२८
३९-नैनीताल	३७.४८	४६.९४	२६.२७
४०-अल्मोड़ा	३८.९०	५८.४३	२१.१४
४१-पिथौरागढ़	३७.९५	५६.४४	२०.४१
४२-टेहरीगढ़वाल	२७.३५	४७.०७	९.४७
४३-उत्तरकाशी	२८.६७	४५.६९	९.३७
४४-चमोली	३७.६०	५७.३४	१८.४४
४५-गढ़वाल	४१.९०	५६.६५	२७.१२
४६-लखनऊ	४०.२०	४९.१२	२९.६६
४७-उन्नाव	२५.९६	३७.३१	१३.१५
४८-रायबरेली	२३.४९	३५.२४	१०.९०
४९-सीतापुर	२१.४१	३१.०२	९.९५
५०-हरदोई	२३.३९	३३.९१	१०.७१

१	२	३	४
५१-बस्ती	१९.२५२	२७.५५	१०.०३
५२-फैजाबाद	२५.८९	३८.०९	१२.८५
५३-गोंडा	१७.४६	२७.०९	६.६४
५४-बहराइच	१६.४१	२५.०६	६.३०
५५-सुल्तानपुर	२२.८१	३५.३७	७.९७
५६-प्रतापगढ़	२५.३३	४०.९८	९.८५
५७-बाराबंकी	१९.५५	२९.३२	८.१८

भारत के विभिन्न राज्यों में साक्षरता, १९८१[0]

	प्रति १०० पर साक्षरता		
राज्य	व्यक्ति	पुरुष	स्त्री
१	२	३	४
१- आन्ध्र प्रदेश	२९.९४	३९.१३	२०.५२
२- बिहार	२६.०१	३७.७८	१३.५८
३- गुजरात	४३.७५	५४.५३	३२.३१
४- हरियाणा	३५.८४	४७.७८	२२.२३
५- हिमाचल प्रदेश	४१.९४	५२.३६	३१.३९
६- कर्नाटक	३८.४१	४८.६१	२७.८३
७- केरल	६९.१७	७४.०३	६४.४८
८- मध्यप्रदेश	२७.८२	३९.३८	१५.५४
९- महाराष्ट्र	४७.३७	५८.८९	३५.०८
१०-मणिपुर	४१.९९	५२.९७	३०.६९
११-मेघालय	३३.२२	३६.९८	२९.२८
१२-नागालैण्ड	४१.९९	४९.१६	३३.७२
१३-उड़ीसा	३४.१२	४६.९०	२१.११
१४-पंजाब	४०.७४	४६.५९	३४.१४
१५-राजस्थान	२४.०५	३५.७८	११.३२
१६-सिक्किम	३३.८३	४३.६५	२२.०७
१७-तमिलनाडु	४५.७८	५७.१९	३४.१२
१८-त्रिपुरा	४१.५८	५१.०५	३१.६०
१९-उत्तर-प्रदेश	२७.४०	३८.९०	१४.४२
२०-पं० बंगाल	४०.८८	५०.४९	३०.३३
भारत+	३६.१७	४६.७४	२४.८८

[0]अनन्तिम, + आसाम और जम्मू एवं कश्मीर को छोड़कर,
स्रोत : भारतीय जनगणना १९८१, ।।सांख्यिकीय डायरी १९८२ ।

उ०प्र० में राजस्व प्राप्तियां तथा व्यय

।।लाख रु०।।

मद	१९८१-८२ वास्तविक	१९८२-८३ पुनरीक्षित अनुमान	१९८३-८४ आय-व्ययक अनुमान
१	२	३	४
राजस्व प्राप्तियॉं -			
१- कर राजस्व -	१५३४७०	१६५६६८	१८११९८
२- अन्य राजस्व-	७२४९७	७९४०३	७४६४७
३- योग-	२२५९६७	२४५०७१	२५६५६५
४- कर राजस्व का कुल राजस्व में प्रतिशत-	६७.९	६७.६	७०.९
राजस्व व्यय -			
५- आयोजनागत -	३९४३४	५०९८३	४९६९४
६- आयोजनेत्तर -	१५११९०	१७६२६८	२००४५२
७- योग -	१९०६२४	२२७२५१	२५०१४६
८- आयोजनागत सम्बन्धी व्यय का योग में प्रतिशत-	२०.७	२२.४	१९.९

स्रोत : उत्तर-प्रदेश आय- व्ययक की रूप रेखा १९८३-८४, वित्त विभाग, उत्तर-प्रदेश ।

उ०प्र० में करों एवं शुल्कों से राजस्व प्राप्तियां

।।लाख रु० ।।

मद	१९८१-८२ वास्तविक	१९८२-८३ पुनरीक्षित अनुमान	१९८३-८४ आय-व्ययक अनुमान
१	२	३	४
क- केन्द्रीय करों में भाग	७८७१५	८३९६७	९१५३९
ख- राज्य कर तथा शुल्क			
१- भू राजस्व -	३५५६	२४१४	४000
२- राज्य अवकारी शुल्क -	११९२६	१२५३८	१३२०६
३- स्टाम्प और निबन्धन शुल्क-	८७०४	८८४०	९४१४
४- वाहनों पर कर	३२६५	३३६४	३४५८
५- बिक्री कर -	४५३३५	४६७५२	५१४७४
६- अन्य कर एवं शुल्क-	९४९३	११९११	१२४६२
योग ।।ख।। -	८२२७९	८५८१९	९४०१४
योग ।।क+ख ।।-	१६०९९४	१६९७८६	१८५५५३

स्रोत : उत्तर-प्रदेश आय-व्ययक की रूप रेखा, १९८३-८४, वित्त विभाग, उत्तर-प्रदेश ।

उत्तर-प्रदेश में करेतर स्रोतों से राजस्व प्राप्तियां

॥ लाख रु० ॥

मद	१९८१-८२ वास्तविक	१९८२-८३ पुनरीक्षित अनुमान	१९८३-८४ आय-व्ययक अनुमान
१	२	३	४
१- वन -	५७४८	५११४	५६८२
२- सिंचाई निर्माण कार्य -	३९४१	४३६०	५०८३
३- सार्वजनिक निर्माण कार्य सड़कें एवं पुल -	७९२	८५४	८४८
४- शिक्षा -	११९२	९८१	१२९०
५- चिकित्सा -	६२५	७०७	७३१
६- सामुदायिक विकास -	१३८	२२०	६९
७- प्रकीर्ण -	१६९७०	२०४००	२१३८९
८- अनुदान -	४२७८९	४६४६५	३९२४५
योग -	७२१९५	७९१०१	७४३३५

स्रोत : उत्तर-प्रदेश आय - व्यय की रूप रेखा, १९८३-८४, वित्त विभाग, उत्तर-प्रदेश।

उत्तर-प्रदेश में आयोजनागत सम्बन्धी राजस्व व्यय

।।लाख रु०।।

मद	१९८१-८२ वास्तविक	१९८२-८३ पुनरीक्षित अनुमान	१९८३-८४ आय - व्ययक अनुमान
१	२	३	४
१- करों की वसूली -	१०९७	१४४२	१२२९
भू राजस्व -	१०७३	१४१३	१२००
२- प्रशासनिक सेवायें -	५४	६५	१७८४
सार्वजनिक निर्माण कार्य -	४	६	६
३- सामाजिक, सामुदायिक सेवा तथा आर्थिक सेवायें -	३८२८३	४९४०६	४६६८१
।।क।।शिक्षा, कला एवं संस्कृति =	२००२	४६८०	३०५९
।।ख।।चिकित्सा -	१२२९	७७३	८४७
।।ग।।सार्वजनिक स्वास्थ्य, स्वच्छता, जल संपूर्ति एवं परिवार कल्याण-	६६०८	९७२४	९३२६
।।घ।।सहकारिता -	४०७	४९२	३२३
।।ङ०।। कृषि-	४७७७	५६५९	५७४२
।।च।।पशु पालन, डेरी विकास - मत्स्य, उद्योग	३५०	६०५	४६६
।।छ।।वन -	१२४१	१३१३	१६३९
।।ज।। सामुदायिक विकास -	२५३६	८२६१	८२२२
।।झ।।उद्योग एवं खनिकर्म -	१११२	९९९	८००
।।ञ।। अन्य-	१८०२१	१६९७०	१६२५७
योग =	३९४३४	५०९८३	४९६९४

स्रोत : उत्तर - प्रदेश आय - व्यकक की रूपरेखा, १९८३-८४, वित्तविभाग, उ० प्र० ।

उत्तर-प्रदेश में आयोजनेतर सम्बन्धी राजस्व व्यय

॥लाख रु० ॥

मद	१९८१-८२ वास्तविक	१९८२-८३ पुनरीक्षित अनुमान	१९८३-८४ आय-व्ययक अनुमान
१	२	३	४
१- करों की वसूली -	७५७३	८९८०	८९६४
२- व्याज का भुगतान एवं ऋण सेवा	२१५३४	२७०७५	३०११८
३- सामान्य तथा प्राशासनिक सेवाएँ -	२५७१८	३२८४६	५३४८२
४- शिक्षा -	३७१२१	४२०३०	४६१७७
५- कृषि -	३३८७	३६८७	३६२८
६- सामुदायिक विकास -	३२१६	३३९१	३२५२
७- जल एवं विद्युत विकास -	९४८४	१०११८	११२०३
८- चिकित्सा -	६८७२	७९७७	८२५१
९- सार्वजनिक स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण -	२७५४	२५२०	२३५३
१०-दान -	१६६२	१६०८	१८८५
११-प्रकीर्ण -	३१८६९	३५९५६	३०२५९
योग -	१५११९०	१७६२६८	२००४५२

स्रोत : उत्तर-प्रदेश आय-व्ययक की रूपरेखा, १९८३-८४, वित्त विभाग, उ०प्र० ।

सहायक ग्रन्थों की सूची

१- अरोड़ा आर०सी०, इन्डस्ट्रीज एण्ड रूरल डेवलपमेन्ट इन ए फ्री सोसायटी ।।जार्ज एलन एण्ड अनवीन, लन्दन, १९४५।। ।

२- भारद्वाज, रमेश सी०, इम्प्लाइमेन्ट एण्ड आनइम्प्लाइमेन्ट ।।एलाइ ड पब्लिशर्स, बाम्बे,१९६८।।

३- भट्ट, वी०वी०, इम्प्लाइमेन्ट एण्ड कैपिटल फारमेसन इन अन्डर डेवलप्ड इकोनामिक ।।ओरियन्ट लांगमैन्स, बाम्बे, १९६०।। ।

४- चौधुरी, प्रमीत, एसपेक्ट आफ इंडियन इकोनामिक डेवलपमेन्ट ।।जार्ज एलन एण्ड अनवीन, १९७१ ।।

५- दन्त वाला,प्रम० एल०, पावरटी इन इंडिया, देन एण्ड नाउ ।।१८७०-१९७०।।, मैकमीलन, १९७३

६- दास, नाबा गोपाल, अनइम्प्लाइमेन्ट, फूल इम्प्लाइमेंट एण्ड इंडिया, ।।एशिया पब्लिशिंग, बाम्बे, १९६० ।। ।

- अनइम्प्लाइमेन्ट एण्ड इम्प्लाइमेन्ट ।।ओरियन्ट लांग मैन्स, बाम्बे, १९६८।

७- दास गुप्ता, ए० के०, कीन्सीयन इकोनामिक ।।ए समपोजियम ।। ।।पीपुल्स पब्लिशिंग, देलही, १९५६ ।। ।

८- देसाई, के० जी०, ह्यूमन प्राब्लेम्स इन इंडिया इन्डस्ट्रीज ।।सीन्धु पब्लिकेशन, देहली १९६९।।

९- धोलकिया, जीतेन्द्र, अनइम्प्लाइमेन्ट एण्ड इम्प्लाइमेन्ट पोलीसी इन इंडिया ।।स्टर्लींग पब्लिशर्स, देलही, १९७७।। ।

१०-धार, पी०एन०एण्डलिडाल, एच० ई०, इंडियन इकोनामिक डेवलपमेन्ट ।।एशिया पब्लिशिंग हाउस, बाम्बे, १९६१ ।

११-डिलार्ड, डडले, द इकोनामिक्स आफ जे० एम० कीन्स ।।द थियूरी आफ एमोनेट्री पोलिसी ।।क्रास वाई लुकउड एण्ड सन्स लिमिटेड, लन्दन, १९६६।। ।

१२- फ्री, जे० सी०एच० एण्ड रोनिस, जी०, डेवलपमेन्ट आफ लेबर सरप्लस इकोनामि: थियूरी एण्ड प्रैक्टिस ।।होमउड, इलीनोइज, १९६४ ।। ।

१३- फेलनर, विलियम, मोनेट्री पौलिसी एण्ड फूल इम्प्लाइमेन्ट ।

१४- गिटान्ड, पी ० आर०, हाउ टू इनक्रीज अपारचूनिटिज फार इम्प्लाइमेन्ट ।।क्रिश्चियन वेलरम कालेज, बाम्बे, ।। ।

१५-गिरी, वी०वी०, जाब्स फार आवर मिलियन्स ।।वायास पब्लिशर्स, मद्रास १९७० ।। ।

१६- गुहा, सुनील, रूरल मैनपावर एण्ड कैपिटल फारमेसन इन इंडिया ।।एकाडेमिक बुक, बाम्बे, १९६९।।

१७- गुप्ता आर० डी ० एण्ड चोपड़ा पी० एम० कीन्सीयन इकोनामिक्स ।।एस० नागिन एण्ड कम्पनी,

पब्लिशर्स, जलन्धर सीटी, १९६४।

१८- हरिश, एस० ई०, द न्यू इकोनामिक्स ।।डेनिस डोब्सन, लन्दन, १९६८ ।।

१९-हुडा, मैनसूर, प्राब्लम्स आफ अनइम्प्लाइमेन्ट इन इंडिया ।।एलाइड पब्लिशर्स, बाम्बे, १९७४

20-जंगीर जी० सी० आवर इकोनामिक प्राब्लमस ।।नेशनल पब्लिशर्स, दलही १९६५ ।। ।

२१-जाफ एण्ड स्टीवर्ट, मैनपावर रिसोर्सेज एण्ड यूटिलाइजेसन्स ।।जोहन बिली, न्यूयार्क, १९५१।। ।

२२- कालवेक, इडवर्ड डी०, लेबर मार्केट्स एण्ड अनइम्प्लाइमेन्ट ।।वेड्सवर्थ पब्लिशिंग कम्पनी,

कलीफोर्निया, १९७३।। ।

२३- कीन्स, जे० एम०, द जनरल थियूरी आफ इम्प्लाइमेन्ट, इन्टरेस्ट, एण्ड मनी ।।मैकमीलन, लन्दन

१९३६।। ।

२४- लेनर, ए० पी० इकोनामिक्स आफ इम्प्लाइमेन्ट- १९५१ ।

२५-मेहता, एम०एम०, ह्यूमन रिसोर्सेज डेवलपमेन्ट प्लानिंग विथ स्पेशल रिफरेन्स टू एशिया एण्ड द फार - इस्ट ।।मैकमिलन कम्पनी आफ इंडिया लिमिटेड, देलही, १९७६।। ।

२६-माउले, जे० एण्ड कोस्टा, ई०, इम्प्लाइमेन्ट पोलिसिज इन डिवलपिंग कन्ट्रीज ।।जार्ज एलन एण्ड

अनवीन लिमिटेड, लन्दन १९७४ ।। ।

२७- मुर्खजी, पी० के०, इकोनामिक सर्वे इन अन्डर डेवलप्ड कन्ट्रीज : ए स्टडी इन मैथोलाजी ।।

।।एशिया पब्लिशिंग हाउस, न्यू देलही, १९६०।। ।

२८- मिर्डल, गुनार, एशियन ड्रामा ।।एलन लैन, द पेनग्वीन प्रेस, लन्दन, १९६८ ।। ।

२९- नैग, डी० एस०, कैरेक्टरस्टीक्स आफ अन्डर डेवल्पड इकोनामिक्स ।

30- नैक, जे० पी०एजूकेशन प्लानिंग इन इंडिया ।।एलाइड पब्लिशर्स बाम्बे, १९६५।। ।

३१- नर्क्स, रैगर, प्राब्लम्स आफ कैपिटल फारमेसन इन अन्डर डेवलप्ड कन्ट्रीज ।।बैकवेल, आक्सफोर्ड, १९५३।। ।

३२- ओहलीन, द प्राब्लम्स आफ इम्प्लाइमेन्ट स्टेब्लाइजेशन ।।कैम्ब्रीज हारर्वड यूनिवर्सीटी

प्रेस, १९५१।। ।

३३- पद्मनभान, सी० वी०, इकोनामिक्स आफ इजूकेशनल प्लानिंग इन इंडिया ।।आर्य बुक डिपोट

न्यू देलही ।। ।

३४- प्रसाद, प्रधान, एच०, ग्रोथ विथ फुल इम्प्लाइमेन्ट ।।एलाइड पब्लिशर्स, बाम्बे, १९७०।। ।

३५- प्रमी, एम०के०, एजूकेटेड प्लानिंग इन इंडिया ।।स्टर्लींग पब्लिशर्स, न्यू देलही, १९७२।। ।

३६- पीगू, ए० सी०, इक्वीली ब्रियम एण्ड फुल इम्प्लाइमेन्ट ।।मैकमिलन, लन्दन, १९४१।। ।

३७- राव०, वी० के० आर० वी०, ऐसे इन इकोनामिक डेवलपमेन्ट ।।एशिया पब्लिशिंग, बाम्बे, १९६४।। ।

इनवेस्टमेन्ट, इंकम एण्ड मल्टी प्लायर इन एन अन्डर डेवलप्ड इकोनामि ।।एलाइड पब्लिशर्स, बाम्बे, १९६८।। ।

३८- राज, के० एन०, इम्प्लाइमेन्ट एसपेक्ट आफ प्लानिंग इन अन्डर डेवलप्ड कन्ट्रीज ।।नेशनल बैंक आफ इजिप्ट केरो, १९५७।। ।

३९- रोबिन्सन, मिसेज, ऐसे आनद थियूरी आफ इम्प्लाइमेन्ट ।।मैकमीलन लन्दन, १९५१।। ।

४०- सक्सेना, जी०पी०, एजूकेटेड अनइम्प्लाइमेन्ट इन इंडिया ।।कर्म सीयल पब्लिकेशन ब्यूरो, न्यू देलही, १९७२।। ।

४१- शुम्पीटर, जे० ए०, टैन ग्रेट इकोनामिस्ट्स ।।आक्स फोर्ड यूनिवर्सीटी प्रेस, १९६८।। ।

४२- वकील, सी० एन०, पावर्टी एण्ड प्लानिंग ।।एलाइड पब्लिशर्स, बाम्बे, १९६३।। ।

४३- कृपास्वामी वी०, पापुलेशन एण्ड सोसायटी इन इंडिया ।

४४- पैरो, एच० बी०, ।।सम्पादक।।, पापुलेशन एण्ड इट्स प्राब्लम्स, १९७४, आक्सफोर्ड ।

४५- बेरेल्सन, बनार्ड ।।सम्पादक ।।, पापुलेशन पालिसीइन डेवलप्ड कन्ट्रीज, १९७४, न्यूयार्क ।

४६- सुरिन्दर, जे०, मार्डनाजिंग इंडियन पीजेन्ट्स - ए स्टडी आफ सिक्स्य विलेजेज इन इस्टर्न यू०पी०, १९७७, एशियन एजूकेशन सर्विसेज, न्यू देलही ।

४७- शर्मा टी० आर०एण्ड वार्ष्णेय, जे० सी०, आर्थिक नियोजन सिद्धान्त एवं समस्यायें, १९७६, आगरा

४८- सिंह, एस० पी०, आर्थिक नियोजन सिद्धान्त व्यवहार, द्वितीय संस्करण १९७४, राजहंस प्रकाशन मन्दिर, धर्म आलोक, रामनगर, मेरठ ।

४८-
४९- श्रीवास्तव, वी०एल०, गणितात्मक अर्थशास्त्र अर्थनीति के मूल तत्व, प्रथम भाग द्वितीय संस्करण, १९७६, प्रगति प्रकाशन पोस्ट बाक्स न० ६२, बेगम पुल मेरठ -२०००१

५० - दिनेश चन्द शर्मा, राज्य एवं उद्योग ।

५१- आर० पी० पाण्डेय, दि ग्रोथ आफ फैक्टरी इन यू०पी० ।

५२- चतुर्वेज, ममोरिया, आर्थिक संसाधन ।

५३- अग्रवाल, एस० एन०, इंडियाज पापुलेशन प्राब्लम्स, एम० सी० ग्रा० हिल १९७२, नई दिल्ली ।

सरकारी प्रकाशन एवं रिपोर्ट

१- आल इंडिया रूरल क्रेडिट सर्वे, रिपोर्ट आफ द कमेटी आफ डायरेक्टर वाल्यूम -१, द सर्वे रिपोर्ट पार्ट- १ ।। रूरल फैमिलिज, रिजर्व बैंक आफ इंडिया, बाम्बे, १९५६।। ।

२- भगवती, बी०बी०, रिपोर्ट आफ द कमेटी आन इम्प्लाइमेन्ट ।। गवर्मेन्ट आफ इंडिया, डिपार्ट मेन्ट आफ लेबर एण्ड इम्प्लाइमेन्ट, १९७३।। ।

३- दन्तवाला, एम० एल० रिपोर्ट आफ द कमेटी आफ एक्सपर्ट आन इम्प्लाइमेन्ट इस्टीमेट ।। प्लानिंग कमीशन, गवर्मेन्ट आफ इंडिया, १९७०।। ।

४- गजेन्द्र गधार, डा०, नेशनल कमीशन आन लेबर ।। गवर्मेन्ट आफ इंडिया, मिनिस्ट्री आफ लेबर एण्ड इम्प्लाइमेन्ट एण्ड रीहैबीलीटैशन, १९६९।। ।

५- गवर्मेन्ट आफ इंडिया, नेशनल सेम्पुल सर्वे आर्गनाइजेशन ।। डिपार्टमेन्ट आफ स्टेटीस्टीक्स, न्यू देलही, १९७३ ।। ।

६- इकोनामिक सर्वे, भारतसरकार ।

७- फर्स्ट रिपोर्ट आफ द नेशनल इनकम कमेटी, १९५१, भारत सरकार ।

८- योजना आयोग, रिपोर्ट आफ द कमेटी आफ एक्सपर्ट्स आन अनइम्प्लाइमेन्ट इस्टीमेट्स ।

९- पंचवर्षीय योजनायें --।। उत्तर-प्रदेश ।।

१- प्रथम पंचवर्षीय योजना

२- द्वितीय पंचवर्षीय योजना

३- तृतीय पंचवर्षीय योजना

४- चतुर्थ पंचवर्षीय योजना

५- पंचम पंचवर्षीय योजना

६- छठी पंचवर्षीय योजना

१०- पंचवर्षीय योजना का ड्राफ्ट -- ।। उत्तर-प्रदेश ।।

क- ड्राफ्ट फाइव एयर प्लान

ख- ड्राफ्ट सिक्स्थ फाइव एयर प्लान

ग- ड्राफ्ट सेवेन्थ फाइव एयर प्लान

११- शिक्षा की प्रगति, उत्तर-प्रदेश, इलाहाबाद ।

१२- उत्तर-प्रदेश की आर्थिक समीक्षा, अर्थ एवं संख्या विभाग, उत्तर-प्रदेश ।

१३- उत्तर-प्रदेश जनगणना रिपोर्ट - १९६१, १९७१ , १९८१, वार्षिक कार्य विवरण, श्रम विभाग उत्तर-प्रदेश, ।

१४- सांख्यिकीय सारांश, उत्तर-प्रदेश, अर्थ एवं संख्या निदेशालय, उ०प्र० ।

१५- औद्योगिक उत्पादन संगणना, उ०प्र० अर्थ एवं संख्या निदेशालय, उ०प्र० ।

१६- सांख्यिकीय पत्रिका, - अर्थ एवं संख्या प्रभाग, राज्य नियोजन संस्थान, उ०प्र० ।

१७- सांख्यिकीय डायरी - उत्तर-प्रदेश ।

१८- इम्प्लाइमेन्ट रिव्यू, प्रशिक्षण एवं सेवायोजन महानिदेशालय, श्रम मंत्रालय, उ०प्र० ।

१९- पार्सपेक्टिव प्लानिंग, उत्तर-प्रदेश ।

२०- उत्तर-प्रदेश की आय-व्यय की रूपरेखा ।

२१- उत्तर-प्रदेश सरकार, नियोजन विभाग ।

२२- उत्तर-प्रदेश, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, उ०प्र० ।

२३- उत्तर-प्रदेश के आय-व्ययक का आर्थिक एवं कार्य सम्बन्धी वर्गीकरण, अर्थ एवं संख्या प्रभाग, राज्य नियोजन संस्थान उ०प्र० ।

२४- कार्य पूर्ति दिग्दर्शक, शिक्षा विभाग, उत्तर-प्रदेश ।

२५- रिपोर्ट आफ द सेकेन्ड्री एजूकेशन दि आर्गनाइजेशन कमेटी ।

२६- भारत की जनगणना - १९५१, ६१,७१, ८१, ।

२७- इंडिया ।

२८- रिपोर्ट आफ द यूनिवर्सिटी एजूकेशन कमीशन ।

२९- प्रगति प्रतिवेदन-उत्तर-प्रदेश खादी तथा ग्रामोद्योग बोर्ड, कानपुर ।

पत्र-पत्रिकाएं

१- स्मारिका

२- कामर्स

३- कैपिटल

४- आर्थिक जगत

५- दिनमान

६- उत्तर-प्रदेश पाक्षिक

७- आर्थिक-शोध - पत्रिका, अर्थशास्त्र विभाग, काशी विद्यापीठ, वाराणसी ।

८- आर्थिक चेतना

९- स्पान

१०-जागृति

११- योजना, ।।देलही ।।

१२- खादीग्रामोद्योग ।।बाम्बे ।।

१३- प्रगति के सोपान - जन विश्वास के ठोस अधार- २०सूत्र, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, उ०प्र० ।

१४- उत्तर-प्रदेश "विकास अंक" सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग उ०प्र० ।

१५- कुरूक्षेत्र

१६- इंडियन सोसायटी आफ लेबर इकोनामिक्स, ।।लखनऊ ।।

१७- द इंडियन इकोनामिक जर्नल ।।बाम्बे ।।

१८- द इंडियन जर्नल आफ इंडस्ट्रीयल रिलेसन ।।देलही ।।

१९- द इकोनामिक एण्ड पोलिटिकल विकली ।।बाम्बे ।।

२०- द टाइम्स आफ इंडिया ।।देलही ।।

२१- द स्टेट्समैन ।।कलकत्ता ।।

२२- द इकोनामिक्स टाइम्स ।।कलकत्ता ।।

२३- द इंडियन नेशन ।।पटना, बिहार ।।

२४-`आज' दैनिक समाचार ।